वात्सल्य वारिधि
आचार्यश्री वर्धमानसागरजी

लेखक

विनोद 'हर्ष'
इन्दु वी. शाह

श्री बेतालीश दशाहुम्मड दिगम्बर जैन समाज, गुजरात का आचार्यश्री के पादपंकजों में शत-शत वंदन ! अभिनंदन !!

❋ प्रकाशक ❋

श्री बेतालीश दशाहुम्मड दिगम्बर जैन चोखला पंच

श्री अमृतलाल रेवचंद शाह	-	प्रमुख
श्री नगीनदास छोटालाल शाह	-	उपप्रमुख
श्री महेन्द्रकुमार अमृतलाल कोटड़िया	-	मंत्री
श्री जयंतिलाल कोदरलाल शाह	-	सहमंत्री
श्री अरविंदभाई बबालाल गांधी	-	कोषाध्यक्ष

कृति : वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी

लेखक : विनोद 'हर्ष'
इन्दु वी. शाह

प्रकाशक : श्री बेतालीश दशाहुम्मड दिगम्बर जैन चोखला पंच
(सर्वाधिकार लेखक के आधिन)

पुस्तक प्राप्ति-स्थान : श्री प्रदीपभाई बी. कोटड़िया
१, प्रस्थान एपार्टमेन्ट, सोनी छात्रालय के पास,
नवरंगपुरा, अहमदाबाद - ३८० ००९
फोन : ०७९-२६४६०८८२

श्री विनोदभाई 'हर्ष'
डी-१, नटुभाई एपार्टमेन्ट,
मोतीनगर सोसायटी के सामने,
शारदा स्कूल के पास, नवरंगपुरा,
अहमदाबाद - ३८० ०१४
फोन : ०७९-५५६२००९०

संस्करण : प्रथम, प्रतियाँ २०००

टाइप सेटिंग और मुद्रण : विनायक एन्टरप्राईज, अहमदाबाद.
फोन : ९२२८१४२०९९

प्रकाशन वर्ष : २००५

वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज
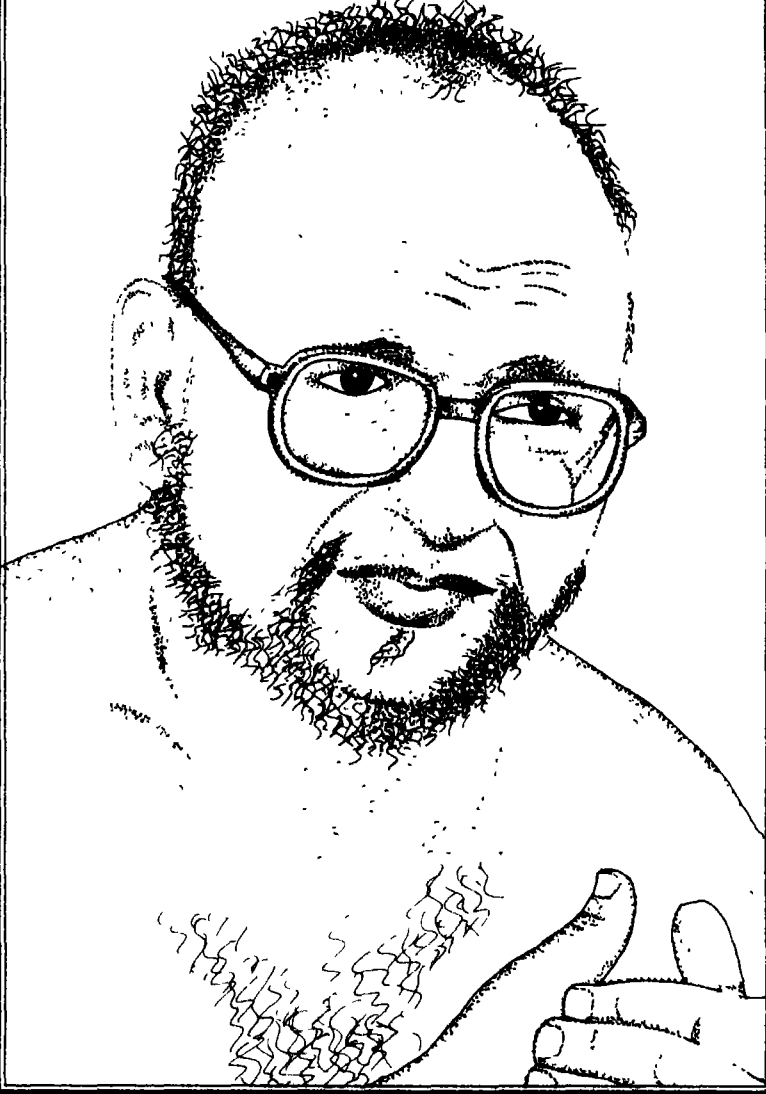
: सौजन्य :

- श्रीमती चंदनबहन (ताराबहन) रतीलाल चुनीलाल दोशी श्रुतसंवर्धन ग्रंथमाला
- श्री सोभागमलजी कटारीया - अहमदाबाद
- श्री रतीलाल चुनीलाल दोशी - मुंबई
- श्रीमती चंदनबहन शकरालाल कोदरलाल शाह - सलाल
- श्रीमती मधुबहन पोपटलाल मणीलाल शाह - दहेगाम
- श्री अरविंदभाई बबालाल गांधी - सलाल
- श्री हरप्रसादजी चुनीलालजी जैन - अहमदाबाद
- डॉ. पूर्वी की पुण्य स्मृति में
श्रीमती विमलाबहन दिनेशचन्द्र गांधी - अहमदाबाद
- श्री यज्ञेशकुमार पूनमचंद कोटड़िया - दहीसर, मुंबई.
- श्रीमती गजीबहन मणीलाल शाह - देलवाड (गांधीनगर)
- श्रीमती चंपाबहन कपिलभाई कोटड़िया - हिंमतनगर
- श्री अजीतभाई रतिलाल गांधी (रमोस) - मुंबई
- श्रीमती कांताबहन वाडीलाल महेता
हस्ते- सुनिलभाई महेता - अहमदाबाद
- श्रीमती प्रेमीलाबहन रमणलाल सोमचंद शाह - गांधीनगर
- श्रीमती ललिताबहन रसिकलाल केशवलाल गांधी (तलोद)-कलोल

विषय - कषाय - से बचने के लिए परिणामं - विशुद्धि की कारणभूत जिन-पूजन, जिनभक्ति सबका परम कर्तव्य है।

- पू. आचार्यश्री

वात्सल्यमूर्ति - जिनधर्म प्रभावक तपोमूर्ति

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराजश्री के

परम पावन चरणों में कोटि-कोटि

नमोस्तु...

नमोस्तु...

नमोस्तु...

पुस्तक विमोचन कर्ता

श्री बाबुलालजी कचरालालजी कोटड़िया परिवार

: हस्ते :

चंदनबहन बाबुलालजी कोटड़िया

आशाबहन प्रदीपभाई कोटड़िया

पारुलबहन अरुणभाई कोटड़िया

(सलाल)

अहमदाबाद (गुजरात)

लेखनी के झरोखें से

- "विपत्ति से ही संपत्ति की प्राप्ति होती है।" - *मनोरमादेवी*
- "मेरा मन कहता है यह बच्चा आगे जाकर ऐसी प्रतिष्ठा प्राप्त करेगा कि दुनिया देखती रह जाएगी।" - *श्यामाबाईजी*
- "ब्र. यशवंतजी, आप सम्मेदशिखरजी की वंदना करके आइए। मुनिदीक्षा हो जाने के बाद कब वंदना होगी, कुछ निश्चित नहीं है।" - *आचार्यश्री शिवसागरजी*
- "आज मुझे लग रहा है माँ बाल्यावस्था में यशवन्त का पक्ष क्यूँ ले रही थी ? यशवंतमें समयानुकूल परिवर्तित होने की अजबसी शक्ति है, उसका आत्मविश्वास अद्‌भुत है।" - *श्री चिन्तामणिजी*
- "प्रसंग आने पर सल्लेखना ले लूंगा किन्तु मैं इन्जेकशन आदि नही लगवाऊं गा।" - *मुनिश्री वर्धमानसागरजी*
- "जबतक मुनिश्री वर्धमानसागरजी की आँखों की ज्योति वापस नहीं आती तब तक मेरे छहों रसों का त्याग है।"

  - *मुनिश्री अभिनंदनसागरजी*
- 'मुनिश्री वर्धमानसागरजीने इतनी अल्पायु में दृढ़तापूर्वक महान् त्याग किया और इन्हें इतना जबरदस्त उपसर्ग !

  आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज
- 'हे भगवन् ! आप बड़े हैं या डॉक्टर।'

  - *आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी*
- गुलाबचंदजी गोधाने अपने मनकी बात रखदी - "आचार्यश्री ! इतने बड़े संघ को भविष्यमें कौन सम्भालेगा" तब आचार्यश्री धर्मसागरजीने अपनी लाक्षणिक मुस्कुराहट के साथ फट से कहा, "म्हारे संघने तो वर्धमान सम्हाल सके।"
- "वर्धमानसागरजी महाराज विचारज्ञ हैं और मुझे पूरा विश्वास है

कि बिना किसी पद के भी वे संघ को सम्हाल लेंगे ।"

- आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजी

- "वर्धमान मेरा था, मेरा है और मेरा रहेगा, अब छोड़कर कहाँ जायेगा ।" *- आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज*
- "मैं संसारवृक्ष पर मधुबिंदु के लोभवश लटका रहा । मधुबिंदु लुभाता ही रहा, मैंने कुछ न पाया पूरी जिन्दगी में ।"

  - कमलचंदजी
- "संघस्थ मुनिश्री वर्धमानसागरजी को मेरे पश्चात् चारित्रचक्रवर्ती परमपूज्य आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी अक्षुण्ण आचार्य परंपरा का कार्यभार सौंपा जाय और मेरे बाद संघ उन्हें आचार्य स्वीकार करे ।" *- आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज*
- "निर्मलजी ! आचार्यश्री के आदेशानुसार आप लोग मुनिश्री वर्धमान सागरजी को आचार्य बनाओ या नहीं वो आप जानो । किन्तु मेरा ज्योतिष ज्ञान कहता है कि वे आचार्य अवश्य बनेंगे, आप पदारोहण समारोह नहीं सम्पन्न कर सके तो संघ उन्हें बादमें बना लेगा ।"

  - गणिनीआर्यिका श्री सुपार्श्वमती माताजी
- "समाज एक होगा तो मैं प्रतिष्ठा का आमंत्रण स्वीकार करूंगा ।"

  - आचार्यश्री वर्धमानसागरजी
- "ऐसी महान् करुणामूर्ति को उनके उपकार का बदला दे रहे हैं शायद जलकायिक जीव । यह प्रतिफलन है वात्सल्यका । न यह चमत्कार है न मंत्र-तंत्र । अगर चमत्कार है तो 'मित्ती मे सव्व भूएसु' मंत्र का ।"
- "भगवान राम चौदह साल पश्चात् अवधपुरी में वापस आए थे । मेरा राम-यशवंत आज आचार्यश्री वर्धमानसागरजी बनकर चौबीस साल बाद आरहा है, पंचमकालकी अयोध्या बनने जा रहे सनावद में ।" *- बड़ी माँ रूपाबाईजी*
- "आचार्यश्री वर्धमानसागरजी सनावद के पारलौकिक गौरव हैं ।"

  - पंडित श्री भगवन्तरावजी दुबे

- "संघ को चिंता करने की कोई आवश्यकता नही । माताजी का स्वास्थ्य अनुकूल होने पर ही हम विहार करेंगे, अन्यथा चातुर्मास यही पर कर लेंगे ।" *- आचार्यश्री वर्धमानसागरजी*
- "अब तक हम सब यहाँ मास्टर ही मास्टर थे, आज आचार्य ही नही (प्राचार्य) हेडमास्टर हमारे बीच हैं, हमें अत्यंत आनंद है, अब सब ठीक ही ठीक होगा ।"

- मुनिश्री योगसागरजी महाराज (संघस्थ आचार्यश्री विद्यासागरजी)

- "भगवान श्री बाहुबली की मूर्ति के दर्शन से हमको शांति और आनंद की अनुभूति हुई । आचार्यश्री एवं स्वामीजी के दर्शन से हमको जो प्रसन्नता का अनुभव हुआ उसे हम शब्दों में व्यक्त नही कर सकते ।" *- विदेशी दल के नायक श्री जीनकेल*
- "भक्ति से ही मुक्ति मिल सकती है । इस महोत्सव का धार्मिक परंपरा के साथ सांस्कृतिक पर्व के रूप में आचरण किया जा रहा है ।" *- भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी महास्वामी*
- "पेट्रोल समाप्त होने पर वाहन में पेट्रोल डलवाना पड़ता है, उसी प्रकार प्रेरकशक्ति कम होने पर ऐसे पुण्यक्षेत्र पर आ कर या गुरुवरों के पास जाकर शक्ति प्राप्त करना चाहिए ।"

- प्रधानमंत्री श्री पी.वी. नरसिंहराव

- "जब तक इस विश्व में लोभ, आकांक्षा बनी रहेगी, तब तक भगवान श्री बाहुबली का त्याग का संदेश रहेगा । त्याग से तृप्ति निश्चित है ।"

- भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी महास्वामी

- "धर्म की रक्षा करते रहो, समाजकी रक्षा करते रहो और साधु-संतों की रक्षा करते रहो ।"

- प्रथमाचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज

- "आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के पास आते हैं तो टेन्शनफ्री हो जाते हैं । दूसरों के पास जाते हैं तो टेन्शन लेके आते हैं ।"

- श्री एन. के. सेठीजी

चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी अक्षुण्ण आचार्य परंपरा

चारित्र चक्रवर्ती आचार्य
१०८ श्री शांतिसागरजी महाराज

आचार्यश्री
वीरसागरजी
महाराज

आचार्यश्री
शिवसागरजी
महाराज

श्रीशान्ति-वीर-शिव-धर्म-अजित-वर्धमान सागरेभ्यो नमः
ॐ

आचार्यश्री
धर्मसागरजी
महाराज

आचार्यश्री
अजितसागरजी
महाराज

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज

दीक्षागुरु आचार्यश्री
धर्मसागरजी महाराज

वात्सल्य वारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज

विभिन्न मुद्राओं में आचार्यश्री
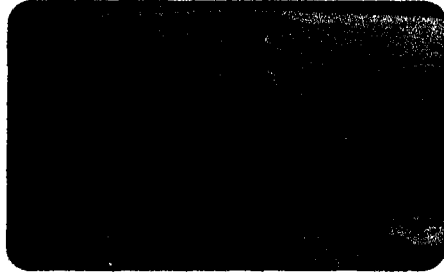
एक सागर सागर के किनारे....
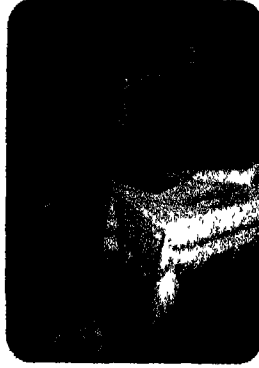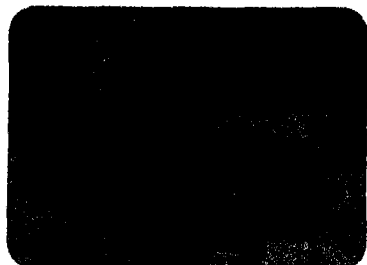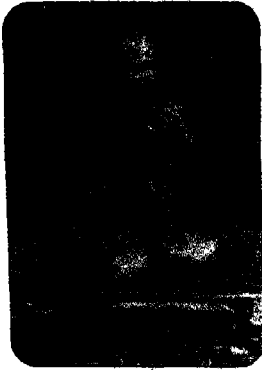
विभिन्न मुद्राओं में आचार्यश्री

श्रवणबेलगोला पंचकल्याणकमें
विधिनायक प्रतिमा पर तपकल्याणक
संस्कार करते हुए आचार्यश्री

सनावदमें भगवान बाहुबली पर
संस्कार करते हुए आचार्यश्री

सनावदमे भगवान बाहुबली मे
सुरि मत्र देते हुए आचार्यश्री

बिजोलियामे दीक्षार्थी के केश लुँचन
करते हुए आचार्यश्री

मुनि दीक्षा के संस्कार
करते हुए आचार्यश्री

१९९३ महामस्तकाभिषेक के समय श्रवणबेलगोलामें आचार्यश्री

१ जुलाई १९९३मे
मुनिसमूह के साथ प्रथम दर्शन अवसर पर
गोमटेश्वर भगवान के चरणोमे आचार्यश्री
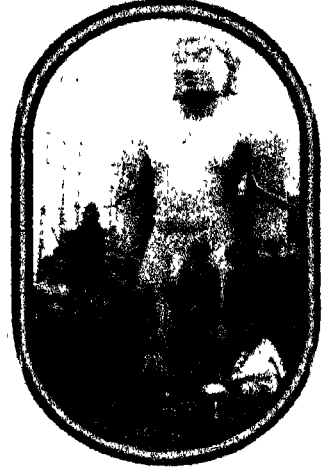
भगवानश्री बाहुबली के पादपंकज मे
आचार्यश्री के साथ
मुनिश्री योगसागरजी एव विजयभैया

श्रवणबेलगोलाके चातुर्मासमे
२५ नवम्बर १९९३
को दीक्षा समारोह की सभामे आचार्यश्री
एव भट्टारकजी विचार विमर्श करते हुए
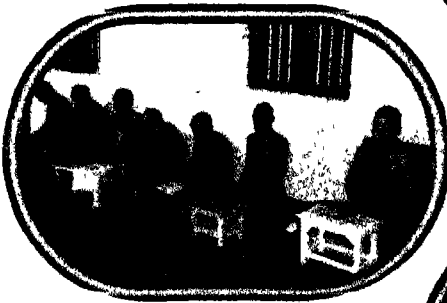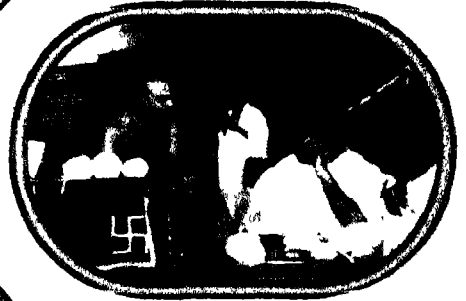
श्रवणबेलगोला १९९३ चतुर्दशी प्रतिक्रमण
करते हुए आचार्यश्री के साथमें
मुनिसघ

श्रवणबेलगोला मे आचार्यश्री के ससघ
सान्निध्यमे आयोजित विद्वत् सम्मेलन

श्रवणबेलगोलामें-१९९३ चातुर्मास की चित्रझलक

बृहद् जलयोजना शुभारंभ समारोह
मे आचार्यश्री से चर्चा करते हुए
डॉ. श्री वीरेन्द्रकुमार हेगड़ेजी

आचार्यश्री से विचार विमर्श करते हुए
महास्वामी भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी
साथमें मुनिश्री रयणसागरजी

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज
आचार्यश्री सुबलसागरजी के साथ
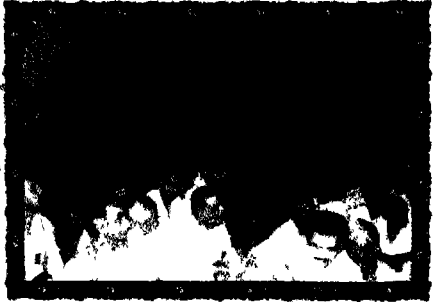
चातुर्मासमे पिच्छिका परिवर्तन समारोहमें
आचार्यश्री से नूतन पिच्छिका ग्रहण करते हुए
श्री योगसागरजी महाराज

वर्षायोग स्थापना के समय
आचार्यश्री, साथमे योगसागरजी
आदि मुनिराज

मंच पर विचार विमर्श करते हुए
आचार्यश्री एवं श्री उम्मेदमलजी पांड्या

श्री राजर्षि वीरेन्द्रकुमार हेगड़ेजी को
आशीर्वाद देते हुए आचार्यश्री

आचार्यश्री से आशीर्वाद लेते हुए
श्रीमान् एवं श्रीमती हेगड़ेजी

आचार्यश्री और संघकी अगवानी करते हुए
श्री हेगड़ेजी, पूज्य भट्टारक महास्वामीजी
श्री चारुकीर्तिजी
और श्री निर्मलकुमार सेठीजी

मूडबिद्रीके भट्टारकश्री,
श्रवणबेलगोलाके भट्टारकश्री,
श्री वीरेन्द्रकुमार हेगड़ेजी
और साहित्यकार श्री नीरजजी

मुक्त हास्यके क्षणों में
आचार्यश्री एवं श्री हेगड़ेजी

आचार्यश्री को पुस्तक भेंट करते हुए
श्री नीरजजी जैन, साथमें
श्री निर्मलकुमार सेठीजी,
राजर्षि श्री वीरेन्द्रकुमार हेगड़ेजी और अन्य

आचार्यश्रीके चरणोंमें राजकीय महानुभाव

भारतके महामहिम
डॉ. शंकरदयाल शर्मा
आचार्यश्री के दर्शनार्थ - १९९३

तत्कालीन प्रधानमंत्री
श्री पी.वी. नरसिंहरावजी
एवं भट्टारकजी आचार्यश्रीसे
चर्चा करते हुए

श्री एच.डी. देवेगौड़ा
आचार्यश्री के दर्शनार्थ

मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजयसिंहजी
आचार्यश्री को नमोस्तु करते हुए - सनावदमें

गुजरात के मुख्यमंत्री श्री चिमनभाई पटेल
आचार्यश्री से आशीर्वाद लेते हुए

कर्णाटक के मुख्यमंत्री श्री वीरप्पा मोईली
आचार्यश्री को वंदन करते हुए

आचार्यपदप्रदाता
आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज
और मुनिश्री वर्धमानसागरजी महाराज
साबला, राजस्थान

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी और
आचार्यश्री अभिनंदनसागरजी का
भव्य मिलन - अणिन्दा पार्श्वनाथ
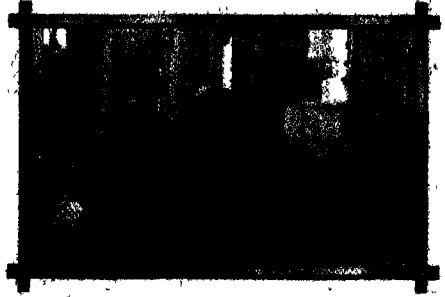
आगमतीर्थ आचार्यश्री वर्धमानसागरजी
एवं शब्दतीर्थ मुनिश्री तरुणसागरजीका
वात्सल्य मिलन - सोलापुर

बिजोलिया चट्टान पर
आचार्यश्री वर्धमानसागरजी और संघ

आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजीके साथ
चर्चा करते हुए मुनिश्री वर्धमानसागरजी,
श्री उम्मेदमलजी पांड्या,
श्री पूनमचंदजी गंगवाल,

आचार्यश्री से चर्चा करते हुए
श्री अशोकजी सांहु

आचार्यश्री के साथ विहारमें
गुजरातके भक्तगण
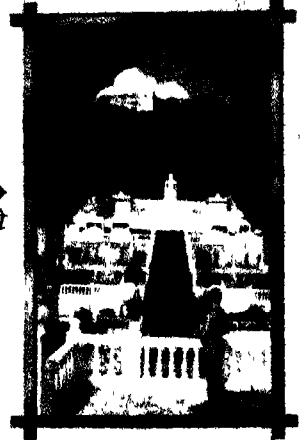
कुंभोज बाहुबलीमें भगवान श्री बाहुबलीको
निर्निमेष निहारते हुए आचार्यश्री
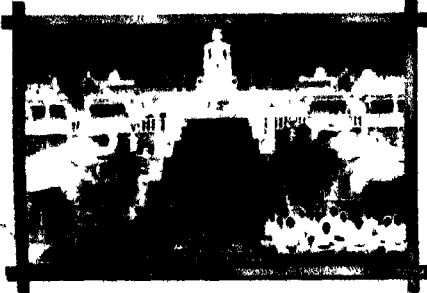
कुंभोज बाहुबलीमे चातुर्मास के दौरान
आचार्यश्री एवं संघ

लोहारिया चातुर्मास में 'सर्वोपयोगी
श्लोक संग्रह' एवं 'मरणकण्डिका' के विमोचन
समारोहमे आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज
और मुनिश्री वर्धमानसागरजी

आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराजके
साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी,
आचार्यश्री धर्मसागर महाराज अभिवंदन ग्रंथ
विमोचन के समय भीण्डर में
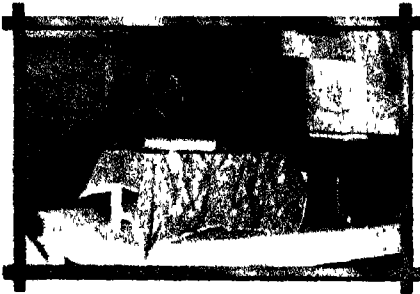
चूलगिरि (खानियाजी) जयपुरमें
आचार्यश्री ससंघ

चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री
शांतिसागरजी महाराजश्री
की जन्मभूमि येलगुड में
आचार्यश्री

अणिन्दा चातुर्मास के दौरान सन् १९९१

गिरनार यात्रा को जाते हुए
गुजरात प्रवेशके प्रथमनगर
विजयनगरमें
आचार्यश्री संघके साथ

उदयपुर चातुर्मासका दृश्य सन् २००१

आचार्यश्री एवं आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजी
स्वाध्याय करते हुए

कुन्थलगिरिमें कुलभूषण
देशभूषण भगवान
के चरणोंमें आचार्यश्री

सोलापुरमे पं. सुमतिबहन
एवं विद्युल्लताबहन
को आशीर्वाद देते हुए आचार्यश्री

दीक्षा संस्कार करते हुए
आचार्यश्री

प.पू. १०८ आचार्यश्री वीरसागरजी महाराज
की ४२ वीं पुण्यतिथि के पावन अवसर
पर त्रिदिवसीय तत्त्वचर्चा, आशीर्वाद
देते समय आचार्यश्री वर्धमानसागरजी
जयपुर १९९९

मेले मे आनन्द लूटते हुए
श्री यशवंतजी, श्री जयवन्तजी
साथमे पिताश्री कमलचंदजी

दीक्षार्थी नवयुवक श्रीयशवतकुमार को
तिलक करती हुइ बहने

ध्यानस्थ युवामुनि
श्री वर्धमानसागरजी महाराज

शासकीय महाविद्यालय बड़वाह जहाँ
आचार्यश्रीने लौकिक शिक्षा प्राप्तकी

दीक्षार्थी नवयुवक श्रीयशवंतकुमार अन्य
दस दीक्षार्थियो के साथ

दाये से खडे सातवे मुनिश्री वर्धमानसागरजी
अन्य दस दीक्षितो के साथ
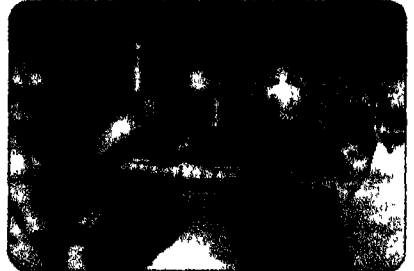
नेत्र ज्योति चली जानेपर जयपुर खानियाजीमें
चन्द्रप्रभु भगवानके चरणोंमें मुनिश्री वर्धमानसागरजी
साथमे मुनिश्री अजितसागरजी, ब्र. मोतीचंदजी एवं ब्र. कलाबहन

दीक्षागुरु
आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराजकी
समाधि-साधना के समय
मुनि श्रीवर्धमानसागरजी सीकरमे

पूज्य आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी को
समाधि साधना के समय संबोधन करते
हुए आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज
एवं गणिनी आर्यिका श्री सुपार्श्वमती माताजी
नंदनवन - धरियावदमे

आर्यिका श्री समतामतीजीको
अन्तिम समयमे सम्बोधन करते हुए
आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज
किशनगढ चातुर्मास सन् १९९८

समाधि-साधनामे रत आर्यिकाश्री को
उद्बोधन करते हुए आचार्यश्री
भट्टारकजी नसियाँ जयपुर

टोक राजस्थानमे
मुनिश्री शीतलसागरजीकी
समाधि के समय
मुनिश्री वर्धमानसागरजी

7019

नमोस्तु

मेरे अंतर में आकार ले रही थी एक आकृति । आराध्य के रूप में वह आकृति कब हृदयसिंहासन पर स्थापित हो गई, इससे मैं था बेखबर । वर्ष था सन् १९७४ । मैं और मेरी श्रीमतीजी घूमनेका मानस बनाके निकल पड़े दिल्ली की ओर । दर्शनीय स्थानोंके बीच लालकिले के ठीक सामने आये लाल मंदिर में पहुँचे दर्शनार्थ । वहाँ ज्ञात हुआ कि परम पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज यहाँ बिराजमान है ससंघ । आचार्यश्री के दर्शनकर एक-एक कर सब मुनिराजों के दर्शनों के बाद हम आये युवा मुनिराजके पास । देखते हैं, अंधेरे की वजह से टेबल लेम्प की रोशनी में लेखन में व्यस्त हैं युवामुनिश्री । नमोस्तु करके बैठ गए उनके समीप । आशीर्वाद की मुद्रामें उठा हाथ और हमारे पर उठी उनकी दृष्टि से अवर्णनीय आनंदानुभूति से भर गए हम । हो गए बिलकुल शांत, बस, उनकी दृष्टि से बहती वात्सल्यधारा हमारे हृदय धरातल को करती रही सिक्त । हमें लगा युवा मुनिश्री अध्यात्मके आकाश में अवश्य धर्मसूर्य का स्थान ग्रहण करेंगे । वहाँ से हम चले आये लेकिन....

"ये न जाना था इस महफिल में दिल रह जाएगा ।
हम ये समझे थे चले आएंगे दमभर देखकर ।"

समय बीतता चला । बात आई-गई हो गई । सन १९९० में जब विवाद उठा मुनिश्री वर्धमानसागरजी के आचार्य पद के लिए तब फौरन स्मृति में उभर आया मुनिश्रीका देदीप्यमान व्यक्तित्व और मैं चल पड़ा राजस्थानकी ओर मुनिश्री के दर्शनार्थ । गामड़ी नामक छोटे से गाँव में ठहरे मुनिश्री के पास जाकर किया नमोस्तु । आशिष के लिए उठा उनका हाथ । उनके नयनों से प्रवाहित प्रेमसे फिर एकबार भीगता रहा मैं ।

आश्चर्यचकित-सा मैं देख रहा मुनिश्री के मुखारविंद पर झलकती उसी मुस्कान, उसी समता, शांति और सहजता को, जिसे दिल्ली के लालमंदिरमें देखीथी बरसों पहले । मेरे मन ने सोचा-अपने आपमें संयमित, स्नेह-सहजता और समता के धनी, सही में अधिकारी हैं आचार्यपद के और ऐसे महान् व्यक्तित्व को पाकर जरूर भाग्यशाली बनेगा जैन समाज । लेकिन मेरी मान्यता का क्या अर्थ ? मुनिश्रीके दर्शनकर और आशीर्वाद पाकर मनमें शांति और कुछ प्रेरणा लेकर लौट आया घर को ।

जो होना चाहिए था वही हुआ । मुनिश्री वर्धमानसागरजी को आचार्यपद प्राप्त हुआ । इस खबर से हर्षविभोर हो गया मैं और मेरा परिवार । सन् १९९२में सुना, आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज ससंघ गुजरात पधार रहे हैं श्रीक्षेत्र गिरनारजी की यात्रा हेतु । चहेते संत के दर्शन व सत्संग से लाभान्वित होने की भावना से मनमयूर नर्तन करने लगा । लेकिन प्रतिकूलताओं से घिरा हुआ मैं दर्शन न कर पाया आचार्यश्री के । आचार्यश्री ससंघ गिरनारजीकी यात्रा करके लौटे और चातुर्मास तय हुआ श्री तारंगाजी सिद्धक्षेत्र पर । अपने सौभाग्यकी सराहना करता हुआ पहुंचा श्री तारंगाजी आचार्यश्री के चरणारविन्दमें । स्नेही मित्र, भाई श्री प्रदीपभाई कोटड़ियाने मेरा परिचय करवाया, फिर तो चातुर्मास के दौरान आचार्यश्री के दर्शन आशीर्वाद और सत्संग के लिए तारंगाजी आने-जाने का क्रम चला । तबसे लेकर यह सिलसिला चलता रहा है आजतक । हर साल कमसे-कम एक बार मैं और मेरी श्रीमतीजी आचार्यश्री के दर्शन सत्संग से पुलकित होते रहे ।

संतो की जीवनियों के यशस्वी लेखक आदरणीय श्री सुरेशजी सरल की लिखी हुई ज्यादातर जीवनियाँ पढ़ी है मैंने । एकदिन मैं श्री सुरेशजी सरल द्वारा लिखी हुई, आचार्यश्री विरागसागरजीकी जीवनगाथा

'निस्पृही संत' पढ़ रहा था । इस पुस्तक में मुनिश्री वर्धमानसागरजी का उल्लेख आते ही हृदय भावोर्मिसे भर गया क्यों मैं अपने चहेते संत के लिए न लिखूँ ? गत चालीस से अधिक सालो से विविध विषयों पर गुजराती भाषामें लिखता आया हूँ सो गुजराती में लिखनेका सोचा । इत्तफाकसे उसी दिन भाईश्री प्रदीपभाई कोटड़िया मेरे ऑफिस में आये । उन्हें यह बात बताई, उन्होंने मुझे प्रोत्साहित किया । भाई श्री बिपिनभाई कोटड़िया और श्री प्रदीपभाई कोटड़िया दोनोंने अनुरोध किया हिन्दीमें लिखनेका । आजतक कुछ भी नही लिखा है हिन्दी में । मेरी श्रीमतीजीका भी आग्रह रहा हिन्दी में ही लिखनेका । उन्होंने बताया कि वह लेखनकार्य में भी सहभागी होगी । हम पति-पत्नी दोनों ने निर्णय कर लिया कि लिखनेका शुभारम्भ करेंगे आचार्यश्री के आशीर्वाद के पश्चात् ।

उन दिनों आचार्यश्री का वर्षायोग चल रहा था उदयपुर में, दिनांक ३० अगस्त, २००२ के रोज आचार्यश्री के श्रीचरणोंमें नतमस्तक थे हम दोनों । आचार्यश्री को अपने मनकी बात बताई तो उन्होंने कहा, "विनोदजी ! मेरे जीवनमें लिखने जैसा कुछ है नहीं, आप क्या लिखोगे ? मैं तो अपनी साधना सहजता से कर रहा हूँ ।"

मैने करबद्ध प्रार्थना करते हुए कहा - "आचार्य भगवंत ! आपके जीवन से श्रावकों को कुछ प्रेरणा मिले, यही मेरा उद्देश्य है - आदि ।"

आचार्यश्री ने कहा - "दोपहर सामायिक के बाद मिलना ।" दोपहर पहुँचे हम आचार्यश्री के पास । देखते हैं संघ के कुछ पूज्य मुनिराज एवं पूज्य माताजी विराजमान हैं आचार्यश्री के साथ । मेरी बात को पुष्ट किया बैठे हुए सभी ने और आखिर देदी स्वीकृति और आशीर्वाद आचार्यश्री ने । हम दो-तीन दिन रहे आचार्यश्री के संघ सान्निध्य में । पूज्य मुनिश्री चिन्मयसागरजी, पूज्य मुनिश्री अपूर्वसागरजी, पूज्य मुनिश्री अर्पितसागरजी, पूज्य माताजीश्री वर्द्धितमतीजी, पूज्य माताजीश्री प्रशान्तमतीजी, संघस्थ ब्रह्मचारी श्री

चक्रेशभैया (श्री गुप्तीशजी), श्री गज्जुभैया (राजेन्द्र भैया), श्री सचिनभैया आदिने आचार्यश्री की गृहस्थावस्था, मुनिअवस्था और आचार्यपद के बादकी बहुतसी माहिती प्रदान की । मदनगंज-किशनगढ़ से आए हुए, परमपूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के परमभक्तों में से एक, आदरणीयश्री गुलाबचंदजी गोधा ने दो दिन तक पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज, पूज्य आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज और पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के बारे में विशेष माहिती प्रदान की । भाई श्री राजेश पंचोलिया ने सनावद में आचार्यश्री के सनावद के प्रथम प्रवेश की विस्तृत माहिती न्यूज पेपर की कटिंग के साथ दी । भाईश्री सलित जैन सनावदवालोंने कुछ फोटोग्राफ्स दिये । इन सभी के प्रति हम आभार की संवेदना प्रगट करते हैं ।

अधिक माहिती इकट्ठी करने के लिए निकल पड़े हम दोनों आचार्यश्री के विविध विहार-स्थलों पर । चाहे श्रवणबेलगोला हो या सनावद, किशनगढ़ हो या कनकगिरि, खूँता हो या खेडब्रह्मा, पारसोला हो या पावागढ़, भीण्डर हो या भीलवाड़ा, धरियावद हो या धर्मस्थल, जहाँ-जहाँ हम गए वहाँ-वहाँ सभीने आचार्यश्री के बारे में हमें जानकारी प्रदान की अति उत्साहके साथ । पूज्य आर्यिकाश्री वर्द्धितमतीजीने हमें सुझाव दिया कि आप दोनों इतना परिश्रम कर रहे हैं तो साथमें संघका इतिहास भी समाविष्ट हो जाय, ऐसा करना । इस बातका ध्यान रखकर हमने यथायोग्य प्रयास किया है ।

गुरुवर के गुणों को शब्दों में बाँधना, उनकी ऊँचाइयों को नापना सामर्थ्यके बाहरकी बात है । इसलिए कबीरजी जैसे ज्ञानी को भी लिखना पडा कि -

"सात समंद की मसि करौं, लेखनी सब बनराय,
धरती सब कागद करौं, गुरु गुण लिख्या न जाय ।"

जिनधर्मप्रभावक, समता के स्वामी, वात्सल्यवारिधि, परमपूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की करुणा और उनके वात्सल्य वस्नेह से भीगकर अत्यन्त आस्था-भक्ति से यह पुस्तक लिखने की हमारी यह बाल चेष्टा मिट्टीकी छोटीसी गगरीमें क्षीर-सागर भरने जैसा प्रयास है। गुरुवर हमारी रग-रग में समाते गए, हम कदम-कदम पर मिटते चले। हमारे दिलो-दिमाग में से एक ही गूंज उठती रही वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजीकी, पूरा परिवार बन गया पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी मय। हमारा बड़ा लड़का मिहिर जो इन्जीनियरिंग कॉलेजमें लेक्चरर है वह शामको आते ही पृच्छा करता "पापाजी ! कहाँ तक लिखा ? यशवंतजी मुनिराज बन गए ?" हमारी पौत्रियाँ स्वस्ति, सौम्या और सृष्टि रातको पास आकर कहती "दादाजी ! हमें महाराजजी की कहानी सुनाओ।" ऐसे माहौल में करीब तीन साल के बाद आकार ग्रहण कर सकी यह पुस्तक।

आदरणीय डॉ. चेतनप्रकाशजी पाटनी (जोधपुर) ने आत्मीयता से अति शीघ्र इस पुस्तक का प्रूफ-संशोधन किया, उनके प्रति आभार की संवेदना कैसे प्रकट करूँ ? मेरे पास शब्द नही हैं।

इस पुस्तक का प्रकाशन कराके श्री बेतालीस दशा हुम्मड दिगम्बर जैन समाजने अपनी मुनिभक्ति का परिचय दिया है।

इस पुस्तक के प्रकाशन में जिस-जिस संस्था एवं महानुभाव ने आर्थिक सहयोग प्रदानकर अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग करके पुण्यार्जन किया है, उनके सबके प्रति हार्दिक साधुवाद।

विनायक एन्टरप्राइज प्रेसवाले श्री हितेशभाई जो कम्पोज करते-करते आचार्यश्री के भक्त हो गए, कम्पोज से लेकर प्रिंटिंग तक अपनत्वसे सुंदर मुद्रण करने हेतु सतत प्रयासशील रहे, उनको बहुत-बहुत साधुवाद।

इस पुस्तकमें जो श्रेष्ठ है वह सब है गुरुवर के आशीर्वाद का सुफल और जो कुछ त्रुटियाँ हैं वह है हमारी अनभिज्ञता के कारण ।

यह भक्ति, श्रद्धा-सुमनका गुम्फन वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के पावन पाद-पदमों में सविनय नमोस्तु के साथ.....

"तव पद मेरे हिय में
मम हिय तेरे पुनीत चरणों मे"

चरण चञ्चरीक,
विनोद 'हर्ष', इन्दु. वी. शाह
डी-१, नटुभाई एपार्टमेन्ट,
मोतीनगर सोसायटी के सामने,
नवरंगपुरा, अहमदाबाद - १४.
फोन : ०७९-५५६२००९०

जगद्गुरु कर्मयोगी स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी से मुलाकात के अंश

(सन् १९९३ के श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोला में भगवान श्री बाहुबली के महामस्तकाभिषेक में वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज की प्रधान आचार्य के रूपमें उपस्थिति के बारे में श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोला के जगद्गुरु कर्मयोगी स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी के साथ दिनांक ११ फरवरी २००४ को हुई बातचीत के अंश)

विनोद : आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज को आचार्यपद पर प्रतिष्ठित हुए मात्र दो साल ही हुए थे फिर भी राष्ट्रीय - आन्तरराष्ट्रीय स्तर के इस महोत्सव के लिए उन्हें ही क्यों प्रधान आचार्य के रूप में आमंत्रण दिया गया ?

भट्टारकजी : चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण आचार्य परंपरा के वर्तमान आचार्य हैं श्री वर्धमानसागरजी, उनकी प्रसिद्धि का यह भी एक कारण है। आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजजी की आचार्य परंपरा के आचार्यों में वे मध्यवयस्क होने के कारण इतनी दूर आ सकते हैं। उनके पहले जो भी आचार्य हुए हैं उनमें आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज को छोड़कर कोई भी आचार्य महामस्तकाभिषेक में सम्मिलित नहीं हुए, शायद वृद्धावस्था एक कारण हो सकती है, इससे इतने दूर चलकर आना सम्भव नहीं था। इस कारण हमलोग, तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष श्री साहू अशोककुमारजी, भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा के अध्यक्ष श्री निर्मलकुमारजी सेठी और यहाँ के कार्यकर्ता सब लोगोंने जाकर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज से निवेदन किया - जिससे उन्होंने स्वीकृति दी। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज का महामस्तकाभिषेक के लिए आनेका समाचार महत्त्वपूर्ण था।

जो भी इस पदमें विराजमान होता है वह समस्त त्यागियों में श्रेष्ठ माना जाता है, ज्येष्ठ माना जाता है पद के हिसाब से।

विनोद : सन् १९९३ एवं सन् १९९४ के दो चातुर्मास आचार्यश्री के श्रवण बेलगोला में सम्पन्न हुए याने कि एकसाल तक का सान्निध्य रहा । आचार्यश्री के व्यक्तित्व की कौनसी ऐसी विशिष्टताएँ हैं जो आपको प्रभावित करती हैं ?

भट्टारकजी आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज में वक्तृत्वकला है, सरलता है, वे कार्यक्रमों में भाग लेने एवं उनका मार्गदर्शन करने में रुचि लेते हैं । यहाँ आने के बाद चातुर्मास में सभी साधुओं के साथ उनका व्यवहार अच्छा रहा । सभी को आदर के साथ, प्यार के साथ अपने पास बिठाना, बातचीत करना, प्रत्येक समस्या को समाधानपूर्वक हल करना, ये सब उनके अंदर की विशेषतायें हैं । इसी कारण से महामस्तकाभिषेक महोत्सव के लिए उनका चातुर्मास हम सबके लिए भी बड़ा महत्त्व रखता है ।

वैसे आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी परंपराको जैसी-की-तैसी बनाके रखना ही उनका मुख्य उद्देश्य रहा है । इसलिए किसी भी योजना में अपने आपको समन्वित करने की उनकी इच्छा नही थी। त्याग और तपस्या यही उनका मुख्य मुद्दा रहा है,अभी भी वही कार्य कर रहे हैं । किसी संस्था में, किसी क्षेत्र में पड़ना या संस्थाका निर्माण करना, किसी संस्था को अपनी व्यवस्था की दृष्टिसे लेना ऐसे कोई भाव उनके अंदर नही हैं । निर्लेप वृत्ति से ही आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की परंपरा को बनाए रखने में वे सदा प्रयत्नशील हैं । हमेशा वे कहा करते है कि "हम तो साधना करनेवाले हैं, प्रवचन करनेवाले हैं" । इसलिए किसीभी (सामाजिक) समाज या संस्था में उनका हस्तक्षेप नही है, आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी परंपरा में यह नही है, इस प्रकार का दृष्टिकोण है आचार्य श्री वर्धमानसागरजी का । आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की परंपरा में प्रशस्ति लेना, कोई पुरस्कार लेना यह स्वीकार्य नही है,

समाज से कोई अपेक्षा नही थी। यद्यपि हमलोग चाहते थे कि उनको समाज की ओर से कोई प्रशस्ति दी जाय, उन्होंने कहा कि "हमारी परंपरा में यह नही है, हम कोई उपाधि आदि स्वीकार नही करेंगे।" समाज या संस्था के किसी कार्यक्रममें आशीर्वाद देना, हो सके उतना मार्गदर्शन देना, इतना ही काम है। इसलिए त्याग में अग्रेसर, सामाजिक हित के लिए उनके अंदर भावना है। आचार्यश्री शांतिसागर जी की परंपरा को कायम रखना यह उनकी महत्त्वकी विशेषता है।

विनोद : कनकगिरि में आचार्यश्री के साथ क्या हुआ था? इस पर प्रकाश डालनेकी कृपा करे?

भट्टारकजी : आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को कनकगिरि में कुछ दिन पाँव में दर्द हो गया था और लगभग एक माह तक उनको वहाँ रुकना पड़ा। हम लोग बारबार दर्शन के लिए जाते रहे, उपचार भी चलता रहा। पाँव में दर्द है ऐसा उन्होंने बताया। पॉव में दर्द होंने से आचार्यश्री के पाँव के तलवे देखने का मौका मिला। आचार्यश्री के पॉव में चक्र है जो विशिष्ट शारीरिक लक्षण माना जाता है। सभी ने प्रशंसा की, चक्र की विशेषता की वजह से। साधुओं में चक्र राजयोग का चिह्न है। ऐसा ज्योतिषियों ने बताया है। साधुओं में राजयोग हो तो समाज में विशेष प्रभाव पड़ता है।

विनोद : आगामी याने कि सन् २००५ के महामस्तकाभिषेक के लिए भी आप परम पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को आमंत्रित करना चाहते हो, ऐसा सुना है, तो क्या वजह है?

भट्टारकजी : आचार्यश्री का जब ससंघ यहाँ से विहार हुआ तब हमलोगों ने कहा था कि, "आपको आगामी हर महामस्तकाभिषेक मे आना चाहिए। हर महामस्तकाभिषेक में आचार्यश्री शांतिसागर महाराज की परंपरा के आचार्य को आना चाहिए। उनके आने से साधुसंतो का विशेष प्रभाव पड़ता है, महोत्सव की गरिमा

बढ़ती है। हम सबका भाव है आप जरूर आयें" । मंगल विहार के समय उन्होंने उसको स्वीकार किया था। अभी २००५का महामस्तकाभिषेक निश्चित नहीं है।

विनोद : स्वामीजी ! आपने सम्मेदशिखरजी की वंदना कितनी बार की है? आचार्यश्री ने मुनिदीक्षा के बाद अभी तक सम्मेदशिखरजी की वंदना नहीं की, क्या आप भी आचार्यश्री के साथ- साथ वंदना करनेवाले हैं ?

भट्टारकजी : हमने तो हमारी दीक्षा के बाद तीन बार वंदना की है। लगभग सभी तीर्थो की यात्रा की है। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के साथ यात्रा करने का एक विशेष योग माहौल बनेगा। जब वे शिखरजी पहुँच जायेंगे तो हम भी जाने की सोचेंगे ताकि उनके साथ पहाड़ का दर्शन कर सकें। अनुकूलता देखेंगे।

विनोद : सुना है चारित्र चक्रवर्ती परमपूज्य आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के गाँव भोज में उनकी परंपरा के कोई भी आचार्य भगवंत नहीं गए थे। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी भोज गये और उन्होंने दादा गुरुवर आचार्यश्री शांतिसागरजी के गृहस्थ जीवन के सभी स्थानो को जाकर देखा। क्या इसके कारण आचार्यश्री की दक्षिण में चाहना बढ़ी है ?

भट्टारकजी : एक तो आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की दक्षिण यात्रा के बाद परंपरा के कोई भी आचार्य इधर नही आये थे। इसी कारण से शायद सम्बन्ध छूटा हुआ था। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के श्रवणबेलगोला चातुर्मास में भोज गाँव वाले आये थे। उसमें सुगर फैक्ट्री के चेयरमेनश्री अशोकजी पाटील भी थे। अशोकजी पाटील का आचार्यश्री को परिचय करवाया कि आप आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की जन्मभूमि के हैं। अशोकजी को कहा, "आप आचार्यश्रीको भोजगाँव पधारने का आमंत्रण दो और नारियल चढ़ाओ।"

अशोकजी पाटील ने नारियल चढ़ाते हुए आचार्यश्री से निवेदन किया,
"आचार्यश्री ! आप जब श्रवणबेलगोला से विहार करें तब ससंघ भोजगाँव जरूर पधारें।"
तब आचार्यश्री ने कहा,
"यह तो चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी की जन्मस्थली है, यह तो हमारा मूल स्थान है, हम जरूर आयेंगे, पवित्रभूमि की यात्रा करेंगे।"
ऐसा उन्होंने तुरन्त कह दिया। इससे अपने दादागुरु के प्रति उनकी जो विनय, सद्भाव, भक्ति है वह दिखाई देती है। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी भोज गए। वहाँ बड़ा महोत्सव हुआ। आचार्यश्री के सान्निध्यमें शिक्षण संस्था कायम की गई। संस्था के लिए १० एकड़ जमीन ख़रीदी गई। वहाँ कुछ दिन रुके। आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के घरमें, जहाँ उनका जन्म हुआ था, वहाँ गए और वहाँ उनका आहार हुआ। आचार्यश्री शांतिसागरजी के पश्चात् चार आचार्य हुए, उनकी परंपरा के कोई आचार्य भोज नही आये, इसी कारण से एक प्रकार की दूरी सी महसूस हो रही थी। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के वहाँ जाने से कर्णाटक में विशेष आनंद छा गया।

विनोद : आज जब असहिष्णुता बढ़ती जा रही है तब आचार्यश्री वर्धमान सागरजी महाराज का अन्य संघ के साधुओं के साथ महामस्तकाभिषेक में कैसा व्यवहार रहा ?

भट्टारकजी : आचार्यश्री वर्धमानसागरजी में जो सरलता है और सबको साथ लेकर चलने की क्षमता है, यह एक विशिष्ट गुण है। कोई भी हो, सभी को अपने साथ लेकर, यथायोग्य सन्मान देकर, सभी से विचार-विमर्श कर के कार्यक्रम संपन्न हुआ। साधुओं में परस्पर प्रेमभावना चाहिए, यह आचार्यश्री

वर्धमानसागरजी में ज्यादा है, उनके संघ से दीक्षित या दूसरे संघ से दीक्षित सब प्रेम से रहें, इससे कार्यक्रम में अच्छी व्यवस्था बनी । आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के वात्सल्य से सारे समाज का उनके प्रति भक्तिभाव बना रहा ।

आचार्यश्री ने उदारता, विशाल हृदयभावना से वात्सल्य प्रगट किया, जिससे सारा समाज, त्यागी वर्ग सभी संतुष्ट हुए । साधु चर्या में एकदम परिपक्व, संघस्थ सभी त्यागियों को अनुशासन में रखते थे। उनके व्रत, नियम, प्रतिक्रमण, सामायिक, स्वाध्याय इत्यादि अच्छे से सामूहिक रूप में बहुत अच्छा होता था । यह मनोज्ञ दृश्य देखने में आता था । परस्पर सामंजस्य भाव था । अनुशासनबध्द संगठित कार्यक्रम, समय के पाबंद, एक मिनिट का समय भी नही खोते थे ।

स्वयं चर्चा में भाग लेते थे, कोई विद्वान् होते तो उनसे विचार- विमर्श करते थे । वयोवृद्ध जिनमती माताजी से कहते, "माताजी ! आप क्या कहती हैं ?" इसी तरह सबको बोलने का समय देते थे । कोई घमंड नही, अहंकार नही, मैं ही विद्वान् हूँ दूसरे नहीं, ऐसा कोई भाव नहीं । सहज निर्मल परिणाम, उनके अंदर प्रगट हो रहा सहज वात्सल्य सभी को अच्छा लगा । वात्सल्य भाव, जो एक आचार्य में होना चाहिए, वैसा ही है । अभ्यास के लिए साधु, ब्रह्मचारी सबको मार्गदर्शन देते थे । वात्सल्यपूर्ण व्यवहार उनकी विशेषता रही ।

विनोद : हमने अपनी पुस्तकका शीर्षक ' वात्सल्य वारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागर ' रखा है, कैसा रहेगा ?

भट्टारकजी : हॉं ! यह ठीक ही किया आपने, एकदम बहुत ही सटीक है । एकदम उपयुक्त शब्द है उनके लिए, आपने ठीक सोचा । यह उनकी विशेषता है ।

卐 ॐ नमः सिद्धेभ्यः 卐

॥ श्रीवर्धमानसागराय नमः ॥

हे वात्सल्यवारिधि तुम्हें नमोस्तु ।
हे समता के स्वामी तुम्हें नमोस्तु ।
हे पल पल वर्धित तुम्हें नमोस्तु ।
हे वर्धमानसागरयति तुम्हें नमोस्तु ॥

न तो यह कथा है न जीवनी,
और न है यह जीवन वृत्तांत
जो पल - पल वर्धित होते हों,
जो होते हों क्षण - क्षण वर्धमान
उनके लिए भला कैसे लिखा जाय ?
तो फिर यह है क्या ?
यह तो एक भक्त का,
अपने आराध्य के प्रति,
भावना का अर्घ है, आरती है,
पूजा है, नमोस्तु है ।

यह बिन्दु से सिन्धु तक का
सफर करनेवाले साधक की पूजा है ।
व्यष्टि से समष्टि के
सर्वोदयी की अर्चना है ।
आत्मा से परमात्मा
होने वाले की आरती है ।
अपने आराध्य के प्रति,
एक भक्त के अर्पित प्रसून हैं ।
इस प्रसून की महक से
धर्मभावना पल्लवित हो,
बस यही भावना है, यही चाहना है ।

✤ ✤ ✤

छोटा सा सूर्य आसमान से
जैसे धरती पर उतर आया हो;
मुखमंडल पर वैसी ओजस्वी आभा लिये,
संपूर्ण अकिंचनत्व को धारे हुए,
परिपूर्ण पंचाचार का दक्षता से पालन करते हुए,
समष्टि के कल्याण की इच्छा रखते हुए,
भावों में भरपूर भक्ति लिये,
हृदय में अतुल उत्साह भरे,
मन की अनन्य उत्कंठा के समाधान के लिए
दृष्टि को अवनि और अंबर में
झुकाते - उठाते चले जा रहे हैं।
जमी पर पाँव रुकते नहीं;
मानो उड़ते जा रहे हैं हवा में।
चलते रहना ही जिनका धर्म है
सब चले जा रहे हैं साथ में
अपने गंतव्य की ओर।
दूर-दूर कुछ दिखा
हाँ, कुछ खंभे जैसा।
एक ने दूसरे को, दूसरे ने तीसरे को पूछा,
"क्या यही हैं ?"
साथवालों में से किसी की आवाज आई,
"लगता तो यही है, धीरे-धीरे आगे
स्पष्ट होता जाएगा।"
आते - जाते ग्रामवासी अपनी जिज्ञासा
लिये एक-दूसरे को पूछते हैं
"कौन हैं ये संत ? और कहाँ जा रहे हैं ?

* * *

मनमोहक प्राकृतिक सौन्दर्य की गोद में बसा हुआ, आर्यखंड का यह भारत देश, प्राचीन काल मे आज तक पवित्रता, संस्कृति एवं सभ्यता में बेमिसाल है। उत्तर में उत्तुंग हिमाच्छादित गिरिश्रृंग, सूर्य की किरणों में स्वर्णिम एवं चंद्र की उज्ज्वल धवल ज्योत्स्ना में रजत तेजोपुंज समान शोभायमान है। ऐसा हिमालय अनादि से अद्यावधि ऋषिमुनियों की साधना-भूमि रहा है। पूर्व में लहराता बंगाल का उपसागर और पश्चिम का अरब समुद्र सीमासुरक्षा के द्योतक हैं। दक्षिण में विशाल हिंद महासागर हिमालय की चोटी से लेकर दक्षिण तक फैले चरण वाले महान् महर्षि भारत का पाद-प्रक्षालन कर रहा है।

अपनी आन, बान व शान में सर्वश्रेष्ठ भारत की सस्य-श्यामला वसुंधरा ने तीर्थंकर, चक्रवर्ती और कामदेव जैसे महापुरुषो को जन्म दिया है जिन्होंने अपने त्याग, तपस्या एवं ज्ञान के माध्यम से संसार के दुःखों से संतप्त सभी जीवों को सुख-शांति का मार्ग दिखाते हुए मोक्ष का मार्ग प्रशस्त किया है।

पूरब से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक फैलते हुए अनेक प्रांतो मे विभाजित ऐसा आज का भारत भाषा और रहनसहन की भिन्नता के बावजूद अनेकता मे एकता लिये विद्यमान है। भारत के मध्य भाग में अवस्थित है गुलशनाबाद, मध्यप्रदेश के खरगोन जिले का प्राचीन नगर जो सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र से करीब १०-१२ किलोमीटर की दूरी पर है। सम्भव है, प्राचीन काल में यह नगर सिद्धवरकूट का ही हिस्सा रहा हो। उत्तर दिशा में पहाड़ियों से घिरा हुआ, दक्षिण में टेढ़ी-मेढ़ी बहती भाखड़ी नदी और करीब पॉच किलोमीटर की दूरी पर बहती नर्मदा नदी से इसका प्राकृतिक सौन्दर्य निखरा हुआ है। काल के प्रभाव से गुल शब्द गुल हुआ और रह गया शनाबाद। वह भी घिसते-घिसते हो गया सनावद। यही इस समय इस शब्द की ख्यात व्युत्पत्ति है।

हिन्दू, मुस्लिम, सिख, जैन आदि अलग-अलग जातियों को अपने में समाये हुए सनावद हाल में करीब ४०,००० से ५०,००० की आबादीवाला नगर है। विविध जातियों के लोग होते हुए भी यहाँ का एक-दूसरे के प्रति स्नेह व भाईचारा सराहनीय है। यहाँ दिगम्बर जैनों के लगभग १५० परिवार रहते हैं। सनावद के महात्मा गाँधी मार्ग एवं मार्ग की दोनों पट्टियों पर बसे दिगम्बर जैन परिवार अपने विशिष्ट धार्मिक योगदान से भारतवर्षीय दिगम्बर जैन समाज के मानस पटल पर आदरणीय रूप में उभरे हैं; जिससे आज आध्यात्मिक क्रांति के इतिहास में सनावद को सुवर्ण अक्षरों में अंकित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। ऐसी क्या विशेषता है सनावद नगर की ? क्यूँ इसका कीर्तिध्वज पूरे भारत में अपनी पताका फहरा रहा है ?

प्राप्त सूचनाओं के आधार पर आज करीब १५ व्रती - त्यागी इसी मार्ग में रहनेवाले दिगम्बर जैन परिवारों से हैं। मुनिश्री प्रशस्तसागरजी, मुनिश्री प्रयोगसागरजी एवं मुनिश्री प्रबोधसागरजी महाराज परम पूज्य आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के संघस्थ हैं। मुनिश्री अमेयसागरजी महाराज एवं मुनिश्री चारित्रसागरजी महाराज इन दोनों की समाधि हो चुकी है। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी एवं उनके संघस्थ मुनिश्री अपूर्वसागरजी एवं मुनिश्री अर्पित सागरजी महाराज यहीं के रहनेवाले हैं। पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज के शिष्य हैं मुनिश्री श्रेष्ठसागरजी महाराज। पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के संघस्थ हैं क्षुल्लक श्री मोतीसागरजी और ब्रह्मचारिणी चंद्रिका बहन। ब्र. अर्चनाबहन, ब्र. मृदुलाबहन आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के संघस्थ हैं एवं आर्यिका श्री पूर्णमती माताजी के संघस्थ ब्र. सारिका बहन भी इसी भूमि की निपज है। दो मुनिराजों के समाधिस्थ होने के बाद आज १३ त्यागी गण स्वकल्याण को सम्हालते हुए तथा परकल्याण के निमित्त बने हुए भारत के विविध प्रान्तों में विहार कर रहे हैं।

रेवानदी के तट पर आया हुआ है सिद्धक्षेत्र सिद्धवरकूट जहाँ से दो चक्रवर्ती, १० कामदेव और करीब साढ़े तीन करोड़ मुनिराज मुक्त हुए हैं। इसी परम पवित्र भूमि का हिस्सा हो सकता है आज का सनावद नगर। दूसरे यह भी सम्भव है कि सिद्धवरकूट से सिद्धत्व प्राप्त सिद्ध भगवंतों के पुण्य परमाणुओं को नर्मदा नदी अपने बहाव में वहाँ से यहाँ ले आई हो और इस भूमि मे पुण्यवान महानुभाव पैदा हुए हों जिनका लक्ष्य भी सिद्धत्व है।

ऐसे सनावद के महात्मा गांधी मार्ग की दो पट्टियों मे से एक पट्टी का वह मकान अब मात्र मकान न रहकर लाखों लोगोंकी श्रद्धाका, दर्शन का, भक्ति का केन्द्र बन चुका है। इस साधारण मकान मे पैदा हुआ एक असाधारण बालक बड़ा होकर अपने प्रबल पुरुषार्थ से प्रारब्ध की ऐसी ऊँचाई को प्राप्त हुआ है जो न केवल इस जन्मको सार्थक कर रहा है अपितु जन्मान्तर मे इससे भी अधिक पुरुषार्थपूर्वक संसार के बंधनो को तोड़कर सिद्धालय में बिराजमान होगा। यह उस विराट् व्यक्तित्व की कथा है, जिसने अपनी साधना, संयम, निष्ठा और समता के समन्वय से भारत के अध्यात्म जगत् मे प्रथम श्रेणी का स्थान बना लिया है। बालक यशवन्त ने मुनि वर्धमानसागर होकर बिन्दु से सिन्धु की अनवरत साधना-यात्रा करके छत्तीस मूलगुणधारी आचार्यत्व धारणकर लाखों लोगों के हृदयों मे आराध्य का स्थान प्राप्त कर लिया है। इनकी मृदुवाणी, सद्व्यवहार और वात्सल्य की त्रिवेणी जैन तो जैन, अजैनों के हृदयों में भी भक्ति का झरना बहाने लगी है। इनके पद पंकज से पवित्र हुई जमीं पर से विषमता, वैमनस्य और विवाद वाष्पीभूत होकर समता, स्नेह और बंधुत्व की वर्षा हुई है।

सनावद के महात्मा गाँधी मार्ग के एक सामान्य मकान मे पोरवाड़ जाति, पंचोलिया गोत्र वाले श्री कमलचंदजी अपनी धर्मानुरागिणी धर्मपत्नी मनोरमाजी के साथ रहते हैं। स्वभाव से मिलनसार, कर्तव्यनिष्ठ

एवं कार्यदक्ष दोनों पति-पत्नी का स्नेही-रिश्तेदारों में विशेष स्थान है। सस्मित वदन और हित-मित प्रियवचन की धनी मनोरमाजी सही में सती मनोरमा की याद दिला देती हैं। जबसे ससुराल में आई हैं तभीसे सब की दुलारी बनचुकी हैं।

कमलचंदजी दोपहर को खाना खाने घर आए। उनको लगा, आज मनोरमाजी का चेहरा ज्यादा खिला-खिला दिख रहा है।

उन्होंने मनोरमाजी से पूछा, "अरे भाग्यवती! क्या बात है? आज ज्यादा खूबसूरत दिख रही हो?"

"जी................ कुछ नहीं।"

"नही, जरूर कोई बात है, मुझे बताओ।"

लजा गई मनोरमाजी। सोचने लगी कैसे बताऊँ?

मनोरमाजी ने प्रयत्नपूर्वक कहा,

"अपनी जीवन बगिया में पुष्प खिलनेवाला है, मैं माँ बननेवाली हूँ।"

इतना कहते-कहते शर्म से झुक गई आँखे मनोरमाजी की। दौड़ गई अंदर के कमरे में। खुशी से तनमन झूम उठा कमलचंदजी का। जा के बाँहो में भर लिया मनोरमाजी को। दोनों की खुशी का कोई ठिकाना न रहा।

'माँ'। हाँ, मनोरमाजी माँ बननेवाली हैं। सही में, माँ एक अनुपम शब्द है। यह मात्र शब्द नही एक बृहद्काय ग्रंथ है, महाविद्यालय है बच्चोंका। यदि सागर से अधिक गहराई, गिरिश्रृंग से अधिक ऊँचाई, आसमान से अधिक असीमता को नापना है, जानना है तो उसकी दर्शिता, उसका बेरोमीटर है माँ। धरा से भी धीर-गंभीर, प्रेम करुणा और सहनशीलता की अनन्य मूर्ति, सृजनका आधार है माँ। मातृत्व के साथ ही नारी को पूर्णत्व प्राप्त होता है। संतान गर्भ में आते ही हर माँ इसके बारे में सोचने लगती है। "मेरा बच्चा ऐसा होगा। उच्च संस्कार के

साथ अच्छी पढ़ाई-लिखाई करके, संसार में कुछबनकर अपने घराने का नाम रोशन करेगा, आदि ।"

मनोरमाजी के चित्त में भी ऐसा चिंतन चला । वीतराग भगवान के दर्शन-पूजन एवं धर्म-श्रवण के साथ दिन-मास बीतने लगे ।

कमलचंदजी ने देखा-आज मनोरमाजी की तबियत कुछ ठीक नहीं लगती, चेहरे पर पीड़ा के भाव आते हैं, चले जाते हैं । वे कुछ समझे, कुछ नहीं समझे ।

उन्होंने पूछा, "भाग्यवती ! मौसी और चाची को बुलालूँ क्या ?"

"नहीं जी । आप चिंता न करें । ऐसी कोई बात नहीं है । मैंने दोनों से बात कर रखी है ।"

मनोरमाजी ने सोचकर पति को निश्चिंत रहने को कहा, और कमलचंदजी आनंदमिश्रित चिंता में खोये हुए अपने काम पर चले गए ।

दूसरे दिन कमलचंदजी दो-तीन रिश्तेदारों के साथ बाहर बैठे बाते कर रहे हैं । लेकिन सभी का ध्यान अंदरवाले कमरे की ओर है । अंदर से महिलाओं की चहल-पहल और बातों की मंद-मंद आवाज सुनाई देती है । थोड़ी ही देर में 'उँवा उँवा' नवजात शिशु की रोने की आवाज आती है । बाहर बैठे सभी के कान सतर्क होते है ।,सब सोचने लगते है आवाज तो भारी है, लड़का हुआ होगा और हृष्ट-पुष्ट भी होगा । कुछ समय के बाद एक प्रौढ़ा ने दरवाजा आधा खोलकर बाहर मुँह निकालकर कहा "जी, बधाई हो बधाई । लड़का गोरा और हृष्ट-पुष्ट है । दोनो का स्वास्थ्य भी अच्छा है ।"

ये शब्द शब्द नहीं थे । किसी ने कानों के माध्यम से मानो अमृत उँडेल दिया हो । कमलचंदजी के हृदय में हर्ष के फौवारे छूटने लगे । अपनी जेब से कुछ रुपये निकालकर हलवाई के यहाँ से मिठाई मंगवाकर सबका मुँह मीठा करवाया । अब मन में पुत्र सम्बन्धी चित्रपट

चलने लगा । बच्चा कैसा होगा ? उसका नाम क्या रखेंगे ? कैसी पढ़ाई करेगा ? बड़ा होकर क्या बनेगा ?

पिता बनने के बाद कमलचंदजी अपने में कुछ अलग सा महसूस कर रहे हैं । क्यों न करें ? पहलीबार पितृत्व का अनुभव हुआ है । शुभ दिन, शुभ मुहूर्त में बच्चे को नाम दिया "कश्मिर" । जो सही में कश्मीरी जैसा सौंदर्यवान है । मनोरमाजी अपने मनमें फूली नहीं समाती । मेरा लाल लाखों में एक है, अच्छी पढ़ाई, अच्छे संस्कार से उसको ऐसा बनाऊँ कि दुनिया देखती रहे ।

कश्मिर बड़ा होने लगा । अपनी बालसहज क्रीड़ाओं से माता-पिता एवं अपने आस-पड़ोसवालों का दिल बहलाने लगा । सब लोग शिशु को अपने घर ले जानेको लालायित रहते । यह मनोरमाजी को भी अच्छा लगता है क्यों कि वे फिरसे माँ बननेवाली हैं ।

समय बीतने लगा । शनैः शनैः कश्मिर पाँच साल का हो गया । इस बीच मनोरमाजी की कोख से दो फूल खिले लेकिन दोनों खिलते ही मुरझा गए । माँ अपनी आँखों के सामने संतान का निधन बरदास्त नही कर सकती । फिर भी कुछ समय बाद सम्हल गई मनोरमा जी, कश्मिर जो उनके पास है । कश्मिर पड़ोस के बच्चों के साथ खेलने-कूदने लगा, कभी गिर जाता तो माँ का हृदय तड़प उठता । वह दौड़ कर अपने लाल को सीने से लगा लेती । उसके गालो पर चुम्बनो की झड़ी लगा देती । कश्मिर अपनी उम्र से अधिक समझदार है ।

वह कहता, "माँ ! मुझे कुछ भी नहीं हुआ है । तू खामखा क्यूँ घबरा जाती है ? ऐसा गिरना और संभलना तो होता ही रहता है । मेरे साथ तू कहाँ-कहाँ घूमेगी ? एक साल के बाद तो मुझे स्कूल में जाना है, क्या वहाँ भी तुम मेरे साथ आओगी ?"

मनोरमाजी ने उत्तर दिया, "कश्मिर बेटा, मैं समझती हूँ तुझे कुछ होनेवाला नहीं है लेकिन यह माँ का मन है जिसमें अपने लाल के लिए अनन्य प्रेम भरा पड़ा है तो न करते हुए भी चिंता हो जाती है ।"

बच्चा अपनी ममतामयी माँ को, भोली सूरत लिये, बड़ी-बड़ी आँखों से निहारता रहा और माँ के अंतर की भावना को पीता रहा।

माता-पिता के संस्कार से सिंचित कशिमर ने अपने स्नेहसभर व्यवहार से अपनी उम्र के बच्चों के हृदय में अपना स्थान बना लिया है, सभी इसके साथ खेलने को तत्पर हैं। बच्चे तो बच्चे बड़े लोग भी उसकी विनयशीलता एवं व्यक्तित्व से आकर्षित है इसीलिए तो कभी-कभी उसे अपने साथ घूमने ले जाया करते है।

कशिमर अब स्कूल जाने लगा। पढ़ने की लगन, तेजस्विता एवं सबके साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार से वह अध्यापकों एवं बच्चों का लाड़ला बन गया। पहली और दूसरी कक्षा में अव्वल नंबर से उत्तीर्ण होकर तीसरी कक्षा में आ गया। इस बीच मनोरमाजी के उदर से दो गर्भस्थ शिशु असमय में ही मरण को प्राप्त हुए। मनोरमाजी अपने भाग्य को, पूर्व में किये पापो को दोष देकर अपने मन को मना लेती है। उनकी ख्वाहिश है कि एक और पुष्प उनकी जीवन बगिया में मुस्कुराए। कशिमर को अपना साथ देनेवाला कोई मिल जाय। लेकिन किसे पता है कि भावी के भीतर मे क्या है ?

एक दिन कशिमर को दोपहर मे स्कूल का चपरासी घर छोड़ने आया। मनोरमाजी ने देखा, बच्चे का मुँह तेज बुखार से लाल हो गया है। घबरा गई मनोरमाजी। तुरन्त ले गई डॉक्टर के पास। डॉक्टरने जाँचकर दवाई, इन्जेक्शन आदि दिए और बोले,

"घबराओ मत। बच्चा ठीक हो जाएगा। शामको फिर ले आना।"

डॉक्टरकी दवाइयाँ फौरन दी गईं। माँ मनोरमा पल-पल अपने लाल के हाल देखती रही। कमलचंदजी भी सुनते ही घर आ गए। उनकी मुखमुद्रा भी गंभीर हो गई। उनको कशिमर के साथ-साथ मनोरमाजी की भी चिन्ता सताने लगी। शाम को तो डॉक्टर को घर

बुला लिया। डॉक्टर ने इन्जेक्शन दवाइयाँ आदि देकर कमलचंदजी से कहा,

"रात में ठीक हो जाएगा वरना सुबह अस्पताल ले जाएंगे।"

सहमे रहगए दोनों पति-पत्नी। दवाइयों के बावजूद भी कश्मिर की हालत बिगड़ रही है। रिश्तेदार एवं अड़ोस-पड़ोस के लोगों का उनके यहाँ ताँता लग गया। हरेक के चेहरे पर विषाद है, सब अपने आराध्य से प्रार्थना कर रहे हैं। कश्मिर बेहोश है। उसे होश में लाने हेतु सारे उपचार किये गये किन्तु एक भी कार्यकारी नहीं हुआ।

माँ बिलख रही है, वह बोली, "बेटा ! एकबार माँ कहके तो पुकार ?"

"अरी मनोरमा ! ऐसे मत कर, सुबह तक ठीक हो जाएगा।" किसी बुजुर्ग महिला ने आश्वासन दिया। क्या करें ? कुछ समझ में नही आ रहा है। सभी ने णमोकार मंत्र के जाप्य शुरू कर दिये। माता-पिता तो ऐसे हक्के-बक्के हो गए कि मुँह से उच्चारण भी न कर सके। थोड़ी ही देर में कश्मिर के मुँह से धीरे से आह निकली और उसके प्राण अनंत की यात्रा के लिए चल पड़े।

पति-पत्नी दोनों पर मानों वज्राघात हुआ। कमलचंदजी कैसे सम्हाले मनोरमा को ? बेहोश हो गई मनोरमाजी। एक-एक करके अपने जिगर के टुकड़ों को अपनी आँखों के सामने सदा-सदा के लिए बिछुड़ते नहीं देख सकी। सबसे पहला बच्चा था, इतना होनहार, सबका मनलुभावन बालक था, क्या करें ? रातभर बेहोश रही मनोरमाजी। सुबह उपचार से होश आया तब देखती हैं, अपने लाड़ले को अंतिम संस्कार के लिए ले जा रहे हैं। उस समय मनोरमाजी का क्रन्दन कारुण्य की चरम सीमा को लांघ गया। उपस्थित आबालवृद्ध सबकी आँखों से ऐसा पानी बरसा कि पूरा मोहल्ला भीग गया। कश्मिर की विदाई से वातावरण में मातम छा गया। कौन किसको सांत्वना दे ? कमलचंदजी

का मासूम गुलाबी कमल खिलने से पहले ही मुरझा गया । हाय ! कुदरत का यह कैसा खिलवाड़ ? उदयाचल से उतरा सूर्य बिना मध्याह्न के अस्ताचल में गिर गया ।

मनोरमाजी गुमसुम हो गईं । न कुछ खाती-पीती हैं, न कुछ मुँह से बोलती है । उनका सब कुछ कश्मिर के साथ चला गया है । उनकी ऐसी हालत देख खंडवा से आए भैया ईश्वरचंदजी और भाभी सेवाबाईजी रुक गए है यहॉ कि कुछ भी करके मनोरमाजी को हिम्मत और धैर्य बँधाये । भैया और भाभीजी कुछ ज्यादा रुककर अपने गाँव वापस चले गए ।

समय बीतता चला । कुदरत भी मनोरमाजी का बार-बार इम्तिहान ले रही है । हर इम्तिहान में अनुत्तीर्ण होते हुए भी मनोरमाजी के अंतर मे आशा की ज्योति जलती रही है ।

सबको लग रहा है कि इस परिवार में काल का अशुभ चक्र चल रहा है । बुजुर्ग महिलाएँ कहती हैं "किसी की शापित नजर लग गई है तो इसके लिए मंत्र-तंत्र, ताबीज का सहारा लिया जाय ।"

सबकुछ समझती हैं मनोरमाजी अपने अंतर मे । ८ पुत्र एवं ४ पुत्रियाँ, बारह संतानों के स्वर्गवास से निराश होने के बावजूद भी हिम्मत और धैर्य को धारण करने वाली श्रद्धान्विता भारतीय नारी हैं मनोरमाजी । आज भी अपने हृदय में आशा की ज्योति जगाये हुए वे मानती हैं कि उनकी जीवन बगिया में जरूर फूल खिलेगा । एक दिन इस कुल का दीपक अवश्य मेरे आँगन मे खेलेगा । पांडवपुराण के अध्ययन और जिनेन्द्र पूजन - अर्चन से टूटते धैर्य को संबल मिलता है ।

फिर एक बार उनकी गोदी मे खेलने कोई आनेवाला है । माँ की ममता की पुकार है कि उनका आनेवाला बालक आयुष्मान हो । वे समाज को, देश को एक ऐसा सपूत देना चाहती हैं जो स्वयं का उद्धार कर सर्व को कल्याण का मार्ग दिखाए । पूर्व भव में अज्ञानता एवं

प्रमादवश किये गए कर्मों का प्रायश्चित्त करती हुई अपने परिणामों को प्रभुभक्ति द्वारा शुभ्रता देने का सतत प्रयास कर रही हैं मनोरमाजी; मानों कोई अदृश्य स्रोत उनके तन-मन में शक्ति का संचार करते हुए रोम-रोम को पुलकित करता रहता है ।

एक रात मनोरमाजी चारपाई पर निद्राधीन हैं । पिछली रात मे उन्होंने एक स्वप्न देखा । क्या देखा स्वप्नमें ? अपने गाँव के पास से बहती नर्मदा नदी में एक बच्चा डूब रहा है । अपने को बचाने के लिए समग्र ताकत से हाथ-पाँव हिलाकर पुरूषार्थ कर रहा है । कैसे भी करके वह बच्चा किनारे आ जाता है । ऐसा स्वप्न देखकर मनोरमाजी हर्ष के साथ चिल्लाती हैं, "बच गया, देखो बच गया ।"

इस पुकार के साथ मनोरमाजी की निद्रा भंग होती है । पास की चारपाई पर लेटे कमलचंदजी भी इस आवाज से जाग गए और चौंक पड़े, वे बोले, "भाग्यवती ! क्या हुआ ? क्यों चिल्लाई ?"

तब मनोरमाजी ने बताया, "अब मैं जरूर भाग्यवती हूँ । लगता है, मेरे पापकर्मो का अंत नजदीक है ।"

मनोरमाजी ने स्वप्न का वृत्तांत अपने स्वामी को सुनाया । कमलचंदजी स्वप्न की बात सुनकर प्रसन्न जरूर हुए, लेकिन उनके मनमें आशंका हुई कि बच्चे की आयुष्य की खेवना की वजह से भी ऐसा स्वप्न आ सकता है । फिर भी इस समय वे आश्वसित रहे ।

इस स्वप्नदर्शन के बाद से मनोरमा देवी की जिनेन्द्र-भक्ति ओर भी बढ़ गई । उनके चेहरे पर अब कभी-कभी आनन्द की लकीरें दिखने लगीं । यह सब देखते हुए कमलचंदजी भी खुश नजर आने लगे ।

ऐसी मन:स्थिति के बीच पासवाली चाचीजी ने मनोरमाजी को कहा कि "राजस्थान के श्रीमहावीरजी अतिशयक्षेत्र में जाकर वहाँ उलटा स्वस्तिक बनाकर तेरे आनेवाले बच्चे की लंबी उम्र के लिए मन्नत मानके आ । वहाँ मानी हुई मन्नत पूर्ण होती है ।" इतना कहकर चाचीजी ने

मन्नत पूर्ण होनेवालों की लम्बी यादी रख दी मनोरमाजी के सामने। चाचीजी ने तो कमलचंदजी को भी यही सुझाव दिया था, लेकिन वे भूल गये अपनी व्यस्तता मे। पर एक ममतामयी माँ यह कैसे भूल सकती है ? उसे तो एक ही लगन है अपने आनेवाले बच्चे की लम्बी आयु की।

मनोरमाजी ने चाचीजी की बात सुनाकर कमलचंदजी से कहा चलो, हम आनेवाले इतवार को श्रीमहावीरजी चलें। कमलचंदजी को भी चाचीकी बात याद आ गई और उन्होंने तुरन्त हाँ भर दी। पति-पत्नी दोनो चल पड़े श्रीमहावीरजी की ओर।

श्रीमहावीरजी मे भगवान श्रीमहावीर स्वामी की चमत्कारी मूर्ति के दर्शन एवं पूजन-अर्चन के बाद माँ मनोरमाजी ने भगवान महावीर स्वामी की मूर्ति के समक्ष हृदय के पूर्ण भावो से आनेवाले बालक की लम्बी आयु के लिए प्रार्थना की, मंदिरजी की १०८ परिक्रमा की। परिक्रमा के बाद पति-पत्नी ने मंदिरजी के पास मे मन्नत की जगह पर जाकर उलटा स्वस्तिक बनाकर मन्नत मानी कि आनेवाला बालक लम्बी उम्र का हो। मन्नत सिद्ध हुई तो बालक के बाल यहाँ आकर उतारेगे।

उस समय माँ मनोरमाजी को मालुम नही था कि उनकी मन्नत सिद्ध होने के बाद बाल उतारने की विधि कौन करेगा और किस तरह करेगा। भावी के गर्भ मे क्या छिपा है ? किस अल्पज्ञ को ज्ञात है ? यात्रा करके मनोरमाजी और कमलचंदजी सनावद वापस आ गये।

कमलचंदजी अभी-अभी मंदिरजी से लौटे है। आज पर्युषण पर्व का तीसरा दिन उत्तम आर्जवधर्म का दिन है। अस्वस्थता के कारण मनोरमाजी आज मंदिरजी नही जा पाई।

सूर्य क्षितिज से ऊपर आया, अंधकार को नष्ट करता उजाला फैल गया जिसने पृथ्वीवासियों को जगाया। सूर्यकिरणों ने अपनी ऊर्जा बाँटना

शुरू किया। ठीक उसी समय कमलचंदजी के घर में, मनोरमाजी की कुक्षि से बाल रवि उदित हुआ। रवि रश्मियों से भीतर का कमरा जगमगा उठा। आज का दिन है भाद्रपद शुक्ला सप्तमी, सोमवार, दिनांक १८-९-१९५० का और ज्येष्ठा नक्षत्र, वीर संवत् २००७।

एकबार फिर कमलचंदजी के कर्णपुट उवाँ-उवाँ की आवाज से भर गए। आवाज परिचित लगी। वे खो गए अतीत के आगोश में। ऐसी ही आवाज सुनने को मिली थी उन्हें कश्मिर के जन्म समय। आवाज की साम्यता ही बता रही थी कि पुत्र का जन्म हुआ है। उनके मानस पटल पर एक क्षण के लिए बिजली जैसी चमकार हुई कि आज दशलक्षण पर्व का तीसरा दिन उत्तम आर्जव धर्म का दिन है, क्या यह बालक धर्म का धारक बनेगा ?

उनके चेहरे पर ख़ुशी कहाँ ? उसकी जगह पर तो अज्ञात भय आके बैठ गया है। भगवान जिनेन्द्र से बडे लगाव से प्रार्थना कर, भक्ति सभर भाव से बच्चे की लम्बी आयु की कामना कर रहे है कमलचंदजी।

उधर वेदना से मुक्त मनोरमाजी पुत्ररत्न की प्राप्ति के समाचार सुनकर तंद्रा मे चली गईं। जहाँ उनके मस्तिष्क की स्वीच ओन है। वे सोच रही है, "बारह-बारह बच्चो को अपनी कोख से जन्म देकर भी मेरा आँचल ख़ाली है। सब मुझे छोड़ के चल बसे। संसार मे शायद ऐसी एक मै ही अभागन माँ हूँ जो यह बर्बरता झेलती रही हूँ। इतना सबकुछ होते हुए भी और बच्चा पैदा करने का भाव, शक्ति एवं संकेत मुझे कहाँ से मिल रहा है ? कहते है "विपत्ति से ही संपत्ति की प्राप्ति होती है।" क्या यह अज्ञात शक्ति मेरी ममता और धीरज की परीक्षा के बाद किसी प्रतिभावंत व्यक्तित्व को प्रगट करना चाहती है ? हे जिनेन्द्रदेव ! यह सब क्या हो रहा है मेरे जीवन में ? बहुत हो चुका, अब मेरी इतनी परीक्षा न लो कि मैं टूट जाऊँ। एक ममतामयी दुखियारी माँ की 'अरज' सुनो

प्रभु ! आप तो तरण-तारण हैं । द्रौपदी, सीता, अंजना, मनोरमा को आपने ही विपत्ति से उबारा था । एक और मनोरमा आज आपकी शरण में आकर आपके चरणों में अपनी उम्र की भेंट चढ़ाकर भी अपने बच्चे की लंबी उम्र के लिए पुकार करती हैं । मेरे संसार में कुलदीपक से उजियारा कर दो प्रभो ! करोगे न ! इतने में बेटे के रोने की आवाज ने जागृत कर दिया मनोरमाजी को । छाती से लगा लिया अपने लाल को । निहारती रही बड़े गौर से । भव्य ललाट, गोरा बदन, काले घुंघराले बाल, बादाम जैसी बड़ी-बड़ी आँखे, मुखमंडल पर फैली हुई आभा । चकित रह गई मनोरमाजी बच्चे को देखकर । देखती रही, बस देखती रही । वे सोचती है आज मुझे इतना आनंद मिलता है तो माँ त्रिशला ने कैसे अवर्णनीय आनंद की अनुभूति की होगी ? बारह बच्चों के बाद आया यह तेरहवॉ सभी से निराला है । मनलुभावन बच्चे को देखकर मॉ की ममता फिर एक बार चिंतित हो गई । कही से उसके कानों मे वह ध्वनि गूंज उठी "तेरहवॉ तिर जाएगा ।"

पास मे खड़ी दाईमॉ से कहा,

"इसे पहले तुम काजल का टीका लगा दो ।"

"हॉ । अरे बच्चे को देखने में मै यह तो भूल ही गई ।"

दाईमॉ ने उत्तर दिया और काजल का टीका लगा दिया ।

दिन महीने बीतने लगे । बालक का नाम रखा गया यशवन्त । यशवन्त के आने के बाद घर में शांति और आनन्द का माहौल फैलता रहा । कमलचंदजी के वेतन में सेठजी ने बिना माँगे वृद्धि कर दी । घर आकर उन्होंने बताया, "यह सब यशवन्त के आने से हुआ है । सचमुच लड़का पुण्यशाली लगता है ।"

अपने हर्ष को दुगुना करते मनोरमा ने उत्तर दिया, "लड़का किसका है ?"

सबकुछ वृद्धिंगत दिखते माता-पिता को कहाँ पता था कि

उनका यशवन्त आगे जाकर आचार्य बर्धमानसागर बनकर परिवार, समाज, नगर के यश को दशों दिशाओं में फैलाता हुआ कीर्ति को, धर्म को वृद्धिंगत करेगा ।

यशवन्त एक साल का हो गया । रिश्तेदारों की सलाह और बारबार याद दिलाने से मनोरमाजी को एक कठोर निर्णय लेना पड़ा । यशवंत चार-पाँच साल का न हो जाय तब तक उसे मामा के घर पर ही रखने का निर्णय । एक साल के बच्चे को अपने से जुदा करना एक माँ के लिए बड़ा कठिन होता है । इसपर भी यह तो वह माँ है जो शुरू से बच्चे का वियोग सहती आई है । लेकिन पुत्र की क्षेमकुशलता के लिए माँ ने अपने हृदय पर पत्थर रखकर निर्णय को मान्यता दे दी । वह अपने बच्चे के लिए कुछ भी सहने को तत्पर है ।

कमलचंदजी और मनोरमाजी यशवन्त को लेकर खंडवा उसके मामा के घर पहुँचे । ईश्वरचंदजी ने अपने बहन-बहनोई एवं भानजे को आदर-सत्कार देते हुए प्यारे यशवंत को अपनी गोदी में उठा लिया । नन्हा मुन्ना जैसे मामाजी को अच्छे से पहचानता हो, ऐसे उनके सामने हँसने लगा ।

मामाजी भी अवाक् रह गए । बोले, "दीदी, यह तो बिलकुल आप पर गया है ।"

"हाँ भैया ।" इतना कहकर मुस्कुरा दी मनोरमाजी ।

भाभीजी सेवा बाईजी भी फौरन बाहर चली आई । सस्मित वदन से सबकी आवभगत की । नन्हे यशवंत को लेकर अपने सीने से लगा लिया और इतना प्यार बरसाने लगी मानों उनका खुद का बच्चा हो ।

चार-पाँच दिनों में यशवन्त मामा-मामी के साथ बिलकुल हिल मिल गया । मनोरमाजी ने जान-बूझ कर ही अपनी ममता को सिकोड़ लिया । इन दिनों उसको पूरे समय मामा-मामी के पास रखा और स्वयं

देखती रही कि यशवंत कैसे रहता है।

भाभीजी ने मनोरमाजी के दिल को तसल्ली देते हुए कहा "दीदी ! एक माँ का दिल मैं जानती हूँ। मेरी और आपके भैयाजी की यही भावना है कि यशवन्त हमारे यहाँ रहकर बड़ा हो। इसलिए तो हमने आपको शुरू से बता दिया था कि इस वक्त बच्चे को हम पालपोसकर बड़ा करेंगे। उसे कुछ नहीं होगा। आप को जब भी यशवंत की याद आए आप फौरन यहाँ चली आना। हम समय समय पर चिट्ठी लिखकर हाल बतायेंगे।"

मनोरमाजी को सही में महसूस हुआ कि उनके भैया और भाभी लाखों मे एक हैं। उन्होने सामने से यह प्रस्ताव रखा है और वे देख रही हैं कि यशवंत की परवरिश कैसे होती है तो अभी दिल छोटा न करना चाहिए।

दो दिन और ठहरने के बाद भैया और भाभी से विदा लेते हुए मनोरमाजी की आँखो से गंगा-जमना बहने लगी। जिगर के टुकड़े से अलग होना कितना दुश्वार है ? लेकिन छोटा यशवन्त तो माँ के सामने देखकर हँस रहा है। मानों कह रहा है आज तू मुझसे जुदा होने से रो रही है, पर मै तो पूरा संसार छोड़कर वैराग्य धारण करनेवाला हूँ। माँ ने बच्चे को भाई से लेकर अपने सीने से लगाया और ममता से उसे चूमने लगी। कमलचंदजी ने भी बच्चे को प्यार किया, सर पर हाथ रखकर बोले, "बेटा यशवन्त, मामा-मामी को परेशान मत करना।" मानों इतना छोटा बच्चा समझता हो ? दोनो पति-पत्नी सनावद जाने को रवाना हुए।

सनावद में मनोरमाजी का जी नहीं लग रहा है। उन्हें अपना घर सूना-सूना दिख रहा है। बार-बार पुत्र की याद सता रही है। लगता है कुछ खो गया हो। यशवन्त की याद आते ही आँखें भर जाती हैं। मनोरमाजी की हालत कमलचंदजी से छिपी नहीं रही। उनको खुद को

भी पुत्रविरह की वेदना भीतर में सता रही है, लेकिन वे मनोरमा जी के कारण ही अपनी वेदना छिपा रहे हैं ।

मनोरमाजी के दिल को बहलाने हेतु उन्होंने कहा, "भाग्यवती, हम रविवार को सिद्धवरकूट की यात्रा करने को चलें ।"

मनोरमाजी ने पति का मन रखने को और यात्रा के भाव से हाँ भर दी ।

सिद्धवरकूट में भक्ति से दर्शन-पूजन करके माँ की ममता ने फिर एकबार अपने लाल की लंबी उम्र के लिए प्रार्थना की और वापस सनावद आ गए ।

खंडवा से भाई की चिट्ठी आने से माँ के हृदय को शान्ति मिलती है और पिता को चैन । भैया लिख रहे हैं, "यशवन्त शान्त और आनन्दी है । उनकी मामी जैसे माँ ही है वैसे हिल-मिल गया है । कभी-कभी मामा-मामी की गोदी को भिगो कर हँसता है जैसे बड़ा पराक्रम किया हो । चिन्तामणि के पास बैठकर खेलता है । बहना, चार-पाँच साल तो यूँही गुजर जाएंगे । आप यशवन्त की बिलकुल चिन्ता मत करना । आपकी और जीजाजी की सेहत का ख्याल रखना । अवकाश मिलनेपर जरूर यहाँ आजाना ।"

काल रूपी रोकेट पर सवार समय पसार हो रहा है । यशवन्त अब दो साल का हो गया । भैया और भाभीजी से समाचार और पाती मिलते रहते हैं । भैया लिखते हैं, "यशवन्त की सालगिरह पर आपका बहुत इन्तजार किया । जीजाजी की चिट्ठी से पता चला कि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था सो आप न आ सके । यशवन्त की मामी ने अपने तौर-तरीके से बड़े ठाठ से सालगिरह मनाई । मामा के साथ मंदिरजी जाके सर झुकाके दर्शन करना वह सीख गया है । अब वह दौड़ता है मीठा-मीठा बोलने लगा है । उसकी ग्रहण शक्ति एवं स्मृति तेज है । उसकी उम्र के बच्चों से वह ज्यादा समझदार है । बड़ा होकर अपना यह

राजदुलारा जरूर अपना नाम रोशन करेगा ।"

माँ अपने बेटे की प्रगति सुनकर खुश भी होती है, साथ में उनकी याद की तीव्रता के कारण उनके विरह में रो भी देती है। अपने लाल से मिलने हेतु लालायित हो जाती है। जन्मदिन पर जाना चाहती थी लेकिन कमलचंदजी की अस्वस्थता के कारण दोनों न जा पाए।

धर्मपत्नी के मन के भावों को कमलचंदजी अच्छे से जानते हैं। घर लौटकर मनोरमा से पूछते हैं, "क्या खबर है यशवन्त की ? कोई चिट्ठी आई है खंडवा से ?"

चकित रहजाती है मनोरमा। उसे आश्चर्य होता है कि पतिदेव को कैसे जानकारी मिलती है ? वह यह भूल जाती है कि उसके चेहरे पर ही तो भीतरी बात लिखी जाती है सो देखते ही वे पढ़ लेते है। फिर भी खुशी को और बढ़ावा देने हेतु वे पत्नी से पूछते हैं।

मनोरमा हँसकर सब वृत्तांत सुना देती है पतिको।

कुछ सोचकर कमलचंदजी कहते हैं, "अरे भाग्यवती ! ऐसा कर, तू अकेली अपने मायके चली जा। अस्वस्थता के कारण मैंने अभी-अभी छुट्टियाँ ली है सो अब और नहीं मिलेंगी और काम भी ज्यादा है।"

"मेरा मन भी जाने को कह रहा है लेकिन आपका विचार आते ही मन ढीला हो जाता है क्योंकि अभी आपकी तबियत पूरी ठीक नही है।" मनोरमाजी ने उत्तर दिया।

"अरे पगली, मैं यशवन्त जैसा छोटा तो नही हूँ फिर क्यूँ मेरी चिंता कर रही है ? मैं अपनी व्यवस्था कर लूंगा। यशवन्त को देखने से ही तेरे मन को सुकून मिलेगा। यशवंत भी खुश होगा। क्या सोचती है ? कल ही चली जाना।"

इतना कहकर कमलचंदजी काम पर चले गए। दूसरे दिन मनोरमाजी खंडवा के लिए रवाना हुईं।

मनोरमाजी का चंचल चित्त विचारपंखी के पंख लिये उड़ान भर रहा खंडवा की ओर। अधीर मन समय को शिकस्त देकर पहुँच गया प्यारे यशवन्त के पास। मैं तो उसे बिलकुल छोटी अवस्था में छोड़ के आई हूँ। एक युग था जब देवकी अपने कन्हैया के लिए तड़पती थी। उससे तो अच्छा है मैं तो जब भी जी चाहे, अपने लाल से मिल सकती हूँ। मेरा लाल मुझे कैसे पहचानेगा ? नहीं, जरूर पहचानेगा, माँ की ममता उसे खींच लाएगी।

यशवन्त के स्वास्थ्य की शंका एक क्षण के लिए मनो-मस्तिष्क में बिजली सी कौंध गई। भाई ने चिट्ठियाँ भेजी हैं, उनमें तो उसे स्वस्थ बताया है। सो यह शंका निरर्थक है। लेकिन मन कहाँ मानता है ? एक तर्क के सामने दूसरा तर्क रखता है कि सम्भव है भाई ने हमको दुःख न हो इसलिए जानबूझ कर बात छिपाई हो। क्षणभर के लिए पूरा आनन्द, उत्साह भाप बनकर उड़ जाता। लेकिन जिनेन्द्रदेव की श्रद्धा ने मन को दृढ़ता प्रदान की। फिर से डूब गई अपने लाल के विचार में। इस बीच कब खंडवा आ गया पता ही नहीं चला। वे अपने भाई के घर के रास्ते जा रही थी तो बीच में ही चिन्तामणि ने बुआजी को देखा। उसने दौड़कर चरण स्पर्श करके बेग अपने हाथ में उठा लिया और बोला,

"बुआजी ! आप आनेवाली हैं, ऐसी चिट्ठी भी नहीं भेजी ?"

"हाँ बेटा ! मैं ऐसे ही आ गई हूँ। यशवन्त कैसा है ?"

"यशवन्त तो बड़ा हो गया, मेरे साथ खेलता है। मेरी मम्मी को 'मेरी मम्मी है' ऐसा कहकर मुझे धक्का लगाकर दूर करता है। उसे तो णमोकार मंत्र का उच्चारण भी आ गया है।"

चिन्तामणि ने अपने तरीके से सुनाना शुरु किया।

मनोरमाजी ने पूछा, 'उसका स्वास्थ्य कैसा है ?'

"अरे, वो तो खासा हट्टा-कट्टा है। मम्मी उसे स्नान कराकर

काजल का टीका अवश्य लगाती है ताकि किसी की नजर न लग जाय ।”

चिन्तामणि के साथ बातों-बातों में कब घर आ गया मनोरमाजी को पता ही न लगा ।

आज की फ्लेट संस्कृति की तरह उस समय घर के दरवाजे बंद नहीं रहते थे । घर के सदस्यों एवं अतिथियों के लिए खुले ही रहते थे । घर में आते ही चिन्तामणि ने हाँक लगाई, “अरे यशवन्त, देख तो कौन आया है ?” उसके पैरों में जितनी ताकत थी उससे दौड़ कर आया वह । किन्तु मनोरमाजी को देखते ही उसके पैरों में ब्रेक लग गई । सामने मनोरमाजी अपने दोनों बाहु पसारे बैठ गई । क्षण, दो क्षण का समय बीता । माता और पुत्र की दृष्टि का संधान हुआ, न जाने क्या हुआ ! माँ की ममता से खिंचा आया यशवन्त ! समा गया माँ की बॉहो में । फिर तो क्या कहना ! मॉ की अकूत ममता उमड़ पड़ी बेटे पर । रसोई घर से दौड़ आयी भाभीजी, अलौकिक आनन्द प्रदाता दुर्लभ दृश्य देखकर ठिठक गई वहीं ।”

भाभी ने ननद का सत्कार किया । यशवन्त को कहा -

“बेटा, ये तेरी माँ हैं ।”

यशवन्त बोल पड़ा,

“नहीं मॉ ! ये तो बुआजी हैं, चिन्तामणि भैया ने अभी-अभी तो बुआजी कहा है ।”

“हाँ बेटा ! चिन्तामणि की बुआजी हैं लेकिन तेरी माँ है ।” भाभीने बताया,

“नहीं, मेरी माँ तो तुम हो ।”

यह सुनकर ननद और भाभी दोनों की आँखें गीली हो गई । तीन-चार दिन मनोरमाजी मायके मे रही । मायके में क्या यशवन्त के पास ही रहीं । उन दिनों उन्हें स्वर्गिक सुख से भी अधिक सुख की

अनुभूति हुई । उनकी इच्छा तो यशवन्त को साथ ले जाने की थी । लेकिन एक मजबूर माँ को बच्चे के हित के लिए मन को कठोर बनाना पड़ा ।

जाते समय मनोरमाजी ने अपने भैया से कहा,

"भैया, आपका उपकार मैं कैसे भूल सकती हूँ ? यह ऋण मैं कैसे अदा कर पाऊँगी ? भाभीजी ! आपने तो कमाल कर दिया, यशवन्त को माँ की कमी महसूस नहीं होने दी । उसके लिए मैं कैसे शुक्रिया अदा करूँ, मेरे पास शब्द नही हैं ।"

भैया ने कहा,

"बहना ! हमने तो कुछ नहीं किया है । यह तो हमारा फर्ज है, मामा के होते हुए भानजा दूसरे किसी के घर कैसे रहेगा ? जरूरत पर जो काम न आए वह रिश्ता भी किस कामका ? हरेक भाई की ख्वाहिश होती है उसकी बहना खुश रहे । इसके लिए कुछ भी करना पड़े भैया सदैव तत्पर है । आप ज्यादा सोचा न करो ।"

भाभीजी ने कहा,

"दीदी, आप यशवन्त के लिए मन छोटा न करो । समझना अपने पास ही है, मुझे तो लगता है मानों मेरी कोख से ही पैदा हुआ है ।"

मनोरमा बोली, "इतने छोटे बच्चे को पालना बहुत कठिन है । आपको कहीं आने-जाने में भी तकलीफ होती होगी ?"

भाभी को लगा, दीदी ज्यादा भावुक हो गई है ।हम क्या उनकी विषम परिस्थिति में इतना भी न करें ? हमारे घर रहकर बच्चा बड़ा हो जाए बस, यही प्रार्थना हर समय करते रहते हैं ।

वह बोली,

"आप ये सब चिन्ताएँ किये बिना अपनी और जीजाजी की सेहत का ध्यान रखना, जीजाजी को हम सबका प्रणाम कहना ।

एकबार उनको साथ लेकर जरूर आना ।"

पूरा परिवार मनोरमाजी को विदा करने चला । जैसे बहना प्रथमबार ससुराल को विदा हो रही हो । यशवन्त को एकबार फिर अपनी गोदी में उठाकर चूम लिया मनोरमाजी ने । फिर भाभीजी को लौटाकर अश्रुसभर आँखों से उसे अपलक देखती रहीं मनोरमाजी ।

बेटे की नूतन छवि को आँखों में भरकर, उसकी यादों को हृदय में उतारकर वापस आ गईं मनोरमाजी अपने घर। कमलचंदजी को पूरा वृत्तांत सुनाया और बताया कि शायद ऐसा पालन-पोषण तो हम भी न कर सकते उसका । कमलचंदजी भी यह सब सुनकर आभारवश गद्‌गद हो गए, उनकी आँखें नम हो गईं ।

समय तेज रफ्तार से बहने लगा । तीन साल का हो गया यशवन्त । बेटे के वियोग की अवधि घटती जा रही है । बोलना, लिखना जितना सहज है उतना सहज नहीं है समय पसार करना । सुख में समय पसार हो जाता है वह समझ में नहीं आता । दुःखका एक एक दिन, एक-एक साल जितना लंबा लगता है और एक साल एक युग जैसा प्रतीत होता है ।

एक रात मनोरमाजी कुछ असमंजस का अनुभव करने लगीं । अपनी बात पतिदेव को कैसे बताए इसके बारे में सोच रही हैं । इतने में ही कमलचंदजी की आवाज सुनाई दी ।

"अरे भाग्यवती ! किस सोच में डूबी हो ?"

"जी, क्या बताऊ लगता है मैं एक और बच्चे की माँ बननेवाली हूँ ।"

यह सुनते ही कमलचंदजी भी दुविधा में पड़ गए, फिर कुछ सोचने के बाद बोले, "ठीक है, मैं चौदहवें बच्चे का बाप बनूंगा । लेकिन अपनी यह आखिरी सन्तान होगी । अपने भाग्य में क्या है, हम अभी नहीं जानते । तेरी सेहत भी तो खराब होती जा रही है ।"

यह सुनकर मनोरमाजी ने कहा -

"मैं आपके विचारों से सहमत हूँ, मुझ में अब शक्ति कहाँ ? इतना भी तो किसी अज्ञात शक्तिवश ही झेल पाई हूँ, वरना मुझ में यह ताकत कहाँ ?"

समय बीतने पर एक बार फिर उवाँ उवाँ की आवाज गूंज उठी । एक और शिशु का आगमन हुआ । उसका नाम रखा गया जयवन्त ।

यशवन्त और जयवन्त दोनों भाई होते हुए भी दोनों में अंतर है । यशवन्त शांत है, जयवन्त नटखट । यशवन्त समझदार है तो जयवन्त जिद्दी । दिन-प्रतिदिन जयवन्त बड़ा होने लगा, बोलने लगा चलने लगा ।

एक दिन मनोरमाजी ने कमलचंदजी से कहा, "सुनिए"

"क्या बात है ?" पतिदेव ने पूछा ।

"मुझे लग रहा है, अब यशवन्त बड़ा हो गया है, उसे स्कूल में रखने का अवसर आ गया है । लगता है अब कु-समय समाप्त हो गया है । अब बच्चो के लिए इतनी चिंता करने की जरूरत नहीं रही है । सो आप खंडवा जाके यशवन्त, भैया, भाभी और चिन्तामणि को साथ लेकर आइए । थोड़े दिन सब यहाँ साथ रहेंगे तो यशवन्त को यहाँ नयापन नही लगेगा ।"

कमलचंदजी ऐसे गृहस्थ हैं जिन्होंने सुखका मानों अनुभव ही नहीं किया । गृह-गृहस्थी के लिए अपने को कोल्हू के बैल की तरह जोतते रहे । सिर्फ एक ही आशा मनमें संजोये कि उनका वंश आगे चलता रहे । एक मनोरमा का प्रेम ही उन्हें संसार-यात्रा में संबल देने मे सहायक है । चार साल के बाद कमलचंदजी अपने ससुराल जा रहे हैं । चार साल के बाद लाड़ले बेटे यशवन्त का दीदार उन्हें होनेवाला है । मन में अपने बेटेकी काल्पनिक छवि लेकर हलवाई के यहाँ से मिठाई खरीदकर निकल पड़े खंडवा की ओर ।

कमलचंदजी को यशवन्त बाहर ही मिल गया, देखते रहे उसे। पहचानने में इतने लम्बे समय के बाद भी कोई दिक्कत नहीं आई। अवाक् रह गए बेटे को देखकर। मिसरी घुली आवाज आई,

"किससे काम है, दादाजी ?"

आवाज की मधुरता से आनन्दविभोर हो गए कमलचंदजी, बोले, "बेटे, तुझसे ही काम है।"

मन में गुनगुनाए, चार साल से राजा दशरथ की तरह तेरा ही इंतजार कर रहा हूँ।

"माँ ! ओ माँ ! देखो तो कौन आया है ?"

यशवन्त की पुकार से चिन्तामणि की मम्मी बाहर आई। देखती है जीजाजी आए हैं। आव-भगत करके अंदर लिया, कहा,

"आपने आने की कोई खबर नहीं भेजी।"

"भाग्यवती ने कहा - जाओ और सबको अपने यहाँ लिवा लाओ। सो मैं फौरन चला आया।"

दो दिन ठहरकर सभी को अत्यन्त आग्रहपूर्वक घर ले आये कमलचंदजी। मनोरमाजी सबको देखकर खुशी से पागल जैसी हो गई। क्या करूँ क्या न करूँ? विचारों मे खोई रही। भाभी ने मनोरमाजी की हालत देख घरकी बागडोर सम्हाल ली।

दो-तीन दिन तो आँख झपकते ही बीत गए। आनन्द-कल्लोल का माहौल बना रहा। अब भैया और भाभी जाने को कह रहे हैं और मनोरमाजी उन्हें रुकने का आग्रह कर रही है। लेकिन कौन कायम ठहरता है। मिलने - बिछुड़ने का नाम ही तो संसार है। जिसका संयोग होता है उसका वियोग भी होता है। संसार का यही तो क्रम है। भैया-भाभी और चिन्तामणि यशवन्त और जयवन्त को सोते हुए छोड़कर खंडवा के लिए रवाना हुए।

मनोरमाजी का मन विरह से भर गया। भैया के वे शब्द उनके

कानों में गूंज रहे हैं,

"जब भी जरूरत हो तुरन्त ही समाचार भेज देना। दोनों बच्चों का ख्याल रखना, यशवन्त को संभालना।"

भाभी तो मनोरमाजी से लिपटकर कुछ बोल ही न पाई। उसे लगा, यशवन्त को छोड़कर जाना उसके लिए कठिन है, सही में वह अपने बच्चे से बिछड़ रही है। ममता, स्नेह और वात्सल्य का यह मिलन मनोरमाजी के दिल में सदासदा के लिए बस गया। कैसा ऋणानुबंध!

घड़ी अपनी गति से चलती रहती है, यशवन्त कुछ सहमा-सहमा रहता है। मनोरमाजी ने कमलचंदजी से कहा,

"जी, सुनो तो।"

"क्या बात है?"

"यशवन्त कुछ सहमा-सहमा सा रहता है, उसे स्कूल भेजने का समय भी हो गया है। स्कूल जाएगा तो सब ठीक हो जायेगा।"

"भाग्यवती तेरी बात शत - प्रतिशत सही है। मैं श्यामाबाई के पास जाकर यशवन्त के पढ़नेका इन्तजाम कर आता हूँ।"

श्यामाबाई, सनावद का एक ऐसा व्यक्तित्व है जो छोटे बच्चों को सुसंस्कार एवं सुशिक्षा देने हेतु सन्नद्ध है। न कोई गर्व, न लोभ, नन्हे बच्चों में सुसंस्कारका सिंचन करने में ही अपना कर्तव्य समझनेवाली नारी। आजतक उनके बालमंदिर से कितने ही बच्चों ने अपने जीवन को ज्ञानज्योति से प्रकाशमान किया है। आसपास के विस्तार में श्यामाबाई के बालमंदिर की विशिष्ट प्रतिष्ठा है। सभी माँ-बाप अपने बच्चों को वहाँ पढ़ाना चाहते हैं।

कमलचंदजी भी अपने लाड़ले की शिक्षा हेतु फौरन श्यामाबाई से मिलने गए। घर आकर मनोरमाजी से कहा,

"बाईजी ने कलसे ही यशवन्त को स्कूल में भेजने को बोला है। वैसे भी कल गुरुवार है, दिन अच्छा है।" इतना कहकर चले गए

कमलचंदजी अपने काम पर।

विविध कार्यकलापों में बच्चों की भावभंगिमाएँ देखने योग्य होती हैं। निर्दोष आनन्द बच्चे तो लेते ही हैं लेकिन बड़ो को भी बाँटते हैं। बालक यशवन्त पेन-पाटी लेकर पिताजी की अंगुली पकड़कर निकला तो उसके मुखमंडल पर विजय प्राप्त करने की भावना झलक रही थी, पैरों की तेज गति में सैनिक सी दृढ़ता दिखाई देती थी। मानो उन्नत शिर रखकर पढ़ाई में आसमान की ऊँचाई प्राप्त करने, विजय प्राप्त करने, स्कूल की रणभूमि पर जा रहा हो। साल है सन् १९५५ का।

श्यामाबाईजी अपने बालमंदिर में कठोर अनुशासन के साथ स्नेह और वात्सल्यपूर्ण माहौल में खुद पढ़ाती हैं। हर बच्चे का व्यक्तिगत ख्याल रखती है। बच्चो की शिकायतों को बड़े प्यार से समझाकर सुलझाती है। दो दिन मे ही उन्हें ज्ञात हो गया कि यशवन्त की ग्रहणशक्ति एवं धारणाशक्ति बड़ी तेज है। सो उन्होंने यशवन्त की ओर विशेष ध्यान देना शुरु किया। सुचारु रूप से अध्ययन कराते चार माह मे ही यशवन्त को प्रथम कक्षा का अध्ययन पूरा करवा दिया। यशवन्त को बाईजी एकबार सिखाती हैं, फिर वह भूलता नही है, दूसरीबार उसे पढ़ाने की जरूरत ही नही पड़ती। श्यामाबाई यशवन्त से अत्यन्त खुश है क्योंकि उन्हे ऐसा होनहार बालक शिष्य के रूप मे मिला है। मनोरमाजी चिंतित हैं यशवन्त की पढ़ाई के बारे में क्योंकि यशवन्त घर आकर पाटी-पेन रख देता है तो दूसरे दिन बालमंदिर जाने के समय ही उनको स्पर्श करता है। माता के कहने पर कह देता है, 'मैंने बालमंदिर में सब याद कर लिया है।'

एक दिन मनोरमाजी से रहा नहीं गया। उन्होंने यशवन्त के भविष्य का विचार करके कमलचंदजी से कहा,

"आप एक बार जाकर श्यामाबाई से यशवन्त के अभ्यास के

बारे में पूछताछ तो कर लो ।"

दूसरे दिन कमलचंदजी श्यामाबाई से मिलने चले गए । बोले,

"बाईजी, मेरा यशवन्त पढ़ता है या नहीं ? घर पर तो यह बिलकुल पढ़ाई नहीं कर रहा ।"

श्यामाबाई ने जवाब दिया,

"भाई साहब, आप यशवन्त की फिक्र न करें । वह पढ़ाई में अव्वल नंबर है, उसने चार माह में प्रथम कक्षा का अभ्यासक्रम पूरा कर लिया है, मेरा मन कहता है यह बच्चा आगे जाकर ऐसी प्रतिष्ठा प्राप्त करेगा कि दुनिया देखती रह जाएगी ।" उस समय किसे मालूम था कि एक सन्नारी के अंत:करण से निकले ये शब्द एक दिन मुक्तामणि बनकर इतिहास के पृष्ठों पर अंकित हो जाएंगे ।

मन की ख़ुशी को चेहरे पर झलकाते, हँसी को होठो में दबाते हुए कमलचंदजी ने घर आकर मनोरमाजी को सारा वृत्तांत सुना दिया, जिसे सुनते ही मनोरमाजी ने तय कर लिया कि अब वे कभी यशवन्त को घरपर पढ़ने के लिए नहीं कहेंगी ।

यशवन्त अब घर आकर खेलने मे व्यस्त रहने लगा । आसपास के बच्चों के साथ खेलना उसका हररोज का क्रम हो गया । बीच मे एक ही दीवार से रहते अपने चचेरे भाई प्रकाश से मेलजोल ज्यादा है । दोनो हमउम्र हैं । दोनो के बीच अच्छी बनती भी है । सो साथ में खेला करते है । दोनों जयवन्त को प्यार करते हैं । कभी-कभी तीनों जयवंत की गुड़िया से खेलते रहते हैं । जयवंत जिद्दी है, अपनी बात पर अड़ा रहता है, उसकी बात न मानी जाय तो जोर-जोर से रोने लगता है ।

तब माँ आकर यशवन्त से कहती है -

"बेटा यशवन्त ! तू बड़ा है, छोटे भाई को परेशान मत करना । वह छोटा है उसे कुछ समझ में नहीं आता, तू अब उसका ख़्याल रखना ।"

तबसे यशवन्त जयवन्त का ख़्याल रखता है । उसे जो पसंद है
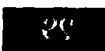
ऐसा ही व्यवहार करता है । यशवन्त, प्रकाश और आसपास के बच्चे यशवन्त के मकान की पिछली गली में खेला करते हैं ।

कभी - कभी प्रकाश के बड़े भैया मोतीलालजी, प्रकाश और यशवन्त को दर्शनार्थ मन्दिरजी ले जाया करते हैं । कुछ धर्म की बातें भी समझाते हैं ।

समय बीतता गया । यशवन्त ने बालमन्दिर में पढ़ाई पूर्ण कर ली । श्यामाबाई ने यशवन्त के घर आकर परीक्षा का परिणाम दिया और मनोरमा देवी से कहा -

"आपका लाड़ला प्रथम पोजीशन से उत्तीर्ण हुआ है । सही मे यह बहुत होनहार है, बड़ा होकर खुद का और परिवार का नाम रोशन करेगा । अब उसे पढ़ने के लिए स्कूल में दाखिल कर दीजिए ।" मनोरमाजी ने अपने लाल के भविष्य को सँवारनेवाली श्यामाबाईजी को कृतज्ञतापूर्वक हाथ जोड़ कर नमस्कार किया । श्यामाबाई ने जाते-जाते कहा -

"यशवन्त की खेलनेकी उम्र है, उसे खेलने देना । पढ़ाई में अपनी शक्ति से प्रथम नंबर पर ही रहेगा । उसकी विवेकशीलता और सौहार्दपूर्ण व्यवहार से वह कहीं भी जाएगा वहाँ सबके दिल में अपना स्थान बना लेगा । सो आप थोड़ी सी भी चिन्ता मत करना । मैं चलती हूँ ।"

छुट्टियो की समाप्ति के बाद यशवन्त को 'मायाचंद दिगम्बर जैन प्राथमिक स्कूल' में दाखिल कर दिया गया । वर्ष था सन् १९५७ का, पढ़ना और खेलना उसकी दो ही प्रवृत्तियाँ हैं । कभी-कभी मम्मी को काम में मदद करता रहता है । जयवन्त को भी बालमंदिर में दाखिल कर दिया गया । यशवन्त की तरह जयवन्त भी अव्वल नंबर लाने लगा । इससे श्यामाबाईजी भी खुश, माता-पिता भी खुश ।

यशवन्त और जयवन्त दोनों भाई भिन्न प्रकृतिवाले होते हुए भी
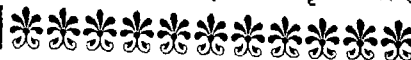
दोनों में एक समानता बनी रही कि दोनों तेजस्वी रहे, दोनों के बीच स्नेह की गाँठ मजबूत रही ।

गोटी खेलने में माहिर हो गया है यशवन्त । उसका निशाना अचूक होता है । उसके मकान के पीछे आई हुई गली सभी बच्चों के खेलने का निर्विघ्न स्थान है ।

"अरे प्रकाश ! सभी लड़के आ गए हैं, आता है गोटी खेलने ?"

यशवन्त ने हाँक लगाई ।

"यशवन्त ! गोटी तो तू ही जीत लेता है" प्रकाश ने बताया ।

"तू भी जीतेगा, आ तो सही, मैं तो जा रहा हूँ ।"

"अरे ठहर, मै भी आ रहा हूँ ।"

यशवन्त और प्रकाश जाते हैं गोटी खेलने । यशवन्त की हाफ-पेन्ट की दोनों जेबें गोटी से भर जाती हैं, सभी गोटियाँ वह जीत लेता है । लेकिन खेल की समाप्ति के बाद जीती हुई गोटियाँ सभी को वितरित कर देता है यशवन्त । शायद यही कारण है कि वह सभी का प्यारा बना हुआ है । जैसे बाहुबली विजय के पश्चात् सबकुछ भरत को लौटाकर चल देते हैं संन्यास की ओर । यह भी कौन जानता था उस समय कि गोटी वितरित कर देनेवाला यशवन्त भविष्य में मुनिश्री वर्धमानसागरजी होकर सभी संतप्त संसारी जीवों को वात्सल्य और वैराग्यवर्धक ज्ञान की गोटियाँ बाँटेगा ।

मायाचंद दिगम्बर जैन प्राथमिक विद्यालय में १९५७ में प्रथम व दूसरी कक्षा की परीक्षा एक साथ देकर १९५८ में तीसरी कक्षा में उत्तीर्ण हुआ यशवंत । उसी स्कूलमें चौथी कक्षा में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होकर उसी स्कूल के माध्यमिक विभाग में दाखिल कर दिया गया । १९६० में पाँचवीं कक्षा में भी प्रथम पोजीशन से उत्तीर्ण हुआ ।

सभी बच्चे यशवन्त को गोटी खेलने बुला रहे हैं । यशवन्त ने कहा,

"आज मै गोटी खेलने नहीं आऊंगा, मेरी मॉ का स्वास्थ्य अच्छा नहीं है।"

चारपाई पर लेटी हुई मनोरमाजी ने कहा,

"बेटा, तुझे खेलने जाना है तो जा। मेरी चिंता मत कर। मेरा स्वास्थ्य ठीक है।"

"नहीं मॉ, मैं हर रोज खेलने जाता हूँ, लेकिन आज नहीं जाऊँगा।"

इतना कहकर यशवन्त बैठ गया माँ के पैरो के पास और अपने नन्हे-नन्हे हाथो से मॉ के पैरो को सहलाने लगा। मॉ को कुछ राहत महसूस हुई। माँ कह रही थी यशवंत को,

"बेटा, अपने छोटे भैया का ध्यान रखना, अपने पापा के काम मे हाथ बॅटाना।"

यशवन्त सुन रहा था मॉ के हृदय से निकले हुए उद्‌गारों को। मॉ को तेज बुखार है, क्या करना ? उसकी समझ नही है यशवन्त को। पास मे जाकर मोती भैया को बुला लाया। मोती भैया ने बताया कि छोटा कपड़ा या नेपकिन पानी में भिगोकर माँ के ललाट पर रखा कर तो उन्हे ठीक रहेगा। इस काम में जुट गया यशवन्त। पूरी लगन से वह मॉ की सेवा मे लगा रहा। लेकिन बुखार कम होने का नाम ही नहीं ले रहा है। मॉ वेदना से कराह रही है। माँ के दुःख से पीड़ित यशवन्त सोच रहा है मॉ कब ठीक होगी ? कैसे ठीक होगी ? वह एक पल के लिए भी मॉ से दूर नही हटता है। मॉ ने कहा तो णमोकार मंत्र एवं पांडव पुराण पढ़के सुनाया। मॉ ने फिरसे कहा,

"बेटा ! खेलने जाना है तो जा।" मगर यशवन्त मॉ के पास से हटने का नाम ही नही लेता है। उसे बस एक ही लगन है माँ की सेवा की ताकि माँ शीघ्र ठीक हो जाय।"

कमलचंदजी घर आकर देखते है कि मनोरमाजी तेज बुखार में

तड़प रही हैं और यशवन्त माँ की सेवा में लगा हुआ है। फौरन डॉक्टर को बुला लाए। डॉक्टरने आकर दवाइयाँ दीं।

रात को मनोरमाजी ने कमलचंदजी से कहा, "सुनोजी ! अब मुझे अच्छा नहीं लगता, मैं अब बच नहीं पाऊँगी। अगर मुझे कुछ हो गया तो अपने बच्चों को ठीक से सम्हालना।"

"अरे भाग्यवती ! ऐसा अशुभ-अशुभ मत बोलो, तुम्हें कुछ होनेवाला नहीं है, यह बुखार तो ठीक हो जाएगा।"

कमलचंदजी ने मनोरमाजी को सहलाते हुए कहा।

कुछ क्षण मौन रहने के बाद मनोरमाजी ने अपने पतिदेव से कहा,

"मैंने आपको सुखी करने का हर सम्भव प्रयास किया है फिर भी मैं आपको सुख न दे सकी, इसका मुझे रंज है, सो माफ करना।"

"अरे पगली ! ऐसा मत बोल। तेरी वजह से तो मैं आजतक टिक सका हूँ, तूने तो मुझे अग्निज्वालाओं में भी शीतलता का अहसास कराया है। सही बताऊँ तो मैं तुझे सुख नहीं दे पाया। क्या करूँ, अपना भाग्य ही कुछ ऐसा है। बस, तू अब कुछ भी सोचे बिना सो जा, तेरी सेहत के लिए यही अच्छा है।"

"नही, आज मुझे जो कहना है कहने दो। यदि मुझे कुछ हो जाय तो अपने बच्चो को कैसे भी करके जहाँ तक उन्हें पढ़ना हो वहाँ तक जरूर पढ़ाना। अपनी आर्थिक स्थिति का मुझे पता है। जरूरत पर मेरे गहने बेचकर भी उनकी पढ़ाई पूरी कराना। आजतक मैंने आपसे कुछ नही माँगा है। आज बच्चों के भविष्य के लिए इतना माँग रही हूँ। अपनी और बच्चों की सेहत का ख्याल रखना।"

यह सुनकर तो कमलचंदजी भी भीतर से चिंतित हो गए। फिर भी हिम्मत रखते हुए बोले,

"भाग्यवती ! मैं बच्चों को कैसे भी करके पढ़ाने का वचन देता

हूँ। उन्हें पढ़ाने का पूरा प्रयत्न करूँगा। उन्हें कोई तकलीफ उठानी नहीं पड़ेगी। अब तू सो जा।"

मनोरमाजी को दवाई की वजह से नींद आ गई। नींद में भी वो कराह रही थी। कमलचंदजी रातभर जागते रहे। दूसरे दिन सुबह १० बजे मनोरमाजी ने कहा,

"भाग्यवान, मुझे ठीक नहीं लग रहा है। अपने दोनों बच्चों को मेरे पास बुला लो। आप भी आज काम पर मत जाओ। मेरे पास ही रहो! मुझे णमोकार मंत्र सुनाओ।"

कमलचंदजी और यशवन्त दोनों णमोकार मंत्र सुनाने लगे। जयवन्त भी साथ देने लगा। १४ प्रसूति और १२ बच्चो का निधन यह सब झेलने के बाद शरीर कृश हो गया है मनोरमाजी का और ऊपरसे तेज बुखार व खाँसी परेशान कर रही है फिर भी दृढ़ मनोबल का प्रमाण दे रही हैं मनोरमाजी।

एकाएक मनोरमाजी ने दोनों बच्चो को पास बुलाकर सिर पर हाथ पसारा और देखती रहीं अपलक। उस समय किसे पता था कि ममतामयी माँ का यह आखिरी स्पर्श है। थोड़ी देर मे जोरों की खाँसी से श्वास रुक गया मनोरमाजी का। देह से आत्मा ने भिन्नत्व प्राप्त कर लिया, चल पड़ी मनोरमाजी की आत्मा अनंत की यात्रा को...........

कमलचंदजी ने देखा कि मनोरमाजी की सांस बंद हो गई है। थोड़ा प्रयत्न भी किया फिर समझ गये कि यह चल बसी। उनकी आँखों से अश्रुधारा फूट पड़ी, रोते ही रहे कमलचंदजी। पापा को रोते देख यशवन्त ने पूछा, "पापा, क्यूँ रोते हो ?"

पापा ने बताया, "बेटा, तेरी माँ हमसब को छोड़कर सदा-सदा के लिए चल बसी।" कुछ समझा, कुछ न समझा और जोर-जोर से रोने लगा यशवन्त। साथ मे जयवन्त भी कुछ समझे बिना रोने लगा। सब की रोने की आवाज सुन कर मोहल्लेवाले सभी इकट्ठे हो

गए । मोती भैया समझा-बुझाकर यशवन्त और जयवन्त को अपने घर ले गए । महात्मा गांधी मार्ग की दोनों पट्टियों में मनोरमाजी के निधन की खबर आँधी की तरह फैल गई । सब लोग उनके घर पर आने लगे । सब की सोच एक ही थी कि "मनोरमाजीने जिंदगी में सुखका अनुभव ही नहीं किया । पहले वह बच्चों के लिए तड़पती रही आज बच्चे माँ के बिना बिलखते हैं ।"

बड़ी ममतामयी थी मनोरमाजी । एक भारतीय नारी का कर्तव्य की वेदी पर यह बलिदान विफल होनेवाला नहीं है । एक दिन यह बलिदान संसार को ऐसी विभूति प्रदान करेगा जो अपने चारित्र, अपने ज्ञान, अपनी सहजता एवं वात्सल्य-सिंचन से भारतवर्ष को पल्लवित करेगा । माँ मनोरमाजी अमर हो जाएंगी, आचार्य श्रीवर्धमानसागरजी की माताजी के नाम से । 'सनावद' भी इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्ण-अक्षरो मे अंकित हो जाएगा, आचार्य श्रीवर्धमानसागरजी की जन्मस्थली होने से । किन्तु भावी के गर्भ में छिपे राज से अनभिज्ञ, परिजन, पुरजन सब शोकग्रस्त हैं । सबकी चिंता एक ही है इतने छोटे बच्चे कैसे पालेंगे कमलचंदजी ? बिना माँ के बच्चे कैसे जीएंगे ?

मगर किसी शायर ने कहा है,

"फानूस बनकर जिसकी हिफाजत वो करे,
वो शमा क्यूं बुझे जिसे खुदा रोशन करे ।"

मोहल्ले में चहल-पहल मची है, कोई अर्थी के सामान के लिए दौड़ रहा है, कोई रिश्तेदारों को खबर देने । चारों ओर गतिविधियाँ देखने में आ रही हैं । लेकिन कमलचंदजी गुमसुम हो गए हैं । बैठे हैं मनोरमा के पास आँसू बहाते । तब मोहल्ले के बुजुर्गों ने आकर उन्हें वहाँ से खड़ा किया और कहा,

"अर्थी कब निकालनी है ? मनोरमाजी के मायकेवालों का इन्तजार करना है क्या ?"

"मेरी समझ में कुछ नहीं आता भैया ! आपको जो ठीक लगे सो करो ।" सब ने परामर्श करके तय किया कि अर्थी एक घंटे के बाद निकाली जाय । यशवन्त और जयवन्त को बुलाकर माँ का मुखदर्शन कराया, प्रणाम करवाया और वापस वहाँ भेज दिया । आखिर वही हुआ जो सब का होता आया है । मनोरमाजी का शरीर पंचमहाभूत में विलीन हो गया ।

मनोरमाजी के मायके खंडवा ये समाचार मिले तो भैया और भाभी दोनों रो पड़े । दूसरे दिन यशवन्त और जयवन्त को अपने घर ला के पढ़ाने का निर्णय कर दोनों सनावद की ओर चल पड़े ।

देखते हैं, सनावद का वह मोहल्ला शोकग्रस्त हो गया है । दीदी का घर सूना दिखता है । सब ने एक-दूसरे के आँसू पोंछे । कौन किसको सांत्वना दे । दो-तीन दिन के बाद मामा-मामी ने कमलचंदजी से कहा,

"जीजाजी ! हम यशवन्त और जयवन्त को अपने साथ खंडवा ले जाना चाहते है । वहाँ उन्हें पढ़ाएंगे ।"

कमलचंदजी कुछ क्षण बोल न पाए ।

बाद में कहा,

"आपका प्रेम सदैव हम पर रहा है, आपकी बात हम टाल नही सकते । लेकिन मैंनें मनोरमा को अंतिम समय पर वचन दिया है कि मै खुद दोनों बच्चो की देखभाल करूँगा और उन्हे अच्छे से पढ़ाऊँगा । उनके जीते जी तो मैं उन्हे सुख नहीं दे सका लेकिन मृत्यु के बाद उनकी यह इच्छा मुझे पूरी करने दो ।"

यशवन्त के मामा-मामी अवाक् रह गए । कुछ नहीं बोल पाए ।

बाद में मामा ने कहा,

"जीजाजी ! आपकी जैसी मरजी । लेकिन जब भी कुछ हमारे लायक काम हो हमें जरूर समाचार भेज देना । हमारे दोनों भानजे हमारे लिए चिन्तामणि है । बेटा यशवन्त, समय पर चिट्ठी लिखते रहना और

अपने छोटे भाई एवं पिताजी का ख्याल रखना।"

समय बीतता गया। यशवन्त की समझ, शक्ति, विवेक एवं स्नेह प्रशंसनीय है। पिता के काम में हाथ बँटा रहा है। छोटे भाई जयवन्त की पूरी जिम्मेदारी यशवन्त ने उठा ली है। यशवन्त देख रहा है पिताजी के स्वभाव में आती हुई बदलाहट को। वे छोटी-छोटी बातों में चिड़चिड़ा जाते हैं। उनको गुस्सा भी जल्दी आता है। यशवन्त सोच रहा है, माँ के निधन के बाद सब जिम्मेदारी पिताजी पर है, उनकी उम्र भी बढ़ती जाती है। इतने जख्म सहने के बाद स्वाभाविक है स्वभाव में बदलाहट आना। ऐसी समझदारी से कभी उसके मन में पिताजी के स्वभाव के कारण दुःख नहीं हुआ। वह सदा पिताजी के काम में मदद करने को तैयार ही रहता है। उनका यह वर्तन देख मोहल्लेवाले अपने बच्चो को यशवन्त का उदाहरण देने लगे। छोटी सी उम्र में यशवन्त का यश बढ़ने लगा। रोजाना काम-काज के साथ यशवन्त पढ़ने में अपनी पोजीशन को सम्हाल रहा है। सातवीं कक्षा में आ गया यशवन्त।

यशवन्त का खेलने का शौक तो जारी है। अब बड़ा हो गया है। गोटी की जगह गिल्ली-डण्डा खेलने में माहिर हो गया है। पीछे की गली में सब बच्चे इकट्ठे होते ही यशवन्त भैया को आवाज देते है। यशवन्त कभी-कभी खेलने से पहले ही कह देता है,

"आज देखना तुम लोग गिल्ली ढूंढते ही रह जाओगे।" और होता भी ऐसा ही। यशवन्त डंडे से गिल्ली को इतनी जोर से फटकारता कि गिल्ली नजरों से ओझल हो जाती।

कौन जानता था कि यशवन्त बड़ा होकर, मुनिश्री वर्धमानसागरजी बनकर तप, त्याग और ज्ञान के डंडे से कषायों की गिल्ली को ऐसी फटकार देंगे कि वे देखने में भी नहीं आयेंगे। एक दिन यह यशवन्त बड़ा होकर मुनिश्री वर्धमानसागरजी से आचार्य वर्धमानसागरजी बनेगा, यह तो किसी सनावदवासी की कल्पना में भी नहीं था। भविष्य को

कौन टाल सकता है ।

समय की धारा एवं उम्र के परिवर्तन के साथ-साथ मानव की रुचि-रस में भी परिवर्तन आने लगते हैं । अब उसके खेल में भी परिवर्तन आ गया । पहले गोटी, बाद में गिल्ली-डंडा और अब सनावद के निकट बहती संसार जैसी टेढ़ी-मेढ़ी भाखड़ी नदी में तैरने जाया करता है यशवन्त । भाखड़ी नदी उसे बहुत प्यारी लगती है । वहाँ जाके स्नान करना और वहाँ से दिखते उत्तर दिशा में आए हुए गिरिश्रृंगों को निहारना उसका रोजाना का क्रम हो गया है । मानो वह सोचता है मै भी एक दिन ऐसी ऊँचाइयाँ प्राप्त करूँगा । इस बीच माँ की याद आ जाती तो यह सब देखते-देखते वह सोच में डूब जाता । क्या यही संसार है ? मृत्यु का कोई इलाज नही क्या ? संसार मे कोई शरण ही नहीं ? जन्म-मरण, संयोग-वियोग, सुख-दुःख, बस, यही संसार की तासीर है ? यह सब सोचते-सोचते कभी-कभी आँखे भी गीली हो जाती यशवन्त की किन्तु उसके मन का बोझ हल्का हो जाता । बाल मानस इससे ज्यादा क्या सोच पाता ?

भाखड़ी नदी मे तैरना सीख गया यशवन्त । एक दिन एक तैराक ने यशवन्त को श्वासोच्छ्वास के माध्यम से तैरना बताया, नदी के जलप्रवाह पर हाथ-पैर हिलाए बिना, श्वास को रोककर सीधा लेटे रहना जैसे कमलपत्र तैरता है । थोड़े ही दिनो मे सीख गया यशवन्त ।

यह किसको पता था कि एक दिन यशवन्त मुनि वर्धमानसागर से आचार्य वर्धमानसागर बनकर अपने उपयोग के माध्यम से संसारसागर में जलकमलवत् तैरने लगेगा । सभी दोस्त यशवन्त से तैरने की यह कला सिखाने की माँग दोहरा रहे है, यशवन्त सभी को सिखाने का प्रयास भी कर रहा है । फिर भी जिसकी जैसी योग्यता ।

समय का चक्र अनवरत चलता रहता है । चचेरे भाई के नाते मोतीभैया यशवन्त को मंदिरजी एवं रात्रि पाठशाला में अपने साथ ले

जाया करते हैं। धर्म की ए. बी. सी. डी. सीखते यशवन्त के मन में अनेक प्रश्न उपस्थित होते रहते हैं जिनका समाधान पाठशाला में मिल जाता है। स्कूल के अध्यापक विद्वान् डॉ. मूलचंदजी शास्त्री धार्मिक शिक्षा भी देते हैं। यशवन्त की तेजस्विता एवं कुशाग्र बुद्धि की वजह से उससे उनका स्नेह ज्यादा है, वे चाहते हैं कि यशवन्त न केवल लौकिक शिक्षा में अपितु धार्मिक शिक्षा में भी अव्वल रहे।

सन् १९६४ की बात है। परम पूज्य आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज एवं परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजीमहाराज ससंघ बड़वानी में पधारे हैं, ऐसी खबर आई। बड़े-छोटे सभी के मन हर्षित हो गए। यशवन्त ने आजतक दिगम्बर मुनिराज के दर्शन नही किए है, वह कबसे दिगम्बर मुनिराज के दर्शनो के भाव संजोये बैठा है। यह समाचार मिलते ही उसका मन-मयूर नर्तन करने लगा। सीधा पहुँचा मोतीभैया के पास, बोला,

"भैया ! बड़वानी मे दो आचार्य महाराज ससंघ पधारे हैं, यह खबर मिली ?"

"हाँ यशवन्त !"

"भैया ! तो चलो हम सब उनके दर्शन करने चलें।" यशवन्त ने अपने अंतर के भाव प्रदर्शित किए।

"अपनी भजन मंडली के साथ बड़वानी जायेंगे और आज रात को पाठशाला में निर्णय कर लेंगे" मोतीभैया ने बताया। रात को पाठशाला में निर्णय हुआ। मंडली के सभी सदस्य अपने वाद्य लेकर बड़वानी जायेगे।

सनावद की भजन-मंडली पहुँची बड़वानी। भगवान आदिनाथ की उत्तुंग-विशालमूर्ति के भक्ति-भाव से दर्शन किए, संगीत के वाद्यों के साथ भक्तामर स्तोत्र का पाठ किया। यशवन्त को उत्कंठा है मुनिसंघ के दर्शन की। कैसे होंगे महाराजजी ? क्या वे हमसे बात करेंगे ? क्या

वे मुझे आशीर्वाद देगे ? जिस घड़ी का इन्तजार था यशवन्त को वह घड़ी भी आ गई ।

महावीर-विमल और विमल-महावीर ! परम पूज्य आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज एवं परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज दोनों निमित्तज्ञानी थे । अपने ज्ञान का उपयोग संसारी जीवों को दुःख से साता प्रदान करने में करते थे । चौक में पाटे पर बिराजमान आचार्यद्वय को सनावद से आई हुई भजनमंडली ने एक के बाद एक करके नमोस्तु किया । मोतीभैया के साथ ही रहे यशवन्त । मोतीभैया ने जब नमोस्तु किया तो दोनों महाराजों ने धर्मवृध्दि का आशीर्वाद दिया ।

अब बारी आई यशवन्त की । यशवन्त देख रहा है आचार्य महाराज के मुखमंडल को । परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज को नमोस्तु किया और निगाह उनके मुखमंडल पर स्थिर हुई, जैसे ही महाराजजी की नजर यशवन्त की नजर से मिली.... बस..... सब कुछ भूल गया यशवन्त । मानो निर्विचार हो गया, शांत हो गया उसका मन । महाराजश्री ने आशीर्वाद देते हुए कहा, "धर्ममार्ग मे खूब आगे बढ़ो ।"

ऐसा ही अनुभव हुआ परम पूज्य आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज से नमोस्तु करते समय । परम पूज्य आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज ने आशीर्वाद देते हुए कहा, "वैराग्य मार्ग ही हितकर है सो उस मार्ग पर चलकर जीवन सफल बनाओ ।"

आनन्द से झूम उठा यशवन्त, उसकी खुशी का ठिकाना न रहा । जीवन में सर्व प्रथम दोनो मुनिसंघो के दर्शन हुए और निराले आशीर्वाद प्राप्त हुए । आज एक साथ आचार्यश्रीद्वय और संघस्थ मुनिराजों के दर्शन करने से सुख, शांति, आनन्द का जो अनुभव मिल रहा है, वह अवर्णनीय है । फिर क्यों न वह क्षण मात्र का हो । क्या

मुनिराजों के पास रहने से वह अनुभव टिक सकता है ? क्या मुनि बनने से परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज और पूज्य आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज जैसी समता और शांति मिल सकती है ? सोच रहा है यशवन्त । मोतीभैया के साथ दोनों आचार्यश्रीकी आहार-चर्या देखी यशवन्त ने । सोच के सागर में डूब गया है यशवन्त, जिसका गवाह है उसका मौन ।

भजन मंडली के साथ घर वापस आया यशवन्त । अब उसकी हर प्रवृत्ति में परिवर्तन आ चुका है जो दूसरों की नजरों से ओझल है । अब उसके मनोमस्तिष्क में मुनिचर्या ही रम रही है । चातुर्मास-समाप्ति के बाद आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज का ससंघ सनावद में आगमन हुआ । पूरा सनावद उमड़ पड़ा उनके दर्शन एवं प्रवचन से धर्मलाभ लेने हेतु । यशवन्त को दिगम्बर मुनिराजों के सान्निध्य का खुला मैदान मिल गया । सभी सनावदवासी अपने भाग्य को सराहते हुए सत्संग का लाभ उठाते रहे ।

कुछ समय गुजरा । सनावदवासियों की धर्म श्रृंखला में एक-एक नये साधु-सत्संग की खूटती कड़ी जुड़ती गई । मुनिश्री धर्मसागरजी महाराज के साथ दो मुनिराजों का आगमन हुआ सनावद में । धर्मसागरजी महाराज से धर्म-प्रभावना पाकर सब पुलकित हो उठे । यशवन्त को अपनी धर्म-भावना की वृद्धि में पुष्टि मिलती गई । कुछ दिन रुककर मुनिराजो ने सिद्धक्षेत्र बड़वानी की ओर विहार किया ।

इस साल में दिग्गज आचार्य संघों के साथ-साथ यशवन्त को अपने भावी दीक्षा गुरु मुनिश्री धर्मसागरजी के भी दर्शन हो गए, गुरु-शिष्य का यह अनजाना मिलन । यह संयोग । भावी की घटना के इस संकेत को कौन जानता था ? सन् १९६४ से शुरू हुए इस साधु-समागम से आगे जाके यशवंत का जीवन परिवर्तित होने वाला है, उस समय यह कौन कह सकता था ?

सन् १९६५ की बात है, सनावदवासियों के भाग्य खुल गए। परम पूज्य १०५ श्री इन्दुमती माताजी, परम पूज्य १०५ श्री सुपार्श्वमती माताजी एवं परम पूज्य १०५ श्री विद्यामती माताजी इन्दौर से विहार करके आए। उनका चातुर्मास सनावद मे हुआ। यशवन्त पहली बार मोतीभैया के साथ माताजी के दर्शनार्थ गए तो उनको देखकर रह गए अवाक्। उनके मुखमंडल पर विलसित आनन्द और भीतर की शांति एवं समता और वात्सल्यपूर्ण व्यवहार को देखकर मन-ही-मन सोचता रहा यशवन्त !

"क्या संसारत्याग का ही यह परिणाम है ?" दिन मे एक बार भोजन, फिर अपनी क्रियाओं मे संलग्न होते हुए भी उनका आनंद असीम है। ऐसा क्या राज है ?

अपने मन की बात मोती भैया को बता दी और कारण जानना चाहा।

मोतीभैया ने बताया,

"यशवन्त ! ये त्यागी गण संसार के बंधनो को तोड़कर, छोड़कर, अपने आपमे निमग्न रहकर साधना मे व्यस्त रहते हैं, जिससे ये आत्मा की असलियत को पा लेते है। आत्मा का असली स्वभाव आनंद का उमड़ता सागर है। बस, यही है सदा आनंदित रहने का कारण।"

"क्या हम भी ऐसे आनंदित रह सकते है ?" यशवन्त ने पूछा।

मोतीभैया ने कहा, "यशवन्त ! तुम ही माताजी से पूछ लो।"

यशवन्त ने माताजी से यह प्रश्न किया तो माताजी ने सहजता से उत्तर दिया,

"वैराग्य मार्ग पर बढ़ोगे तो तुम्हे भी ऐसा ही आनन्द मिलेगा।"

ये शब्द सीधे उतर गये यशवन्त के हृदय मे। धार्मिक रुचि बढ़ने के साथ यशवन्त संस्कृत का अध्ययन भाई मोतीलालजी एवं महेन्द्रभाई सराफ के साथ करता रहा। तीनो माताजी के सान्निध्य में सनावदवासियो

के लिए यह समय धर्मध्यान में पूर्ण हुआ। चातुर्मास संपन्न होने के बाद जब माताजी विहार करने लगे तब यशवन्त ने अपने मन की बात बताते हुए माताजी के साथ जाने की भावना व्यक्त की। यह जानकर माताजी को ख़ुशी हुई। लेकिन उन्होंने सस्मित वदन कहा कि "अभी पुरुषवर्ग के लिए हमारे पास मार्ग खुला नही है।" चातुर्मास के बाद माताजी ने खंडवा की ओर विहार किया तो यशवन्त भी पदविहार करते हुए खंडवा तक माताजी के साथ चला।

सनावद आनेके बाद, अपनी पढ़ाई के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित हो गया यशवन्त। खेलने के शौक के साथ रात्रि पाठशाला में जाकर धर्मज्ञान का अर्जन उसकी दैनिक प्रवृत्तियो का हिस्सा बन गया। इन सबके साथ भैया जयवन्त का ख़याल और पिताजी के साथ घरेलू कामकाज में हाथ बँटाता रहा यशवन्त। ऐसे कुल मिलाकर अपनी सभी जिम्मेदारियों को सहजता से पूर्णरूपेण निभा रहा है यशवन्त ; मानो भावी मे गुरु आज्ञा शिरोधार्य कर आचार्य वर्धमानसागर बनकर संघ की जिम्मेदारी ख़ूबी से निभाने का पाठ सीख रहा है यशवन्त।

माध्यमिक शिक्षा का आख़िरी साल है यशवन्त का। सभी विद्यार्थी पुरुषार्थ से अच्छे नंबर लाना चाहते हैं। क्योंकि इस साल के परिणाम पर भावी अभ्यास निर्धारित होता है। यशवन्त अपनी पूरी लगन से तन-मन से जुट गया है अभ्यास में। फिर भी पाठशाला जाने का क्रम वैसे-का-वैसा ही है। रात्रि को देर तक और सुबह जल्दी उठकर अभ्यास में रत है यशवन्त। खेलकूद से दूर होकर अपने ध्येय को हासिल करने हेतु अभ्यास ही अभ्यास मे लगा है यशवन्त।

पुरुषार्थ से प्रारब्ध प्राप्त हुआ। इच्छानुसार खंडवा की I.T.I. कॉलेज में एडमिशन मिल गया। होस्टल मे रहने का इन्तजाम हो गया। होस्टल में भोजन आलू एवं प्याज मिश्रित मिलता है सो भोजन मामा के घर से आया करता है। होस्टल मे मुसलमान लड़के ज्यादा

हैं । होस्टल का रेक्टर भी मुसलमान है । मि. खान, एक अच्छा लड़का है; वह यशवन्त का दोस्त बन गया ।

एक दिन होस्टल के रेक्टर ने यशवन्त को मांस खरीदकर लाने को कहा । तिलमिला गया यशवन्त । लेकिन होस्टल के रेक्टर का ऑर्डर है, क्या करे ? यशवन्त सोच में पड़ गया । उसने सब बात अपने मित्र खान को बता दी और यह काम उसे सौप दिया । दुःख और ग्लानि से पूरी रात सो न सका यशवन्त । बारबार ऐसा प्रसंग आता रहेगा तो मैं क्या करूँगा ? मै तो अहिंसा प्रधान जैनधर्मावलंबी हूँ, मैं खुद भी धर्म के मार्ग पर चलने की ख्वाहिश रखता हूँ । क्या करूँ ? यह तो मेरी धर्मभावना की कसौटी है । यहाँ रहकर मै अपने धर्म का पालन कैसे कर सकूंगा । तो फिर क्या छोड़ दूँ पढ़ना ? पूरी रात सोचता रहा यशवन्त । आखिर निर्णय किया कि मै कल ही यह अभ्यास छोड़कर सनावद चला जाऊँगा ।

दूसरे ही दिन सनावद आ गया यशवन्त । ताड़ना सहनी पड़ी पिताजी की, गुस्सा झेलना पड़ा पिताजी का, फिर भी अड़िग रहे अपने निश्चय पर । बाद में धीरे से पिताजी को समझाया कि "बड़वाह मे नई डिग्री कॉलेज शुरू हुई है । सनावद से १० किलोमीटर की दूरी पर है । यहाँ से ज्यादा विद्यार्थियों ने वहाँ एडमिशन लिया है, यहाँ से वहाँ आना-जाना आसान है सो मै वहाँ पढ़ना चाहता हूँ ।"

पिताजी ने कहा, "जो ठीक लगे सो करो ।"

यशवन्त बड़वाह की कॉलेज मे दाखिल हो गया । वहाँ डिग्री कॉलेज मे उसके मित्र मायाचंदभाई पटेल, सुरेशभाई पंचोलिया, कल्याण महेश्वरी, दिलीप राजपाल आदि कॉलेज की पहली बेच के पढ़नेवाले विद्यार्थी थे । कॉलेज मे स्कूल से अलग माहौल होता है । कॉलेज में स्वतंत्रता ज्यादा होती है । प्रवृत्ति भी ज्यादा होती है । सो अपनी रुचि के हिसाब से अपना विकास जो करना चाहता है कर सकता है ।

यशवन्त अपने दोस्तों के साथ कॉलेज में बेडमिन्टन और क्रिकेट खेलने लगा है । इन दोनों खेलों में दिलचस्पी है यशवन्त को । १० किलोमीटर आनेजाने के बावजूद भी रात्रि पाठशाला जाने का क्रम चालू है यशवन्त का ।

सनावद की भजनमंडली ने एक नाटक करने का निर्णय किया । यशवन्त ने भी उस नाटक में भाग लिया । । उसकी ओजस्वी वाणी एवम् पात्र मे तन्मय हो जाने से उसके अभिनय की बहुत तारीफ हुई । जैन-अजैन उसको सन्मान देने लगे । यशवन्त का व्यक्तित्व ही ऐसा है कि लोगों की प्रशंसा और आदर उसे मिले, इसमे कोई बड़ी बात नही है । जयवन्त भी पढ़ने में होशियार है, स्वभावगत भिन्नता होते हुए भी यशवन्त, जयवन्त की पढ़ाई की प्रगति में रस लेता रहता है । यह सब देखते हुए पिताजी भी यशवन्त के कार्य से संतुष्ट हैं । कार्य के बोझ एवं परिस्थितियो ने कमलचंदजी के स्वभाव में चिड़चिड़ापन जरूर भर दिया है । फिर भी अपने दोनो पुत्रो के प्रति स्नेह की अविरत धारा बह रही है उनके अंतस्तल में । यशवन्त यह सब अच्छी तरह से समझता है ।

वर्तमान सदी की श्रेष्ठ साध्वी, शताधिक ग्रंथो की रचयित्री, हस्तिनापुर जम्बूद्वीप की पावन प्रेरिका परम पूज्य आर्यिकारत्नश्री ज्ञानमती माताजी सन् १९६७ मे बड़वानी की ओर से विहार करते हुए ४ आर्यिकाओं एवं २ क्षुल्लिकाओं ऐसे कुल मिलाकर ६ माताजी सहित सनावद पधारे । देखते ही रह गया यशवन्त माताजी को । उनके सरल व्यक्तित्व को । उनके मुखमंडल की आभा को । उनके चुंबकीय व्यक्तित्व को । चातक की तरह पीता रहा उनकी अमृतमयी वाणी को । उनके स्नेह सभर वात्सल्ययुक्त संबोधन से यशवन्त को लगा कि ये माताजी ही मुझे वैराग्य की ओर - मुक्तिमार्ग की ओर ले जा सकती हैं । सनावदवासियों की धार्मिक अध्ययन की रुचि देखकर वहाँ शिक्षण-शिविर का आयोजन हुआ । इस शिक्षण-शिविर के दौरान यशवन्त ने माताजी से 'पुरूषार्थ

सिद्धयुपाय' का अध्ययन किया । धर्म प्रभावना के साथ माताजी ने ससंघ इन्दौर की ओर विहार किया । इन्दौर में सनावदवासियो के अति आग्रह एवं हार्दिक विनती को ध्यान मे रखते हुए परम पूज्य आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने चातुर्मास के लिए की गई विनती को स्वीकार किया तो मानो भाग्य खुल गया सनावदवासियों का सन् १९६७ मे ।

सनावद के हर दिगम्बर जैन का मन खुशी से झूमने लगा । बस, अब पूरे चातुर्मास के दौरान ज्ञानगंगा बहती रहेगी । सबसे ज्यादा खुशी से भर गए यशवन्त और उनके ताऊजी के लड़के मोतीलालजी । क्योकि दोनो का मन कह रहा है, माताजी का चातुर्मास उनके जीवन मे वरदान बनकर ही आया है ।

यशवन्त सोच रहा है, "मेरी रस-रुचि को बढ़ावा मिलेगा । धर्ममार्ग मे आगे बढ़ने का मार्गदर्शन एवं अवसर मिलेगा । मेरे भाग्य के द्वार खुल जाएंगे ।"

यशवन्त को इन्तजार था माँ ज्ञानमतीजी का । यशवन्त को इन्तजार था धर्मपथप्रदर्शक का । यशवन्त को इन्तजार था वैराग्यमार्ग पर लेजानेवाली प्रभावक साध्वी का । यशवन्त को इन्तजार था करुणामयी ममतामयी माँ ज्ञानमतीजी का, जो उन्हे आत्मकल्याण के लिए प्रेरित करे । बेताबी से इन्तजार कर रहा है यशवन्त । धर्ममार्ग पर चलने को अधीर हो गए है यशवन्त ।

इन्तजार की घड़ियाँ बीत चुकी है । पूज्य माताजी का सनावदवासियो ने ठाटबाट से गौरवपूर्ण स्वागत किया । तन, मन से लग गया यशवन्त पूज्य माताजी की सेवा में । समय का ख्याल नही रहता है यशवन्त को । पूज्य माताजी भी यशवन्त की प्यास को, यशवन्त की तड़प को, यशवन्त की धर्मरुचि को समझ चुकी है । पूज्य माताजी को यशवंत की होनहार का अंदाज आ गया है । मोतीलालजी की ताकत का अनुभव लग गया है माताजीको । पूज्य माताजी यशवन्त और मोतीलालजी की ओर

विशेष ध्यान दे रही हैं। दोनों मन-ही-मन अपने भाग्य की सराहना कर रहे हैं।

चातुर्मास में मंडल विधान का आयोजन किया गया। यशवन्त और मोतीलालजी पूज्य माताजी के आदेशों के पालन में अग्रसर रहते हैं। मानों दोनों में होड़ लगी है कौन ज्यादा काम करे। दोनों के कार्यकलापों एवं उत्साह को देखकर सनावदवासी पूज्य माताजी के साथ यशवन्त और मोतीलालजी के नाम भी लेने लगे हैं। भक्त की भक्ति रंग ला रही है। यशवन्त को न खाने की फिक्र है, न सोने की, न पढ़ने की। उनका पूरा दिन, माताजी के दैनिक कार्यक्रम मे माताजी की संगति में पूर्ण होता है।

पूज्य माताजी के प्रवचनो ने यशवन्त की धर्मभावना को और वृद्धिंगत कर दिया है। यशवन्त का मन सांसारिक बातों से उदासीन होता गया। यशवन्त समझ रहा है देह की नश्वरता को, संसार की असारता को, मानव-जीवन की महत्ता को, कर्मों के आस्रव और बंध की कथा को, संवर और निर्जरा के महत्त्व को, भावो के फल को, तप और त्याग के महत्त्व को और मनुष्य-जन्म में मुनिधर्म की अनिवार्यता को। पूज्य माताजी अपने प्रवचनों में प्रथमानुयोग से लेकर द्रव्यानुयोग तक के विषय को समझा रही है। यशवन्त प्रवचनों के माध्यम से सीख रहा है, समझ रहा है। यदि कुछ समझ में न आए तो प्रवचन के बाद पूज्य माताजी से मिलकर अपनी समस्या का समाधान पा लेता है यशवन्त।

यशवन्त देख रहा है पूज्य माताजी एक पल के लिए भी खाली नही बैठती हैं। साहित्य-सर्जन के साथ-साथ आए हुए भक्तो से वात्सल्य पूर्वक बात भी कर लेती हैं। यशवन्त की शंका का समाधान भी करती हैं। अपनी क्रियाओं के साथ धार्मिक साहित्य का सर्जन भी सतत करती हैं। यशवन्त ने एक दिन माताजी से पूछ ही लिया -

"आप सारे दिन काम कर रही हो, आप को मैंने कभी खाली बैठे हुए नहीं देखा।"

तब पूज्य माताजी ने जो जवाब दिया उसे यशवन्त ने हृदयंगम कर लिया।

पूज्य माताजी का उत्तर था -

"साधु को - साधक को प्रमाद नही करना चाहिए। अपना उपयोग अविरत धर्मकार्य में ही लगाए रखना चाहिए। स्वाध्याय - अध्ययन एवं ध्यान में रत रहना चाहिए। प्रमाद पाप है।"

उस समय किसको पता था कि एक दिन यही प्रश्नकर्ता यशवन्त मुनिश्री वर्धमानसागर - आचार्यश्री वर्धमानसागर होकर प्रमाद से योजनों दूर ध्यान, स्वाध्याय, संयम के द्वारा स्वस्वभाव मे डूबकर सारे संसार के लिए ध्रुवतारक बन जाएगा।

चातुर्मास काल मे ही एक दिन परम पूज्य माताजी ससंघ सनावद से ५ कि. मि. की दूरी पर स्थित मोरटक्का दर्शनार्थ गए। साथ मे थे यशवन्त एवं मोतीलालजी। वहाँ पूज्य माताजी ने उनकी धार्मिक भावना को बढ़ावा देते हुए दीक्षा के लिए बीज मंत्र दिया, मानों उनके हृदय धरातल मे दीक्षावृक्ष का बीज बोया।

बहुत नजदीक से देख रहा है यशवन्त पूज्य माताजी की चर्या को, उनकी सूझबूझ को, उनके आगम के ज्ञान को, उनके वात्सल्य सभर व्यवहार को, उनकी आत्मीयता जताने की रीति को, उनकी आहारचर्या को, उनकी अध्ययन की ललक को, उनकी साधना को, उनकी साहित्य-सृजन की तल्लीनता को, उनके आनन्द को, उनकी शांति को, उनकी समता को, उनकी सहजता को, उनके स्नेह को, इतने सारे गुण एक ही व्यक्ति मे कैसे विद्यमान हो सकते हैं ? सोच रहा है यशवन्त।

क्या यह धर्म का परिणाम होगा ? क्या यह संयम की फलश्रुति होगी ? क्या यह चारित्र का चमत्कार होगा ? क्या यह अध्ययन की

निपज होगी ? चिंतन की गलियों में घूम रहा है यशवन्त। पूज्य माताजी के संयम मार्ग के बारे में ही सोच रहा है यशवन्त। इनके पास किसी दूसरी बात के लिए अवकाश ही नहीं है। यशवन्त अपने घर को भूल गया है। कॉलेज को भूल गया है। अपने दोस्तों को भूल गया है। खेलने की आदत को भूल गया है। एक ही बात है उसके दिल-दिमाग में धर्ममार्ग पर आरूढ़ होना। जैसे अर्जुन को चिड़िया की आँख ही दिख रही थी, इसके अलावा कुछ नहीं, ऐसी ही लगन लगी है यशवन्त को धर्ममार्ग पर चलने की।

माताजी समझ गई हैं यशवन्त की रुचि को, उसकी उत्कंठा को, उसकी लगन को, उसके भविष्य को। सो एक दिन उन्होंने प्रवचन का विषय चुना 'मूलाचार के आधार पर मुनिधर्म' माताजी के प्रवचन ने यशवन्त का मार्ग प्रशस्त कर दिया, जिसे वह ढूंढता था उसे वह मिल गया।

पर्वाधिराज पर्युषण का आगमन हुआ। पूरा सनावद उमड़ पड़ा मंदिरजी में। जनसमुदाय से मंदिरजी का परिसर खचाखच भरा रहता है। पूज्य माताजी अपनी मधुरवाणी मे जैन धर्म पर आगम आधारित प्रवचनों की ज्ञान-गंगा बहा रही हैं। आया अनंतचतुर्दशी का दिन। उस दिन माताजी ने समूह में बृहद् प्रतिक्रमण करवाया। प्रतिक्रमण में निर्ग्रंथ पद की वांछा की बात आई तो अपने स्मृति पटल में एक-एक अक्षर को, शब्द को ज्यों-का-त्यों अंकित करता रहा यशवन्त। उसकी निर्ग्रंथ पद की प्राप्ति की कामना तीव्रतम बनती जा रही है।

चातुर्मास सानंद संपन्न होने के बाद आर्यिका पूज्य ज्ञानमती माताजी ने ससंघ अतिशयक्षेत्र मुक्तागिरि यात्रा हेतु विहार किया। साथ मे हैं यशवन्त और मोतीचन्दजी। परम पूज्य माताजी की प्रेरणा से मुक्तागिरि क्षेत्र पर ५ वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत एवं शुद्ध भोजन का नियम लिया यशवन्त ने। इसके फलस्वरूप आर्यिका संघ को आहारदान का

सौभाग्य मिलते ही अंत:करण की खुशी को बढ़ावा मिला। मुक्तागिरि की यात्रा के बाद आह्लादित होते हुए वापस आ गये सनावद। कुछ दिनों तक घर मे रहकर फिर आर्यिका संघ के साथ इन्दौर की ओर विहार किया। पिताजी को यशवन्त के व्यवहार से, उसके मनोभावों से आशंका हुई कि कही यह संघ के साथ न चला जाय। सो इन्दौर पहुँचने पर पिताजी एवं मामाजी यशवन्त को संघ से लेने इन्दौर आए। तब यशवन्त ने पिताजी को बताया कि पूज्य माताजी को आचार्यश्री शिवसागरजी के संघ तक छोड़कर वापस सनावद आ जाऊँगा। ऐसा कहकर पिताजी एवं मामाजी को वापिस भेज दिया और खुद संघ के साथ आगे बढ़े। बड़नगर-रतलाम-बॉसवाड़ा होते हुए अन्देश्वर पार्श्वनाथ पहुँचे। वहाँ से बागीदौरा मे आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के दर्शन किये। कहा जाता है चाह जिसकी प्रबल होती है उसे मंजिल अवश्य मिल जाती है। मौका देखते ही नमोस्तु करके आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत प्रदान करने के लिए विनयपूर्वक विनती की यशवन्त ने। पूज्य विमलसागरजी महाराज तो निमित्तज्ञानी थे। उन्होने जान लिया यशवन्त के भविष्य को। सो बिना देरी किये उन्होने यशवन्त को आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत दे दिया जनवरी १९६८ में। माँ ज्ञानमतीजी भी खुशी से भर गई। आगे तलवाड़ा - लोहारिया - साबला और सलूम्बर होकर पूज्य माताजी आचार्यश्री शिवसागरजी के संघ से करावली मे मिले। वहाँ से संघ सलुम्बर आया। सनावद के दूसरे लोग पूज्य माताजी को संघ तक छोड़ने आये थे। वहाँ से सनावद वालों के साथ पूज्य माताजी की प्रेरणा से तीर्थक्षेत्र गिरनार एवं बुंदेलखंड की यात्रा करके पुन: सनावद आ गए यशवन्त जी।

कुछ दिन घर पर रह कर पुन: १९६८ मई मास में पालोदा ग्राम में आचार्य श्री शिवसागरजी के संघ मे आर्यिका ज्ञानमती माताजी के पास पहुँचे यशवन्तजी। पूज्य माताजी को वंदामि करके कहा,

"माताजी ! अब आप ही संसार-सागर को पार करानेवाली जैनेश्वरी दीक्षा के लिए मेरा पथ प्रदर्शित करो।"

पूज्य माताजी ने कहा,

"बेटा यशवन्त ! समय आने पर मैं जरूर तेरा पथ प्रदर्शित करूँगी"

पूज्य माताजी ने पूज्य आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज को सब बातों से अवगत कराते हुए यशवन्त को संघ में रखने की विनती की। पूज्य आचार्यश्री ने सहर्ष स्वीकृति देते हुए आशीर्वाद दिए, अब क्या चाहिए यशवन्त को ? उन्होंने पूज्य माताजी के पास छहढाला, द्रव्यसंग्रह, परीक्षामुख, कातन्त्रव्याकरण, तत्त्वार्थसूत्र, रत्नकरण्ड - श्रावकाचार आदि का अध्ययन प्रारंभ किया। मुनिचर्या को नजदीक से देखने के साथ-साथ संघ के त्यागीजनो की वैयावृत्ति एवं संघ के छोटे-बड़े काम करने की जिम्मेदारी ब्र. यशवन्तजी ने सम्हाल ली। अपनी विनम्रता, औचित्यपूर्ण व्यवहार एवं अध्ययन में विशिष्ट रुचि रखते हुए ब्र. यशवन्तजी संघ के त्यागीगण के प्रिय बन चुके हैं।

विहार करता हुआ संघ राजस्थान के डूंगरपुर जिले के भीमपुर ग्राम में आया। वहाँ एक दिन अचानक ब्र. यशवन्तजी के पेट मे भयंकर दर्द होने लगा। आचार्यश्री सहित पूरासंघ चिंतित हो उठा। स्वयं आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज एवं अन्य साधुगण उनके उपचार में लग गए। साथ में अपने अमृत तुल्य वचनों से उनको धैर्य बँधाया। थोड़े दिनो में दर्द ठीक हो गया।

इस प्रसंग से ब्र. यशवन्तजी को समझ में आया कि परम पूज्य आचार्यश्री एवं संघ के साधुगण का उनके प्रति कैसा अनुपम वात्सल्य है। ऐसा वात्सल्य उन्होंने अभी तक महसूस नहीं किया था। पूज्य आर्यिका श्रीज्ञानमती माताजी से माँ का वात्सल्य तो मिलता ही था, साथ में आचार्यश्री शिवसागरजी, मुनिश्री श्रुतसागरजी, मुनिश्री

अजितसागरजी एवं मुनिश्री श्रेयांससागरजी का अत्यन्त वात्सल्य सदैव प्राप्त होता रहा । इस प्रसंग से दीक्षा के भाव और भी दृढ़ हुए । बस, अब यहाँ संघ में रहकर शास्त्रों का अध्ययन करकेजैनेश्वरी दीक्षा के लिए आगे बढ़ना है । इसी बीच स्वास्थ्य ठीक होने के बाद पूज्य श्रीज्ञानमती माताजी ने बताया कि "घर वापस जाना चाहते हो तो जा सकते हो ।"

तब ब्र. यशवन्तजी ने कहा,

"मै आज से आजीवन घर का त्याग करता हूँ ।"

वैराग्य मार्ग पर चलनेवालों का मन दृढ़ होता है । भीतर की पूर्ण ऊर्जा वैराग्य मार्ग पर गतिमान हो जाने पर पीछे देखना या 'लौटना' ये शब्द उनके शब्दकोश में होते ही नहीं है । उनके शब्दकोश में तो 'सिर्फ मंजिल की ओर आगे बढ़ना' यही शब्द लिखे रहते हैं ।

सुना माताजी ने ब्र. यशवन्त की गांभीर्यपूर्ण दृढ़ वाणी को । कसौटी मे खरे उतरे अपनी दृढ़ता से । मन:पटल से पिछली जिंदगी को पोंछकर सांसारिक बंधनों को तोड़कर ब्र. यशवन्तजी ने आज से जिंदगी का नया अध्याय शुरू किया ।

प्राय: सभी ग्रंथो का अध्ययन, शंका-समाधान आदि आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी से ही होता है । कभी-कभी आचार्यश्री के संघस्थ मुनिश्री अजितसागरजी एवं मुनिश्री श्रेयांससागरजी महाराज के पास कातन्त्र व्याकरण के प्रश्नोत्तर एवं अध्ययन हो जाता है । कभी रात्रि के समय मुनिश्री श्रेयांससागरजी महाराज को पंडितप्रवर टोडरमलजी का 'मोक्षमार्ग प्रकाशक' सुनाने का भी अवसर मिलता है ब्र. यशवन्तजी को । अपनी विनयशीलता एवं अध्ययन में विशिष्ट रुचि रखने के कारण ब्र. यशवन्तजी संघ के साधुवर्ग को प्रिय बन चुके है । संघ के पूज्य मुनिश्री अजितसागरजी ने तो पूज्य माताजी से कहा, "माताजी आप दोनो मे से छोटे को (ब्र. यशवन्तजी) मुझे सौप दें ।" ऐसी चाहना रही मुनिश्री अजितसागरजी की ब्र. यशवन्तजी की ओर ।

१९६८ के चातुर्मास के लिए आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज ससंघ प्रतापगढ़ (राज.) पहुँचे। अत्यन्त धर्म प्रभावना पूर्वक चातुर्मास सम्पन्न हुआ। ब्र. यशवन्तजी चातुर्मास दरम्यान अध्ययन में और मुनिसंघ की वैयावृत्ति में रत रहे। वर्षायोग के बाद मार्गशीर्ष कृष्णा ७ को मुनिसंघ ने श्रीमहावीरजी अतिशयक्षेत्र के लिए विहार किया। संघविहार में माताजी के पास रहनेवाले ब्रह्मचारीभाई मोतीचंदजी, ब्र. यशवन्तजी, ब्रह्मचारिणी बहने गेंदीबाई, शीलाबाई, कला बहन आदि ने मिलकर चौका लगाते हुए आहारदान का सौभाग्य भी प्राप्त किया। संघ का बड़े पैमाने पर श्रीमहावीरजी में स्वागत हुआ। श्रीमहावीरजी में फाल्गुन शुक्ला ६ से शांतिवीर नगर में पंचकल्याणक सम्पन होने वाला है। इसी कारण आचार्यश्री आमंत्रण से संघ सहित यहाँ पधारे हैं। पंचकल्याणक के लगभग १५ दिन पूर्व आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज की ससंघ उपस्थिति मे झण्डारोहण कार्य सम्पन्न हुआ।

अपने औचित्यपूर्ण व्यवहार से ब्र. यशवन्तजी सबके लाड़ले बने रहे। उनके दिल-दिमाग में तो बस एक ही बात है जिनेश्वरी दीक्षा। प्रतिष्ठा के ध्वजारोहण के बाद एक दिन आर्यिका श्रीज्ञानमती माताजी ने अध्ययन के मध्य सम्बोधित किया एवं दीक्षा के लिए प्रेरणा दी। वह दिन था फाल्गुन कृष्णा १३। ब्र. यशवन्तजी ने प्रातःकाल की अरुणिम बेला में दृढ़ निश्चयकर आचार्यश्री एवं संघस्थ साधुओं के सम्मुख मुनिदीक्षा की प्रार्थना की। वह दिन था फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी। संघस्थ अन्य भी कई लोगों ने दीक्षा की प्रार्थना की। यशवन्त कुमार की मुनिदीक्षा की प्रार्थना सुनकर मुनिश्री श्रेयांससागरजी महाराज ने अत्यधिक प्रसन्नता व्यक्त की और खूब आशीर्वाद दिये और अभी-अभी जिसने यौवन की दहलीज पर पैर रखा है ऐसे ब्र. यशवन्तजी को मुनिश्री श्रेयांससागरजी ने अपनी गोद में उठा लिया। पूरे संघ में हर्ष की लहर फैल गई।

ब्र. यशवन्तजी की प्रार्थना को स्वीकार का संयोग नहीं मिला। किन्तु, न तो असफलता से घबराना सीखा है यशवन्तजी ने और न असफलता को सफलता में बदलने का पुरुषार्थ करने में प्रमाद करना सीखा है। आचार्यश्री शिवसागरजी का स्वास्थ्य प्रतिकूल है फिर भी उन्होंने पूछा,

"ब्रह्मचारीजी ! आपने तीर्थराज सम्मेदशिखरजी की वंदना की है ?"

ब्र. यशवन्तजी ने हाथ जोड़कर कहा,

"नहीं, महाराजजी ।"

महाराजजी ने कहा,

"आप सम्मेदशिखरजी की वंदना करके आइए । मुनिदीक्षा होने के बाद कब वंदना होगी, कुछ निश्चित नहीं है। सो आप एक बार सम्मेदशिखरजी की वंदना करके आ जाओ ।"

गुरुआज्ञा को शिरोधार्य कर दूसरे दिन फाल्गुन कृष्णा अमावस्या को प्रातः ब्र. बहिन गेंदीबाई और ब्र. यशवन्तजी सम्मेदशिखरजी की वंदना के लिए रवाना हुए ।

सनावद मे ब्र. यशवन्तजी के पिता कमलचंदजी और भैया जयवन्त यशवन्तजी के घर आनेका इन्तजार कर रहे है। दिन-पर-दिन बीतने लगे । चिंतित है कमलचंदजी । तब उन्हें समाचार मिले कि यशवन्तजी तो पूज्य आचार्यश्री शिवसागरजी के संघ मे श्रीमहावीरजी में हैं और वे कभी घर आने वाले नही हैं। ब्र. यशवन्तजी ने तो आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया है। यह समाचार सुनते ही कमलचंदजी पर मानों बिजली गिरी। वे आगबबूला होकर पूज्य श्रीज्ञानमती माताजी को नजर में रखते हुए कहने लगे,

"क्या उन्हें मेरा ही घर मिला था आग लगाने को ।" एक संसारी होने से पिता का गुस्सा सही भी है। १२-१२ संतानों का वियोग,

पत्नी का वियोग, बाद मे माता और पिता दोनों की जिम्मेदारी ढोकर बेटे को बड़ा करनेवाले पिता का गुस्सा अकारण नहीं है। उन्होंने भावी के स्वप्न संजोकर रखे हैं। बेटा बड़ा हुआ है, अच्छा पढ़ा है अभी घर-गृहस्थी में हाथ बँटाएगा, उसकी शादी करेंगे, बहू आएगी तो मुझे भी आराम मिलेगा। लेकिन जब यह समय नजदीक आया तब यशवंत चल पड़ा वैराग्य की ओर.... ऐसी परिस्थिति में एक पिता गुस्सा करने के अलावा और कर भी क्या सकता है।

समय व्यतीत होने के साथ कमलचंदजी ने परिस्थिति को स्वीकार कर लिया। घर में रहे एक मात्र पुत्र जयवन्त की ओर अपना ध्यान केन्द्रित कर लिया।

कमलचंदजी की कभी रात को नींद खुल जाती तो वे सोच में खो जाते। इस जिन्दगी मे कुदरत ने, मेरे पाप कर्मों ने, मुझे कितने जख्म दिये, हर जख्म मै सहता आया हूँ। मेरा हृदय जख्मो से छलनी हो गया है फिर भी मैं कैसे जी रहा हूँ। क्या दिखाना चाहती है कुदरत ? अभी और क्या बाकी है ? हे प्रभो ! अबतक जितने भी सितम गुजरे मैने सह लिये। मेरे बारह-बारह बच्चों की मृत्यु ने, मेरी जीवनाधार मनोरमा की मृत्यु ने मुझे विचलित कर दिया। फिर भी अपने बेटों यशवन्त और जयवन्त के लिए जिया। इतना कम था तो यशवन्त भी अलग हो गया, सदा के लिए साधु-संगति में चला गया। बस, अब मुझसे सहा नही जाता। मेरे धैर्य की खूब कसौटी हो चुकी है, न जाने कौन से पाप कर्मो का फल मैं भुगत रहा हूँ।

सम्मेदशिखर तीर्थराज की एक वन्दना कर शीघ्र ही श्रीमहावीरजी लौट आये ब्र. यशवन्तजी।

कौन जानता था कि आचार्यश्री शिवसागरजी के - उस महान् विभूति के दर्शन पुनः नहीं होंगे यशवन्तजी को। यात्रा पर जाते समय का उनका आशीर्वाद अंतिम रहा। जिस दिन यात्रा को ब्र. यशवन्तजी

निकले उसी दिन दोपहर ३-३० बजे अचानक आचार्यश्री की समाधि हो गयी ।

यात्रा से आते ही आर्यिका श्रीज्ञानमतीजी ने ब्र. यशवन्तजी को कहा, "अब संघ में आचार्यपद का निर्णय हो जाने पर ही दीक्षा होगी । क्योंकि दीक्षा आचार्य परमेष्ठी से ही दिलवानी है । आचार्य शिवसागरजी महाराज की समाधि को अभी तीन दिन ही हुए है ।" आचार्यश्री के गुरुभाई मुनिश्री धर्मसागरजी महाराज भी अपने संघस्थ मुनि एवं क्षुल्लक शिष्यों के साथ श्रीमहावीरजी में उस समय उपस्थित थे ।

फाल्गुन शुक्ला ८ दिनांक २४-२-१९६९ प्रात: संघ में मुनिश्री धर्मसागरजी महाराज को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करने का निर्णय होते ही माताजी ने कहा,.

"यशवन्त ! आज ही दीक्षा लेनी है । पूज्य धर्मसागरजी महाराज से प्रार्थना करो ।"

पूज्य मुनिश्री श्रुतसागरजी महाराज से परामर्श के बाद आज्ञा मिली । पूज्य मुनिश्री श्रुतसागरजी महाराज ने ब्र. यशवन्तजी से पूछा,

"ब्रह्मचारीजी ! तुम्हारे बाल तो छोटे हैं, कैसे केशलोच होगा?"

तब ब्र. यशवन्तजी ने कहा,

"महाराजजी ! आपके आशीर्वाद से सब हो जायेगा ।"

सारे श्रीमहावीरजी मे हवा की तरह खबर फैल गयी कि १९ वर्षीय तरुण यशवन्त की मुनिदीक्षा हो रही है । उस समय प्रतिष्ठा के निमित्त आये हुए सनावद के कुछ लोगो ने और अन्य स्थानों से आये लोगो ने भी पूज्य श्री धर्मसागरजी महाराज के पास जाकर विरोध किया कि इतनी कम उम्र मे सीधी मुनिदीक्षा न दें । किन्तु महाराजश्री ने सभी को यही कहा, "मैं मना नहीं करूँगा, दीक्षार्थी स्वयं यदि मनाकर देगा तो बात खतम । आप दीक्षार्थी को मना लें ।" धर्मसागरजी

महाराज की स्पष्टवादिता और दृढ़ता देखकर सब निरुत्तर हो गये।"

श्रीमहावीरजी में आज परम पूज्य मुनिश्री धर्मसागरजी महाराज की आचार्यपद प्रतिष्ठापना के अनन्तर ६ मुनि, ३ आर्यिका और २ क्षुल्लक कुल ११ दीक्षायें सम्पन्न होने वाली हैं। इन ग्यारह दीक्षार्थियों में से एक हैं ब्र. यशवन्तजी। ब्र. यशवन्तजी को पूज्य आर्यिका श्रीज्ञानमती माताजी ने प्रेरणा दी कि "दीक्षा जीवन परिवर्तन की दिशा है। दीक्षा पुनर्जन्म है। दीक्षा कल्याणकारी है। दीक्षा मोक्ष का उपाय है।" इत्यादि प्रेरणाप्रद संबोधनों से माताजी ने आपको वैराग्य पीयूष पिलाया।

ब्र. यशवन्तजी, आज उनके हर्ष की कोई सीमा नहीं है, उनका हृदय भावोर्मियों से भर गया। वे सोच रहे हैं मुनित्व क्या है ?

"जिसकी उपलब्धि मे जन्म-जन्म का तूफान शांत होता है। जिसको पाने से सहज शांति का अनुभव होता है। जिसमें स्वभाव की ऊँचाइयो का हिमालय विकसित होता है। व्यक्ति अपने स्वभाव में स्थित होता जाता है। चाहे उसे प्रमत्त-अप्रमत्त गुणस्थान कहो या मुनित्व कहो। प्रेम के, शांति के, समता के, करुणा के, वात्सल्य के और सर्व जीवों को आत्मवत् समझने की भावना के निर्झर फूट पड़ते हैं। इतनी विशालता हृदय में भर जाती है कि समग्र संसार के जीवों की ओर स्नेह, वात्सल्य और करुणा की वर्षा होती है तब घटित होता है मुनित्व। अपने अट्ठाईस मूलगुणों की साधना सहज स्वाभाविक हो जाती है तब सही में घटित होता है मुनित्व। समता की सही साधना के लिए अनिवार्य है मुनित्व। सभी प्रकार से स्वावलम्बी जीवनचर्या का नाम है मुनित्व। जिसमें संपूर्ण स्वतंत्रता का सागर लहराता रहता है वह है मुनित्व। मोक्षप्राप्ति के लिए अनिवार्य है मुनित्व। मुक्ति की अनिवार्य शर्त है मुनित्व। केवलज्ञान का उत्पादक है मुनित्व। रत्नत्रय का बीज है मुनित्व। सर्व दु:खों के नाश के लिए अनिवार्य है मुनित्व।" सुरेन्द्र, देवेन्द्र भी जिसके लिए तरसते रहते हैं ऐसे सर्वोत्कृष्ट, मुनिपद-प्राप्ति के क्षणों का

इन्तजार कर रहे हैं ब्र. यशवन्तजी ।

ब्र. यशवन्तजी को अपनी गुजरी हुई जिंदगी के कुछ लमहे स्मृति में आ रहे है । "भूलजाना है सब । विस्मृत कर देना है सब । निर्मोह हो जाना है अब । सभी रिश्ते-नातो से ऊपर उठकर प्रयाण करना है आत्मधर्म की ओर । एक नई जिंदगी के शुभारंभ पर पिछली जिंदगी की छाया तक न हो, स्मृति भी न हो । कठिन है लेकिन साध्य जरुर है । अनेक जीवो ने यह किया है और सिद्धत्व को पाया है । मै भी यही करूँगा और सिद्धत्व को जरूर पाऊँगा । आजतक मै अपने निश्चय मे अटल रहा हूँ और अटल ही रहूँगा । मेरा लक्ष्य यही होगा, मात्र यही होगा । मै जरूर हासिल करूँगा अपने गंतव्य को । इसके लिए मुझे किसी भी परिस्थिति से गुजरना पड़ेगा मै तैयार रहूँगा । कर्मदल को भेदने के लिए मुझे जो लड़ाई लड़नी पड़ेगी उसमे विजयी होकर ही रहूँगा । यह मेरा दृढ़ निर्धार है, संकल्प है ।"

ब्र. यशवन्तजी अपने संकल्प को और मजबूत कर रहे है । निर्मोह हो रहे है । सनावद की भाखड़ी नदी मे श्वास रोककर कमलपत्र की तरह तैरनेवाले यशवन्तजी को अपनी यह विद्या यहाँ काम आ रही है । वे संसारी रिश्ते-नातो से जलकमलवत् अलग हो रहे है । विधिवत् मुनि हो रहे है ब्र. यशवन्तजी । नई पहचान, नया नाम मिलेगा ब्र. यशवन्तजी को और २८ मूलगुणो की साधना शुरु होगी ।

वह सुनहरा समय आ गया जिसका ब्र. यशवन्तजी को बेताबी से इन्तजार है । शांतिवीरनगर - श्रीमहावीरजी मे बना हुआ पंड़ाल खचाखच भरा है । मुनिश्री धर्मसागरजी महाराज को आचार्यपद प्रदान करने का एवं ११ दीक्षार्थियो को उनके द्वारा दीक्षा देनेका ऐसा संयोग कठिनाई से प्राप्त होता है । पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का तप कल्याणक का दिन है । भारत के हर प्रांत से जन सैलाब उमड़ पडा है । श्रीमहावीरजी को कलात्मक तोरण द्वारों से सजाया गया है । लगभग ६० हजार दर्शनार्थियों का समूह

विद्यमान है । मुनिश्री धर्मसागरजी के जयघोष से वातावरण निनादित है । चतुर्विध संघ द्वारा चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की परंपरा के आचार्य पद पर मुनिश्री धर्मसागरजी को प्रतिष्ठित करने की घोषणा के साथ ही 'आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज' के जयघोष से श्रीमहावीरजी का आकाश गूंज उठा ।

मंच के एक भाग में ग्यारह प्रतिभाएँ विराजमान हैं, जो दीक्षा के लिए अनुमति पा चुकी हैं । सब ने एक के बाद एक परम पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के चरणों में श्रीफल चढ़ाकर अनुनयपूर्वक दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की । सब के बीच बैठे हैं सबसे छोटे दीक्षार्थी ब्र. यशवन्तजी । एक ऐसा प्रतिभाशाली युवक जो सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रहा है । लंबगोल ओजस्वी चेहरा, चमकती आँखो मे सागर-सी गहराई, भव्य ललाट, चेहरे पर फूट रहे है हृदय में भरे हुए हर्षित भाव, पूरी ऊर्जा को स्वकेन्द्रित करने से रोम-रोम से बरसता तेज, चेहरे पर विलसित अद्वितीय आनन्द; बस, सब उन्हें देखते ही रहे । सबकी प्रार्थना स्वीकृत हुई और सभी ने अपने केशो का लुंचन करना प्रारंभ किया । माँ मनोरमाजी की श्रीमहावीरजी में बालक के बाल उतारने की मन्नत आज पूरी होने जा रही है । विधि का यही विधान रहा होगा, जो आज पूर्ण हो रहा है । एक साथ इतने व्यक्तियों के केशलुंचन का यह वैराग्यवर्धक अविस्मरणीय दृश्य देखते ही बनता है । जिन-जिन भाग्यशालियो ने यह दृश्य देखा उन सबकी स्मृतियो के सिंहासन पर आरूढ़ हो गया यह दृश्य । केशलुंचन के बाद गुरुभक्ति करके गुरु की आज्ञा से अपने वस्त्र, आभूषण, यज्ञोपवीत आदिका त्याग करके सभी आसन पर बैठकर दीक्षा के लिए विनती कर रहे हैं । आचार्यदेव ने सभी के मस्तक पर 'श्रीकार' लिखकर विधिवत् अट्ठाईस मूलगुण रूप व्रत प्रदान किया ।

लवंग पुष्पों से सोलह संस्कारों को मस्तक पर आरोपित करके

संयम का उपकरण पिच्छी, ज्ञान का उपकरण शास्त्र और शौच का उपकरण कमंडलु दिये और सभी दीक्षार्थियों को नया नाम दिया जो निम्न प्रकार से है -

(१) मुनिश्री महेन्द्र सागरजी (२) मुनिश्री अभिनन्दन सागरजी (३) मुनिश्री संभव सागरजी (४) मुनिश्री शीतल सागरजी (५) मुनिश्री यतीन्द्र सागरजी और सीधी मुनिदीक्षा प्राप्त हुई उन ब्र. यशवन्तजी का नाम (६) मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।

क्षुल्लक दीक्षा -

(१) ब्र. राजमलजी क्षुल्लक बने (२) क्षुल्लक बुद्धिसागरजी ।

आर्यिका दीक्षा -

(१) आर्यिका गुणमती माताजी (२) आर्यिका विद्यामती माताजी (३) क्षुल्लिका अभयमतीजी आर्यिका बने ।

जिनको सीधी मुनि दीक्षा दी गई उन निर्ग्रंथ पर सबकी नजर टिकी हुई है । पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराजने कहा "आजसे इन छोटे महाराज का नाम रखा जाता है मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।" अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी की धरा पर एक ओर वर्धमान ने जन्म लिया, जो सदा वर्धमान ही होते जायेंगे । नाम सुनते ही आनंद-विभोर हो गए पंड़ाल मे बिराजे श्रावक-श्राविकागण । फिर तो........ जयघोष करने लगे ।

मुनिश्री वर्धमान सागरजी की जय ।

मुनिश्री वर्धमान सागरजी की जय ।

नूतन दीक्षार्थियो की जय ।

आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की जय ।

बहुत समय तक चलता रहा यह जयघोष ।

पंड़ाल में बिराजित सभी का ध्यान मुनिश्री वर्धमानसागरजी की ओर है । मुनिश्री वर्धमानसागरजी तो पद्मासन लगा कर स्वभाव में

निमग्न हो गए हैं । डूब गए हैं अपने आपमें । अप्रमत्त हो गये हैं । प्रशंसायुक्त सहस्रों चक्षुओं से अपने चक्षु हटाकर अंतरद्रष्टा हो गए हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी अंतर्मुहूर्त तक । जब ध्यान टूटा तब आचार्यश्री धर्मसागरजी, जिनकी कृपा से उन्हें चलते-फिरते तीर्थ की संज्ञा मिली, उनके चरणों में भक्ति-भाव से निमग्न हो गए ।

मुनिश्री वर्धमान सागरजी का पूरा व्यक्तित्व जैसे सिमटकर उनके चक्षुमें-उनकी दृष्टि में समा गया है । श्रद्धालु भक्तों को लग रहा है कि मुनिश्री वर्धमानसागरजी की दृष्टि में वैराग्य, करुणा, शांति, समता, वात्सल्य, समष्टि के प्रति स्नेह भावना जैसे सद्‌गुण समाहित हो गए है । उन्हें लग रहा है कि मुनिश्री वर्धमानसागरजी भगवान वर्धमान की तरह भक्त हृदयों में अपना स्थान शीघ्र पा लेंगे । वे एक नये धर्म-सूर्य का दर्शन कर रहे हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी में ।

आज मुनिश्री वर्धमानसागरजी को प्राप्त हो गया दिगम्बरत्व, मुनित्व । अब तो सम्यक् दर्शन - ज्ञान - चारित्र ही सर्वोपरि है, साधना और लक्ष्य है मुक्ति - सिर्फ मोक्ष ।

दिगम्बरत्व - मुनित्व - निर्ग्रंथता न थोपी जाती है, न ओढ़ी जाती है, न दी जाती है । दिगम्बरत्व तो प्रकट होता है स्वत: भीतर से । उज्ज्वल भावनाओं और विषय-विरक्ति की प्रेरणा से महान् पुण्योदय होने पर किसी बिरले के मन में बालक की तरह निर्विकार दिगम्बरत्व - निर्ग्रंथता - मुनित्व धारण करने के भाव जाग्रत होते है तब प्रगट होता है मुनित्व । जब साधक वैराग्य भाव से भर जाता है, संसार की असारता से परिचित हो जाता है, परिग्रह जब पीड़ा देने लगता है, सच्चे सुख की प्राप्ति की इच्छा जब तीव्रतम हो जाती है, आत्मकल्याण की भावना से जब वह भर जाता है, चारित्र मोहनीय कर्म का क्षयोपशम होता है, सब प्रकार की ग्रन्थियों से सुलझ जाता है, तब हृदय मे प्रगट होता है मुनित्व । यही तो भावलिंग है । साधक अनुभवी आचार्य के पास जाकर

हाथ जोड़कर अनुनय पूर्वक दीक्षा संस्कार के लिए - प्रार्थना करता है तब आचार्य भगवंत साधक के हृदय की भावना को जानकर उसके दीक्षा-संस्कार करते हैं और तब पहने हुए वस्त्रों का भी त्यागकर साधक पूर्ण रूपेण आंतर-बाह्य निर्ग्रंथ हो जाता है तब मुनित्व प्रगट होता है। वर्तमान के मनोवैज्ञानिकों के मतानुसार सबसे प्रथम हृदय में - मन मे भाव उत्पन्न होते हैं और बाद मे वे कार्यरूप परिणमते हैं। पूर्ण मुनित्व प्रगट हो चुका है मुनिश्री वर्धमानसागरजी मे।

श्रीमहावीरजी में आज सबसे ज्यादा सुखी, आनन्दी और रोम-रोम से हर्षित कोई है तो वे है कलकत्ता निवासी शेठ श्री सीतारामजी और उनकी धर्मपत्नी वासंतीदेवीजी। उनके पूर्वे किये हुए सत्कर्म का पुण्य आज उदयावली मे आया है। मानो उनका भाग्य ही खुल गया है। नूतन दीक्षित मुनिश्री वर्धमानसागरजी के माता-पिता बनने का सौभाग्य उन्हे प्राप्त हुआ है। अपने हृदय मे मॉ की ममता और पिता के स्नेह से सभर होकर दंपति ने अपना उत्तरदायित्व संभाला है। लोगो की निगाह में वे आज मुनिश्री वर्धमानसागरजी के मातापिता है। सभी की प्रशसाभरी निगाहे उनकी ओर लगी हुई है।

सही मे सीतारामजी पाटनी और उनकी धर्मपत्नी वासंतीदेवी आज अपने आप को पूर्ण भाग्यशाली मान रहे है। आज मुनिश्री श्रुतसागरजी और जिनके मातापिता बनने का सौभाग्य मिला ऐसे युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी दोनो एक ही चौके मे - सीतारामजी पाटनी के चौके मे पड़गाहे गये है। युवामुनिश्री वर्धमानसागरजी को कल के उपवास के बाद प्रथम आहार है आज। मॉ वासंतीदेवी के उत्साह और आनन्द की कोई सीमा नहीं है। वे फूली नही समाती है अपने आपमे। वे सोचती है, आज मै अपने चौके मे दोनों मुनिराजो को आहार के साथ-साथ मॉ की ममता भी दूँगी। "हे जिनेन्द्रदेव ! युवामुनिश्री का तन-मन और साधना स्वस्थ रखना। उनकी तपोसाधना ऐसा

निखार लाए कि बहुत जल्द ही उनको सिद्धत्व की प्राप्ति हो। मैं आहार के साथ अपनी ममता का, अपनी भावना का आहार दे रही हूँ। यह आहार उनके पुरुषार्थ को प्रबल बनाने में सहायक हो। मेरे होते हुए ही वे ऐसी सिद्धि प्राप्त करें जिसे देखकर जगत्, मैं और मेरा परिवार आनन्द से झूम उठे।" सीतारामजी ने वासंतीदेवी को स्पर्श करके उन्हें विचारों से जगाया। सामने खड़े मुनिराजों को आहार देने की प्रक्रिया चल रही है, उनमे लग गई वासंतीदेवी। अति उल्लास - हर्ष और आग्रह से आहार दे रहे है दंपति।

आहार के दौरान मुनिश्री श्रुतसागरजी नूतन युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी की आहारचर्या देख रहे हैं और मनहीमन खुश हो रहे हैं। अपने आचार्य भगवंत की दृष्टि और अनुभव को मन-ही-मन वंदन कर रहे हैं जिन्होने ऐसे प्रतिभाशाली सहज-सरल-आत्मविश्वास से भरे युवक को सीधी मुनिदीक्षा देकर अपने संघ को सही मे गौरवशाली बनाया है। जीवन मे संयम-अभ्यास के बिना सीधी मुनिदीक्षा प्राप्त करके अनन्य आत्मविश्वास के साथ अपनी चर्या को आगम अनुकूल वहन करते मुनिश्री वर्धमानसागरजी को देखकर मुनिश्री श्रुतसागरजी मन-ही-मन हर्षित हो रहे हैं। आहार निरन्तराय हो गया मुनिराजों का। हर्षित दंपति ने दोनो महाराजों का जयघोष किया। चरणों मे गिरकर नमोस्तु किया। नूतन युवामुनिश्री वर्धमानसागरजी और मुनिश्री श्रुतसागरजी ने आशीर्वाद दिया दंपति को। बैंडबाजे सहित दोनों मुनिराजों को मंदिरजी मे पहुँचाया। अपने यहाँ प्रथम आहार होने की खुशी में सीतारामजी पाटनी ने सभी को लड्डू बाँटकर अपनी खुशी व्यक्त की।

श्रीमहावीरजी में चल रहे पंचकल्याणक से, इसी बीच आचार्य पदारोहण समारोह एवं एक साथ दी गई ग्यारह दीक्षाओं से जन सैलाब मे धार्मिक चेतना स्फुरित हुई। सभी एक साथ मिले इतने धार्मिक

वैविध्यपूर्ण प्रसंगो से लाभान्वित होते हुए 'अपना यहाँ आना सार्थक हुआ है' ऐसा महसूस कर रहे हैं। खंडवा से आए मामा ईश्वरचंदजी और उनके लाड़ले बेटे चिन्तामणिजी आनन्द मिश्रित शोक से भर गए हैं। चिन्तामणिजी को लगता है कहीं यह स्वप्न तो नहीं ? कल तक मेरा बाल-सखा, मेरा भाई यशवन्त मेरे साथ-साथ पंचकल्याणक देखते घूम रहा था। मेरे साथ सोया था और आज निर्मोही होकर मुनि बन गया ! हाँ, पंचकल्याणक का मेला देख रहा था, घूम रहा था तब वह कभी-कभी कही खो जाता था, एकदम चुप हो जाता था, विचारो में खोया रहता था। यशवन्त निर्ग्रंथ मुनि हो जाएगा, ऐसी तो कभी कल्पना भी नही की थी। अभी उनकी नासाग्र दृष्टि रहती है, कभी नजर मिलती है तो उसमें निर्लेपता ही झलकती है। आज दीक्षा के दूसरे दिन उनका प्रथम आहार देखकर तो मैं चकित रह गया। पूर्व अभ्यास के बिना आत्मविश्वास के साथ शोधन करके करपात्र मे आहार लेते नवदीक्षित युवा मुनि को देखकर मै तो क्या लेकिन पूरा जनसमुदाय आश्चर्य के घिरावे मे आ गया। ऐसी ही प्रतीति, केशलुंचन के समय पंडाल मे बैठे हजारो लोगो को हुई थी। आज मुझे लग रहा है माँ बाल्यावस्था मे यशवन्त का पक्ष क्यूं ले रही थी ? यशवन्त मे समयानुकूल परिवर्तित होने की अजबसी शक्ति है, उसका आत्मविश्वास अद्‌भुत है। मुनि होकर सही मे वह अपनी मंजिल अवश्य प्राप्त करेगा, अपने मनुष्य भव को सार्थक करेगा। इसलिए हर्ष भी है और बालसखा-भाई से जुदा होने का गम भी।

सनावद मे कमलचंदजी खोये-खोये रहते है। यशवन्त के गृहत्याग के पश्चात् न उनके मन को चैन है न दिल में शांति। कहाँ से मिले ? क्योंकि वे सोच रहे थे कि यशवन्त की पढ़ाई अब खत्म हो जाएगी फिर वो कमाने लगेगा, शादी कर उसकी गृहस्थी का आरंभ हो जाएगा। वह जयवन्त का ख्याल रखकर उसकी जिम्मेदारी भी अपने

ऊपर ले लेगा । इस तरह मैं अपना कार्यभार उसके कंधों पर छोड़कर मुक्त हो जाऊँगा । लेकिन जब यशवन्त तैयार होने आया, पिता के कार्य में हाथ बँटाए ऐसी स्थिति में आया तब कमलचंदजी को पूछे बिना ही चुपचाप घर से निकलकर वैराग्यमार्ग की ओर बढ़कर दीक्षा लेकर मुनि बन गया । पिता के अरमानो को तोड़ दिया । भाई और पिता की आशाओं के महल को एक ही कदम से चकनाचूर कर दिया । यशवन्त होनहार होने से उस पर बड़ी उम्मीद रखते थे कमलचंदजी ।

बस, अब तो परिवार के एकमात्र आधार जयवन्त की देखभाल करना, उसे पढ़ाना, खाना बनाकर खिलाना यही बचा है कमलचंदजी के जीवन में । जब मनोरमाजी की तीव्र स्मृति आती है तो आँखें गीली हो जाती हैं उनकी । काश ! आज वो होती तो मेरे दुःख में बँटवारा होता, मुझे उनका सहारा मिलता तो मैं इतना टूटता नहीं । इसके बिलकुल विपरीत जब यशवन्त की याद आती तो उनका गुस्सा आसमान को छू लेता ।

उनके रिश्तेदार, सनावद के अड़ोस-पड़ोसवाले सभी कमलचंदजी को समझा रहे हैं, लेकिन कमलचंदजी का आक्रोश कम नहीं होता । मोतीलालजी की माँ रूपाबाई ने तो एक दिन कमलचंदजी को कह दिया -

"अरे ! तुम कैसे पिता हो ? अपना गुस्सा थूक दो और एकबार जाकर देखो कि तुम्हारा पुत्र अब जगतपूज्य मुनिश्री वर्धमानसागरजी महाराज हो गया है । अपने पुत्र की उन्नति के दीदार करने की इच्छा नहीं होती तुम्हारी ? आज मनोरमा होती तो पुत्र यशवन्त की दीक्षा के दिन ही श्रीमहावीरजी चली जाती ।"

"लेकिन............"

कमलचंदजी कुछ कहने जा रहे हैं परंतु रूपाबाईने उन्हें बीच में ही रोककर कहा -

"लेकिन-वेकिन मैं कुछ नहीं जानती, तुम तुम्हारे लिए नहीं तो मनोरमा के लिए ही एकबार जाकर दर्शन करके आओ। एकबार दर्शन करोगे तो तुम्हारा गुस्सा भाप बनकर उड़ जाएगा। जितना हो सके उतना शीघ्र चले जाओ।"

सुनते रहे कमलचंदजी अपनी रिश्तेदार महिला की बात। सारी रात वे सोचते रहे और अपने निर्धार से हटकर उन्होने निर्णय कर लिया कि मै यशवन्त से मिलने श्रीमहावीरजी जरूर जाऊँगा। अगर हो सका तो उन्हे घर वापस लेकर आऊँगा। पिता का पुत्रमोह कैसे छूट सकता है, भला ? सो कमलचंदजी चले पुत्र यशवन्त से मिलने।

रास्ते में सोच रहे हैं कमलचंदजी -

"मै आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज को समझाकर यशवन्त को वापस ले आऊँगा। यशवन्त को तो उसकी माँ की एवं जयवन्त की याद दिलाकर समझा लूंगा। वैसे तो आचार्यश्री को समझाना मुश्किल होगा, फिर भी मै अपनी उम्र की, अपने अकेलेपन की, अपनी स्थिति की बात बताकर आचार्यश्री से विनती कर यशवन्त को घर ले आऊँगा।"

आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज, बालसहज निर्दोष हास्य से सदा शांत और सहजता मे रहनेवाले आचार्य। प्रश्नों का दो टूक उत्तर देकर सामनेवाले के मन का समाधान करदेनेवाले आचार्य। अपनी बेफिक्री मे मस्त रहनेवाले महामुनि। न कोई दिखावा, न कोई बड़प्पन का बोझ। जैसा उनके भोले मन को लगे उसे वात्सल्य से कहनेवाले आचार्य। कमलचंदजी ने श्रीमहावीरजी पहुँचकर आचार्यश्री धर्मसागरजी के पास जाकर नमोस्तु किया और अपनी पहचान दी। तब संसारी जीवो की मन:स्थिति के ज्ञाता आचार्यदेव ने कमलचंदजी से सीधे ही प्रश्न किया -

"कैसे आना हुआ ?"

कमलचंदजी भी आंटीघूंटी वाले गृहस्थ नहीं है, सीधे-सादे गृहस्थ होने के कारण उन्होंने आचार्यश्री के दो टूक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा -

"महाराजजी ! मैं यशवन्त को लेने आया हूँ ।"

आचार्यश्री ने कमलचंदजी को कहा,

"क्या यशवन्त को लेने आए हो ? ले जाओ ।"

बाद में आचार्यश्री एक क्षण चुप हो गए ।

आचार्यश्री कमलचंदजी के भावो को जानने हेतु उनके मुखमंडल को देखते रहे ।

कमलचंदजी तो आचार्यश्री का उत्तर सुनकर भावविभोर हो गए । उनको अपना मिशन सफल होता हुआ दिखाई दिया । उनकी खुशी के पल लम्बे हो, इससे पहले आचार्यश्री की आवाज उनके कानो में गूंज उठी -

"देखो, आप यशवन्त को ले जाना चाहते हो तो ले जाओ, लेकिन एक शर्त आपको पूर्ण करनी पड़ेगी ।"

दोनो हाथ जोड़ दिये सम्मतिपूर्वक कमलचंदजी ने । मन मे सोच रहे क्षणभर, कुछ भी शर्त हो यशवन्त घर आता हो तो सब स्वीकार्य है ।

उनको पता नही था कि आचार्य भगवंत कैसी शर्त रखेंगे ? हाँ ! बिलकुल सीधे आदमी जो ठहरे और क्या सोच सकते हैं ?

आचार्य भगवंत ने कहा,

"कमलचंदजी ! आप यशवन्त को ले जाओगे तो हमारे संघ की साधु-संख्या कम हो जाएगी । सो आप ऐसा करें कि आप साधु बनकर यहाँ संघ में रह जाइए और यशवन्त को घर भेज दीजिए ।"

अवाक् रह गए कमलचंदजी ।

फिर भी साहस बटोरकर कहा कमलचंदजी ने,

"महाराजजी ! फिर इससे तो वो का वो ही रहेगा, मै यशवन्त को अपने साथ रखना चाहता हूँ ।"

आचार्यश्री ने तुरन्त मुस्कुराते हुए कहा -

"तो आप ऐसा कीजिए, यशवन्त के साथ यहाँ संघ मे रह जाइए ।"

चुप हो गए कमलचंदजी । नतमस्तक हो गए आचार्यश्री के चरणों में ।

आचार्यश्री ने कमलचंदजी की मन:स्थिति को जानकर ब्रह्मचारीजी से कहा,

"इन्हें मुनिश्री वर्धमानसागरजी के पास ले जाओ ।"

ब्रह्मचारीजी के साथ चले कमलचंदजी । उनके मनोमस्तिष्क में तो अभी तक पेन्ट-शर्ट पहने हुए अपना बेटा यशवन्त ही रम रहा है । इसे पितृमोह कहें या अज्ञानता या चिरपरिचय का दोष । उनकी आँखों में तो समाया हुआ है कॉलेज में पढ़नेवाला यशवन्त । घरगृहस्थी के कार्यों में हाथ बँटानेवाला यशवन्त । जयवन्त की खबर रखनेवाला यशवन्त । मनोरमा के पाँवो को सहलानेवाला यशवन्त । अच्छे अंक से स्कूल कॉलेज में उत्तीर्ण होनेवाला यशवन्त । गली मे गोटी और गिल्ली-डण्डा खेलनेवाला यशवन्त । खाना पकानेवाला यशवन्त । पिता का आदर करनेवाला यशवन्त । यशवन्त के अलग-अलग रूपो मे खोये हुए कमलचंदजी पहुँचे मुनिश्री वर्धमानसागरजी के पास ।

मुनिश्री वातायन से आते हुए सूर्यप्रकाश में स्वाध्याय में लीन हैं । कमलचंदजी क्षण दो क्षण अनिमेष देखते रहे मुनिश्री वर्धमानसागरजी को । अपने मन में बसी हुई मूरत से बिलकुल अलग मूर्ति को देखकर ठिठक गए, सहमे रह गए कमलचंदजी । मुनिश्री वर्धमानसागरजी के सौम्य, मुखमंडल पर विराजित शांति को, तेज सभर आभा को एवं यथाजात दिगम्बर वेश में स्वयं यशवन्त को देखकर किंकर्तव्यविमूढ़ हो

गए कमलचंदजी। जब कुछ क्षणों में जागृत हुए तो एकाएक आंतरिक प्रेरणा से हाथ जोड़कर नमोस्तु कहकर चरणों में सिर झुका दिया कमलचंदजी ने । एक पिता अपने ही पुत्र को नमस्कार कर रहे हैं । जिन हाथों ने उन्हें अपनी गोदी में उठाकर बड़ा किया, जिन हाथों ने उन्हें खाना खिलाया, जिन हाथों से अक्षरज्ञान देने में सहायक रहे, कभी तूफान करने पर जिन हाथों ने फटकारा, वे हाथ आज उन्हीं के प्रति नमस्कार की मुद्रा में जुड़े हुए हैं । यह भी आश्चर्य की बात है कि पुत्र ने ऐसी कैसी ऊँचाइयाँ प्राप्त कर ली, ऐसा कौनसा परिवर्तन आ गया, व्यक्तित्व में ऐसा कौन सा निखार आ गया, कैसा पद पा लिया कि अपना हाथ आशीर्वाद के लिए उठा सके । मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने संसार के रिश्ते-नाते तोड़कर, संसार की असारता को समझकर, निर्मोह होकर मोक्षमार्ग पर चलने के लिए जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर निर्ग्रंथ पद प्राप्त कर लिया, सो चारित्र और संयम की फलश्रुति है कि आज अपने पिता को भी आशीर्वाद देने के लिये अपना हाथ आशीर्वाद की मुद्रामें उठाया ।

एक क्षण, मात्र एक क्षण चार चक्षुओं का मिलन हुआ, मुनि श्रीवर्धमानसागरजी के नयनों से प्रवाहित होती वीतरागता, समता एवं निर्मोहता ने कमलचंदजी के मन को भी शांत कर दिया । हा ! तत्क्षण शांत हो गए वे, भूल गए अपने मिशन को, लग गए संघ के सभी मुनिराजों के दर्शन करने में । समझ गए कमलचंदजी कि अब बात उनके बस की नहीं है । मन की इच्छा यहाँ चलनेवाली नहीं है । फिर भी पुत्र के सान्निध्य के लिए, उनको निहारने के लिए, मुनिश्री कुछ बात करे उनके साथ, इस लोभवश दो दिन और ठहर गए कमलचंदजी ।

दूसरे दिन कमलचंदजी मुनिश्री वर्धमानसागरजी के पास गए तो मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने जान लिया कमलचंदजी की मनःस्थिति को । आशीर्वाद देते हुए कहा -

"हर रोज स्वाध्याय करने का नियम लेकर जाना। स्वाध्याय ही आनेवाले भवों से मुक्ति का कारण बनेगा।"

सुन रहे हैं कमलचंदजी और सोच भी रहे हैं।

"न घर की कोई बात छेड़ी, न जयवन्त के बारे में कुछ पूछा, न सनावद की कोई बात पूछी, न अपने मित्रों के बारे में जानकारी चाही। क्या व्यक्ति इतना निर्मोह हो सकता है ?"

आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के एवं मुनिश्री वर्धमानसागरजी सहित संघ के समस्त साधुगण के चरणो मे नमस्कार करके मन मे अजबसी शांति लिये कमलचंदजी लौट पड़े सनावद की ओर।

युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी दीक्षा के पश्चात् अपने नये जीवन मे स्थिर हो रहे है। दीक्षाप्राप्ति के समय के परिणाम अत्यंत उल्लसित एवं विशुद्ध थे। वैसे ही परिणाम समग्र मुनिचर्या के दौरान चलें और धीरे-धीरे उनमें अधिक निखार आए, ऐसी मंगलमय भावना मुनिश्री वर्धमानसागरजी भा रहे है अपने अंत:करण मे। उनके चिंतन मे 'अब मुनिचर्या के द्वारा सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र का विकास हो' ऐसी कामना जग रही है।

दीक्षा के पश्चात् प्रथम ही आवश्यक के रूप में सामायिक का अवसर आया। जो पापादि क्रियाओं के वश मे नहीं है वह अवश है अथवा जो इन्द्रिय, कषाय, नोकषाय और रागद्वेषादि के अधीन नहीं है वह साधु अवश है। ऐसे अवश मुनिश्री वर्धमानसागरजी अवश के जो कार्य, अनुष्ठान - आचरण है - आवश्यक हैं ऐसे आवश्यको में से 'सामायिक' आवश्यक के आचरण में मग्न हैं। सामायिक साधुचर्या का अत्यंत आवश्यक आचरण, अंग है। संपूर्ण इष्ट-अनिष्ट विषयों में रागद्वेष का त्याग करके समताभाव धारण करना ही सामायिक है। मुनिश्री वर्धमानसागरजी अपने गुण पर्यायरूप में परिणमते हुए अपने आपका अवलोकन कर रहे हैं। उनके मनोमस्तिष्क के फलक पर पंडित

श्रीदौलतरामजी कृत छहढाला की ये पंक्तियाँ गूंज रही हैं -

यह मानुष पर्याय, सुकुल सुनिबो जिनवानी ।
इह विधि गये न मिले सुमणि ज्यों उदधि समानी ।।

वे सोच रहे हैं, संसार में मनुष्य भव पाना अतिदुर्लभ है । महान् पुण्योदय के परिणाम स्वरूप प्राप्त मनुष्य भव में, जिनवाणी का समागम एवं आत्मकल्याणकी साधनभूत जिनेश्वरी दीक्षा पाना तो अति-अति दुर्लभ है । मुनिश्री वर्धमानसागरजी के चिंतन की चाक पर यह अति दुर्लभता चक्कर लगा रही है । मेरे पूर्व भव के पुण्य उदयावली में आए हैं फलत: मैंने जिनेश्वरी दीक्षा पाई है । अब अधिकतम पुरूषार्थ कर मुझे अपनी मंजिल तक पहुँचना है । अपरिग्रही निर्ग्रंथ अवस्था ही स्वरूप में लीन होने के लिए, आत्मविशुद्धि के लिए सहायक है । मुनिश्री वर्धमान सागरजी अपने स्वरूप के चिंतन मे लगे है । अनंत सुख, अनंत आनंद, अनंत वीर्य से लबालब भरे हुए, चैतन्य से चमत्कृत आत्मप्रदेशों के संवेदनो का संस्पर्श कर रहे हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी । कब वे अपने मे लीन हो गए, डूब गए, निमग्न हो गए, पता ही न चला । जब उसमें से बाहर आए तो अवर्णनीय आनंद की अनुभूति से रोम-रोम पुलकित हो उठा । मुनिश्री वर्धमानसागरजी का अंत:स्थल भर गया आनंद, उल्लास और समता से । भीतर से सर्व जीवों के प्रति स्नेह की धारा फूट पड़ी । अपने दीक्षागुरु परम पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी एवं इस मार्ग पर आरूढ़ होने में प्रेरणादात्री पूज्य माताजी श्रीज्ञानमतीजी के प्रति कृतज्ञतावश मस्तक झुक गया ।

सामायिक के बाद हर्षोल्लास से सराबोर हो गए मुनिश्री वर्धमानसागरजी । अति हल्कापन अनुभव कर रहे हैं अपने आपमें । उनके नयनों में शांति, समता एवं स्नेह गहरा रहा है, मानों मुनिश्री वर्धमानसागरजी को मुनित्व प्राप्त हुए बहुत साल गुज़र चुके हों । वज़ह है सामायिक । अब मुनिश्री वर्धमानसागरजी शास्त्र अध्ययन में रत होते

जा रहे है ।

श्रीमहावीरजी क्षेत्र पर एक और सुखद घटना का आविर्भाव हुआ । मुनिश्री वर्धमानसागरजी को गृहस्थावस्था में आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत प्रदाता आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज का ससंघ श्रीमहावीरजी में पदार्पण हुआ । आचार्यश्री धर्मसागरजी और आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के मिलन का दृश्य अद्‌भुत रहा । मानो दो सूर्य एकाकार हो गए । धर्म विमल हो गया और विमल धर्म हो गया । दोनों आचार्यों के मिलन एवं संघस्थ साधुओं के मिलन का दृश्य इतना वात्सल्य सभर, इतना सद्‌भावनापूर्ण एवं इतना प्रीतिपूर्ण रहा कि सब देखते ही रह गए । जिन-जिन नजरों ने यह दृश्य देखा वे लोग अपने आपमे धन्यता का अनुभव कर रहे, उन सबका मन वात्सल्य प्रेम और सद्‌भाव से ऐसा भर गया कि उनकी वाणी बर्ताव एवं व्यवहार में भी झलकने लगा । श्रीमहावीरजी का नभोमंडल गूंज उठा आचार्यश्री विमलसागरजी एवं आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की जय-जयकार से । जनसमुदाय में यह जयकार तब तक गूंजती रही जब तक दोनो संघो के साधु आपस मे मिलते रहे ।

युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी गद्‌गद हो गए आचार्यश्री विमलसागरजी के दर्शन से । दीक्षा के पश्चात् इतनी जल्दी आचार्यश्री विमलसागरजी के दर्शन से अंतरमन आह्लाद से भर गया । जीवन मे सबसे प्रथम निर्ग्रंथ मुनिराज के दर्शन हुए थे आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के संघ के बड़वानी में । उन्ही से तो लिया था आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत बागीदौरा में । जिनेश्वरी दीक्षा प्राप्ति का जो है प्रथम चरण, संसार-बंधनों को काटने का प्रथम उपक्रम । मोक्षमार्ग का माइलस्टोन । अपने जीवन को नया मोड़ देने में, जीवन में आध्यात्मिक उजाला फैलाने मे, मानव जीवन की उत्कृष्ट सार्थकता जिसमे है ऐसे निर्ग्रंथ पद-प्राप्ति का प्रथम सोपान है आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत । ऐसे परम

उपकारक आचार्य भगवंत के दर्शन से मन आह्लाद से भरजाय यह स्वाभाविक ही है । प्रसन्नचित्त हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।

यथावसर चैत्र मास के मेले के अनन्तर श्रीमहावीरजी क्षेत्र से संघ का मंगल विहार जयपुर की ओर हुआ । निर्ग्रंथ मुनि अवस्था में यह प्रथम विहार है युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी का । मुनिश्री वर्धमानसागरजी युवा हैं, नव दीक्षित हैं, हृदय मे उत्साह और शरीर में ताकत है । चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज द्वारा निर्दिष्ट मुनिचर्या के निर्वाह के साथ-साथ संघ के मुनिराजों के साथ बराबर विहार कर रहे हैं । दीक्षा के बाद ही दृढ़ता की परीक्षा प्रारंभ हो गई है मुनिश्री वर्धमानसागरजी की । आहारचर्या मे अंतराय आने लगी है । व्याधि ने भी उपसर्ग करना शुरू कर दिया है । लेकिन मुनिश्री वर्धमानसागरजी अड़िग हैं अपनी चर्या में ।

सभी मुनिराज, संघ मे सबसे छोटे एवं नव दीक्षित मुनिश्री वर्धमानसागरजी से विहार में पूछ रहे हैं -

"कैसा लग रहा है ?"

मुनिश्री वर्धमानसागरजी सस्मित कहते हैं -

"अच्छा लग रहा है ।"

"थकान तो महसूस नहीं हो रही है ?"

"नही महाराजजी ! अभी तो नहीं हो रही है ।"

संघस्थ सभी मुनिराज, मुनिश्री वर्धमानसागरजी की चर्या से प्रसन्न हैं । संघ विहार करता हुआ जयपुर खानियाजी पहुँचा ।

अंतराय, व्याधि और विहार ने मुनिश्री वर्धमानसागरजी को कमजोर बना दिया है । वातावरण की भिन्नता, जल की भिन्नता एवं पदविहार ये सब नये अनुभव हैं नवदीक्षित मुनिश्री वर्धमानसागरजी के लिए । फिर भी व्यवधानों को नगण्य मानकर, सहजता से सहकर विहार में उत्साहित रहे मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।

दृढ़ मनोबल के बावजूद ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी के दिन बेहोश हो गए। कुछ देर बाद होश आने पर पसलियों में जोरो का दर्द हुआ एवं तत्क्षण आँखों से दिखाई देना बिल्कुल बन्द हो गया मुनिश्री को, फिर भी धैर्य धारण कर समताभाव से मन मे शांति रखते हुए सोच रहे हैं "मेरे पापकर्मो का उदय आया है, उसे सहजता से सहना होगा।" संघस्थ सभी साधुवर्ग एवं आर्यिका माताएँ चिंतित हैं। क्या करें ? समय है शाम के चार बजे का। विचार-विमर्श के बाद ऐसा निर्णय किया गया कि जयपुर से आँख के डॉक्टर को बुलाकर आँखो की जाँच करवाई जाय। दूसरे दिन प्रातः जयपुर के प्रसिद्ध डॉक्टरों को बुलवाकर आँखों की जाँच करवाई। डॉक्टरो ने बताया कि २४ घन्टे देखने के बाद इलाज प्रारम्भ करेगे।

यह बात हवा की तरह आसपास मे फैल गई। जिन्होने यह बात सुनी, वे उमड़ पड़े खानियाजी मे। सबके मन मे एक ही बात है "नवदीक्षित युवा मुनिराज की नेत्र-ज्योति चली जाना छोटी बात नही है।" युवा श्रावकगण तो यही दोहरा रहे हैं कि वैद्यजी या डॉक्टर साहब किसी के भी द्वारा इलाज करवाकर उनकी नेत्रज्योति वापस लानी चाहिए। सब देख रहे हैं कि नेत्रज्योति चली जाने पर भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी के चेहरे पर न वेदना है, न चिंता। चेहरे पर बस निर्मोहता एवं समता झलक रही है।

दूसरे दिन डॉक्टरो ने आकर देखा कि परिस्थिति मे कोई परिवर्तन नहीं है तब उन्होने आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज को बताया कि इन्जेक्शन एवं एलोपेथी दवाइयाँ आदि के प्रयोग बिना आँखो की ज्योति वापस आना कठिन है। साथ मे यह भी बताया कि यदि २४ घंटे के भीतर उपचार प्रारंभ न करवाया गया तो फिर समय निकलजाने पर किया गया उपचार भी अनुपयोगी साबित हो सकता है। जिन-जिन ने यह बात सुनी सब चिंता से शून्यमनस्क हो गए। संघस्थ सभी के मन

में स्तब्धता छा गई। क्या किया जाय ? कैसे उपचार करवाया जाय ? To be or not to be जैसी हालत हो गई। इस पर अनेक प्रकार से तर्क-वितर्क, विचार-विमर्श होने लगे। आचार्यश्री स्वयं भी गहरी चिंता में डूबे हुए हैं फिर भी उन्होंने कहा कि -

"इस पद में रहते हुए इन्जेक्शन आदि प्रयोग में नहीं लाये जा सकते हैं।"

संघ के सभी साधु अपने-अपने तरीके से सोच रहे हैं। कोई साधु ऐसा सोच रहे हैं कि समय रहते उपचार नहीं करवाया गया तो न तो ये साधुपद मे रह सकेंगे और न इतनी छोटी उम्र में नवदीक्षित की समाधि ही करवाई जा सकती है। समय निकलजाने पर आँखों के बिना गृहस्थावस्था भी अभिशाप हो जाएगी। अतः दीक्षा छेदकर इलाज करवाया जाय, तदनन्तर स्वस्थ होने पर पुनः दीक्षा दी जा सकती है। कोई भी निर्णय करने में हर एक का दिल काँप रहा है।

किन्तु मुनिश्री वर्धमानसागरजी सोच रहे है, "यह तो कर्मयुद्ध प्रारंभ हो चुका है। मैं क्या कायर हूँ ? पलायनवादी हूँ कि रणभूमि छोड़कर निकल जाऊँ ? ऐसा कैसे हो सकता है ? मेरे सामने तो परिषहजयी मुनिराजों की लम्बी यादी है। महामुनि सुकुमालजी जिनको स्यालनी भक्षण करती रही पर उससे बेखबर वे देहातीत होकर अपने आपमे खो गए और मुक्त हो गए। महामुनिश्री सुकौशल मुनिराज का भक्षण व्याघ्री करती रही, पर वेदना से परे मुनिश्री आत्मध्यान में निमग्न रहे और मुक्त हो गए। शिवभूति मुनिराज तो उपसर्ग झेलने में प्रमुख हैं। उपसर्ग आने पर शिवभूति मुनिराज आत्मध्यान से च्युत नहीं हुए और मुक्त हो गए। पाण्डव जब ध्यान में मग्न थे तब उनके वैरी कौरव पक्ष के मनुष्यों ने लोहे की जंजीरों को तपाकर आभूषणों की तरह उनको पहना दिया फिर भी आत्मध्यान में लीन तीन पाण्डवों ने मुक्ति पा ली। मुनिश्री गजकुमार की सहनशक्ति ही उनकी मुक्ति का कारण बनी। वारिषेण, जम्बूस्वामी, भट्ट अकलंक

भी कैसे भूले जा सकते है ? तीर्थंकर भगवंतों को भी कर्मों ने नहीं छोड़ा, उन्होने भी मुनि अवस्था मे उपसर्ग झेलकर केवलज्ञान प्राप्त किया और सिद्धालय मे जा बसे।

"मैं तो चारित्र चक्रवर्ती महान् आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराजजी की परंपरा का मुनि हूँ। क्या उन्होंने सल्लेखना नहीं धारण की थी?" डॉक्टरो की बात सुनकर मुनिश्री वर्धमानसागरजीने नि:संकोच कह दिया कि -

"प्रसंग आनेपर सल्लेखना ले लूंगा किन्तु मै इन्जेक्शन आदि नही लगवाऊंगा।"

उनकी दृढ़ता जानकर साधुवर्ग एवं उपस्थित श्रावकगण चकित रह गए। असातावेदनीय कर्म का उदय समझकर मन मे विचार किया मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने कि "इस समय एक जिनेन्द्र भगवान ही शरणभूत है", ऐसी दृढ़ श्रद्धा हृदय मे संजोकर भगवत् भक्ति का स्रोत उमड़ पड़ा उनके अंत:करण मे। पास बैठे मुनिराजो से ऊपर मंदिरजी में भगवान के समक्ष ले चलने को आग्रहपूर्वक कहा। इस समय शाम के ५ बजे है। किन्ही साधु महाराज का कहना हुआ इतनी तेज धूप मे ऊपर जाना ठीक नहीं है। इस बात पर पूज्य श्री श्रुतसागरजी महाराज एवं श्री ज्ञानमती माताजी ने कहा कि "यदि इनकी भावना है तो अवश्य ले जाना चाहिए।" इस समय तक ऑखो की रोशनी लुप्त होने को ४९ घंटे बीत चुके हैं। ज्यो ही मुनिश्री वर्धमानसागरजी को अरिहंत भगवान के समीप लाये गए, उन्होने चंदाप्रभु के चरणो में मस्तक झुकाकर आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी रचित शांति भक्ति "न स्नेहाच्छरणं प्रयांति भगवन् ...." का पाठ करना प्रारंभ किया।

मुनिश्री वर्धमानसागरजी 'शांति भक्ति' मे एकाग्र होते हुए इतनी गहराई मे उतर गए कि उनको आसपास क्या हो रहा है, इसका भी कुछ ख्याल ही नही रहा। सभी साधु एवं आर्यिकाएँ एक-एक कर

भक्तिगंगा में बहने लगे । भावविभोर होते हुए परम पूज्यश्री अभिनंदनसागरजी मुनिराज ने भक्ति एवं वात्सल्य का बेमिसाल उदाहरण सामने रखा । उन्होंने चंदाप्रभु भगवान के सामने कहा कि "जबतक मुनिश्री वर्धमानसागरजी की आँखों की ज्योति वापस नहीं आती तब तक मेरे छहों रसों का त्याग है ।" इतना कहकर वे भी भक्ति में तल्लीन हो गए । मुनिश्री संभवसागरजी भी अपनी अस्वस्थता की परवाह किए बिना संलग्न हो गए, लीन हो गए 'शांति भक्ति' में । संघस्थ सभी के चित्त में एक ही विचार है, हृदय मे एक ही कामना है कि मुनिश्री पर आए हुए संकट का किस प्रकार निवारण हो ? मुनिश्री वर्धमानसागरजी की नेत्र-ज्योति एलोपेथी दवाई के बिना एवं मुनिधर्म के मूलगुणों का निरतिचार पालन करते हुए कैसे वापस लाई जाय ? इसके लिए एक ही शरण है जिनेन्द्रदेव और उनकी भक्ति । सभी साथ में मिलकर सामूहिक रूप से जिनेन्द्र भक्ति का पाठ, मन मे एक ही आशा रखकर कर रहे है कि नभोमंडल में भक्ति के परमाणु बिखरकर दुर्दैव कर्मो का क्षय हो जाय और नेत्रो की ज्योति ज्यो-की-त्यों वापस आ जाय । वयोवृद्ध महान् विचारक पूज्य श्री श्रुतसागरजी महाराज अपने अन्तर मे अद्भुत वात्सल्य में गोते लगाते हुए इनके भविष्य का विचार करके करुणार्द्र हो रहे है । वे सोच रहे है,

"मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने इतनी अल्पायु में दृढ़तापूर्वक महान् त्याग किया और इन्हें इतना जबरदस्त उपसर्ग ।"

पूज्य माँ ज्ञानमती माताजी, जिन्होंने गृहस्थावस्था में यशवन्त को संसार-समुद्र से पार करानेवाली विधा - जैनेश्वरी दीक्षा के लिए प्रेरित किया, अपने शास्त्रोक्त ज्ञानकी घूंटी को घूँट-घूँटकर उन्हें पिलाया, अपने पुरुषार्थ से जैनेश्वरी दीक्षा के लिए सक्षम बनाया, ऐसी सच्ची माँ ज्ञानमतीजी भगवान जिनेन्द्रदेव के समक्ष अपने भावों को शब्दों में परिवर्तित करती हुई बार-बार यही कहती हैं कि "हे भगवान ! आप बड़े

है या डॉक्टर" और अपनी शक्ति से भी अधिक श्रमपूर्वक सक्रियता से भक्ति मे तदाकार हो जाती है। भक्ति का ऐसा तांता लगा हुआ है कि किसी को दूसरे का कुछ पता ही नही, सभी तल्लीन हैं प्रभु-भक्ति मे। पूज्य ज्ञानमती माताजी के साथ श्री जिनमतीजी, श्री आदिमतीजी, श्री विशुद्धमतीजी आदि सभी आर्यिकाएँ चौबीस घंटे का नियम लेकर सुमधुर कण्ठ से उच्च स्वर मे भक्तिपाठ कर रही हैं। साधु वर्ग ही नही, व्रती एवं श्रावकगण भी इस भक्ति अभियान से अछूते नहीं रहे। क्या त्यागी, क्या श्रावक, क्या स्त्री, क्या पुरुष, जिस-जिस ने यह बात सुनी सभी की एक ही तमन्ना है, एक ही कामना है, अंत:करण से एक ही ध्वनि तरंगित होती है कि वापस आजाय मुनिश्री वर्धमानसागरजी की चक्षु-ज्योति। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के गृहस्थावस्था के भाई, मित्र एवं मार्गदर्शक श्री मोतीलाल जी तो किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए है। कभी वे भक्ति मे सम्मिलित होते है तो कभी विचार-विमर्श गोष्ठी में। खानिया का भक्ति सभर माहौल चतुर्थकाल की झॉकी दर्शा रहा है।

तीन घण्टे की सामूहिक भक्ति के बाद हुआ एक चमत्कार। ५२ घण्टो से गई हुई नेत्र-ज्योति पुन: ज्यो-की-त्यों प्राप्त हो गई। यह वही 'शांति भक्ति' है जिसे श्री पूज्यपाद आचार्य ने तब गुनगुनाया था जब आकाशमार्ग से गमन करते समय सूर्य की उष्णता से स्वयं आचार्यदेव की नेत्रज्योति चली गई थी एवं इस 'शांति भक्ति' की रचना करते हुए ही नेत्रज्योति पुन: प्राप्त हुई थी।

मुनिश्री वर्धमानसागरजी अपने परिषहजय से सन्तुष्ट है। अपनी भक्ति के परिणाम से प्रसन्न हैं। वे सोच रहे है, वापस मिली नेत्र-ज्योति पहलेवाली नही है, यह तो भगवान के आशीर्वाद के साथ आई हुई नेत्रज्योति है। इसके द्वारा अनेक लोगो की अन्त:ज्योति को प्रकाशमान करना होगा। भक्ति के फलस्वरूप मुझे जो प्राप्त हुआ उसे अब जन-जन मे बॉटना होगा। साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका सभी की भक्ति

का यह सुपरिणाम तभी सार्थकता प्राप्त कर सकेगा।

मुनिश्री वर्धमानसागरजी की नेत्र-ज्योति की पुन:प्राप्ति के अवसर का आनंद अवर्णनीय है। पुलकित हो उठे सभी, चतुर्विध संघ ख़ुशी से झूम उठा। सबके होठों पे हँसी, आँखों में आनंद झलकने लगा। सभी साधु वर्ग एवं माताजी श्रीज्ञानमतीजी के मुखारविंद से बरबस ही ये शब्द निकल पड़े कि "हमने दीक्षित जीवन में ही क्या, पूरी उम्र में न तो ऐसी भक्ति की है और न देखी।" भक्ति में सम्मिलित व्रती, त्यागी एवं श्रावकगण भी अपने भीतर जीवन में कभी न पाया हो ऐसे अद्‌भुत रस की अनुभूति कर रहे हैं। अपनी आँखों के सामने भक्ति की शक्ति को देखकर, जैनाचार्यो द्वारा रचित स्तोत्रों की अपरंपार महिमारूप तादृश फल प्रत्यक्ष देखकर चकित रह गए सभी श्रावकगण। प्राचीन जैन इतिहास को शास्त्रो से सुना था, आज वर्तमान में उसे चरितार्थ होते हुए देखा। ज्योति प्राप्त होने के बाद भी भक्तिपाठ ज्यों-का-त्यों उत्साहपूर्वक सारी रात एवं दूसरे दिन संध्या ५ बजे तक अखंड रूपसे चलता रहा। दूसरे दिन प्रात:

१. प. पू. आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज,
२. मुनिश्री श्रुतसागरजी
३. मुनिश्री अजितसागरजी
४. मुनिश्री ऋषभसागरजी
५. मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी
६. मुनिश्री श्रेयांससागरजी
७. मुनिश्री बोधिसागरजी
८. मुनिश्री निर्मलसागरजी
९. मुनिश्री संयमसागरजी
१०. मुनिश्री दयासागरजी
११. मुनिश्री सुबुद्धिसागरजी

१२. मुनिश्री महेन्द्रसागरजी
१३. मुनिश्री अभिनन्दनसागरजी
१४. मुनिश्री संभवसागरजी
१५. मुनिश्री शीतलसागरजी
१६. मुनिश्री यतीन्द्रसागरजी
१७. मुनिश्री वर्धमानसागरजी

● आर्यिकाएँ ●

१८. श्री वीरमतीजी
१९. श्री शांतिमतीजी
२०. श्री वासमतीजी
२१. श्री ज्ञानमतीजी
२२. श्री चंद्रमनीजी
२३. श्री पद्मावतीजी
२४. श्री नेमिमतीजी
२५. श्री जिनमतीजी
२६. श्री राजुलमतीजी
२७. श्री संभवमतीजी
२८. श्री आदिमतीजी
२९. श्री विशुद्धमतीजी
३०. श्री सूर्यमतीजी
३१. श्री अरहमतीजी
३२. श्री श्रेयांसमतीजी
३३. श्री कनकमतीजी
३४. श्री भद्रमतीजी
३५. श्री कल्याणमतीजी
३६. श्री सुशीलमतीजी

३७. श्री सन्मतीजी
३८. श्री धन्यमतीजी
३९. श्री विनयमतीजी
४०. श्री श्रेष्ठमतीजी
४१. श्री अभयमतीजी
४२. श्री गुणमतीजी
४३. क्षु. श्री योगीन्द्रसागरजी
४४. क्षु. श्री भूपेन्द्रसागरजी
४५. क्षु. श्री गुणसागरजी
४६. क्षु. श्री बुद्धिसागरजी
४७. क्षुल्लिका श्री विद्यामतीजी

आदि ४७ साधु-साध्वी एवं श्रावक-श्राविकाओं का विशाल चतुर्विध संघ मुनिश्री वर्धमानसागरजी को साथ में लेकर घाट के दोनों मंदिरो में दर्शनार्थ पधारे। श्रावकगण द्वारा आचार्यश्री धर्मसागरजी के, मुनिसंघ के एवं जैनधर्म के जयघोष से ध्वनित हो उठा खानियाजी का आकाश ।

युवा मुनिश्री पर आये हुए संकट का निवारण हुआ, यह सर्व वृत्तांत सुनकर, जानकर, जैन-अजैन डॉक्टर, सर्जन भी आश्चर्य में डूब गए और वीतराग की भक्ति के माहात्म्य को मानने को विवश हुए ।

वर्षाकाल समीप आने लगा। संघ में से मुनिश्री श्रुतसागरजी के नेतृत्व में कुछ मुनियों एवं आर्यिकाओं ने आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की अनुमति पूर्वक जयपुर-खानिया से पृथक् विहार किया। तदनन्तर आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज अन्य साधु-साध्वियोंके साथ जयपुर शहर की ओर विहार कर गए। खजांची की नसियाँ में संघ ठहरा। कुछ दिन बाद वर्षायोग-प्रतिष्ठापन के लिए जयपुर रामगंज बाजार बक्सीजी के चौक के लिए संघ का विहार हुआ ।

जुलाई १९६९ का वर्षायोग, मुनिश्री वर्धमानसागरजी का प्रथम वर्षायोग जयपुर में। वे सोच रहे हैं, "मुनियों-त्यागियों के लिए मूलतः अहिंसा की दृष्टि को ध्यान में रखकर ही वर्षायोग का नियम बना है। वर्षायोग में साधु-साध्वियो को विहार न करने के कारण अपनी दैनिक चर्या के अतिरिक्त भी पर्याप्त समय मिलता है। उसका उपयोग करके साधक अपनी साधना को अति उज्ज्वल कर सकता है। तपाराधना एवं ज्ञानाराधना के लिए यही उत्कृष्ट समय है। माँ जिनवाणी की सेवा, साहित्य-सुरक्षा. मूर्ति-मंदिर-निर्माण एवं समाज के उत्थान के कार्यों को ठोस रूप देने के लिये चतुर्विध संघ को चातुर्मास का समय ही योग्य है। एक ही जगह पर ठहरने से साधु-साध्वियों का सतत सान्निध्य श्रावक-श्राविकाओं को प्राप्त होता है। वर्षाकालीन वातावरण मे पुरुष वर्ग भी अर्थोपार्जन मे से एवं महिलाएँ घरेलू कार्य में से समय निकाल सकते हैं। धर्माराधन मे निमग्न साधु-साध्वी, स्वकल्याण के साथ-साथ परकल्याण मे भी रत रहते है और श्रावकगणको अपनी चर्या से लाभान्वित करते है।

"मेरे लिए यह चातुर्मास ज्ञानाराधना करने के लिए श्रेष्ठ सिद्ध हो, ऐसा पुरुषार्थ मुझे करना है। कर्मो का क्षय करके मुक्ति के लक्ष्य को प्राप्त करना है। साधना एवं अध्ययन के इस सुअवसर का पूर्ण-रूपेण उपयोग करना है। धर्मग्रंथो के अध्ययन से मुझे अपने आत्म-स्वभाव में स्थिर होने के अभ्यास को आगे बढ़ाना है। मुझे अपनी आत्मा को कर्मबंधनों से मुक्त कर शुद्धात्मा रूप बनाने का पूर्ण प्रयास करना है। इसी लिए स्वाध्याय तप की आराधना इस चातुर्मास में डटकर करनी है।"

मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने अपनी दृढ़ता के अनुसार धर्मग्रंथों के अध्ययन का प्रारंभ आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी के साथ कर दिया। जिस धर्मग्रंथ का अध्ययन चलता है उस पर बाद में सामायिक

काल में एवं अन्य समय में मुनिश्री वर्धमानसागरजी चिंतनरत रहते हैं वे पूर्वाचार्यों के कथन के मर्म को, उसके रहस्य को समझने की कोशिश करते हैं। उनका पूर्ण समय स्वाध्याय और चिंतन में व्यतीत होता है। मुनिश्री वर्धमानसागरजीके साथ संघके अन्य मुनिश्री अभिनन्दन सागरजी, मुनिश्री सम्भवसागरजी अनन्य सखावत् अध्ययनरत रहते हैं। कभी - कभी तीनों मुनिराज धर्मग्रंथ के अध्ययन के विषय पर विचार-विमर्श करते रहते हैं। तीनों मुनिराजों की अध्ययन की ललक एवं जिज्ञासा से आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी और आचार्य भगवंत परम पूज्यश्री धर्मसागरजी महाराज प्रसन्न हैं। युवा नवदीक्षित मुनि श्री वर्धमानसागरजी की प्रगति से, उनकी विनयशीलता से, उनके स्वभावगत स्नेहपूर्ण व्यवहार से संघ के सभी त्यागी उनकी प्रगति में अपना यथाशक्ति सहयोग प्रदान करने को प्रयासशील रहते हैं।

चातुर्मास के दौरान चल रही सभी गतिविधियों मे अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करने के लिए मुनिश्री वर्धमानसागरजी तत्पर रहते हैं। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के लिए गुरुआज्ञा सर्वोपरि है। उसे पूर्ण करने के लिए वे हर पल कर्तव्यशील हैं। आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज भी अपने नये शिष्य की ऐसी गुरुभक्ति से परिचित हैं।

पल-पल वर्धित होते हुए मुनिश्री वर्धमानसागरजी को प्रथम चातुर्मास में अन्तरायों का लम्बा सिल-सिला चला। अन्तरायों के चलते भी मुनिश्री की तप मे दृढ़ता, हृदय में धैर्य एवं समताभाव वर्धित होते चले। जैसे-जैसे अंतराय चली वैसे-वैसे मुनिश्री अपने स्वभाव में और स्थिरता प्राप्त करने लगे। आपत्ति को पूर्व में किए गये कर्मों का उदय मानकर उसे आशीर्वाद समझा और प्रवृत्त हो गए कर्मोंको सहजता से सहकर उनकी निर्जरा में। लग गए अपनी साधना को वर्धित करने में। पूरे जयपुर के श्रावक-श्राविका संघ चिंतित है। क्या करें ? कैसे भोजन बनाएँ ? चूंकि चौकन्ने रहते हुए भी, अत्यन्त ध्यान रखते हुए भी

निरन्तर अंतराय आना चालू ही है। हर कोई अपने-अपने तरीके से प्रभु-प्रार्थना कर रहा है। कोई-कोई खुद एकासन आदि का नियम ले लेते है। सभी के अंतर मे एक ही आकांक्षा है कि कुछ भी करके युवा मुनि श्री वर्धमानसागरजी का निरन्तराय आहार हो जाए। सब देखते हैं मुनिश्री के चेहरे पर फैली प्रसन्नता एवं स्वभावगत समता को जो निरंतर अंतरायों के बावजूद भी जैसी-की-तैसी है। सभी का सोच है यह कौन सा जादू है ? हमको एक समय का भोजन या पानी नहीं मिलता तो हमारा चेहरा मुरझा जाता है और ये मुनिश्री वर्धमानसागरजी साधना से च्युत करानेवाले कर्मोदय का अपनी पूरी ताकत से मुकाबला कर रहे है। कसौटी की निहाई पर शत-प्रतिशत खरे उतर रहे हैं। किन्तु अन्तरायोंकी बहुलता से पुदगल - शरीर ने जवाब दे ही दिया, मुनिश्री वर्धमानसागरजी का शारीरिक स्वास्थ्य बिगड़ गया। परिणामस्वरूप व्याधियो का आक्रमण होता रहा। फिर भी परम पूज्य आचार्य गुरुदेव के आशीर्वाद, अभिन्न सखा मुनिद्वयश्री अभिनन्दनसागरजी एवं मुनिश्री सम्भवसागरजी की सेवा का संबल, साथ मे आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी के वात्सल्यसभर संबोधनों से मन में दृढ़ता बनी रही। मुनिश्री वर्धमानसागरजी परिषहजयी बन रहे है। पूरा संघ मुनिश्री वर्धमानसागरजी को संबल दे रहा है। मुनिश्री वर्धमानसागरजी तनसे कृश मगर मनसे दृढ़ होते हुए शरीर और आत्माकी भिन्नता के अनुभव से गुजरने लगे। प्रथम चातुर्मास ही उनकी साधना का परीक्षाकाल बनके आया, सभी का मुकाबला करते-करते उनका आत्मबल, दृढ़विश्वास हरपल वर्धित होता जा रहा है। ऐसे कसौटीकाल में चातुर्मास के दौरान मुनिश्री वर्धमानसागरजी धर्मग्रंथो का अध्ययन बड़ी रुचि एवं लगन के साथ करते रहे।

साधना के दीप वो, आराधना में जल रहे।
पैर उनके लड़खड़ाए फिर भी वो तो चल रहे॥

चरेवैति..... चरेवैति..... को चरितार्थ करते हुए मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने जयपुर रामगंज बाजार चौक में प्रथम वर्षायोग सम्पन्न करने के बाद संघके साथ पदमपुरा अतिशय क्षेत्र की ओर विहार किया।

भगवान पद्मप्रभु की अतिशय युक्त, भूमि से स्वयं प्रगट हुई मनोहर मूर्ति के दर्शनकर सब भावविभोर हो गए। जिनमहिमाशाली मूर्ति के समक्ष श्रावकगण अपनी पीड़ाएँ, यातनाएँ दूर कराने आते हैं और उसमें सफल भी होते हैं। श्रावकों में ऐसी मान्यता चली हुई है कि व्यन्तर बाधा ग्रस्त व्यक्तियों को यहाँ लाया जाता है और मंदिर में आते ही भगवान के दर्शन से उसकी बाधा का निवारण होता है। वर्तुलाकार गुंबजोंवाला यह गोलाकार मंदिर भी अद्भुत है। आसपास में फैली हुई हरियाली, शहर की भीड़भाड़ से दूर शांत, सौम्य वातावरण से युक्त यह क्षेत्र साधु-साध्वियों के लिए साधना द्वारा अपनी ज्ञानज्योति को और भी प्रकाशित करने मे, उज्ज्वलित करने में सहायक है। ऐसे पदमपुरा अतिशय क्षेत्र पर कुछ दिन संघ ठहरा, बादमें विहार प्रारंभ हुआ। नगर-ग्रामों में विहार करता हुआ, पुष्प जैसे अपनी पराग बिखेरकर आसपास के वातावरण को सुवासित करता है, ठीक वैसे ही अपनी चर्या से, उपदेश से संसारी जीवों को धर्मध्यान में आगे बढ़ने में सहायक होता हुआ, धर्म प्रभावना करता हुआ संघ चलता जा रहा है।

संघ में पूज्यश्री ज्ञानमती माताजी द्वारा अष्टसहस्री और पूज्य श्रीजिनमती माताजी द्वारा प्रमेयकमलमार्तण्ड की टीका का कार्य प्रारंभ हुआ। मुनिश्री वर्धमानसागरजी नजदीक से देख रहे हैं माताद्वय की लगन को, उनकी धार्मिक ग्रंथों की पकड़ को, उनकी एकाग्रता को। कभी-कभी माताजी के पास बैठकर लिखने की पद्धति भी समझ रहे हैं। कभी माताजी मुनिश्री वर्धमानसागरजी को दोनो ग्रंथों के विषय के बारे में भी समझाती हैं।

विहार करते हुए, उपदेश और चर्या के माध्यम से जन-जन को

सत् पथका मार्गदर्शन देते हुए १९७० के चातुर्मास के लिए राजस्थान प्रांत के टोंक नगर के समाज की विनति को ध्यानमे रखते हुए संघ का आगमन टोंक नगर में हुआ ।

टोंक नगर के जैन समाज के मानों भाग्य खुल गए । "चातुर्मास स्थापना यहीं होगी" इस समाचार से सभी के चेहरे पर आनंद की लकीर खीच गई । उत्साह सभर युवावर्ग ने संघ को ठहराने की वसतिका को सजावट से नया रूप दे दिया । हरेक ने अपने घर को भी साफसुथरा बनाकर अंतर की भावना को व्यक्त किया ।

श्रावकगण आबालवृद्ध सभी मिलकर नगर से कुछ किलोमीटर दूर संघ को लिवा लेने हेतु सामने गए ! बैन्ड-बाजे के साथ संघ का हार्दिक स्वागत हुआ । टोक के नगरजनो की भक्ति और संघ के प्रति समर्पण सराहनीय रहे । चातुर्मास के दौरान विधान, धार्मिक ग्रंथो का अध्ययन एवं धार्मिक शिक्षण शिविर आदि का आयोजन हुआ, जिसमे सभी ने अपने-अपने तरीके से हिस्सा लिया । परम पूज्य आचार्यश्री एव संघ के द्वारा वितरित ज्ञानलक्ष्मी को अपनी ताकत से सबने बटोर लिया ।

मुनिश्री वर्धमानसागरजी अपने दूसरे चातुर्मास मे भी अपना उपयोग अध्ययन में लगाना चाहते है । पूज्यश्री ज्ञानमती माताजी के पास राजवार्तिक पूर्वार्ध का अध्ययन बड़ी लगन से करने लगे । पूज्य माताजी भी द्वादशांग जिनवाणी से युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी को ज्ञान मे पल-पल वर्धित करने के लिए सदा उद्यमी हैं । वे खुद भी पूरा समय अपना उपयोग क्षण के भी बिना विलंब से टीका लिखने में या पढ़ने-पढ़ाने मे रखती हैं । कभी-कभी आचार्य भगवन्त धर्मसागरजी महाराज भी माताजी से मुनिश्री वर्धमानसागरजी के अध्ययन की प्रगति के बारे मे पूछ लेते हैं । माताजी सादर बताते हुए अपना संतोष व्यक्त करती है । कभी आचार्यश्री खुद वर्धमानसागरजी से पूछते हैं -

"ग्रंथों का अध्ययन कैसा चल रहा है वर्धमान ?"

मुनिश्री वर्धमानसागरजी कर-कमलों को जोड़कर नमोस्तु करके कहते हैं -

"गुरुदेव ! अध्ययन अच्छा चल रहा है । माताजी मेरे लिए ज्यादा पुरुषार्थ कर रही हैं....."

सल्लेखना जैनधर्म की एक अद्‌भुत क्रिया है । अन्य धर्मो से जैनधर्म की भिन्नता के अनेक विषयों में से सल्लेखना एक है । क्या है सल्लेखना ?

जब शरीर साधना मे सहकार न देता हो, कोई मरणांत उपसर्ग आ जाय, महादुर्भिक्ष हो, शिथिल वृद्धावस्था आए, महाव्याधि हो जाय तब धर्म के लिए स्वेच्छा से शरीरका त्याग करना सल्लेखना है । संघ के मुनिश्री शीतलसागरजी ने सल्लेखना ली है । उनकी सल्लेखना-साधना में मुनिश्री वर्धमानसागरजी को भी संघ के अन्य मुनियो के साथ निकट से वैयावृत्ति करने का अवसर प्राप्त हुआ । मुनिश्री वर्धमानसागरजी देख रहे हैं मुनिश्री शीतलसागरजी की मन की स्थिरता को, समता को । उनकी आत्मनिमग्नता की चाह को । यह सब देखकर चिंतन की गलियों मे घूमना शुरू कर दिया मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने । "सल्लेखना न मृत्यु है न अपमृत्यु ! न अपघात ! सल्लेखना तो है, जिस शरीर से आत्मसाधना करते हैं वह शरीर जब आत्मसाधना के लिए सहयोगी न रहे तब आनंदपूर्वक - शांतिपूर्वक - समताभाव से शरीर का त्याग करने का नाम ! मृत्यु को महोत्सव बनाने का नाम है सल्लेखना । मृत्यु आती है आयु कर्म की पूर्णता से । जब आती है तब मनुष्य में राग-द्वेष को तीव्र करती है । अपमृत्यु और अपघात कषाययुक्त होते हैं । राग-द्वेष के अभाव के साथ मृत्यु को आमंत्रित करने का नाम है सल्लेखना । मृत्यु महोत्सव ।"

मृत्यु महोत्सव की तैयारी कर रहे हैं मुनिश्री शीतलसागरजी ।

मुनिश्री वर्धमानसागरजी मुनिश्री शीतलसागरजी की वैयावृत्ति करते हुए सल्लेखना कैसे कराई जाती है, उसका अभ्यास कर रहे हैं । मानों भविष्य की तैयारी कर रहे हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी । वैयावृत्ति में अपने वात्सल्य का पूर्ण उपयोग करते रहे हैं मुनिश्री ।

टोक समाज के प्रमुखों ने सन् १९७१ फरवरी में होनेवाली पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में संघ सहित सान्निध्य प्रदान करने हेतु पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज से करबद्ध प्रार्थना की । आचार्य भगवंत पूज्यश्री धर्मसागरजी महाराजने टोक - समाज की प्रार्थना को स्वीकार किया । वर्षायोग सम्पन्न होने के पश्चात् निकटवर्ती ग्रामो में संघ ने विहार किया । विहार के दौरान भी संघ में अध्ययन की प्रवृत्ति चलती रही । १९७१ के फरवरी मास मे पुनः टोकनगर में संघ का पदार्पण पॅचकल्याणक प्रतिष्ठा हेतु हुआ ।

निर्ग्रंथ अवस्था की प्राप्ति के बाद प्रथमबार पंचकल्याणक प्रतिष्ठा को देखने का - समझने का अवसर मिला मुनिश्री वर्धमानसागरजी को । एक-एक करके पॉचो कल्याणकों की सभी क्रियाओं से परिचय प्राप्त करने लगे मुनिश्री वर्धमानसागरजी । पूज्य माताजी से एवं संघ के अन्य मुनियो से पंचकल्याणक की प्रत्येक विधि और उसके महत्त्व का ज्ञान, पूर्ण जिज्ञासा से प्राप्त करने मे रत हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।

एक दिन आचार्यश्री धर्मसागरजी ने संघ के सामूहिक स्वाध्याय मे 'प्रवचनसार' ग्रंथ की वाचना की आज्ञा मुनिश्री वर्धमानसागरजी को दी । 'प्रवचनसार' की सामूहिक वाचना का प्रारंभ हुआ । वाचना के बीच अपने मन मे उठते प्रश्नो को प्रस्तुत करके उनका निराकरण पाकर अपनी जिज्ञासा को शांत और ज्ञान को बढ़ावा दे रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी । पल-पल वर्धित होते जा रहे हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।

'साधु तो चलते भले' इस उक्ति के अनुसार प्रतिष्ठा के बाद संघ ने टोक जिले के ग्राम-नगरों मे विहार किया । संघ के साथ विहार करते

विविध ग्रामों की बदलती - बोली का, पहनावे का एवं भावों की अभिव्यक्ति की पद्धति का परिचय होता है मुनिश्री वर्धमानसागरजी को।

सन् १९७१ में धर्मनगरी अजमेर (राजस्थान) में चातुर्मास हेतु विहार करते हुए संघ का आगमन मदनगंज - किशनगढ़ में हुआ। किशनगढ़ में परम पूज्य आचार्य श्री ज्ञानसागरजी महाराज ससंघ बिराजमान हैं। दोनों संघो के आचार्यों एवं साधुओं का एक दूसरे से मिलने का और रत्नत्रय-कुशल की पृच्छा का एवं पूर्ण वात्सल्य का द्योतक यह समागम उपस्थित सभी श्रावकों हेतु, एक-दूसरे के प्रति व्यवहार के लिए अनुकरणीय रहा। पूज्य आचार्यश्री ज्ञानसागरजी एवं संघस्थ मुनि विद्यासागरजी आदि मुनिवरों के दर्शन का अवसर प्राप्त हुआ मुनिश्री वर्धमानसागरजी को। आचार्यश्री धर्मसागरजी और आचार्यश्री ज्ञानसागरजी के संघो का १५ दिन तक एक साथ वास्तव्य हुआ। १५ दिन तक दोनो संघो के साधुओंने साथ बैठकर पंचास्तिकाय का स्वाध्याय किया। मुनिश्री विद्यासागरजी द्वारा ग्रंथकी वाचना होती रही। आचार्यश्री ज्ञानसागरजी ने दोनो संघ-मिलन के अवसर पर अपने प्रवचन में कहा -

"धर्म के बिना ज्ञान अधूरा है......"

इस पर आचार्यश्री धर्मसागरजी ने कहा -

"ज्ञान के बिना धर्म क्या करे ?"

दोनों आचार्य मदनगंज - किशनगढ़ में एक साथ बैठकर पंचामृत अभिषेक देखते हैं, एक ही मंच पर बैठकर प्रवचन करते हैं और फिर एक साथ दोनों आहारचर्या के लिए उठते हैं। दोनों संघों की आत्मीयता देखकर भावविभोर हो जाते हैं श्रावक। जिन-जिन आँखों ने ये दृश्य देखे, वे ऑखें धन्य हो गईं। किशनगढ़ में हुआ यह अद्भुत मिलन सभी के स्मृति पटल पर अंकित हो गया। मंदिरजी के बाहर, अपने व्यवसाय के क्षेत्र में एवं गली - मोहल्ले में भी इस अकल्पनीय संघ -

मिलन की चर्चा होती रहती है ।

इन दोनो आचार्यों के संघ-मिलन के पीछे भावी का कुछ संकेत छिपा हुआ है । दोनो संघो में एक-एक ऐसे मुनिराज विद्यमान हैं जो भविष्य में दिग्गज आचार्य बनकर भारतवर्ष को अपनी संयम-साधना, एवं तप-ध्यान द्वारा स्वकल्याण के साथ-साथ परकल्याण का मार्ग प्रशस्त करते हुए कम्प्यूटर युग में एक नई दिशा दिखाएंगे, जो जैनधर्म की गौरव गरिमा को नया रूप, नया निखार अर्पण करनेवाली है । वे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी और मुनिश्री विद्यासागरजी । दोनो हैं अनन्य गुरुभक्त । एक ही राशिवाले दोनों ज्ञान मे पल-पल वर्धित होने के पुरुषार्थी ।

पूरा किशनगढ़ दोनों संघो की सेवा मे रत है । आनन्द-उत्साह एवं जागृति का माहौल किशनगढ़ के साथ-साथ आसपास के गॉवो मे भी फैल गया है । इन सभी मे एक परिवार अपनी पूर्ण ताकत से मुनिसंघ की सेवा की भावना लिये आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की सेवा मे संलग्न है । संघसेवा मे लगे इस परिवार के मुखिया है किशनगढ़ के परम मुनिभक्त श्री गुलाबचंदजी गोधा । चौके से लेकर, प्रवचन मे, आचार्यभक्ति मे पूरे समय उपस्थित है श्री गुलाबचदजी गोधा ।

उनकी सूझ-बूझ, धर्मभावना एवं मुनिभक्ति से सारे संघ की चाहना मिल रही है श्रीगुलाबचंदजी गोधा के परिवार को । जैनधर्म की प्रभावना हो, मुनिधर्म का संवर्धन हो, आचार्यश्री धर्मसागरजी के संघ की सदा उन्नति हो, ऐसी मंगलमयी भावना से भरे गुलाबचंदजी गोधा अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय भी दे रहे है । नूतन मुनिश्री वर्धमानसागरजी के प्रति कुछ ज्यादा लगाव है गोधाजी का । उनको पिता तुल्य वात्सल्य देते हुए उन पर पूरा ध्यान दे रहे है श्रीगुलाबचंदजी गोधा । आचार्यश्री धर्मसागरजी के परम भक्तो में से एक है श्रीगुलाबचंदजी गोधा । परम

पूज्य आचार्यश्री के वात्सल्य पर तन, मन, धन से समर्पित हैं श्रीमान् गुलाबचंदजी गोधा ।

मदनगंज से अजमेर की ओर चातुर्मास के लिए आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज ने ससंघ विहार किया। बहुत दूर तक गुलाबचंदजी गोधा विहार में साथ रहे । अजमेर नगर में प्रवेश के वक्त अजमेर का दिगम्बर जैन समाज स्वागत के लिए खड़ा है । अजमेरवासियो की धर्म भावना उनके भव्य स्वागत मे प्रतिबिंबित होती है । स्वागत को स्वीकार करता हुआ संघ भारतख्यात सोनीजी की नसियाँ में पहुँचा । वहाँ विधिवत् वर्षायोग स्थापित हुआ । अजमेर धर्मनगरी है, यहाँ के श्रावक स्वाध्यायी हैं । पूज्यश्री ज्ञानमती माताजी ने नगरवासियों की स्वाध्याय की अभिरुचि को ध्यान में रखकर आज के बहु-चर्चित आचार्यश्री कुंदकुंददेव द्वारा रचित समयसार ग्रंथ का स्वाध्याय प्रारंभ किया । द्रव्यानुयोग के इस ग्रंथ के स्वाध्याय में नूतन दीक्षित मुनिश्री वर्धमानसागरजी विशेष रुचि ले रहे हैं । मुनिश्री वर्धमानसागरजी समझ रहे है आचार्य कुंदकुंददेव के समयसार को, समय के सार को, आत्मा के विविध गुणों को, आत्मा की विशिष्टता को, जैन धर्म के हार्द को, भावों के महत्त्व को, मुनिधर्म की गहराई को, निश्चय की निर्णायकता को, शुद्ध परिणामो की उपयोगिता को । मोक्षमार्ग के लिए स्वस्वभाव मे स्थिरता की आवश्यकता को और उसकी उपयोगिता को समझ रहे हैं युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी । कही कोई शंका होती, जिज्ञासा उठती तो पूछ लेते हैं पूज्य माताजी को । समयसार मे पूर्णता से जीने को सतत प्रयासशील है मुनिश्री वर्धमानसागरजी । समयसार की एक-एक गाथा के भावों को आत्मसात् कर रहे हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी । पूज्यश्री ज्ञानमती माताजी समयसार के रहस्यों को उद्घाटित करने की कला में माहिर हैं । अरे, मात्र समयसार ही नहीं, द्वादशांग जिनवाणी के रहस्यों को उद्घाटित करने में माहिर हैं माँ ज्ञानमतीजी । उनके ज्ञान

के क्षयोपशम को देख रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी एवं अजमेर के स्वाध्यायीजन । अजमेर के स्वाध्यायी श्रावक मुनिश्री वर्धमानसागरजी की ज्ञान की ललक, जिज्ञासा एवं चर्या से पूर्ण प्रभावित है । सभी सोच रहे हैं धर्माकाश में इस बालसूर्य का उदय निश्चित ही एक दिन अपने पूर्ण प्रकाश से देदीप्यमान होगा । उनके ज्ञान, ध्यान, तप एवं वैश्विक वात्सल्य की तीव्रता मध्याह्न में रहेगी । मुनिश्री वर्धमानसागरजी के वात्सल्य से प्लावित होते रहे अजमेर के श्रावकगण । आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के साथ-साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी का जयघोष करते रहे अजमेरवासी ।

अजमेर मे वर्षायोग संपन्न होने के पश्चात् परम पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की आज्ञा लेकर अपने वरिष्ठ सहयोगी मुनिश्री सम्भवसागरजी के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने आर्यिकाश्री ज्ञानमतीजी, आर्यिकाश्री आदिमतीजी आदि चार आर्यिकाओं सहित आचार्यसंघ से पृथक् विहार किया ब्यावर की ओर । ब्यावर की जनता ने बड़े पैमाने पर स्वागत किया साधु संघ का ।

साधु संघ तीन माह तक ब्यावर नगर मे अपनी ज्ञानाराधना मे रत रहा । प्रवचन आदि दैनिक कार्य चलते रहे । पूज्य आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी ने सन् १९७० मे टोक नगर मे वर्षायोग के दौरान अष्टसहस्री जैसे क्लिष्टतम न्याय ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद प्रारम्भ किया था । ब्यावर सरस्वती भवन मे हस्तलिखित प्रति पंडित श्री हीरालालजी के सौजन्य से प्राप्त होने से उस प्रति से मुद्रित प्रति का मिलान का कार्य मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने प्रारम्भ किया और उसे पूर्ण किया । माँ ज्ञानमतीजी ने जिस विश्वास के बलबूते पर यह कार्य दिया था उस विश्वास की गरिमा रखते हुए मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने श्रुतसंवर्धन का कार्य अच्छे से और त्वरित पूर्ण किया । माँ ज्ञानमतीजी प्रसन्न हैं अपनी खोज पर । संतुष्ट है मुनिश्री वर्धमानसागरजी की कार्यपद्धति

पर। हर्षित है दिन-प्रतिदिन वर्धित होते उनके कार्य-कलापों पर। श्रीज्ञानमतीजी सोच रही हैं कि अब मुनिश्री वर्धमानसागरजी को श्रीग्रंथों का ऐसा कार्य सोंपा जाय तो अच्छे से सम्हाल सकेंगे।

ब्यावर से साधुसंघ का दिल्ली की ओर विहार करने का निर्णय हुआ। भारत देश के उत्तर मध्यमें स्थित दिल्ली भारत की राजधानी ही नहीं है अपितु वहाँ की सामाजिक और धार्मिक गतिविधियों का, वहाँ की प्रवृत्तियो का प्रभाव खबरों के माध्यम से भारत भरमें फैल जाता है। दिल्ली के श्रावक सतत जाग्रत है, उनका प्रयास रहा है कि जैन धर्म का झंडा सतत ऊँचाइयों को प्राप्त करता हुआ लहराता रहे। ऐसी ऐतिहासिक नगरी दिल्ली मे निर्ग्रंथ पदकी प्राप्ति के बाद प्रथमबार जा रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी।

दिल्ली की ओर विहार करते हुए मार्ग मे नसीराबाद मे आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी एवं आचार्यश्री ज्ञानसागरजी महाराज के एवं दोनों संघो के संघस्थ साधुओं के एक साथ दर्शन करने का मंगल अवसर मिला मुनिश्री वर्धमानसागरजी को। अपने दीक्षागुरु से अलग विहार करने के बाद एक साथ दो बड़े आचार्यों के दर्शन से गद्‌गद हो गये मुनिश्री वर्धमानसागरजी। दो दिन के पश्चात् नसीराबाद से अजमेर तक आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी के साथ विहार करने में बड़ा आनंद आया मुनिश्री वर्धमानसागरजी को। अजमेर से पूर्व निर्णयानुसार दिल्ली की ओर विहार हुआ। दिल्ली पहुँचकर पहाड़ी धीरज में मुनि संघ रुका। वहाँ से चांदनी चौक साईकिल मार्केट मे बिराजमान आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज के दर्शन किये। आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी ने क्षुल्लिका दीक्षा परम पूज्य आचार्यश्री देशभूषणजी महाराज के करकमलों से श्रीमहावीरजी अतिशयक्षेत्र पर ली थी। पूज्य ज्ञानमती माताजी ने बहुत वर्षो के बाद अपने गुरु के दर्शन किये। उनका रोम-रोम आनंद, उत्साह एवं प्रसन्नता से भर गया। आचार्य गुरुवर भी

अपनी होनहार शिष्या से मिलकर प्रसन्न हुए। गुरु - शिष्या के मिलन का यह दृश्य देखते रहे सब त्यागी भाव-विभोर होकर। आनन्द की लहरें फैलगईं वातावरण मे।

सन् १९७२ का चातुर्मास मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने अपने अभिन्न साथी मुनिश्री संभवसागरजी के साथ एवं श्रीज्ञानमती माताजी आदि चार माताजी सहित पहाड़ी धीरज-दिल्ली मे किया।

यह चातुर्मास मुनिश्री वर्धमानसागरजी के लिए अपने दीक्षागुरु के बिना प्रथम चातुर्मास है। गुरु प्रत्यक्ष न होने पर भी परोक्ष में गुरु के दर्शन कर सभी कार्य चल रहे है। इस चातुर्मास मे अन्य कार्यक्रमो के साथ-साथ अध्ययन का कार्य तो चलता ही रहा। दिल्ली शास्त्रभंडार से भी अष्टसहस्री की एक हस्तलिखित प्रति मिलने पर अब दो-दो प्रतियो से मुद्रित प्रति का मिलान मुनि श्री वर्धमानसागरजी करने लगे। अबतक मुनिश्री वर्धमानसागरजी को हस्तलिखित प्रतियो के पढ़ने का अभ्यास हो गया है सो काम सरल लग रहा है, पाठभेद भी ले रहे हैं, साथ ही अष्टसहस्री का मुद्रण प्रारंभ हो जाने से प्रूफ का संशोधन भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी करने लगे, जिससे उन्हें अष्ट सहस्रीके विषय का ज्ञान भी हो गया। मुनिश्री वर्धमानसागरजी आगम ज्ञान मे भी वर्धित होने लगे। पहाड़ी धीरज दिल्ली के इस चातुर्मास से मुनिश्री वर्धमानसागरजी की शक्ति का परिचय सभी को होने लगा। पूज्यश्री ज्ञानमती माताजी भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी मे समाहित अनेक संभावनाओं से परिचित हुईं।

पहाड़ी - धीरज का वर्षायोग सम्पन्न कर उपनगरों के श्रावकगण की प्रार्थना को स्वीकार करते हुए दिल्ली के उपनगरो में विहार होता रहा। शक्तिनगर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज के साथ मुनिश्री सम्भवसागरजी एवं मुनिश्री वर्धमानसागरजी भी सानंद सम्मिलित हुए। यहाँ टोक की प्रतिष्ठा का अनुभव काम

आया मुनिश्री वर्धमानसागरजी को। आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज ने देखा पूर्ण उत्साहित, कार्यों में कौशलसभर, छोटी-छोटी बातो में भी अपनी बुद्धि एवं चातुर्य से ध्यान रखकर कार्य को उत्कृष्ट रूप प्रदान करनेवाले युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी को। आचार्यरत्नश्री देशभूषणजी महाराजने ऐसे मुनिराजको अपने अंत:करण से आशीर्वाद दिए और कामना की कि असीम ऊँचाइयों को प्राप्त करें मुनिश्री वर्धमानसागरजी। प्रतिष्ठा के बाद कई उपनगरों, ग्रामों मे विहार करते-करते हरयाणा प्रान्त के नजफगढ़ ग्राम मे पहुँचे मुनिश्री वर्धमानसागरजी।

१९७३ के वर्षायोग की स्थापना नजफगढ़ मे हुई। आर्यिकाश्री ज्ञानमतीजी के प्रवचनो ने, उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार ने, उनकी बालसहज निर्दोषता ने नजफगढ़वासियों के दिल जीत लिये। युवा मुनिश्री वर्धमानसागरजी के वात्सल्य से, उनकी बुद्धिमत्ता से नजफगढ़ का युवावर्ग मुनिश्री वर्धमानसागरजीमय हो गया। मुनिश्री वर्धमानसागरजी से अध्ययन करने के लिए, उनकी वैयावृत्ति करने के लिए, उनका कमण्डलु पकड़ने के लिए युवा वर्ग सदा लालायित रहता है। युवानों को लग रहा है मुनिश्री वर्धमानसागर हररोज नये दिख रहे हैं। उनकी कार्यकुशलता, उनका ज्ञान रोज-रोज नई ऊँचाइयो को छू रहा है। वे देख रहे हैं क्षण-क्षण वर्धमान होते रहते है मुनिश्री वर्धमानसागरजी। ऐसा ही अनुभव प्रौढ़ों, वृद्धों और महिलाओं को भी हो रहा है। पूरे नजफगढ़ मे चातुर्मास के दौरान मुनिश्री वर्धमानसागरजी की चर्चा चलती रही। सब लोग कह रहे है -

"इतनी छोटी उम्र में इतना ज्ञान, इतना अनुभव, इतना वात्सल्य है तो फिर आगे जाके कितना निखार आएगा इनकी चर्या मे, इनके ज्ञान में, इनके वात्सल्य में। जैन समाज को मुनिश्री वर्धमानसागरजी के रूप में एक देदीप्यमान युवा अरुण प्राप्त हुआ है जिसका प्रकाश पूरे

भारत के कोने-कोने मे बिखरेगा, जिसकी ऊर्जा समाज में आध्यात्मिक क्रांति जगाएगी।"

जितने मुँह उतनी बातें। सब प्रशंसा के अलग-अलग भाव व्यक्त कर रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी के लिए नजफगढ़ में।

चामुण्डराय द्वारा विश्ववंदनीय भगवान बाहुबलीजी की ५७ फीट ऊँची मूर्ति प्रस्थापित की गई है ऐसे दक्षिण भारत के मैसूर क्षेत्र में आया हुआ श्रवणबेलगोला दुनिया की एक अजायबी लिये खड़ा है। उस श्रवणबेलगोला की विन्ध्यगिरि (इन्द्रगिरि) पहाड़ी पर पूज्यश्री ज्ञानमती माताजी ध्यानस्थ थी। ध्यान के अंतर्गत उनको जम्बूद्वीप रचनाकी झाँकी हुई। सतत तेरह दिन तक वहाँ ही ध्यान लगाते हुए उनको पूर्ण जम्बूद्वीप की रचना दिखाई दी। बाद मे उन्होने नीचे तलहटी में आकर शास्त्रभंडार मे से शास्त्र निकालकर जम्बूद्वीप रचना का विवरण पढ़ा तब लगा कि सही मे उनके ध्यान मे जम्बूद्वीप ही आया है। जिनकी मति मे द्वादशांगमयी माँ जिनवाणी का ज्ञान भरा हुआ है ऐसी माँ ज्ञानमतीजी भारत की पवित्र भूमि पर जम्बूद्वीप रचना की प्रतिकृति बनाने हेतु कृतनिश्चयी थी। विश्व को दिगम्बर भूगोल से परिचित कराने को उत्सुक थी।

नजफगढ़वासियों की भक्ति, उनका विवेक, उनका समर्पण देखकर एक दिन पूज्य माताजी ने अपने चिन्तनाधार पर ध्यान मे दिखी जम्बूद्वीप रचना की बात नजफगढ़वासियो के सामने रखी। नजफगढ़ के समाज ने सहर्ष इस बात को स्वीकार करते हुए अपने वहाँ की भूमि पर जम्बूद्वीप रचना के लिए अनुमति दे दी। प्रदत्त भूमि पर शुभ मुहूर्त मे शिलान्यास भी हो गया, कार्य भी प्रारंभ हुआ किन्तु किन्ही अपरिहार्य कारणो से वहाँ कार्य स्थगित हो गया।

नजफगढ़ से विहार करके संघ दिल्ली आया। वहाँ से धार्मिक महत्त्व वाली ऐतिहासिक नगरी हस्तिनापुर की ओर विहार किया जो
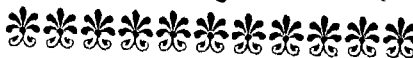
कौरवों, पाण्डवों की राजधानी रही। हस्तिनापुर पहुँचकर सबने तीर्थवंदना की। हस्तिनापुर की जगह देखकर माताजी ने नजफगढ़ में स्थगित हुआ कार्य हस्तिनापुर में प्रारम्भ करने का निश्चय किया। कालान्तर में यहाँ मनमोहक जम्बूद्वीप भी बना।

हस्तिनापुर कुछ दिन ठहरने के पश्चात् ज्ञात हुआ कि परम पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज अलवर (राजस्थान) से विहार कर शीघ्र ही दिल्ली पहुँच रहे हैं। अत: हस्तिनापुर से मुनिसंघ ने भी दिल्ली की ओर विहार कर दिया।

संसारी जीवों का स्नेहियों, रिश्तेदारों से देह के संबंध से व्यवहार चलता है। त्यागियों मे, साधुओं में आत्मा के संबंध से ही व्यवहार चलता है। गुरु और शिष्य, दोनों संन्यास के मार्ग पर चलनेवाले, गुरु अपने आत्मकल्याण के साथ-साथ शिष्य का भी कल्याण करनेवाले, शिष्य भी अपनी आत्मिक उन्नति के प्रेरणारूप, आत्मिक उत्थान के सहायक, अपने गुरु के प्रति पूर्ण समर्पित हैं। देह से संबंध रखनेवालो के मनमे एक दूसरे के प्रति राग, द्वेष, मोह, माया रूप कषाय भरा हुआ है जब कि आत्मिक संबंध रखनेवाले त्यागी नि:स्वार्थ, निर्मोह एवं पवित्र है। अपने अंत:करण मे गुरुभक्ति भरे, उनके प्रति समर्पण लिये मुनिश्री वर्धमानसागरजी गुरुवर के दर्शन की, आत्मिक मिलन की, तीव्रतम उत्कंठा लिये विहार कर रहे हैं। क्यूँ न हो ? विगत तीन साल से गुरु से अलग विहार हो रहा है। उनका विचार-पंखी भावों के पंख लिये पहुँच गया गुरुवर के चरणों में। जिस दिन आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज ने दिल्ली में प्रवेश किया, ठीक उसी दिन मुनिसंघ भी मिल गया आचार्य संघ में दिल्ली पहुँचकर। आचार्य गुरुदेव के साथ संघ ने लालमंदिरजी में प्रवेश किया और वहाँ रुका।

आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण परंपरा के आचार्य हैं।

अत: भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव की राष्ट्रीय कमेटी के प्रमुख अतिथि धर्माचार्य हैं, इस हेतु से वे यहाँ दिल्ली पधारे हैं ।

कुछ दिन पश्चात् आचार्यश्री देशभूषणजी महाराज भी पुन: दिल्ली आ गए । दोनों आचार्यसंघों के मिलन का दृश्य मनोहारी है, अद्भुत है । एक साथ उपदेश देना, दोनो संघों के आचार्यों का एक साथ आहारचर्या के लिए उठना ये सब दृश्य देखते ही बनते हैं । दोनों संघों के त्यागीगण का एक-दूसरे के प्रति स्नेह-वात्सल्य एवं एकता देखकर समस्त समाज हर्षित होता है ।

दोनो आचार्यसंघो के अलावा दिल्ली मे आचार्यरत्न देशभूषणजी महाराज के परम शिष्य मुनिश्री विद्यानंदजी भी पधारे है । इस बीच श्रुत पंचमी का महापर्व आया । यह पर्व दोनो संघो के सान्निध्य में लाल किला मैदान पर मनाया गया । इस प्रसंग से दिल्लीवासियों के मन में दोनो आचार्यसंघों के बड़प्पन का अनुभव हुआ । संघस्थ सभी के आचरण से ऐसा लग रहा है मानो एक ही संघ है । मुनिश्री वर्धमानसागरजी बारीकी से निरीक्षण कर रहे है । अपने मन मे समन्वय के भावों को दृढ़ अति दृढ़ कर रहे हैं । मानो भविष्य मे निभानेवाले कर्तव्य को मन-ही-मन सजावट दे रहे है ।

सन् १९७४ का वर्षायोग आया । जैन आश्रम दरियागंज दिल्ली मे दीक्षागुरुवर आचार्यश्री धर्मसागरजी के साथ ही वर्षायोग स्थापित किया । मुनिश्री वर्धमानसागरजी, आचार्यश्री धर्मसागरजी के समीपवर्ती कमरे में ही विराजित रहते हैं । मुनिश्री विद्यानंदजी भी वर्षायोग मे यहाँ बिराजमान है । मुनिश्री विद्यानंदजी देख रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी के उत्साह को, उनकी अहिंसाप्रधान भावना को, उनकी मुनिचर्या को, उनके रचनात्मक अभिगम को, उनके वात्सल्यभाव को, उनकी अध्ययन की उत्कंठा को, उनकी कार्यदक्षता को, उनके क्रियाकलापो को, उनकी अनमोल गुरुभक्ति को । इन सभी को जोड़ते हुए उनके व्यक्तित्व से

आकर्षित हैं मुनिश्री विद्यानंदजी। उन्हें लगता है कि भविष्य में जैनधर्म के ध्रुव तारक बनने की पूर्ण क्षमता है मुनिश्री वर्धमानसागरजी में। संसारी जीवों को शाश्वत सुख का पथ प्रशस्त करने में दिशासूचक रहेगे।

आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज चांदनी चौक साईकिल मार्केट में वर्षायोग स्थापितकर बिराजमान हैं। भगवान महावीर स्वामी के २५००वें निर्वाण महोत्सव ने भारत भर में उत्साह का माहौल बना रखा है। भारत के हरेक प्रांत में २५००वें निर्वाण महोत्सव के अंतर्गत विविध कार्यक्रमों की धूम मची हुई है। दिल्ली तो इनका मुख्य केन्द्र है। भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव के कार्यक्रमों संबंधी सारी जानकारी आचार्यश्री से वरिष्ठ मुनिराजो के साथ-साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी को मिलती हैं। निर्वाणोत्सव के कार्यक्रमों आदि की चर्चा के अवसर पर मुनि श्री वर्धमानसागरजी गुरुदेव के समीप ही रहते है। समागत पत्रों के उत्तर एवं उन पर विचार-विमर्श में भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी गुरुदेव के साथ ही रहते हैं। संघमें सामूहिक स्वाध्याय के समय मूलाचार ग्रन्थ की वाचना मुनिश्री वर्धमानसागरजी गुरु आज्ञा से करते हैं। मानों आचार्यश्री के सभी क्रिया-कलापों की परिधि में मुनिश्री वर्धमानसागरजी केन्द्र में रहते हैं। इससे लगता है आचार्य गुरुवरश्री धर्मसागरजी महाराज अपने होनहार शिष्य को सभी तरह से तैयार कर रहे हैं। आचार्य भगवंत ने अपने शिष्य की शक्ति जान ली है, परख ली है, भावी के भीतर में ओझल भविष्य की झलक अपने आंतरचक्षु से पा ली है, इसीलिए उनके हृदय में चलते विचार और भावनाएँ सभी कार्यों में देखने में आ रही हैं। यही लग रहा है जैसे अपने संघ के उत्तराधिकारी को सभी तरह से सक्षम बना रहे हैं आचार्यश्री धर्मसागरजी।

वर्षायोग के मध्य दशलक्षण महापर्व के दिनों का कार्यक्रम

परेड ग्राउन्ड पर आयोजित किया गया। प्रात:कालीन सभा में दिल्ली का समाज उमड़ पड़ता है। परेड ग्राउन्ड का विशाल सभा-मंडप श्रावकगण से पूर्ण भरजाता है। इस सभा-मंडप मे मुनिश्री विद्यानंदजी के साथ मुनिश्री अभिनंदनसागरजी एवं मुनिश्री वर्धमानसागरजी होते हैं। प्रात:कालीन सभा मे किसी-किसी दिन मुनिश्री विद्यानंदजी की आग्रहपूर्ण प्रेरणा से दशधर्मो मे से जिस धर्म का दिन है उस पर मुनिश्री वर्धमानसागरजी भी प्रवचन करते हैं। उनकी प्रवचनशैली ने, उनकी मिसरी मिश्रित वाणी ने दिल्लीवासियो के मन मोह लिये। मुनिश्री विद्यानंदजी के साथ-साथ नगरजनों के दिलो में मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने अपना स्थान अंकित कर दिया। मध्याह्न मे उसी पान्डाल में आचार्यश्री धर्मसागरजी तत्त्वार्थसूत्र का विवेचन करते है। मुनिश्री वर्धमानसागरजी आचार्य गुरुवर के समीप बैठकर गुरुवाणी को कानो के माध्यम से पीकर अंतर मे उतारते रहते हैं।

भगवान महावीर का २५००वाँ निर्वाण महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर मनाने से पूरे भारत मे उत्साह का माहौल बन गया है। भारत के हर प्रांत के विविध नगरों में जनसमुदाय उमड़ पड़ा है कार्यक्रमो की सूची लेकर। दिल्ली महोत्सव का मुख्य केन्द्र है। आज पहलीबार जैनो के चारो सम्प्रदायो ने इस उत्सव मे एकजुट होकर भाग लिया है, एक ही मंच से कार्यक्रम चलते रहते हैं। श्वेताम्बर और दिगम्बर के सब भेदभाव, अलगाव स्नेहपूर्ण व्यवहार में अदृश्य हो गए हैं। पूरा भारत भगवान महावीर के जयघोष से गूंज रहा है। सरकार की ओर से पूर्ण सहकार प्राप्त हो रहा है। देश के जानेमाने नेतागण में भी भगवान महावीर स्वामी के २५०० वें निर्वाण महोत्सव के कार्यक्रमों में उपस्थित रहनेकी होड़ लगी है। भगवान महावीर स्वामी के सिद्धांतो की गूंज भारत की दशो दिशाओं मे फैल गई है।

आदरणीय विनोबा भावे के सुझाव से चारों जैन संप्रदाय की
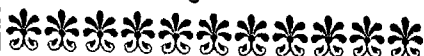
ओर से श्री जिनेन्द्रवर्णीजी द्वारा संगृहीत 'समणसुत्तं' ग्रंथ की अन्तिम संगीति आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के सान्निध्य में दरियागंज में सम्पन्न हुई। उसमें आचार्यश्री धर्मसागरजी, आचार्यश्री देशभूषणजी, मुनिश्री विद्यानंदजी के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी एवं मुनिश्री अभिनंदनसागरजी भी सम्मिलित हुए।

निर्वाण महोत्सव के अनेक कार्यक्रमों में तथा महोत्सव के साहित्य- प्रकाशन में भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने अपना अनूठा योग दिया। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के व्यक्तित्व का परिचय अन्य संघों के साथ-साथ दिल्लीवासियों के माध्यम से सम्पूर्ण भारत को प्राप्त हुआ। चातुर्मास की समाप्ति के बाद आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज ने ससंघ हस्तिनापुर तीर्थ की ओर विहार किया।

हस्तिनापुर....... भगवान शांतिनाथ, कुन्थुनाथ एवं अरनाथ भगवान के गर्भ, जन्म, तप एवं केवलज्ञान कल्याणकों की पवित्र भूमि है। प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की दीक्षा के पश्चात् राजा श्रेयांस द्वारा प्रथम इक्षुरस् आहार दान की भूमि है। जिस दिन से आहारदान की विधि पुनः उजागर हुई उस अक्षय तृतीया के दिन से यहाँ की भूमि में इक्षु की फसल अक्षुण्ण हो गई। ऐसे हस्तिनापुर में आज भी अक्षय तृतीया बड़े पैमाने पर मनाई जाती है। गजमोती चढ़ाकर भगवान के दर्शन करने के बाद ही भोजन ग्रहण करने का अटल नियम निभानेवाली इतिहास प्रसिद्ध महिला सती मनोवती भी इसी हस्तिनापुर की थी। अकंपन आचार्य एवं संघस्थ ७०० मुनिराजों पर उपसर्ग एवं उपसर्ग दूर कराने में विष्णुकुमार मुनिराज का योगदान की यहाँ पर घटी घटना अविस्मरणीय है और इस दिन से रक्षाबंधन पर्व प्रारंभ हुआ है। ऐसी ऐतिहासिक धार्मिक नगरी हस्तिनापुर में सन् १९७५ में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में अनेक भव्य विशाल प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा श्रीवर्धमान- पार्श्वनाथ शास्त्री, सोलापुर के प्रतिष्ठाचार्यत्व में हुई। इस पंचकल्याणक

प्रतिष्ठा के अवसर पर मुनिश्री विद्यानंदजी भी वहाँ उपस्थित रहे। इसी समय आर्यिकाश्री ज्ञानमतीजी की प्रेरणा से बननेवाली जम्बूद्वीप रचना के प्रारंभ मे भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमाजी की प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। मुनिश्री वर्धमानसागरजी को पंचकल्याणक का अनुभव बढ़ रहा है, पूर्व की जानकारी यहाँ उपयोगी साबित हो रही है।

हस्तिनापुर मे संघस्थ मुनिश्री ऋषभसागरजी महाराज की छह वर्षीय नियम सल्लेखना की अवधि पूर्ण होने जा रही है। अत: मुनिश्री ने आचार्यदेव से प्रार्थना की कि-

"हे आचार्यदेव ! आपके चरण सान्निध्यमे इसी तीर्थ हस्तिनापुर क्षेत्र मे मेरी समाधि-साधना हो, यही कामना है।"

मुनिश्री की प्रार्थना पर आचार्यदेव संघ सहित समाधि-साधना पूर्ण होने तक रूके। मुनिश्री वर्धमानसागरजी को भी संघस्थ मुनिराजो के साथ समाधिरत मुनिश्री की सेवा का सुअवसर प्राप्त हुआ। मुनिश्री वर्धमानसागरजी अपने भरपूर वात्सल्य का अहसास कराते हुए समाधिरत मुनिराजकी सेवा कर रहे है। 'परमात्म प्रकाश' ग्रंथकी वाचना कर समाधिस्थ मुनिश्री को पर भावो से हटाकर अपने स्वभाव मे स्थिर होने मे सहायता कर रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी। स्नेहसभर मृदु स्वरमे मुनिश्री ऋषभसागरजी को संबोधन कर रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी पूरा संघ प्रसन्न है समाधिस्थ मुनिश्री ऋषभसागरजी की ओर मुनिश्री वर्धमानसागरजी द्वारा जताई गई कर्तव्यनिष्ठा से, उनके वात्सल्य से।

समाधि-साधना पूर्ण होने पर आचार्यसंघ ने हस्तिनापुर से मंगल विहार किया। आर्यिका श्रीज्ञानमतीजी एवं आचार्यश्री धर्मसागरजी से अजमेर में दीक्षित आर्यिका श्रीरत्नमतीजी जम्बूद्वीप रचना को गति प्रदान करने हेतु हस्तिनापुर ही रुके। धर्मानुरागवश मुनिश्री वर्धमानसागरजी भी अकेले ही अपनी धर्ममाता के पास रुक गए। मुनिश्री वर्धमानसागरजी जम्बूद्वीप के कार्य मे हरतरह का सहयोग दे रहे हैं। पूज्य श्रीज्ञानमती

माताजी मुनिश्री वर्धमानसागरजी को सूचना दे रही हैं और इनके द्वारा कार्य की सम्पन्नता से प्रसन्न हो रही हैं। सन् १९७५ का वर्षायोग निकट आ गया है। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के पैर में जहरीले मच्छर के काटने से अतिशय पीड़ा हो रही है। घाव बड़ा है फिर भी समता से सह रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी। अकेले होने से हस्तिनापुर में वर्षायोग नहीं होगा। हस्तिनापुर से ३० कि.मी. की दूरी पर स्थित सरधना नगर मे वर्षायोग स्थापित करने का निर्णय हुआ जहाँ गुरुदेव आचार्यश्री धर्मसागरजी के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी पहले रहकर आये हैं। चातुर्मास हेतु अकेले मुनिश्री वर्धमानसागरजी पहुँचे सरधना।

सरधना ! जैन समाज के युवकों की प्रवृत्तियों से एवं धार्मिक प्रसंगो से धड़कता शहर। आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी के यहाँ पहले रुकने पर उनके वात्सल्य से, उनके वक्तव्य से, उनकी चर्या से परिचित हैं यहाँ के आबालवृद्ध। श्रावक-श्राविकाओं के मनमंदिर में अपना स्थान बना लिया है मुनिश्री ने। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के चातुर्मास-स्थापन से सरधनावासियों की हृदय सरिता मे उत्साह की बाढ़ आ गई है। चातुर्मास के दौरान होनेवाली विविध प्रवृत्तियों के आयोजन में जुड़ गया युवा वर्ग। ज्ञानाराधना एवं सभी धार्मिक क्रियाओं के लिए मुनिश्री की चर्या का समय ध्यान में रखते हुए सभी कार्यों के लिए समय का समायोजन किया गया। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के सान्निध्य में चातुर्मास के दौरान ३-४ मंडल विधान का आयोजन सफलता से संपन्न हुआ। रात्रि मे युवकों द्वारा विविध ज्ञानवर्धक कार्यक्रमों का आयोजन होता रहा।

मुनिश्री वर्धमानसागरजी की प्रेरणा से सरधना के युवकों ने धर्मग्रंथों का एक संग्रहालय बनाया। उसमें सुचारु रूपसे धर्मग्रंथों को व्यवस्थित किया। आसपास के गाँवों के लोग भी बहती ज्ञानगंगा में डुबकी लगाने और धर्माराधनासे अपने कर्मोंकी निर्जरा करने हेतु चातुर्मास

के सभी कार्यक्रमों में उपस्थित होते रहे। सरधना का जैन समाज मानों मुनिश्री वर्धमानसागरमय हो गया। युवा वर्ग ऐसा जुड़ गया कि मुनिश्री को चातुर्मास के बाद भी वहाँ से विहार कराने का इच्छुक नहीं है। लेकिन साधु कहाँ बँधते हैं ? वे तो अपने आप में डूबे हुए स्वतंत्र अलगारी रहते हैं। चलना जिनका धर्म है वे भला कैसे रुकते ?

चातुर्मास की समाप्ति नजदीक आ रही है सो युवा वर्ग बेचैन है। जिनकी चमकीली ऑखों मे सदा वात्सल्य झलक रहा है ऐसे मुनिराज से बिछुड़ने का गम बिछुड़ने से पहले ही सबको पीड़ादायी भासित होता है। कुछ नई-नई योजनाओं का ढाँचा लेकर युवावर्ग मुनिश्री वर्धमानसागरजी के पास जाता है। इसके जरिये मुनिश्री को रोकनेका प्रयास कर रहे है सरधनावासी। मुनिश्री अपने स्नेहसभर संबोधनो से समझानेका प्रयत्न करते हैं। आखिर वो दिन आ ही गया, मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने वर्षायोग सम्पन्न करके मुजफ्फरनगर की ओर विहार किया। सरधना के युवावर्ग ने मुजफ्फरनगर तक मुनिश्री के साथ ही पदविहार किया मानों उनसे अलग होना नहीं चाहते है।

मुजफ्फरनगर मे संघस्थ मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी ने समाधि-साधना प्रारंभ की हुई है। उसी समय सहारनपुरनगर मे वर्षायोग सम्पन्न करके गुरुदेव आचार्यश्री धर्मसागरजी भी ससंघ पहुँच गए। संघस्थ मुनिराजो के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने भी समाधिस्थ मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी की यथायोग्य वैयावृत्ति करके अपने कर्तव्य का पालन किया। अब मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने समाधि-साधना कराने मे प्राविण्य प्राप्त कर लिया है।

संघस्थ मुनिश्री दयासागरजी के नेतृत्व में संघ के कुछ मुनिराजो एवं आर्यिका माताओं ने श्रवणबेलगोला और साथ में दक्षिण भारत के अन्य तीर्थ-क्षेत्रों की दर्शन-यात्रा का मानस बनाया। परम पूज्य आचार्यदेव से अनुज्ञा पाकर मुजफ्फरनगर से विहार भी कर दिया। इस विहार में

मुनिश्री अभिनंदनसागरजी एवं मुनिश्री वर्धमानसागरजी भी रहे। हस्तिनापुर में आर्यिका श्रीज्ञानमतीजी तो विराजित थी ही, इसी बीच आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज भी वहाँ पहुँच चुके हैं, वे अस्वस्थ भी हो गए है ऐसा जानकर यात्रा पर जाते समय 'आचार्यकल्पश्री के दर्शन' एवं 'धर्ममाता से मिलना' ये दोनों लाभ एक साथ देखकर मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने वृद्ध मुनिराज श्री विनयसागरजी के साथ मुजफ्फरनगर से हस्तिनापुर की ओर विहार किया। शेष मुनिसंघ दूसरी ओर से मेरठ पहुँचा। हस्तिनापुर में आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी की वैयावृत्ति के लिए मुनिश्री वर्धमानसागरजी कुछ दिन रूके। जब आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी का विहार आचार्यश्री धर्मसागरजी के दर्शन करने के लिए हो गया तब मुनिश्री अपने सहयोगी मुनिराज के साथ मेरठ की ओर विहार करके मुनिसंघ में सम्मिलित हो गए।

मेरठ पहुँचने पर कर्मोदय से मुनिश्री वर्धमानसागरजी का स्वास्थ्य बिगड़ गया। मुनिसंघ ने १९७६ का वर्षायोग मेरठ नगरमें ही स्थापित किया। मुनिश्री वर्धमानसागरजी को पिछले कई वर्षो से अन्तरायों की बहुलता से 'अल्सर' जैसी व्याधि प्रकट हो चुकी है, वह तीव्रतम हो उठी। वैद्य की दवाइयॉं लेते हुए भी वर्षायोग बीतने तक स्वास्थ्य मे कोई लाभ नही हुआ। सो मुनिश्री रूके, शेष संघने श्रवणबेलगोला की यात्रा के लिए मंगल विहार किया।

अस्वस्थ मुनिश्री के मन में यात्रा छूटने का खेद है किन्तु वे समझते है क्योंकि कारण भी स्वयं का स्वास्थ्य ही है, क्या करें? शायद विधि ने यह मुनासिब नहीं माना कि मुनिश्री वर्धमानसागरजी मुनि अवस्था में श्रवणबेलगोला की यात्रा करें। विधि की कुछ और रचना है, उनके जरिये भावी में ऐसा काम कराना चाहती है जो विश्वप्रसिद्ध हो। जो मुनिश्री वर्धमानसागरजी की शक्ति को, हर तरह से उजागर कर, उनकी ताकत से जगत् को परिचित कराना चाहती है। एक महान्

कार्य उनके सान्निध्य मे, उनकी प्रेरणा एवं मार्गदर्शन में संपन्न कराना चाहती है। इसी बीच स्वास्थ्य की स्थिति कभी ठीक होती, कभी पुनः बिगड़ती किन्तु मुनिश्री वर्धमानसागरजी समताभाव से अपने असाता वेदनीय कर्मोदय को सहते हैं और अपनी साधना मे निमग्न रहते हैं।

अल्सर के कारण एक बार तो मुनिश्री वर्धमानसागरजी अति आकुलित हो गए। उपचार सतत चल रहे हैं फिर भी असर कम है। धर्मानुरागवश आर्यिका श्रीज्ञानमती माताजी ने मुनिश्री को हस्तिनापुर बुला लिया अतः मुनिश्री वर्धमानसागरजी हस्तिनापुर चले गए। क्षेत्र-जन्य वातावरण मे मन की शांति बनी रही लेकिन व्याधि मे कोई फर्क नही आया; व्याधि का उपद्रव तो वैसे का वैसा ही रहा।

इसी बीच वर्षायोग का समय आ गया। १९७७ का वर्षायोग मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने हस्तिनापुर में ही स्थापित किया। अल्सर की व्याधि ने अपनी पूर्ण ताकत से मुनिश्री वर्धमानसागरजी को घेर लिया। असाता वेदनीय कर्म उत्कृष्टता से उदयावलि मे आ गए। मानो मुनिश्री वर्धमानसागरजी को साधना से च्युत करने का संकल्प लिये हो। मोहनीयकर्म के सैनिकों को साथ लेकर आए; जिससे इस वक्त परास्त होने का मौका ही न रहे। अल्सर पेट की व्याधि है लेकिन इसकी वेदना इतनी तीव्रतम होती है, इतनी दुःसह होती है कि व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक दोनो तरीके से विक्षिप्त हो जाता है। लेखक ने अपनी ऑखों से अल्सर के रोगी की विक्षिप्तता देखी है। व्यक्ति अपना सर पीटने लगता है, अपने केशो को खीचने लगता है अपने मुखसे एल-फेल बोलने लगता है। व्याधिग्रस्त व्यक्ति को देखकर ऐसा लगता है कि किसी व्यंतर देव ने उसके शरीर में प्रवेश कर अपना कब्जा जमा लिया हो। अपनी सूझ-बूझ खो देता है व्यक्ति। तीव्रतम वेदना व्यक्ति को अपना पद, अपनी भूमिका, अपना कार्य सबकुछ भुला देती है। शारीरिक वेदना मानसिक असंतुलन को पैदा करती है, वेदना भुलाने

के लिए ऐसी परिस्थिति में एलोपेथी में डॉ. मरीज को बेहोशी में ले जाने के बाद ही उपचार करते हैं । ऐसी विषम परिस्थिति में मुनिश्री वर्धमानसागरजी अपनी शक्ति से बढ़कर, दृढ़ मनोबल से अधिक सह रहे हैं । असीम वेदना की तीव्रता उनके मन की शांति को बारबार खंडित कर रही है ।

बढ़ती हुई वेदना की तीव्रता जब असह्य लगने लगी, अब अपनी चर्या में दिक्कत आ सकती है, ऐसा महसूस होने लगा तब मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने देव-शास्त्र-गुरु की शरण में रहना ही उचित माना । देव और शास्त्र की शरण तो है ही लेकिन गुरु प्रत्यक्ष नहीं हैं, वे दूर वर्षायोग स्थापित कर बिराजमान हैं । अपनी अंत:प्रेरणा से मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने यह निर्णय ले लिया कि मुझे गुरुदेव की शरण मे पहुँचना है । सम्भवत: उनकी शारीरिक एवं मानसिक स्थिति को देखकर श्री ज्ञानमती माताजी ने भी उनके इस निर्णय पर मौन रखा । क्या कर सकती हैं करुणामयी-ममतामयी माताजी ? अपने धर्ममानस पुत्र की मानसिक, शारीरिक स्थिति को देख रही हैं माताजी, साथ-साथ मूलाचार की गाथाएँ भी गूंज रही हैं उनके मन मे । सो माताजी ने मौन रखा, यानी अपनी मन:स्थिति को मौन भाषा में कहकर, अपने सुझाव देकर बिदा ही किया ।

गुरुदेव आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज उस समय ससंघ मदनगंज (राज.) में वर्षायोग स्थापित कर बिराजमान हैं । हस्तिनापुर से मदनगंज तक पहुँचने के लिए मुनिश्री में पदविहार करने की क्षमता नहीं है । वहाँ पहुँचना भी है, क्या किया जाय ? सो मुनिश्री ने वाहन का सहारा लिया और गुरुदेवकी शरण में रक्षाबंधन के दूसरे दिन ही पहुँच गए । आचार्य-कल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज ने स्थिति को सम्हाल लिया । साथ में गुरुदेव के वात्सल्य ने धैर्य बँधाया ।

कभी-कभी किसी साधक के जीवन में दुर्घटना घटती है ।

दुर्घटना जब चरम सीमा की होती है तब कभी साधक अपने साधनापथ से दूर भी हो जाता है। लेकिन दुर्घटना बीत जाने के बाद, उससे सम्हल जानेके बाद फिरसे साधक अपनी साधना मे पूर्णरूपेण व्यस्त हो जाता है। कभी-कभी ऐसे साधक पहले से अधिक ताकत से, एकाग्रता से साधनामग्न होकर बहुत जल्द बहुत से कर्मों का क्षय कर देते है। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के जीवन की यह सबसे बड़ी दुर्घटना रही।

स्वास्थ्य की खराबी की वजह से मुनिचर्या के विरुद्ध वाहन का उपयोग करना आदि को लेकर मुनिश्री वर्धमानसागरजी पश्चाताप की अग्नि से पावन होते रहे तीन दिन तक। अपने जीवन की इस विशेष दुर्घटना से, मुनिचर्या से विचलित होने के कारण कोस रहे हैं अपने मन को, अपने भाग्य को मुनिश्री वर्धमानसागरजी। चिंतन के बाद उन्होने निर्णय किया कि अपनी सारी कहानी आचार्य भगवंत के समक्ष पेश करके मुनिधर्म मे स्थिर करनेकी विनती की जाय और जो प्रायश्चित आचार्य भगवंत द्वारा दिया जाय, उसे स्वीकार किया जाय। तीन दिन के पश्चात् आचार्य भगवंत श्री धर्मसागरजी महाराज के पास जाकर अपनी सारी कथा सरल हृदय से उनके सम्मुख मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने सुनायी और मुनिधर्म मे स्थिर रखने हेतु प्रार्थना की। आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज ने सितम्बर, १९७७ को मुनिश्री को छेद प्रायश्चित्त दिया। उसी दिन पुन: नया जीवन प्रारंभ करने का आदेश पाकर मुनिश्री का त्रस्त चित्त शांत हुआ। इस नवीन अध्याय के प्रारंभ के साथ सन् १९७७ का शेष वर्षायोग गुरुदेव के पादमूल मे और शिक्षागुरु आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज की वात्सल्यमयी छाया मे संघ के साथ सम्पन्न हुआ। जो संसार को दीर्घ करते है ऐसे मिथ्यात्व आदि को ग्रंथ कहते है। उनको जिन्होने छोड़ दिया है, उन साधुओं को निर्ग्रंथ कहते है। जो मिथ्यात्व से रहित है ऐसे निर्ग्रंथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी तन्मयता से, पूर्ण ताकत से साधना मे निमग्न होते रहे। अपनी साधना

के द्वारा कर्मों का क्षय करके संसार-सागर पार करके सिद्धत्व की प्राप्ति के लिए परिश्रमी रहे मुनिश्री वर्धमानसागरजी । सिद्धत्व शिखर है तो मुनित्व तलहटी । मुनित्व सुख और आनंद-प्राप्ति के लिए ऊर्जा और पुरुषार्थ का जलप्रपात है तो सिद्धत्व सुखकी, आनन्दकी अविरत बहती मंदाकिनी । सिद्धत्व लक्ष्य है तो मुनित्व लक्ष्यप्राप्ति का अनिवार्य पुरुषार्थ । मुनित्व झरना है तो सिद्धत्व प्रशांत महासागर । ऐसे सिद्धत्वकी प्राप्ति के लिए अतीतको भूलकर मुनिश्री वर्धमानसागरजी समग्र ताकत से साधना में मग्न हैं । जो हो चुका, जो हो रहा है और जो होगा, सभी के प्रति सहज भाव है मुनिश्री वर्धमानसागरजी का ।

इस वर्षायोग के पश्चात् आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज ने अजमेर नगर की ओर ससंघ विहार किया । वहाँ आचार्यकल्पश्री श्रेयांससागरजी महाराज ससंघ बिराजमान है जिन्होंने पिछला १९७७ का वर्षायोग यहाँ अजमेर मे ही सम्पन्न किया है । मुनिश्री वर्धमानसागरजी के प्रति आचार्यकल्पश्री श्रेयांससागरजी महाराज ने अपना संपूर्ण वात्सल्य व्यक्त किया एवं मुनिश्री की अध्ययन प्रवृत्ति से संचित जिनागम के रत्न जो मुनिश्री ने अपनी डायरी में अंकित कर रखे थे, उन्हे देखकर अत्यंत हर्ष प्रकट किया ।

अजमेर नगर से आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी ने संघसे पृथक् विहार किया । उनके साथ मुनिश्री गुणसागरजी, वर्धमानसागरजी एवं तीन आर्यिका माताजी रहे । आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी अनेक ग्रामो-नगरो में विहार करते हुए मेड़ता सिटी पहुँचे । वहाँ कुछ अधिक दिनों तक संघका ठहरना हुआ । नागौर की ओर से मुनिश्री अजितसागरजी महाराज, जो पहले आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी के साथ ही थे, संघ सहित मेड़ता सिटी पहुँचे । वहाँ संघ-मिलन हुआ । वर्षायोग सन्निकट होनेसे निकटस्थ ग्राम आनंदपुर कालूमें वर्षायोग करना सुनिश्चित करके सभीने आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी के साथ आनन्दपुर कालू

की ओर विहार किया और वही चातुर्मास स्थापित किया।

१९७८ का चातुर्मास आनन्दपुर कालू में स्थापित होने से गाँव में नये उत्साहका संचार हुआ। इस वर्षायोग में संघस्थ आर्यिकाश्री आदिमतीजी ने पंडितप्रवरश्री टोडरमलजी के द्वारा गोम्मटसार कर्मकांड की ढुंढारी भाषा में की गई टीका का शुद्ध हिन्दी मे जो परिवर्तन किया था उसकी वाचना पंडित श्रीरतनचंदजी मुख्तार, सहारनपुर के साथ बैठकर हुई। आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी भी इस वाचना मे सम्मिलित हुए। वाचना के पश्चात् धवल-जयधवल-महाधवल आदि आगम ग्रंथो के आधार से सम्पादित की गई आर्यिकाश्री की इस कृति की संपूर्ण प्रेसकॉपी स्वयं मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने तैयार की। ग्रंथ के संपादक पंडितप्रवर श्रीरतनचंदजी मुख्तार नियुक्त किये गये। इस तरह आध्यात्मिक साहित्य-साधना मे भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी अपना योगदान करने लगे।

इस वर्षायोग मे आचार्यकल्पश्री के एक मात्र सुशिष्य मुनिश्री समतासागरजी महाराज भी विद्यमान रहे। वर्षायोग संपन्न होने के पश्चात् मुनिसंघने यहॉ से विहार किया। निकटवर्ती ग्रामो में विहार करता हुआ संघ पुनः आनंदपुर कालू पहुँचा। इसी बीच परम पूज्यश्री अजितसागरजी, मुनिश्री गुणसागरजी, मुनिश्री समतासागरजी एवं मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने निकटवर्ती ग्राम निमाज के लिए विहार किया। विहार का उद्देश्य मात्र वहॉ के मंदिरो के दर्शन कर वापस आना था। मार्ग मे निमाज से १ कि.मी. पहले ही मुनिश्री समतासागरजी की समाधि हो गई। वहॉ से वापस आनन्दपुर कालू संघ में आकर फिर सभी ने अजमेर नगर की ओर विहार किया। तत्पश्चात् वहॉ से निवाईनगर की ओर मंगल विहार हुआ और अगला वर्षायोग वहीं करना निश्चित हुआ। रास्ते मे लावा ग्राम मे संघ की ही विदुषी आर्यिका श्रीविशुद्धमतीजी मिली और सभी ने निवाई की ओर प्रस्थान

किया ।

सन् १९७९ का वर्षायोग निवाई में स्थापित हुआ । इस वर्षायोग में मुनिश्री वर्धमानसागरजी की साहित्य-साधना को गति प्राप्त हुई । भारत के जाने-माने विद्वान् पंडित श्रीरतनचंदजी मुख्तार और उनके शिष्य पंडित श्रीजवाहरलालजी शास्त्री निवाई आए । पंडित श्रीरतनचंदजी मुख्तार द्वारा की गई लब्धिसार - क्षपणासार की टीका की वाचना आचार्य- कल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज के सान्निध्य में प्रारम्भ हुई । मुनिश्री वर्धमानसागरजी विशिष्ट रूप से इसमें सम्मिलित हुए । वाचना के अनन्तर इस ग्रंथ की प्रेसकॉपी का कार्यभार भी मुनिश्री ने ही स्वीकार किया । बड़ी तत्परता से गोम्मटसार कर्मकांड एवं लब्धिसार - क्षपणासार इन दोनों ग्रन्थों का कार्य आपने लगभग १० माह में पूर्ण किया । ग्रंथो के लेखन के साथ मनन भी करते रहे मुनिश्री वर्धमानसागरजी । इस प्रवहमान जगत् में निरन्तर अपने आत्मस्वरूप की प्राप्ति की ओर बढ़ रहे है, वृद्धिंगत हो रहे है मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।

सन् १९७९ का वर्षायोग सम्पन्न होने के बाद आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने विहार किया । पद्मपुरा अतिशय क्षेत्र कमेटी की प्रार्थना पर सन् १९८० में संघ अतिशय क्षेत्र पद्मपुरा पहुँचा ।

अतिशय क्षेत्र पद्मपुरा के प्रशस्त वातावरण मे आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज ने ससंघ १९८०का वर्षायोग स्थापित किया, जहाँ अध्ययन, मनन और चिंतन से साधना अच्छे से हो सके । यहाँ आचार्यश्री वीरसागरजी महाराज के शिष्य एवं आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज के गुरुभाई मुनिश्री पद्मसागरजी महाराज पहले से ही बिराजित हैं । बहुत वर्षोंके बाद गुरुभ्राताओं का यह मिलन अति आनंदपूर्ण एवं वात्सल्यपूर्ण रहा । मुनिश्री पद्मसागरजीने भी यहाँ संघ के साथ वर्षायोग स्थापित कर गुरुभ्राताओं के मिलन को गौरव दिया ।

वर्षायोग-स्थापना के कुछ दिन पश्चात् ही ईसरी आश्रम के ब्रह्मचारीश्री सुरेन्द्रनाथजी पद्मपुरा आए। ब्रह्मचारीजी के आने के बाद समयसार ग्रंथ का स्वाध्याय प्रारंभ हुआ। पूज्यश्री ज्ञानमती माताजी से समयसार ग्रंथ का अध्ययन मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने किया हुआ था फिर भी आचार्यकल्पश्री एवं ब्रह्मचारीजी के अनुभवों का मुनिश्री वर्धमानसागरजी एवं संघ ने पूरापूरा लाभ लिया। समयसार का इतनी सूक्ष्मता से, इतनी गहरी पैठ के साथ स्वाध्याय सुनने-समझने का मुनिश्री वर्धमानसागरजी के लिए प्रथम अवसर है।

'सामायिक' शब्द समय से विकसित है। समय का अर्थ है आत्मा, जिस ध्यान प्रक्रिया मे साधक आत्मोन्मुख हो जाता है उसे सामायिक कहते है। समयसार के स्वाध्याय के कारण एवं अतिशय क्षेत्र के पवित्र वातावरण की वजह से मुनिश्री वर्धमानसागरजी का सामायिक मे स्वस्थिरता का समय बढ़ने लगा। रागद्वेष रहित चित्त की स्थिति में समत्व जाग्रत होता रहा। समत्व से उद्‌भूत अंत:दृष्टि द्वारा वसुधैव कुटुंबकम् - विश्वमैत्री की भावना बलवती बनती चली और वात्सल्य से भर गए मुनिश्री वर्धमानसागरजी। स्वस्वभाव में निमग्न होने से मन की शांति एवं अंत:करण के आनंद मे वृद्धि होने से मानो क्षण-क्षण वर्धमान होते रहे मुनिश्री वर्धमानसागरजी। ध्यान, साधना, अध्ययन एवं स्वाध्याय की ललक बढ़ने से मुनित्व की सार्थकता की संभावना और वृद्धिंगत होने लगी मुनिश्री वर्धमानसागरजी मे।

दशलक्षण महापर्व मे आचार्यकल्पश्री की आज्ञा से मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने तत्त्वार्थसूत्र का विवेचन प्रथमबार सर्वार्थसिद्धि ग्रंथ के आधार से किया। आचार्यकल्पश्री का मार्गदर्शन मिलता रहा मुनिश्री वर्धमानसागरजी को। पद्मपुरा अतिशय क्षेत्र के आसपास के निकटवर्ती ग्रामो से संघसेवा एवं क्षेत्रदर्शन के भाव लिये श्रावकगण का तॉता लग गया। हररोज ऐसा माहौल उभर आता जैसे धार्मिक मेला

लगा हो । सभी लोग धर्मश्रवण एवं आहारदान कर अपने आपमें धन्यता का अनुभव कर रहे हैं । सबकी जिह्वा पर एक ही नाम है मुनिश्री वर्धमानसागरजी का । आपस में चर्चा चल रही है उनके ज्ञान की, उनके वक्तव्य की, उनके वात्सल्य की, उनकी चर्या की, उनकी गुरुभक्ति की, उनकी सरलता की । सभी के मनमें सोच है युवामुनिश्री वर्धमानसागरजी का, हृदय की वत्सलता के बारे में, उनकी सभी क्षेत्रों में कार्यदक्षता के बारे में, अनूठे व्यक्तित्व के बारे में । भक्तिभाव से, पूज्यभाव से, अहोभाव से सबलोग मुनिश्री वर्धमानसागरजी का जयघोष करके अतिशय क्षेत्र पद्मपुरा के नभोमंडल को गुंजायमान कर रहे हैं । उनके चरणकमलों मे अपना शिर झुकाने हेतु, उनसे आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु भीड़ इकट्ठी होती रहती है फिर भी इन सब बातों से अलिप्त, चेहरे पर मुस्कान लिये पल-पल वर्धित होते रहते हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।

इस वर्षायोग के दौरान ब्र. श्रीधर्मचन्दजी शास्त्री परमपूज्य गुरुदेव आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के अभिनन्दन ग्रंथ से सम्बंधित बहुत सारी साहित्यिक सामग्री लेकर आए । साथ मे दिगम्बर जैन नवयुवक मण्डल, कलकत्ता के सदस्य भी आए । इस सामग्री को सुव्यवस्थित करना है । मुनिश्री वर्धमानसागरजी अपने गुरुवर के अभिनन्दन ग्रंथ के लिए कैसे पीछे रहें ? उनके भीतर निहित गुरुभक्ति उन्हें तत्परता से यह काम करने के लिए उत्साहित कर रही है । आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी के आशीर्वाद से एवं उनकी सन्निधि में इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए जुट गये मुनिश्री वर्धमानसागरजी ।

वर्षायोग के अन्तिम चरण के पश्चात् मुनिश्री पद्मसागरजी महाराज का स्वास्थ्य खराब हुआ अत: संघ वर्षायोग के पश्चात् भी कुछ दिन यहीं रुका । मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने अपने तन-मन-वचन से वात्सल्य सभर भावों से मुनिश्री पद्मसागरजी महाराज की सेवा

की। मुनिश्री पद्मसागरजी महाराज की सम्यक् समाधि हुई। तत्पश्चात् संघ का विहार हुआ। पद्मपुरा के निकटस्थ ही एक ग्राम में पंडित श्रीपन्नालालजी साहित्याचार्य आए। पूर्व में अभिनंदनग्रंथ की रूपरेखा के अनुरूप प्राप्त-सामग्री का विभाजन किया जा चुका था। शेष सामग्री के विभाजन पर विचार-विमर्श साहित्याचार्यजी के साथ हुआ। 'अथ से इति' तक आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी के पास ग्रंथ की सामग्री की वाचना आदि का कार्य मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने बड़ी तन्मयता से किया और ग्रंथ प्रेस में दिया गया। सामग्री एकत्र करने मे ब्रह्मचारी श्रीधर्मचन्दजी ने सराहनीय पुरुषार्थ किया। संघ विहार करता हुआ भीलवाड़ा पहुँचा।

सन् १९८१ का वर्षायोग भीलवाड़ा मे स्थापित किया गया। वर्षायोग स्थापना के समाचार से भीलवाड़ा एवं निकटवर्ती ग्राम के श्रावकगण अपना अहोभाग्य समझकर उमड़ पड़े संघस्थ मुनिराजों को आहार देने, उनकी वैयावृत्ति करने एवं उनके मुखारविन्द से जिनवाणी सुनने। यहाँ वर्षायोग के दौरान स्वाध्याय के क्रम मे प्रवचनसार - पंचास्तिकाय का अध्ययन चला। श्रावको के लिए अध्ययन एवं स्वाध्याय हेतु अलग कक्षा की सुविधा रही। समय-समय पर विधान आदि धर्मप्रवृत्तियों से अच्छी धर्म प्रभावना होती रही।

चातुर्मास के दौरान आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज की आज्ञा से प्राय: मुनिश्री वर्धमानसागरजी प्रवचन करते रहे। उनकी प्रवचन शैली मे अब और भी प्रभावकता आ गई। जैन समाज की बड़ी संख्या प्रवचन सुनने आने लगी। एकबार जो प्रवचन सुनने आया वह फिर मुनिश्री का प्रवचन छोड़ने को तैयार ही नही, कारणवश छूट जाय तो उनके भीतर मे अफसोस महसूस होता। प्रवचन के मध्य उनकी आवाज का आरोह अवरोह, शब्दों की पसंद एवं शब्द द्वारा मानस चित्र का निर्माण इतना मोहक, इतना पूर्ण बनता कि श्रोताओं के दिलोदिमाग में छा गए मुनिश्री

वर्धमानसागरजी। हर परिवार ने उनकी प्रवचन शैली के प्रशंसा पुष्प की पराग बिखरादि वातस में। यहाँ तक तो ठीक, अब तो श्रोतागण भी आचार्यकल्पश्री से विनती करने लगे कि मुनिश्री वर्धमानसागरजी को हररोज प्रवचन के लिए समय दिया जाय। चातुर्मास अंतर्गत दसलक्षणपर्व मे तत्त्वार्थसूत्र का विवेचन मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने ही किया। अनेक प्रसंगों को आचार्यकल्पश्री भी समझाते रहे। प्रात: दशलक्षणधर्म पर संघस्थ आर्यिका आदिमतीजी का प्रवचन होता रहा।

भीलवाड़ा एवं आसपास के ग्रामवासियों के दिलोदिमागमें छा गए मुनिश्री वर्धमानसागरजी। उनके भक्तों की बड़ी संख्या निर्मित होने लगी। नतीजा यह निकला कि जहाँ-जहॉ मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने विहार किया, वहाँ-वहाँ उनके प्रति समर्पित श्रावक वर्धमान होते रहे। भीलवाड़ा में संघ ने यह निर्णय किया कि 'आचार्यश्री धर्मसागरजी अभिनन्दन ग्रंथ का मुद्रण पूर्णता की ओर है अत: ग्रंथ का विमोचन विशेष समारोह पूर्वक कराया जाय।' इस कार्य के लिए भीण्डर (उदयपुर) नगर को चुना गया। अत: संघ ने वर्षायोग के पश्चात् भीण्डर नगर की ओर विहार किया।

भीण्डरवाले बैन्ड बाजे के साथ जुलूसरूप में स्वागत कर संघ को अपने नगर में ले आए। भीण्डर एवं निकटस्थ ग्रामों मे बात-ही-बात में प्रसार हो गया कि भीण्डर में 'आचार्यश्री धर्मसागरजी अभिनन्दन ग्रंथ'का विमोचन राष्ट्रीय स्तर पर होनेवाला है। भारत के हर प्रांत में खबर फैल गई कि आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज को अभिनंदन ग्रंथ समर्पित होनेवाला है। भारत के कोने-कोने से भक्त गण भीण्डर की ओर आने लगे। भीण्डरवासी भी अतिथि-स्वागत के लिए सक्रिय हो गए। सभी अपने-अपने कार्यो में जुट गए। भारत भर से आए हुए जन सैलाब के सामने भींडरवासियो ने आतिथ्य, आवभगत एवं व्यवस्था को बनाए रखने का बेमिसाल उदाहरण प्रस्तुत किया।

पूरे भारत देश के जैनसमाज का नेतृत्व भीण्डर के इस विशाल आयोजन में अपना योग देने आ चुका है। आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज के मंगल आशीर्वाद से समारंभ का प्रारंभ हुआ। उन्हीं के सान्निध्य में लगभग ४० शीर्षस्थ जैन विद्वानों की त्रिदिवसीय संगोष्ठी हुई। आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के जीवन के विशेष प्रसंग, उनके साथ के संस्मरण, उनके व्यक्तित्व में विराजित विविधता एवं अन्य विषयो पर संगोष्ठी पूरे तीन दिन तक चली। संगोष्ठी के समापन पर आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज ने ग्रंथ का विमोचन किया। पूरे महोत्सव में मुनिश्री वर्धमानसागरजी का अथक पुरुषार्थ रहा। प्रकाशित ग्रंथ में अनेक लेख मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने लिखे। यह सब पूज्य श्रुतसागरजी महाराज के आशीर्वाद की फल:श्रुति है जिससे मुनिश्री वर्धमानसागरजी इतने विशाल ग्रंथ के कार्य में अपने को संलग्न कर अपना अपूर्व योगदान दे सके।

ग्रंथविमोचन के पश्चात् श्रेष्ठी और विद्वद् वर्ग पारसोला ग्राम मे बिराजमान आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज को ग्रंथ समर्पित करने गए, किन्तु आचार्यदेव ने उसका स्पर्श तक नहीं किया।

"अरि मित्र महल मसान कंचन काच निंदन थुति करण।
अर्घावतारन असि-प्रहारन मे सदा समता धरन ॥"

ऐसे प्रत्येक प्रसंग में, परिस्थिति मे नि:स्पृह रहकर समता धारण कर बालसहज हास्य बिखराते रहे आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज।

भीण्डर के इस राष्ट्रीयस्तर के आयोजन से एकबात उभरकर सबके सामने आई; चाहे वो नेता हो, चाहे विद्वान्, चाहे कार्यकर्ता हो चाहे सामान्य श्रावक-श्राविका, सब मुनिश्री वर्धमानसागरजी की बुद्धिमत्ता से, उनकी कार्यदक्षता से, उनकी ताकत से परिचित हो गए। सबको उनके वात्सल्य का, उनकी आगम आधारित चर्या का अनुभव हुआ। जितने मुँह उतनी बातें; सब मुनिश्री वर्धमानसागरजी की प्रशंसा करते

नही अघाते ।

भीण्डर में कार्यक्रम संपन्न होने के पश्चात् संघ ने धरियावद की ओर प्रस्थान किया । कार्यक्रम में अतिव्यस्तता, अतिपरिश्रम की वजह से, या उनके असाता वेदनीय कर्मोदय से विहार के अनन्तर मुनिश्री वर्धमानसागरजी की वाणी अवरुद्ध हो गई । संघस्थ सभी चिंतित हो गए । सोचने लगे "क्या अभी भी दुर्दैव ने मुनिश्री वर्धमानसागरजी का पीछा नहीं छोड़ा ? कैसी-कैसी कसौटी से गुजरते रहना है इनको ?" फिर भी धैर्य से सह रहे है अपने कर्मोदय को मुनिश्री वर्धमानसागरजी । उन्होंने विहार चालू रखने को अपनी सहमति दे दी । धरियावद में पहले से बिराजमान हैं आचार्य गुरुदेव श्रीधर्मसागरजी महाराज, गुरुदेव के समक्ष आकर उनके चरण स्पर्श करते ही मुनिश्री वर्धमानसागरजी की अवरुद्ध वाणी खुल गई । मुनिश्री वर्धमानसागरजी द्वारा सबसे प्रथम गुरुवर को नमोस्तु बोलते सुनकर संघमे खुशी की लहर फैल गई ।

धरियावद से आचार्यश्री के साथ सभी ने पारसोला गॉव की ओर प्रस्थान किया । वहॉ से संघ साबला पहुँचा । वहॉ ३ मुनि दीक्षाएँ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के करकमलो द्वारा हुई । मुनिश्री उत्तमसागरजी, मुनिश्री रविसागरजी एवं मुनिश्री जिनेन्द्रसागरजी ने संसार सागर से पार उतरने के लिए जैनेश्वरी दीक्षा अंगीकार की । साबला से विहार करता हुआ संघ पालोदा होकर लोहारिया पहुँचा ।

सन् १९८२ का वर्षायोग लोहारिया में निश्चित हुआ । आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज के पास मुनिश्री वर्धमानसागरजी आदि ने षट्खण्डागम भाग-१ और भाग-२ का स्वाध्याय किया । मुनिश्री वर्धमानसागरजी अब मॉ जिनवाणी के स्वाध्याय में रहस्यों को उद्घाटित करने में निपुण हो गए हैं । इसी वर्षायोग के दौरान हस्तिनापुर से जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योति का रथ भ्रमण करता हुआ आया, जिसका कार्यक्रम हर्षोल्लास के साथ संपन्न हुआ ।

वर्षायोग की समाप्ति के बाद संघ यहाँ से आगे भीमपुर-बाँसवाड़ा घाटोल-खमेरा - मुंगाणा होता हुआ पुनः पारसोला पहुँचा। आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के ससंघ सान्निध्य में यहाँ मानस्तंभ की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। इस अवसर पर आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज, आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज, मुनिश्री अजितसागरजी, मुनिश्री दयासागरजी, मुनिश्री अभिनन्दन सागरजी आदि २१-२२ दिगम्बर मुनिराज और आर्यिका माताजी आदि सभी मिलकर अनेक साधु-साध्वी एक ही संघ के, एक साथ उपस्थित रहे। गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश आदि विविध प्रांतों से पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं विशाल संघ के दर्शन हेतु लोगों का आना-जाना अविरत चालू रहा। यहाँ संघस्थ मुनिश्री संयमसागरजी की समाधि हुई। पंचकल्याणक के अंतिम दिन प्रतिष्ठाचार्य एवं अन्य तीन भव्यो की क्षुल्लक दीक्षा सम्पन्न हुई। पारसोला से श्री अजितसागरजी महाराज एवं श्री दयासागरजी महाराज के संघने विहार किया। आचार्यसंघ ने प्रतापगढ़ की ओर विहार किया।

सन् १९८३ का वर्षायोग प्रतापगढ़ मे स्थापित हुआ। प्रतापगढ़ धर्माराधन में, साधुसंघ की सेवा शुश्रूषा मे राजस्थान प्रांत की अगवानी कर रहा है। ऐसे नगर में आचार्यश्री धर्मसागरजी का ससंघ वर्षायोग धर्मप्रभावना पूर्वक चल रहा है। आचार्यश्री की बालसहज निर्दोष सरलता एवं धीर व्यक्तित्व ने भारतवर्ष के आबालवृद्ध सब के दिल मे अनूठा स्थान प्राप्त कर लिया है। उनके दर्शन के लिए, उनका वक्तव्य सुनने के लिए भारत के हर प्रांत से जैन समुदाय का तॉता लगा रहा पूरे चातुर्मास में।

मुनिश्री वर्धमानसागरजी अपने स्वाध्याय के साथ आवश्यक क्रियाएँ करते हुए एवं अतिरिक्त समय मे संघ के वयोवृद्ध साधुओं एवं आचार्यश्री की यथायोग्य वैयावृत्य करके सबका वात्सल्य एवं गुरुदेव का आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। वर्षायोग मे समय की बहुलता रहने से

गुरुआज्ञा से संघ के अन्य कार्यो में भी मुनिश्री संलग्न रहे ।

प्रतापगढ़ में वर्षायोग के समापन के पश्चात् अपने दीक्षागुरु एवं शिक्षागुरु की वात्सल्यमयी छत्रछाया में संघ के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने विहार किया । यहाँ से आचार्यसंघ ने मदनगंज - किशनगढ़ को लक्ष्य बनाकर उसी ओर विहार किया । मार्ग मे निम्बाहेड़ा और जावद नगर में धर्मप्रभावना करता हुआ संघ रूका । जावद नगर में पंडित श्रीजवाहरलालजी सिद्धांतशास्त्री भीण्डर से संघ में आए । उन्होने अपने गमक गुरु पंडित श्रीरतनचंदजी मुख्तार साहब के प्रति कृतज्ञता ज्ञापनार्थ अभिनन्दन ग्रंथ-प्रकाशन की योजना बनाई । सामग्री एकत्र होते-होते पंडित श्रीरतनचंदजी का स्वर्गवास हो गया ।

स्मृतिग्रंथ के रुप में परिवर्तित योजना अब पंडित श्रीरतनचन्द मुख्तार व्यक्तित्व - कृतित्व का रुप ले चुकी है । अतः पंडित श्रीजवाहरलालजी पंडित श्रीरतनचंदजी मुख्तार के व्यक्तित्व-कृतित्व संबंधी विपुल सामग्री लेकर संघमें आए । इससे पूर्व भी वे पद्मपुरा और उसके निकटस्थ ग्राम निमोड़िया मे आ चुके थे । पंडित श्रीजवाहरलालजी की यही भावना रही कि आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज का मार्गदर्शन मिल जाय, इसी उद्देश्य से वे पुनः आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी का आशीर्वाद व मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु जावद भी समस्त सामग्री लेकर आए । आचार्यकल्पश्री के मंगल आशीर्वाद एवं आज्ञा से वे पंडित श्रीरतनचन्दजी की कृतित्व (शंका - समाधान आदिरूप) सामग्री को मुनिश्री वर्धमानसागरजी के पास छोड़ गए । मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने प्रतिदिन क्रम बना लिया, वे मुख्तार साहब की शंका-समाधान रुप उस सामग्री की वाचनाकर आचार्यकल्पश्री को सुनाते एवं सिद्धांत-अध्यात्म के मर्मज्ञ आचार्यकल्पश्री के ज्ञान-समुद्र के रत्नों को अपने स्मृति भंडार में संजोने के साथसाथ मुख्तार ग्रन्थ की उस सामग्री को भी ठीक करते जाते । पूरी शक्ति से लग गए मुनिश्री वर्धमानसागरजी इस

ग्रंथ के कार्य में।

मुनिश्री वर्धमानसागरजीने सन् १९७७ के बाद अपनी मुनिचर्या के पालन के साथ माँ जिनवाणी की सेवा का मानों व्रत ही ले लिया हो। तभी तो गोम्मटसार कर्मकांड, लब्धिसार, क्षपणासार, आचार्यश्री धर्मसागर अभिनन्दन ग्रंथ का कार्य सम्पन्न करके क्रमशः सन् १९८०, १९८२ व १९८३ में उनके प्रकाशित हो जाने पर यह कार्य उन्होने करना स्वीकृत किया। मुनिश्री सतत पुरुषार्थ, अटल आत्मविश्वास एवं दृढ़ श्रद्धा से अपने कार्य मे लगे रहते हैं। पूरी लगन से किए गए कार्यों में सफलता उनके पॉव चूमती है। लगता है मुनिश्री ने यही विचार किया होगा कि परम पूज्य आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज के गहरे अनुभव और चिंतन को प्राप्त करने के लिए उनके निकटतम बैठने के लिए इसके अलावा और कोई उपाय नही है। आचार्यकल्पश्री से लाभान्वित होने का मानो वे कोई अवसर चूकना नही चाहते है। माँ जिनवाणी के चिन्तन-मनन का यही सुन्दर उपाय है यह बात उनके मानस मे निश्चित हो चुकी है, ऐसा लगता है। ७ (सात) माह के अथक परिश्रम के बाद मुख्तार ग्रंथ की वह सामग्री सुझावो सहित ग्रंथ के सम्पादक द्वय के पास पहुँचा दी गई। मुनिश्री वर्धमानसागरजी की लगन और पुरुषार्थ देख आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी अपने आपमें आनन्दित होते, मुस्कुरा देते है, साथ मे अपने पूर्ण वात्सल्य की वर्षा कर रहे है मुनिश्री पर।

जावद से आचार्यसंघ ने भीलवाड़ा-विजयनगर-गुलाबपुरा होते हुए अजमेर की ओर प्रस्थान किया। संघ अजमेर मे कुछ दिन ठहरा। इन दिनो में मदनगंज की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कमेटी के सदस्य ससंघ आचार्यश्री को लेने आए जो मुनिसुव्रतनाथ भगवान की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हेतु पहले आमंत्रण दे चुके थे। सो आचार्यश्री ने संघ सहित मदनगंज की ओर विहार किया। श्री मुनिसुव्रतनाथ पंचकल्याणक

प्रतिष्ठा कमेटी द्वारा संपन्न यह प्रतिष्ठा आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के ससंघ सान्निध्य में अत्यन्त उल्लासपूर्ण वातावरण में एवं बढ़ती हुई धर्म प्रभावना के साथ पूर्ण हुई ।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अनन्तर आचार्यश्री ने ससंघ अजमेर की ओर विहार किया । सन् १९८४ का यह वर्षायोग मदनगंज - किशनगढ़ निवासी मदनगंज में ही संपन्न कराना चाहते हैं । आचार्यश्री को श्रीफल भेंटकर अनुनयपूर्वक विनती भी की जा चुकी है लेकिन चातुर्मास के बीच अभी ज्यादा समय है इसलिए संघ ने पुन: अजमेर की ओर विहार किया । अजमेर मे आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के स्वास्थ्य मे गड़बड़ हुई । उनकी अस्वस्थता कुछ दिन और चली । सो संघ अजमेर से मदनगंज वापस नहीं आ सका । १९८४का चातुर्मास अजमेर मे ही सम्पन्न करने का निर्धार हुआ ।

वर्षायोग के पूर्व एवं वर्षायोग के दौरान संघ मे षट्खंडागम पुस्तक-७ एवं मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय चला । संघ के मध्य ग्रन्थ-वाचना के लिए आचार्यश्री ने मुनिश्री वर्धमानसागरजी को आज्ञा प्रदान की । गुरु आज्ञा शिरोधार्य कर आचार्यश्री एवं आचार्यकल्पश्री की छत्रछाया में ग्रन्थों का स्वाध्याय चलता रहा । इस कार्य के प्रति संघस्थ साधु-साध्वी एवं त्यागियो का भरपूर वात्सल्य भी मुनिश्री ने पाया । इसके अतिरिक्त अपने को प्राप्त ज्ञान का वितरण भी मुनिश्री करने लगे । वर्षायोग प्रारम्भ होने के पूर्व से ही तत्त्वार्थसूत्र और द्रव्यसंग्रह की कक्षाएँ भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने चलाईं जो वर्षायोग के दौरान भी चलती रहीं । इससे अजमेर के प्रबुद्ध श्रावकों को अपने ज्ञानाराधन मे सुविधा रही । इस वर्षायोग में मुनिश्री वर्धमानसागरजी को गुरु-आज्ञा प्राप्त हुई प्रवचनो के लिए । वैसे तो प्रवचन यदा कदा पहले भी किया करते थे पर अब प्रवचनशैली पर प्रभुत्व पा लिया है । इस वर्ष 'पुरुषार्थ सिद्धि-उपाय' ग्रंथ को आधार बनाकर आचार्यश्री

धर्मसागरजी महाराज के आशीर्वाद और गुरुकृपा से एवं आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी के मार्गदर्शन मे दोनो गुरुजनों की उपस्थिति मे ही धर्मसभा में कई दिनोंतक लगातार प्रवचन करते रहे। धर्मनगरी अजमेर के प्रबुद्ध स्वाध्यायी श्रोताओं की सभा मे जिनागम के गंभीर विषयों पर मुनिश्री वर्धमानसागरजी के प्रवचनो की शृंखला चली।

अजमेरवासी पहले भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी से परिचित थे। इस वर्षायोग मे उन्हे लगा कि मुनिश्री वर्धमानसागरजी अब तो वे मुनिश्री वर्धमानसागरजी नही हैं। अब उनके ज्ञान ने, चिन्तन ने नई ऊँचाइयॉ प्राप्त कर ली है। उनकी चर्या ने, उनके प्रवचनो ने नये कीर्तिमान स्थापित कर दिये है। उनके ज्ञान ने गहराई और ऊँचाई के नए मापदंड प्राप्त कर लिये है। अब मुनिश्री वर्धमानसागरजी वर्धित हो गए है; हॉ, रोज-रोज वर्धित होते हुए स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी आचार्य परंपरा मे मानों मुनिश्री वर्धमानसागरजी का स्थान निश्चित दिख रहा है अजमेर-वासियो को।

दशलक्षण महापर्व में प्रातः गुरुदेव से पूर्व मुनिश्री का प्रवचन होता है। मध्याह्न मे तत्त्वार्थसूत्र का विवेचन करने के लिए भी गुरु आज्ञा प्राप्त हुई। अतः सर्वार्थसिद्धि ग्रन्थको आधार बनाकर मुनिश्रीने इस कार्य को सम्पन्न करनेका पुरुषार्थ किया। विशेष प्रसंगो को आचार्यश्री एवं आचार्यकल्पश्री स्वयं समझाते रहे। संघस्थ अन्य मुनिराजो एव विदुषी आर्यिकाश्री जिनमती माताजी, आदिमती माताजी आदि आर्यिका माताओं के प्रवचन भी वर्षायोग के दौरान होते रहे।

विजयादशमी के दिन संघस्थ तीन ब्रह्मचारियों की मुनिदीक्षा संपन्न हुई। ब्र. कल्याणमलजी, ब्र. सुन्दरलालजी और ब्र. अजितकुमारजी दिगम्बर दीक्षा प्राप्त कर आत्मकल्याण के मार्ग पर आरूढ़ हुए। दीक्षा का मुहूर्त निकालने के समय आचार्यश्री ने मुनिश्री वर्धमानसागरजी

को अपने पास बिठाकर पंचांग देखने के लिए आदेश दिया । उस समय तक मुनिश्री इस बात से बिल्कुल अनभिज्ञ थे । अत: लगता है कि आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज अपने इस होनहार शिष्य को ज्योतिष विद्या से भी परिचित कराना चाहते हैं मानों मुनि से आचार्य तक की शिक्षा का एक-एक प्रकरण पढ़ाना चाहते हैं । मुहूर्त तो आचार्यदेव ने स्वयं ही देखकर निर्धारित किया किन्तु इस अवसर पर मुनिश्री ने गुरुदेव के निकट बैठकर, उनके कार्य को हृदयंगम करने का पुरुषार्थ जरूर किया। गुरुदेव ने इस प्रसंग के आधार पर ज्योतिष सम्बन्धी कुछ नियमो की मौखिक जानकारी दी और अपने पास लिखे हुए प्रकरणों को नोट भी करवा दिया ।

सम्पन्न होनेवाली दीक्षाओं के समय दीक्षा मंच पर आचार्यदेव ने मुनिश्री वर्धमानसागरजी को अपने निकट बुला लिया । दीक्षाविधि मे पढ़े जानेवाले श्लोक पढ़ने का अवसर गुरुआज्ञा से मुनिश्री को मिलता रहा । स्पष्ट भासित होता है कि आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज अपने इस शिष्य को सभी ओर से तैयार करने मे लगे हैं । आचार्यदेव की अनुकम्पा एवं आचार्यकल्पश्री के वात्सल्य से मुनिश्री वर्धमानसागरजी को अनेक बाते सीखने को मिलीं जिन्हें अच्छे से ग्रहण करने का, जीवन मे उतारने का पुरुषार्थ उन्होंने किया । वर्षायोग के पश्चात् मुनिसंघ ने मदनगंज की ओर प्रस्थान किया नवदीक्षित मुनिराजश्री स्वर्णसागरजी, मुनिश्री समकितसागरजी एवं मुनिश्री अमितसागरजी के साथ ।

मदनगंजवासी पूज्य आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराजके संघ के आतिथ्य में पलकपावडे बिछाये खड़े हैं । चारों ओर आनंद-उल्लास का माहौल बना है । संघस्थ सभी को आहार देने को, उनकी वैयावृत्ति करने को सदैव तत्पर हैं आबाल वृद्ध । धर्मलाभ की भावना लिये संघ की निर्दोष चर्या निहारने को, प्रवचन सुनने को आदि हर प्रवृत्ति में शामिल हैं सब । मुनिश्री वर्धमान सागरजी के पास उनके दर्शन के लिए,

उनसे आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए, उनका वात्सल्य पाने को, उनके श्रीमुख से धर्मामृत पान करने के लिए मदनगंज एवं निकटतम ग्रामवासियों का तांता लगा रहा। इस बीच संघस्थ आर्यिका श्री विमलमती माताजी के अस्वस्थ हो जाने से संघ को अधिक दिनों तक मदनगंज में रुकना पड़ा। सो अधिक दिनों तक मदनगंज में धर्मसुमन बिखरते रहे। इसी बीच संघस्थ आर्यिका श्री सुशीलमती माताजी की समाधि हो गई।

प्रकृति के तत्त्व अपने आपमें स्वातंत्र्य लिये विचरते हैं। हवा का झोंका स्वभावगत मरजी से चलता है, निर्झर और निर्झरिणी का जल निर्बाध बहता है, पेड़-पौधे अपनी मस्ती में लहराते हैं फिर भी मनुष्य एवं पशुओं को लाभकारी होते हैं। उसी प्रकार प्रकृति पुरुष - निर्ग्रथ संत भी प्राकृतिक विहार करते हुए, संतापों से संतप्त संसारी जीवों को सुख की सरल राह दिखाते हैं। अनेक नगर-ग्राम के भक्तजनों के हृदयको चन्दनसी शीतलता का अहसास कराता हुआ संघ सांभर पहुँचा।

गंगा के तटपर बसी हुई ऐतिहासिक नगरी हस्तिनापुरमें जैन भूगोल की झाँकी कराता हुआ जम्बूद्वीप का निर्माण कार्य संपन्न हो चुका है। उनमें स्थित जिन मंदिरोंकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के लिए सन् १९८२ से लेकर अबतक तीन-चार बार बा.ब्र. श्री रवीन्द्रभाई एवं बाल ब्र. कु. माधुरीबहन आमंत्रण दे चुके हैं। किन्तु आचार्यश्री का स्वास्थ्य इतने लम्बे विहार के योग्य न होने से हस्तिनापुर की ओर विहार का विचार नहीं बन पाया। सांभर में श्री निर्मलकुमारजी सेठी, बा.ब्र. श्री रवीन्द्रकुमारजी एवं बा.ब्र.कु. माधुरीबहन ने फिरसे आचार्यश्री से निवेदन किया कि जम्बूद्वीप की प्रतिष्ठा हेतु हस्तिनापुर की ओर विहार करें। लेकिन प्रतिष्ठा का मुहूर्त नजदीक होने से आचार्यश्री ने मात्र आशीर्वाद दिये। तब श्री सेठीजीने आचार्यश्री से करबद्ध प्रार्थना की कि संघके अन्य साधु जो अब भी हस्तिनापुर पहुँच सकते हैं, उन्हें आप आज्ञा करें। सब की विनती को सरलहृदय आचार्यश्री ने स्वीकार कर फौरन आज्ञा दे दी। आचार्यश्री की

आज्ञा को शिरोधार्य करके मुनिश्री निर्मलसागरजी के नेतृत्व में संघ के ५-६ मुनिराज एवं ७-८ आर्यिका माताएँ २-३ घंटे में ही सांभर से विहार कर गए। इस विहार में मुनिश्री वर्धमान सागरजी भी शामिल हैं। करीबन ४५० कि.मी. लम्बा विहार कर प्रतिष्ठा प्रारंभ होने के २-३ दिन पहले ही सब हस्तिनापुर पहुँच गये।

प्राकृतिक सौंदर्य से सुशोभित ऐतिहासिक एवं धार्मिक नगरी हस्तिनापुर में भारत के कोने-कोने से श्रावक-श्राविकाएँ उमड़ पड़े हैं क्यों न उमड़ें ? विश्वमें अद्वितीय जैन भूगोल की प्रतिकृति जम्बूद्वीप के चैत्यालय, त्रिमूर्ति मंदिर आदिकी प्रतिमाजीका पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न होने जा रहा है। इसी बीच दूसरे धार्मिक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया गया है। भारत के जाने-माने विद्वान्, अनेक संस्थाओं के पदाधिकारीगण एवं बडे पैमाने पर जैन समाज उपस्थित है।

प्रतिष्ठा के दौरान जैन गणित के विषय पर आन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठी हुई। इस संगोष्ठी में मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने अपने विचार प्रस्तुत किये। अखिल भारतीय महासभा का अधिवेशन परिपूर्ण हुआ। जम्बूद्वीप रचना की पावन प्रेरिका आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी को गणिनी पद प्रदान किया गया जिससे प्रतिष्ठा के अंतर्गत की गई प्रवृत्तियों में चार चॉद लग गए। प्रतिष्ठा की अति सुन्दर व्यवस्था बाल ब्र. श्री रवीन्द्रजी और उनके सहयोगियों के प्रबल पुरुषार्थ की फलश्रुति रही।

अत्यंत धर्म प्रभावना पूर्वक प्रतिष्ठा संपन्न होने के अनन्तर संघ ने पुनः राजस्थान की ओर विहार किया। अजमेर के धर्मनिष्ठ श्रेष्ठी श्रीपतिजी संघको वापस आचार्यश्री के चरणों में लाने में अग्रसर रहे। मार्ग में मुनिश्री वर्धमानसागरजी मलेरिया ज्वर से ग्रसित हो गए। फिर भी अस्वस्थता को नगण्य मानकर संघ के साथ विहार करते हुए पुनः आचार्यसंघ में पहुँच गए। संघ नॉवा में विराजित है। यहाँ से 'लूणवा' अतिशय क्षेत्र निकट है सो आचार्यश्री ने इसी क्षेत्र पर वर्षायोग संपन्न

करने हेतु उस ओर विहार कर दिया ।

१९८५ का वर्षायोग 'लूणवा' अतिशय क्षेत्र पर अत्यंत धर्म प्रभावना के साथ चल रहा है । अन्य कार्यक्रमों के साथ युवकों को धर्माभिमुख करने हेतु, उनमें जागृति लाने हेतु दो दिनके लिए अखिल भारतीय युवा सम्मेलन का आयोजन हुआ । इस सम्मेलन में भारतभर से लगभग ५००० से अधिक युवक एकत्र हुए । दो दिन चले इस सम्मेलन में एक ओर आचार्यश्री, आचार्यकल्पश्री एवं मुनिश्री वर्धमानसागरजी का मार्गदर्शन मिला तो दूसरी ओर दिगम्बर जैन समाजके राष्ट्रीय नेतृत्व के प्रमुख लोगोंने भी अपने अनुभवपूर्ण उद्‌बोधनों से संबोधित किया । कुल मिलाकर इस घटना ने अपने आपमें एक इतिहास बना दिया । इस सम्मेलन के मुख्य स्वप्नद्रष्टा ब्र. श्री धर्मचन्दजी शास्त्री के पुरुषार्थ से यह आयोजन इतने विशाल स्तर पर हो सका । चातुर्मास कमेटी के प्रमुख पदाधिकारीगण सर्व श्री उम्मेदमलजी पांड्या, पूनमचंदजी गंगवाल, कैलाशचंदजी काला आदि युवा सम्मेलन के आयोजन में अग्रणी रहे । युवा सम्मेलन की बदौलत देश भर के युवकों के हृदयमें मुनि श्री वर्धमानसागरजी ने वात्सल्यमयी वाणी से अपना स्थान बना लिया, सभी सम्मोहित हुए मुनि श्री वर्धमानसागरजी के व्यक्तित्व से । अपने उत्कर्ष क साथ-साथ सर्व जीवों के कल्याण की भावना भरी पड़ी है उनके मनमें । युवावर्ग धर्म में आगे बढ़े, धर्म के मर्म को समझे, जैनधर्म के सिद्धांतों को अपनाकर मानवजीवन को सफल बनाए, यही भावना रही मुनिश्री वर्धमान सागरजी की ।

वर्षायोग उत्थापन के बाद संघ पुनः नॉवा आया । यहाँ आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज अस्वस्थ हो गए । मुनिश्री वर्धमानसागरजी सेवा और वैयावृत्य में लग गए । आचार्यकल्पश्री के स्वास्थ्य-लाभ के अनन्तर ही संघ ने कुचामन सिटी की ओर प्रस्थान किया । फाल्गुन माह में अष्टाह्निका पर्व आया, फिर पूछना ही क्या ! आचार्यसंघ के सान्निध्यमें

सिद्धचक्र विधान का ठाठ-बाट से आयोजन किया गया। इस दौरान कुचामन सिटी के श्रावकगण भक्तिरस में सराबोर हो गए। यहाँ से संघ ने सुजानगढ़की ओर विहार किया। आचार्य संघ के विहार में श्रावक समाज ने सुचारुरूप से व्यवस्था बनाकर जंगल में भी मंगल का अहसास करवाया और अपने अंत:करण की विनयांजलिको संघस्थ सभी के चरणों में समर्पित किया।

वैशाख माह में सुजानगढ़ में नंदीश्वर द्वीप रचना आदि का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव आयोजित हुआ। आचार्यश्री का ससंघ सान्निध्य पाकर महोत्सव में जान आ गई। मुनिश्री वर्धमानसागरजी की विलक्षण सूझबूझ और आयोजन क्षमता की प्रतीति हो गई सुजानगढ़वासियों को। प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द संपन्न होने के बाद आचार्यश्री ने 'लाडनूँ' की ओर विहार किया।

राजस्थान के स्थापत्य में अपना विशिष्ट स्थान बनाए रखने में प्रमुख हैं 'लाडनूँ' का प्राचीन मंदिर, अत्यंत मनोहारी सुखदेव आश्रम, संगमरमर का मंदिर। विशाल जगह में स्थापित श्वेताम्बर तेरापंथ समाज का जैन विश्वभारती संस्थान, विविध अभ्यासक्रमों के साथ-साथ ध्यान मंदिर से 'लाडनूँ' आज भारतभर में प्रसिद्ध है। अपने में वैविध्य लिये ऐसे लाडनूँ में ग्रीष्म ऋतुमें करीबन एक माह तक संघ का वास्तव्य रहा। यहाँ पर १९८६ के वर्षायोग का सुजानगढ़ के लिए विचार बना और यथावसर आचार्यश्री ने ससंघ विहार कर दिया।

सुजानगढ़ का यह वर्षायोग बड़ा धर्मप्रभावक रहा। वहाँ संघनायक आचार्यश्री का स्वास्थ्य कुछ प्रतिकूल रहा लेकिन जिनके अंत:स्थल में आत्मा का ही खयाल रहता है, वे भला शरीर को कहाँ गिनेंगे ? अनेक धार्मिक आयोजनों के साथ रोजाना चर्या चलती रही। जैन समाज के कार्यकर्ताओं को संघस्थ साधुओं एवं मुनिश्री वर्धमानसागरजी का मार्गदर्शन मिलता रहा। संघ के चातुर्मास की सूचनासे प्रभावित होकर कोलकाता

एवं गौहाटी आदि प्रवासी सभी लोग अपने जन्मस्थान तथा गृहनगरमें आचार्यश्री और संघस्थ साधुगण के दर्शनार्थ पधारे। संघ के सामूहिक स्वाध्याय में मुनि श्री वर्धमानसागरजी ने सदैव की भाँति गुरु आज्ञा प्राप्तकर मूलाचार ग्रंथ की वाचना की। वर्षायोग में मुनिश्री के यथावसर मार्मिक प्रवचन भी होते रहे। उनके प्रवचनों से प्रभावित सुजानगढ़वासी बारबार आचार्यश्री को उनके प्रवचन के लिए निवेदन करते रहे। संघस्थ अन्य साधुओं के भी प्रेरणादायी प्रवचन हुए। आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी का मार्गदर्शन सदा की भाँति मिलता रहा।

वर्षायोग समापन के बाद आचार्यसंघने सुजानगढ़ से सीकर नगर की ओर विहार किया। दिसम्बर १९८६ में संघ सीकर पहुँचा। तत् पश्चात् आचार्यश्री का स्वास्थ्य गिरने लगा। यह बात टेलीफोन के माध्यम से फैल गई भारत के कोने-कोने में। हररोज जगह-जगह से आनेवाले उनके भक्तों की भीड़ लगने लगी। आज राजस्थान के नगरों के कुछ प्रमुख लोग आए हैं। उनमें आचार्यश्री के परमभक्तों में से एक मदनगंजवासी श्री गुलाबचन्दजी गोधा सबके साथ आचार्यश्री के करीब बैठे हुए हैं, जिनके अंत:करण में सदा संघ के कुशल क्षेम की ही वाँछा रहती है, उनका हृदय आचार्यश्री के गिरते हुए स्वास्थ्य से व्यथित है। बातों-ही-बातों में उन्होंने अपने मन की बात रख दी -

"आचार्यश्री इतने बड़े संघ को भविष्य में कौन सम्हालेगा ?"

तब आचार्यश्री ने अपनी लाक्षणिक मुस्कुराहट के साथ फटसे कहा,

"म्हारे संघने तो वर्धमान सम्हाल सके।"

आचार्यश्री के मुँहसे अपने मन की बात सुनकर गुलाबचन्दजी गोधा अत्यंत खुश हो गए। उनके हृदय के भीतर भी यही भावना, यही कामना करवट ले रही थी। गुलाबचन्दजी गोधा तेजस्वी विचक्षण बुद्धिशक्तिवाले व्यवहारदक्ष श्रावक हैं, उनके मनमें अब मुनिश्री

वर्धमानसागरजी मात्र मुनि न रहकर भावी के आचार्य बन गए। अपने मनोभाव की पूर्ति से गुलाबचन्दजी गोधा की दृष्टि में मुनिश्री वर्धमानसागरजी का स्थान बहुत बढ़ गया।

सही में मुनि वर्धमानसागरजी वर्धित होते हुए आचार्य दिखने लगे हैं। वहाँ उपस्थित सभी महानुभावों की दृष्टि की बात न रहकर आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की दृष्टि में भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी आचार्य बनने जैसे वर्धमान हो गए। लेकिन मुनिश्री वर्धमानसागरजी तो गुरु-आज्ञा शिरोधार्य करनेवाले हैं। उनको न पदवी की आकांक्षा है, न प्रसिद्धि की और न प्रशंसा की लिप्सा है। उन्हें तो सिर्फ एक ही कामना है कर्मबन्धनों को काटने की, सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र प्राप्त कर मोक्षप्राप्ति की, इसी में आकंठ डूबे हुए हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी।

कुछ दिनों बाद यह स्थिति बनी कि आचार्यश्री को आहार कराने के लिए मुनिश्री वर्धमानसागरजी साथमें जाने लगे। प्रायः उन्होंने गुरुदेव का आहार हो जाने के बाद ही आहार किया। इस नगर के प्रवास में संघस्थ लोगों की कक्षाओं का क्रम अच्छा चला। प्रातः सात बजे से साढे नौ बजे तक, मध्याह्न एक से दो बजे तक, फिर साढ़े तीन से साढ़े चार बजे तक सर्वार्थसिद्धि, रत्नकरण्डश्रावकाचार आदि की कक्षाओं में मुनिश्री वर्धमानसागरजी महाराज अच्छा विषय प्रतिपादित करते रहे। मध्याह्न दो से तीन तक का समय सामूहिक स्वाध्याय का रहता, जिसमें अष्टपाहुड़ ग्रंथ की वाचना करते-कराते मुनिश्री वर्धमान सागरजी ज्ञान में भी वृद्धिंगत होते चले। रात्रि के समय तत्त्वार्थसूत्र के प्रश्नोत्तर लिखने में व्यस्त रहते।

आचार्यश्री का स्वास्थ्य गिरता ही चला जा रहा है। अब तो आचार्यश्री सामायिक के पश्चात् दो से तीन बजे के बीच आहार चर्या को उठने लगे। मुनिश्री वर्धमानसागरजी का जो क्रम था कि आचार्य गुरुदेव

के आहारोपरान्त ही आहार लेना, वह नहीं टूटा। सभी देख रहे हैं मुनि श्री वर्धमान सागरजी की गुरुभक्ति। संघ के एक और मुनिराज भी आचार्यश्री का आहार होने के बाद ही आहार करते हैं।

इस स्थिति से पूरा संघ चिंतित है। समस्त संघ का ध्यान आचार्यदेव के स्वास्थ्य की ओर लगा है। सभी मुनिराज आचार्यश्री की सेवा में संलग्न हैं। फिर भी स्वावलम्बी आचार्यश्री ने सम्भवत: जीवन का अंतिम केशलुंच भी अपने हाथों से स्वयं ने ही संपन्न किया। इसी समय अपने करकमलों से उन्होंने एक क्षुल्लिकादीक्षा भी दी, उनका नाम रखा गया अनन्तमतीजी। आचार्यश्री के पावन पाणि से प्रदत्त इस अन्तिम दीक्षा के भाग्य जगे हैं सीकर नगरकी अल्पवयमें विधवा होनेवाली महिला के।

ऐसा लग रहा है जैसे आचार्यश्री को नश्वर देह का अन्त दिखने लगा हो। फिर भी अपनी चर्या का निरतिचार पालन करने में वे सतत जागृत हैं। आचार्यश्री ने अघोषित सल्लेखना प्रारम्भ कर दी। धीरे-धीरे क्रमश: सल्लेखना के लिए वे आहार के पदार्थो की सीमा करते जा रहे हैं। गुरुकृपा मुनिश्री वर्धमानसागरजी पर कुछ विशेष है, प्राय: वे अपने त्याग का मानस वर्धमानसागरजी के सामने प्रकट करते रहे, "अब आगे यह नहीं लेना है " आदि। क्रमश: त्याग का क्रम दूध-पानी तक पहुँच चुका है। इतना सब होते हुए भी गुरुदेव की चर्या में कोई शिथिलता नहीं आयी, वे अपनी सारी क्रियाएँ अपने आप करते हैं। कषाय सल्लेखना तो उनकी प्राय: हो चुकी थी। वैशाख कृष्णा सप्तमी वि.सं. २०४४ के दिन प्रात: ११ बजे तक अपना स्वाध्यायादि स्वयंने सम्पन्न किया। वैशाख कृष्णा अष्टमी की रात्रिमें उनका स्वास्थ्य अवश्य गम्भीर रूप से बिगड़ा। उस दिन संघस्थ कुछ बहनोंने श्रावकों के बारह व्रतरूप ५,३,२ आदि प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। वे हैं ब्र. विमलाबहन, केशरबहन, बा. ब्र. भावना बहन (भावनगरवाले)। वैशाख कृष्णा ९ के दिन मध्याह्न के

बाद करीब ३ बजे आचार्यदेवने आहारचर्या के लिए शुद्धि का प्रयत्न किया, किन्तु जब शुद्धि नहीं करपाए तब जीवनपर्यन्त चतुराहार का त्याग कर दिया । सायंकाल साढ़े पाँच बजे संघस्थ सभी के साथ प्रतिक्रमण किया । प्रतिक्रमण के पश्चात् सभी मुनिआर्यिकाओं को यथाक्रम प्रतिनमोस्तु एवं समाधिरस्तु का आशीर्वाद दिया । सायं प्रतिक्रमण और वंदना के बाद संघस्थ सभी त्यागी शारीरिक बाधाओं से निवृत्ति के लिए एवं देवदर्शनादि हेतु चले गये । आचार्यदेव के पास मुनि श्री विपुलसागरजी, मुनि श्री वर्धमानसागरजी और मुनि श्री अमितसागरजी रहे । थोड़ी ही देरमें आचार्यश्री का स्वास्थ्य एकाएक बिगड़ा, श्वास-प्रश्वास की गति में परिवर्तन आया, फौरन संघस्थ सभी साधुजन वापस आ गए । कुछ देर के पश्चात्, समस्त संघ की उपस्थिति में पंचपरमेष्ठी मंत्र के स्मरण एवं श्रवण पूर्वक समाधिमरण को प्राप्त किया । आचार्यश्री के समाधिमरण से संघ पर वज्रपात हुआ । संघ वियोग से शोकमग्न हो गया । रात्रि होने से संस्कार अगले दिन करनेका निश्चय किया गया ।

आचार्यश्री धर्मसागरजी की समाधि के समाचार जल में तैल-बिन्दु की तरह फैल गए भारतके कोने-कोने में । भारत भर से जैन समाज उमड़ पड़ा सीकर में आचार्यश्री के अंतिम दर्शन के लिए । सीकर बन गया सागर । सीकर नगर एवं आसपास का परिसर भर गया वाहनों और मानवों से । अंतिम संस्कार की जगह पर हजारों लोगोंने अपना स्थान बना लिया। यहाँ तक कि जिनको जगह नहीं मिली वे पेड़ पर या ऊँचे टीले पर चढ़कर अपने आराध्य के अंतिम दर्शन के लिए बैठ गए । सबके चेहरे पर शोक एवं गांभीर्य झलक रहा है । सर्वदा मुस्कुराते मुखड़ेने आज सबकी मुस्कान छीन ली है । अंतिम संस्कार का क्षण आ चुका, अग्नि प्रज्वलित होते ही पूरा सीकर आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के जय-घोष से गुंजायमान हो उठा । जयघोष की ध्वनि तरंगित होती रही सागरमें उठती हुई लहरोंकी तरह न जाने कहाँ तक !

आचार्यश्री की अस्वस्थता के कारण उनके भक्तगण सीकर में निरन्तर उपस्थित रहे। उनमें अग्रिम नाम हैं श्री उम्मेदमलजी पांड्या, डॉ. डी.सी. जैन, श्री गुलाबचंदजी गोधा, श्री पूनमचंदजी गंगवाल आदि। डॉ.डी.सी. जैन दिल्ली के सफदरजंग अस्पतालमें न्यूरोलोजी के प्रधान चिकित्सक हैं। ऐसे पढ़ेलिखे प्रोफेशनल व्यक्ति ने भी शुद्ध जल पीने का नियम लेकर आचार्यश्री को आहारदान किया। एक डॉक्टर होने के नाते अंतिम दिनोंमें साधुचर्या के अनुरूप बाह्य उपचार करते हुए वे निगरानी रखते रहे। आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के भक्तगणों में छोटे - बड़े, गरीब-पैसेवाले, स्त्री-पुरुष, रोगी-नीरोग सभी शामिल हैं। सबके अन्त:स्थल में गहरी व्याकुलता है।

आचार्यश्री के अंतिम संस्कार के पश्चात् समाजमें संघ के नये आचार्य के लिए चर्चा चली। संघको कब तक आचार्यविहीन रखा जाय ? अत: श्रद्धांजलि सभा में आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराजकी ओर सभी की दृष्टि गई। उनसे संघ एवं समाजने उस गुरुतर पदका भार वहन करने की प्रार्थना की किन्तु आचार्यकल्पश्री ने अपनी अधिक अवस्था हो जाने से एवं समाधिकाल सन्निकट आ जाने से अपनी असमर्थता व्यक्त की।

पूज्यश्री धर्मसागरजी महाराज सच्चे धर्म को अपनाकर सही में धर्ममय जीवन जीने वाले आचार्य। सहज सरल हृदय, चेहरे पर झलकता बालकसा निर्दोष हास्य, अपनी मस्ती में मस्त रहनेवाले महामुनि, आगमोक्त शुद्ध चर्या का खुद पालन करनेवाले और संघस्थ सभी से वैसी ही चर्याका पालन करानेवाले आचार्य।

ऐसी महान् विभूति का जन्म राजस्थान प्रांत के बूंदी जिले के गंभीरा ग्राम में विक्रम संवत् १९७०, पौष शुक्ला पूर्णिमा के दिन हुआ था। पन्द्रहवें धर्मनाथ भगवान के केवलज्ञान कल्याणक के दिन पैदा हुआ बालक आगे जाकर धर्म का सागर बना, जिसने अपने त्याग

तपस्या एवं संयम साधना की राशि लुटाकर भव्यों को दीक्षा देकर अमूल्य धर्मरत्नों की भेंट दी समाजको।

पिताश्री बख्तावरमलजी एवं माताश्री उमरावबाईजी की कोख से जन्मे इकलौते बालक का नाम रखा गया चिरंजीलाल। शैशवावस्था में माता-पिता का असामयिक निधन हो जाने से चचेरी बहन दाखबाई ने लालनपालन के साथ जिनेन्द्रोक्त धर्म के प्रति श्रद्धा-आस्था के बीज भी डाले। "यथार्थ में सच्चा बंधु वही है जो प्राणी को संसारसे निवृत्ति के मार्ग में नियोजित करे।" भाई-बहन ही एक दूसरे के संरक्षक, एक दूसरे के मार्गदर्शक बने रहे क्योंकि शेष कौटुम्बिक जन महामारी रोगमें संसार से बिदा ले चुके थे। छोटी उम्र में संतोषवृत्ति से व्यापार कर बादमें गंभीरा गॉव छोड़कर इन्दौर में कपड़े की मिलमें काम करना शुरु किया। कपडों की रंगाई में होती हिंसा देखकर अहिंसाके पुजारीने यह काम भी छोड़ दिया।

परमपूज्य आचार्यकल्पश्री चन्द्रसागरजी महाराज के बड़नगर वर्षायोग के समय श्रीचिरंजीलालने ब्रह्मचर्य प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। बहन दाखबाई भी संघ में आ गई। विक्रम संवत् २००१ में बालूण (महाराष्ट्र) में आपने क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। कुछ दिन संघ के साथ विहार किया। जब सिंहवृत्तिधारक गुरुदेव का सल्लेखनापूर्वक स्वर्गारोहण हो गया तब आप आचार्यश्री वीरसागरजी महाराज की चरण-सन्निधि में आ गए। विक्रम संवत् २००८ के वैशाख माह में पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर ऐलक दीक्षा ग्रहणकर इसी वर्ष कार्तिक शुक्ला १४ को फुलेरा नगरमें दिगम्बरमुनिपद पा लिया। नरपर्याय का उत्कृष्ट पद पाकर नया नाम मिला मुनि श्री धर्मसागरजी। संयम-साधना में रत रहते हुए गुरुदेव के साथ तीर्थराज सम्मेदशिखरजी की वन्दना की। विक्रम संवत् २०१४ में गुरुदेवका स्वर्गारोहण होने के पश्चात् मुनि श्री शिवसागरजी महाराजने आचार्य पद ग्रहण किया। उनके साथ गिरनारजी

तीर्थक्षेत्र की वन्दना की। बादमें दो मुनिराजों को साथमें लेकर बुंदेलखन्ड (म.प्र.) के तीर्थोंकी वन्दना एवं धर्म प्रभावना के लिए संघ से पृथक् विहार किया। सागर, खुरई, इन्दौर आदि स्थानों पर सम्पन्न वर्षायोग में कई जीवोंको संयममार्ग में आरूढ़ होने हेतु दीक्षा प्रदान की।

वि. सं २०२५ फाल्गुन कृष्णा अमावस्या को परम पूज्य आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के समाधिस्थ हो जाने पर चतुर्विध संघने परंपरा के आचार्य पदपर मुनि श्री धर्मसागरजी को शान्तिवीर नगर (श्री महावीरजी) में प्रतिष्ठित किया। आचार्य पद के साथ उसी दिन उन्हीं के करकमलों द्वारा ११ दीक्षाएँ संपन्न हुई जिनमें से एक थे मुनिश्री वर्धमानसागरजी। सतत ज्ञानाराधन, तप-ध्यान में लीन रहते हुए, भव्यों को जिनेश्वरी दीक्षा प्रदान करते हुए आचार्यश्री का निर्बाध विहार होता रहा।

सन् १९७४ में राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव में प्रमुख दिगम्बर आचार्य के रूप में सम्मिलित हुए। यह महोत्सव भारत की राजधानी दिल्ली में सम्पन्न हुआ। सरलचित्त आचार्यश्री की निस्पृह वृत्ति, आगमोक्त जीवनचर्या, सरलभाषामें दिए गए निर्भीक धर्मोपदेश, उनकी सरलता और सहजता का वहाँ की जनता पर गहरा प्रभाव हुआ। दीक्षित जीवनमें ४३ वर्षायोग सम्पन्न किए एवं करीब ६५ नर-नारियों को दीक्षा प्रदान कर २० वी शताब्दी की श्रमण परंपरा को सुदृढ़ करने में अपना महान् योग देकर ७४ वर्ष की आयु में समाधिस्थ हुए। ऐसे दिग्गज आचार्य के स्वर्गारोहण से संघस्थ सभी एवं सीकरवासी श्रावकों समेत उनके भक्तगण गहरे शोक में डूब गए।

एक सप्ताह के बाद आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के अंतिम संस्कार के स्थल पर स्मारक के खातमुहूर्त के पश्चात् आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजीमहाराज के सान्निध्य में समस्त संघ एवं समाज के प्रमुख लोगों की उपस्थितिमें श्री उम्मेदमलजी पाण्डया ने प्रस्ताव रखा कि

हमारा संघ कब तक बिना आचार्य के रहेगा ? उनके इस प्रश्नात्मक प्रस्ताव के साथ विचारविमर्श प्रारंभ हुआ । अन्तत: सीकर से दूर विराजित संघ के ही वरिष्ठतम उद्भट विद्वान् श्री अजितसागरजी महाराज की ओर सबकी दृष्टि गई । संघ के आचार्य के स्थान पर वे ही उचित हैं तब सबने एक ही स्वर से स्वीकार किया कि श्री अजितसागरजी महाराज संघ के आचार्य होंगे ।

संघ के इस अभिप्राय की अनुमोदना ब्रह्मचारी श्री सूरजमलजी, श्री पूनमचन्दजी गंगवाल, श्री गुलाबचन्दजी गोधा, श्री उम्मेदमलजी पाण्ड्या, श्री रतनलालजी बाकलीलाल आदि प्रमुख भक्तों के साथ उपस्थित सभी महानुभावों ने की । चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण संघ परंपरामें आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की समाधि के पश्चात् आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी और उनके बाद दीर्घकालसे दीक्षित, अनुभवी विद्वान् साधुरत्न श्री अजितसागरजी महाराज ही सुयोग्य हैं आचार्यकल्पश्री की अस्वीकृति के बाद श्री अजितसागरजी महाराज ही संघ के आचार्य हो सकते हैं ।

संघकी भावना के अनुसार आचार्यकल्पश्री के आदेश से मुनि श्री वर्धमानसागरजी महाराज ने एक पत्र का प्रारूप बनाया । उसमें आचार्यकल्पश्री के सुझाव एवं मार्गदर्शन से सुधारकर पत्रको अन्तिम रूप दिया गया । उपस्थित प्रमुख साधुगण एवं आर्यिका माताजी ने अपनी स्वीकृति रूप अपने हस्ताक्षर उस पत्र पर किये । श्री उम्मेदमलजी पाण्ड्या, श्री पूनमचन्दजी गंगवाल, श्री गुलाबचन्द जी गोधा, श्री रतनलालजी आदि भक्तजन, सीकर समाज के प्रमुख लोगों एवं ब्र. श्री सूरजमल जी ने भी अपने हस्ताक्षर किये । आचार्यकल्पश्री के हस्ताक्षर से प्रेषित पत्र, नवीन पिच्छिका और साथमें संघस्थ साधुओं की भावनाओं को लेकर समाज के प्रमुख जन श्रीक्षेत्र केशरियाजी गए । परम पूज्य श्री अजितसागर जी महाराज के सम्मुख पत्र एवं पिच्छिका रखकर संघकी

मनोभावना का निवेदन किया। बहुत अनुनय-विनय के बाद अनिच्छा होते हुए भी आचार्यकल्पश्री, सीकर विराजित संघस्थ साधुगण तथा केशरियाजी स्थित मुनिसंघ की भावनाओं पर विचार करते हुए संघ परंपरा के गुरुतर भार को परम पूज्य श्री अजितसागरजी महाराजने स्वीकार किया।

आचार्य पदारोहणका महोत्सव उदयपुर नगरमें होना तय हुआ। अत: केशरियाजी से परमपूज्य श्रीअजितसागरजी महाराजने ससंघ विहार किया। नवीन आचार्य के आचार्य पद प्रतिष्ठापन का समारोह ज्येष्ठ शुक्ला १० विक्रम संवत् २०४४ को उदयपुर नगरमें आयोजित हुआ। आचार्यपद-प्रतिष्ठापना के बाद नूतन आचार्यश्री द्वारा मुनिश्री हितसागरजी और मुनिश्री पुण्यसागरजी की मुनिदीक्षा सम्पन्न की गई।

इधर आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की समाधि के अनन्तर आचार्यपद का निर्णय हो जाने के बाद सीकर से अलग-अलग दिशाओं में संघस्थ साधुओं का २-३ समूहों में विहार हो गया।

मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने धैर्य रखकर आचार्यकल्पश्री के साथ अपने से वरिष्ठ साधुओं सहित आर्यिका समुदाय को सम्हालते हुए सीकर से विहार किया। किन्तु दूजोद ग्राम तक आने के बाद आचार्यकल्पश्री ने कुछ मुनियों व आर्यिकाओं के साथ पृथक् विहार का मानस बनाकर दूजोद से अलग प्रस्थान किया। तब मुनि श्री वर्धमानसागरजीने मुनि श्री निर्मलसागरजी के नेतृत्व में शेष मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक-क्षुल्लिका को साथ लेकर मदनगंज-किशनगढ़ की ओर विहार किया।

राजस्थान की वीरभूमि में पले श्रावक धर्मकार्य में, साधु-संघकी सेवा-शुश्रूषामें अग्रसर हैं। मदनगंज-किशनगढ़ के श्रावक आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के संघ के प्रति पूर्ण समर्पित हैं। दूर-दूर तक श्रावक जाते हैं श्रीफल भेंटकर चातुर्मास के लिए संघको आमंत्रित करने को, जब संघकी चातुर्मास स्थापना होती है तब वे अपना अहोभाग्य

मानकर तन-मन-धनसे जुड़ जाते हैं साधु-सेवा में । उर से उभरती अनन्य भक्ति निखरती है उनकी वैयावृत्तिमें । आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज की समाधि से शोकग्रस्त मदनगंज के श्रावक सोच रहे हैं कि आचार्यश्री के संघ का एवं सीकर से निकले कुछ साधु जो आस पास ही हैं, उन सबका १९८७ का चातुर्मास यहाँ स्थापित करवाया जाय । समाज के अनुरोध पर १९८७ का चातुर्मास मुनि श्री निर्मलसागरजी के नेतृत्वमें २०-२२ साधुओंने मदनगंज में संपन्न किया ।

वर्षायोग अनेक धार्मिक कार्यकलापों के आयोजन के साथ चल रहा है । बहती ज्ञानधारा से सभी अभिषिक्त हैं । धर्म-प्रभावना के बीच मदनगंजवासी देख रहे हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी का अनूठा संघ-संचालन । काबिले तारीफ है उनकी वात्सल्य सभर वरिष्ठ साधुओंके प्रति वैयावृत्ति । देख रहे हैं सब प्रतिपल वर्धित होते उनके ज्ञान, चर्या, वक्तव्य एवं संयमसाधनाको । श्री गुलाबचन्दजी गोधा समेत सभी अग्रणीजन के हृदयमें एक ही सोच है, एक ही ख्वाहिश है कि "मुनि श्री वर्धमानसागरजी को उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठित किया जाय ।" श्री गोधाजी के मनोमस्तिष्क में आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के वे शब्द गूंज रहे हैं "म्हारे संघने तो वर्धमान सम्हाल सके ।" जब गोधाजीसे नही रहा गया तो दूसरे प्रमुख लोगों को साथ लेकर सलूम्बरमें विराजित श्री अजितसागरजी महाराज के सन्मुख समाजकी इस भावनाको मूर्तिमान करनेकी उन्होंने दो-तीन बार अभ्यर्थना की । बात सुनकर आचार्यश्री प्रायः मौन हो जाते । समाजके अति आग्रह पर आचार्यदेव ने यही उत्तर दिया कि "वर्धमान को एक बार मेरे पास पहुँचा दो ।" आचार्यश्री के उक्त शब्दोंसे उपस्थित सभी का मन नही माना तो उन्होंने उदयपुर में विराजित विदुषी आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी के पास जाकर निवेदन किया कि "किसी प्रकार आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज से आज्ञा मिल जाये तो मुनि श्री वर्धमान सागरजी को 'उपाध्याय' पद पर प्रतिष्ठित कर दिया

जाय ।"

बात सुनकर विदुषी आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजीने कहा कि "वर्धमानसागरजी महाराज विचारज्ञ हैं और मुझे पूरा विश्वास है कि बिना किसी पद के भी वे संघ को सम्हाल लेंगे ।"

माताजी के ये उद्‌गार भी मदनगंजवासियों को संतुष्ट न कर सके । फिर सबने सोचा कि "पिच्छिका परिवर्तन के साथ ही मुनिश्री को उपाध्याय घोषितकर उनकी जय-जयकार कर देंगे ।" बात तो हवामें बहती है । कुशाग्रबुद्धि मुनिश्री को आभास मिल गया समाजकी भावनाका। अत: पिच्छिका परिवर्तन के पूर्व ही उन्होंने अपने धर्मोपदेश के मध्य ही गम्भीरतापूर्वक कहा,

"चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज की इस निर्मल अक्षुण्ण परम्परा में अभी तक दो पद नही हुए, संघमें मात्र एक आचार्य पद ही रहा है । मदनगंज की समाज इस संघ की अनन्य भक्त है अत: यहाँ की समाज संघ परम्परा के विरुद्ध कोई कार्य करने को नही सोचे, हम किसी भी पदको स्वीकार नहीं करेंगे । संघ- परम्पराकी अक्षुण्णताको बनाए रखने के लिए उपाध्याय पद की चर्चा ही समाजको छोड़ देनी चाहिए । हमारे संघ के परम्परागत आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज विद्यमान हैं । यह संघ उन्हीं के अनुशासन में है और रहेगा ।"

मुनिश्री के इस उद्‌बोधन से सभा में स्तब्धता छा गई । पिच्छिका परिवर्तन का कार्य सम्पन्न होकर सभा विसर्जित हो गयी । वर्षायोग समापन के समय इन्द्रध्वज महामण्डल विधान का आयोजन यहाँ के समाजने किया, विधानाचार्य पंडित श्री हँसमुखजी धरियावद वाले थे । अति उल्लास से सभीने विधान की पूजन की । विधान प्रारंभ होने से पूर्व मंडल विधान पर विराजित करने हेतु १५० प्रतिमाजी लघु पंचकल्याणक द्वारा प्रतिष्ठित की गई । सूरिमंत्र मुनि श्री वर्धमानसागरजीने दिया, मुनि श्री विपुलसागरजी साथ रहे ।

संघस्थ मुनि श्री सुदर्शनसागरजी महाराज की अस्वस्थता के कारण वर्षायोग उत्थापन के पश्चात् भी संघ मदनगंज में रुका। डॉक्टरोंने परीक्षण के बाद बताया कि उन्हें थर्ड स्टेज का टी.बी. (क्षय) है। यह जानकर भी मुनि श्री वर्धमानसागरजी ने रुग्ण मुनिश्री की अत्यंत निकटता से वैयावृत्ति करना प्रारंभ किया। मदनगंजवासी यह सब देखकर चकित एवं चिंतित हो उठे। कई महानुभावोंने वर्धमानसागरजी से कहा भी कि " यह आप क्या कर रहे हैं, इस रोग के जीवाणु पास में रहे सबको लग सकते हैं।" किन्तु बिना उत्तर दिये सिंहवृत्ति से अपने कर्तव्यका निर्वाह करते हुए उनकी वैयावृत्ति में संलग्न रहे मुनिश्री वर्धमान सागरजी, मुनिश्री सुदर्शन सागरजी महाराज की समाधि साधना तक।

मदनगंजवासियों की निगाहों में मुनि श्री वर्धमानसागरजी अब सिर्फ उपाध्याय ही नही, आचार्य दिखने लगे हैं। आचार्यत्व झलक रहा है, सबके साथ सखावत् सौहार्दपूर्ण व्यवहारमें, वृद्ध रोगी साधुओंकी वैयावृत्ति में, उनके ओजस्वी धारावाही प्रवचनोंमें, उनके आयोजनों की विशिष्टतामें, संघके उत्कर्ष के साथ सर्वोदय की भावनामें, हृदयमें भरे पड़े वात्सल्यमें, फिर पदकी क्या आवश्यकता ! सब अपने हृदय सिंहासन पर उन्हें आचार्य के रूप में प्रतिष्ठितकर उनके जयघोष से गुंजायमान कर देते हैं नभोमंडल।

संघने यहाँ से अजमेर नगरकी ओर विहार किया। शीतकालमें सोनीजी की नसियाँ में संघका स्वाध्याय चला। एकदिन स्वाध्याय के बीच पं. हँसमुखजी एक अत्यंत लघुकाय पत्र लेकर आये। पत्र में आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज के स्व हस्त से चार पंक्ति का एक श्लोक लिखा हुआ था, वे पंक्तियाँ इस प्रकार हैं,

दारिद्रयोपहतो यथा घनधनं चान्द्री चकोरः प्रभां,

कामार्तस्तरुनी क्षुधापरिगतः सद्व्यञ्जनं भोजनम्।

सच्छिष्यः सुगुरुं वियोगविधुरो वत्सो यथा मातरं,

तद्वत् वः सततं स्मरामि मनसा मेलापको दुर्लभः ॥

श्लोक पढ़ कर मुनिश्री वर्धमानसागरजी भावुक हो उठे, द्रवित हृदयकी भावना नेत्रों से बह चली। मनसे एक ही आवाज बार बार उठने लगी,

" मिलानेवाला भले ही दुर्लभ हो आचार्यदेव ! किन्तु मिलना दुर्लभ नहीं है, वर्धमान अवश्यमेव ससंघ आपके चरणों में शीघ्रातिशीघ्र पहुँचेगा।"

इस समय आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज भीण्डर में बिराजमान हैं, विदुषी आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी वहाँ पहुँच चुकी हैं। श्री निर्मलकुमारजी सेठी परिवार द्वारा वहाँ विशाल स्तर पर "श्री कल्पद्रुम महामंडल विधान" सम्पन्न होना है, समवसरण की रचना आदिका कार्य चल रहा है।

पंडित श्री हँसमुखजी को तो "विचार करेंगे" ऐसा आश्वासन देकर बिदा किया। पश्चात् संघके वरिष्ठ सहयोगी मुनिजन एवं आर्यिका श्री जिनमतीजी आदि के साथ विचार-विमर्श कर भीण्डर की ओर विहार करनेका मानस बनाकर शीघ्र ही प्रस्थान कर दिया। करीब २५० कि.मी. से भी अधिक दूरी द्रुत गति से तय करके संघ महावीर जयन्ती, चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन प्रातः भीण्डर पहुँचा। भीण्डरवासी तत्परता से खड़े हैं स्वागत के लिए, भक्तिपूर्वक संघका नगरप्रवेश करवाया। नगर के जिनालयों के दर्शन कर मुनिसंघ पहुँचा आचार्यश्री के पास। संघने आचार्यदेव की तीन प्रदक्षिणा करके सिद्ध-श्रुत आचार्यभक्ति पूर्वक प्रत्यक्ष वंदना की। परोक्ष वंदना तो प्रतिदिन होती रहती थी, लेकिन आचार्यपद प्रतिष्ठापना के पश्चात् इस प्रथम वंदना से सभी आंतर बाह्य भक्तिसभर आनन्दमें निमग्न हो गए।

अपने से वरिष्ठ मुनिराजों द्वारा आचार्यश्री के चरणस्पर्श करलेने के बाद मुनि श्री वर्धमानसागरजीने आचार्यश्री के चरणों में जैसे ही

शीश झुकाया तो उनकी आँखों से प्रवाहित अश्रुधारा ने आचार्यश्री के पादप्रक्षालन किए। ठीक इसी समय आचार्यश्री का वात्सल्य-झरना नेत्रों से गिर रहा था मुनिश्री वर्धमान सागरजी के मस्तक पर। उपस्थित जन समुदाय की आँखें भी चमक रही थीं हर्षाश्रुओं से। गुरु-शिष्यके स्नेहमिलनका अद्भुत दृश्य देखते ही रह गए सब। धन्य हो गया वह क्षण, धन्य हो गई वे आँखें जिनमें यह सुहावना दृश्य सदा-सदाके लिए अंकित होकर स्मरणीय हो गया। मिलन के पश्चात् आचार्यश्री धर्मसभामें पहुँचे। धर्मोपदेश के अनन्तर आहार-चर्या हुई। आचार्यमिलन से मुनिश्री के चेहरे पर उमड़ता उल्लास दिखाई दे रहा है।

यथासमय वैशाख माहमें कल्पद्रुम महापूजा प्रारंभ हुई। संघस्थ क्षुल्लक हेमंतसागरजी, क्षुल्लक विरागसागरजी को मुनिदीक्षा एवं संघस्थ चार ब्रह्मचारिणी बहनों को आर्यिका दीक्षा कल्पद्रुम महापूजा के मध्य वैशाख कृष्णा १३ को प्रदान करना तय हुआ। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के साथ आचार्यश्री के चरणों में पहुँचे, क्षुल्लक ज्ञानानन्दजी और क्षुल्लिका अनन्तमतीजीने भी क्रमशः मुनि एवं आर्यिका दीक्षा प्रदान करने हेतु प्रार्थना की। प्रार्थना सुनते ही आचार्यश्री ने क्षुल्लकजी से पूछा कि "दीक्षा माँग रहे हो किन्तु दीक्षा के बाद संघ छोड़कर तो नहीं जाओगे ?"

तब आचार्यश्री के सम्मुख बैठे क्षुल्लकजीने कहा कि,

"गुरुदेव ! मैं तो मुनिश्री वर्धमानसागरजी के साथ रहूंगा, यदि वे संघमें रहेंगे तो मैं भी रहूंगा और वे संघ से जायेंगे तो मैं भी उनके साथ जाऊंगा।"

क्षुल्लकजी के ये शब्द सुनकर निकट ही बैठे मुनिश्री वर्धमानसागरजी के मस्तक पर प्रेम से हाथ रखकर माथे को अपनी गोदमें रखते हुए वात्सल्यमयी स्पर्श करते हुए आचार्यश्री बोले,

"वर्धमान मेरा था, मेरा है और मेरा रहेगा; अब छोड़कर कहाँ

जायेगा ।"

"धन्नो सो जिअलोए गुरवो निवसंति जस्स हिअयम्मि।

धन्नाणवि सो धन्नो, गुरुण हिअए वसइ जोउ ।।"

इस संसार में धन्य हैं वे शिष्य जिनके हृदयमें सदैव गुरुका वास रहता है । अरे ! वह शिष्य तो और भी धन्यातिधन्य है जो गुरुके हृदयमें वास करता है ।

उक्त पंक्ति के अनुसार क्षुल्लक ज्ञानानन्दजी के भीतर प्रतीत हो गया आचार्यश्री और मुनिश्री वर्धमान सागरजी का गहरा और अनमोल सम्बन्ध, गुरु-शिष्य का एक दूसरे के प्रति अगाध स्नेह । झुकगया मस्तक आचार्यश्री के चरणों में क्षुल्लकजी का । साथ में उद्गार निकल पड़े,

"गुरुवर ! मैं आपको और मुनिश्री वर्धमानसागरजीको छोड़कर कही नहीं जाऊंगा ।"

क्षुल्लिका अनन्तमती जी को भी आर्यिका दीक्षा की स्वीकृति मिल गई । शुभ मुहूर्त में तीन मुनि एवं पाँच आर्यिका दीक्षा सम्पन्न हुई । दीक्षा के पश्चात् क्षुल्लक ज्ञानानन्दजी, क्षुल्लक हेमंतसागरजी एवं क्षुल्लक विरागसागरजी का क्रमशः नामकरण हुआ मुनिश्री सौम्यसागरजी, मुनिश्री हेमन्तसागरजी एवं मुनिश्री विरागसागरजी, क्षुल्लिका अनन्तमतीजी हुई आर्यिकाश्री अनन्तमतीजी एवं शेष चार ब्रह्मचारिणी बहनें हुई आर्यिकाश्री सौम्यमतीजी, आर्यिकाश्री दक्षमतीजी, आर्यिकाश्री सौरभमतीजी और आर्यिकाश्री चैत्यमतीजी । कल्पद्रुम महापूजा के दौरान श्री निर्मलकुमारजी सेठी सपरिवार यहाँ उपस्थित रहे। महापूजा के अनन्तर आचार्यश्रीने उदयपुर की ओर विहारका मानस बनाया । मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने आचार्यदेव से प्रार्थना की कि "पंडित श्रीरतनचन्दजी मुख्तार के द्वारा की गई गोम्मटसार जीवकांड की टीका की वाचना पंडित श्रीजवाहरलाल जी के साथ करना है, आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजी भी यहाँ विराजमान हैं अतः आप उदयपुर में १९८८ का वर्षायोग

कर लें और मुझे यहाँ भीण्डरमें वर्षायोग के लिए अनुमति दें।"

यह सुनकर आचार्यश्री चिन्तन में डूबे, उन्होंने अपना निर्णय सुनाया कि "समस्त संघ का चातुर्मास यहाँ भीण्डर में होगा।"

इसी बीच ८२ वर्षीय आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज स्वयं की बारह वर्षीय सल्लेखना की अवधि समाप्ति की ओर जानकर २-३ माह पूर्व जयपुर से विहार करके लूणवाँ पहुँचे। वैशाख शुक्ला त्रयोदशी को बारह वर्षका सल्लेखना काल समाप्त होने पर वे चतुराहार का त्यागकर समाधि-साधना में संलग्न हो गए। अतिशय क्षेत्र लूणवाँ में आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज के साथ ४ मुनि एवं ३ आर्यिका माताजी थीं। आठ दिवसीय अन्तिम साधना के साथ ज्येष्ठ कृष्णा ५ के दिन उनकी समाधि अत्यंत शांत चित्तसे पूर्ण हुई। आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की समाधि के पश्चात् चार दिन कम १३ माह में यह समाधि हुई। भीण्डर समाचार पहुँचे। संघ के अनेक साधु-साध्वी आचार्यकल्पश्री के सान्निध्यमें दीर्घकाल तक रह चुके हैं। कुछ माताजी उनसे दीक्षित हैं तो कुछ साधुओं के वे शिक्षागुरु रहे। मुनिश्री वर्धमानसागर जी के भी वे शिक्षागुरु रहे। श्रद्धांजलि सभा में सभी साधु-साध्वियों ने उनके प्रति अपनी भक्ति एवं अनेक स्मृतियां प्रस्तुत की। नख-शिख निर्ग्रन्थ मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने अनेक संस्मरणों के साथ शिक्षागुरुवरका स्मरण करते हुए श्रद्धांजलि समर्पित की। आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज एवं आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी श्रद्धासुमन एवं स्मरणांजलि अर्पित करनेवालों में प्रवर रहे।

आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज ससंघ भीण्डर से विहारकर कुछ दिनों तक नजदीकी गाँवोंमें धर्मलाभ देते रहे। वर्षायोग सन्निकट होते ही उन्होंने भीण्डर आकर वर्षायोग स्थापित किया। भाग्य खुल गए भीण्डरवासियों के, घर-घरमें उत्साह का माहौल एवं सबके चेहरे पर खुशी झलक उठी। संघ सान्निध्यमें ज्ञानार्जन, धर्मलाभ पाने की भावना

सबके हृदयमें उमड़ पड़ी।

भीण्डर वर्षायोग में पूर्व निर्धारित कार्य विशेष रूप से चला। पंडित श्रीरतनचन्दजी मुख्तार द्वारा लिखी गई गोम्मटसार जीवकांडकी टीका की वाचना हुई। वाचना का कार्य श्री जवाहरलालजी शास्त्री भीण्डर के साथ प्रारंभ होकर पूर्ण हुआ। वाचना के समय परम विदुषी आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी का भी सहयोग प्राप्त हुआ। यहाँ लब्धिसार-क्षपणासार के स्वाध्याय में अत्यंत रुचि रखते हुए मुनिश्री वर्धमानसागरजी के अलावा मुनिश्री पुण्यसागरजी, आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी, आर्यिका श्री प्रशांतमतीजी, ब्र. भावना बहन आदि उपस्थित रहे। इस वर्षायोग में आर्यिका श्री विशुद्धमती जी द्वारा सम्पादित-संकलित 'श्रमणचर्या' का वाचन होकर नवीन द्वितीय संस्करण हेतु तैयार किया गया। मुनिश्री वर्धमानसागरजी के साथ मुनिश्री पुण्यसागरजीने आचार्यश्री अजितसागरजी के पास नीतिवाक्यामृत का अध्ययन किया। इससे अतिरिक्त 'प्रभाप्रमेय' और 'स्तुति विद्या' की कक्षा में संघस्थ आर्यिका श्री प्रशान्तमतीजी आदिने आचार्यश्री से अध्ययन किया।

अध्ययन और अध्यापनमें तत्पर एवं माहिर मुनि श्री वर्धमानसागरजीने सीकर नगरमें चली 'सर्वार्थसिद्धि' की कक्षा को यहॉ पुनः प्रारंभ किया। इसके अतिरिक्त 'तत्त्वार्थसूत्र' की कक्षा भी आचार्यश्री की आज्ञा से वे लेते रहे। साथ-साथ यथावसर प्रवचनामृत से भी लाभान्वित करते रहे मुनिश्री भीण्डरवासियों को। सविशेष अध्ययन प्रवृत्ति से भरपूर इस वर्षायोग के समापनावसर पर समाजने सिद्धचक्रविधान महापूजाका आयोजन किया। बृहद् सिद्धचक्रविधान को प्रथमबार देख गद्‌गद हो गए मुनिश्री वर्धमानसागरजी, सिद्धत्व की उनकी चाह बलवत्तर बनी।

वर्षायोग उत्थापन के बाद संघ का, प्राकृतिक सौंदर्य से सभर, बस्ती से दूर अणिन्दा पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र की ओर मंगल विहार हुआ।

प्राचीन अतिशय क्षेत्र के पवित्र वातावरण में कुछ दिन संघ रुका। यहाँ संघस्थ आर्यिकाश्री शांतिमतीजी की सल्लेखना हुई। सल्लेखना के बाद संघ का विहार हुआ झीलोंकी नगरी उदयपुर की ओर।

सन १९८९ जनवरी माह में संघ उदयपुर पहुँचा। सर्वऋतु विलास उपनगर स्थित श्री महावीर जिनालय में संघ का वास्तव्य रहा। उदयपुरनिवासी श्री देवीलालजी भोरावत जो पिछले कई वर्षो से संघ में अधिक समय रहते हैं, वे सप्तम प्रतिमा के व्रतों का परिपालन करते हुए, धर्मध्यान में रत रहते हुए संघ-सेवा में सन्नद्ध हैं, उन्हीने मुनिदीक्षा की भावना व्यक्त की। माघ शुक्ला पंचमी के शुभ मुहूर्त में आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के करकमलों से उनकी जैनेश्वरी दीक्षा संपन्न हुई, इस अवसर पर आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी भी उदयपुर पहुँची। सर्वऋतु विलास उपनगर से संघ हूमड़ भवन पहुँचा। स्वाध्यायादि कार्यक्रम के साथ संघ के (आचार्यश्रीके) अब तक अध्ययन किये गये और संगृहीत ग्रंथों को सुव्यवस्थित करके एक स्थान पर छोड़ने के उद्देश्य से, ग्रंथों को वर्गीकृ त कर अनुयोग क्रमसे उदयपुर के उपनगर अशोकनगर के मंदिरमें एक भवन में कुछ अलमारियों में रखा गया। यहाँ आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज का स्वास्थ्य कमजोर होने लगा फिरभी मनोबल की दृढ़ता से सर्वकार्य करते हुए यहाँ से सर्वऋतुविलास एवं सेक्टर ११ की ओर होते हुए सम्भवत: सन् १९८९ का चातुर्मास लोहारिया में स्थापित करने की भावना से कदम बढ़ाए लोहारिया की ओर।

यथोचित समय आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी को वर्षायोग स्थापित हुआ। वैयावृत्ति में वरेण्य मुनिश्री वर्धमानसागरजी का क्रम रहा, आचार्यश्री के साथ ही आहारचर्या को जाना और उनके आहारोपरान्त ही स्वयं आहार लेना। किन्तु विधि को यह ज्यादा समय तक स्वीकार नही हुआ। मुनिश्री को असाता वेदनीय कर्म ने घेर लिया। उनपर डिसेन्ट्री, मलेरिया, टाईफोइड और पीलिया जैसे रोगोंने क्रमिक आक्रमण किया। मुनिश्री

को अपनी अस्वस्थता की इतनी चिंता नहीं जितना खेद है आचार्यश्री की सेवा का अवसर छूटने का। बस ! यही तो प्रमाण है गुरुभक्ति से भरे हृदय का। साढ़ेतीन माह की अवधि में मुनिश्री वर्धमानसागरजी अत्यन्त कमजोर हो चुके हैं। मुनिश्री के स्वास्थ्य से स्वयं आचार्यश्री भी चिंतित हो उठे, उनको अपने होनहार शिष्य का जीवन भी संशय में पड़ता दिख रहा। इतना सब होते हुए भी मुनिश्री वर्धमानसागरजी के दृढ़ मनोबल से आश्वस्त हैं आचार्यश्री। ऐसी स्थिति में भी मुनिश्रीने समय आने पर अत्यन्त धैर्यपूर्वक अपना केशलुंचन अपने हाथों से किया। रोग निवृत्ति के बाद स्वास्थ्य सुधार की ओर बढ़ने लगा, आती हुई मृत्यु भी हार गई संयमी मन की दृढ़ता के आगे। वर्षायोग में 'सर्वोपयोगी श्लोकसंग्रह' (परम पूज्य आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज द्वारा संगृहीत) का एवं संघस्थ आर्यिकाश्री जिनमतीजी द्वारा अनुवादित "मरण कण्डिका" ग्रंथ का विमोचन हुआ।

यहाँ सनावद में कमलचन्दजी हल्कापन महसूस करते हुए अपने मकान में अपने पौत्र पारस को - जयवंत भाई के पुत्र को गोदी में बिठा के अतीत के संस्मरणों मे खोए हुए हैं। जीवन के पूर्वार्ध का घटनाक्रम उनके मानस पटल पर चित्रपट जैसे एक के बाद एक आता है और वे डूबे हैं गहरे सोच में।

"मैंने और मनोरमा ने कितने-कितने दु:ख झेले ? सब सहते हुए भी मैं टिका हूँ लेकिन मनोरमा असह्य वेदना से चूर होकर चल बसी अनंतकी यात्रा को। यशवंत भी संसारसागर से पार उतरने के लिए चल पड़ा वैराग्य की ओर। रह गए हम दोनों मैं और जयवंत। जयवंत को पाल-पोसकर बड़ा किया, मनोरमा की अंतिम इच्छानुसार उसे पढ़ाया और उसे इलेक्ट्रीसिटी ऑफिस में नौकरी भी मिल गई। शोभा के साथ उसकी शादी हुई, मुझे पारस जैसे पौत्र की प्राप्ति हुई। घर का सारा कामकाज ममतामयी शोभाबखूबी सम्हाल रही है, उनके स्नेहभर वर्ताव

से घर की बगिया खिली रहती है। अभी जीवन के उत्तरार्ध में मुझे सुख का अनुभव हो रहा है। 'पारस' की 'दादाजी, दादाजी' की आवाज कानों से हृदय में उतरकर अनुपम स्पंदन जगाती है, बहुत लुभावना है मेरा पौत्र। अतीत की कड़वाहट वर्तमान की मिठास से नष्ट हो गई है, सुख के कुछ लम्हे देरी से भी मेरे जीवन में आये तो हैं। लगता है पापकर्म के बाद अब पुण्यकर्म उदयावलि में आए हैं।

किसी ने कहा है,

"खुदा के घर देर जरूर है मगर अन्धेर नहीं।" मनोरमा एवं यशवंत की याद कभी-कभी मन को ग्लानि से भर देती है। लेकिन पारस की उपस्थिति उसकी बाल-सहज तूफानी मस्ती, जयवंत की पत्नी शोभा की देखभाल सही में मुझे शांति एवं सुख का अहसास कराती है।

कमलचन्दजी के सुख के दिन तेजी से बीत रहे हैं। मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने स्वाध्याय का नियम दिया था सो कमलचन्दजी अपने घरमें ही 'पांडवपुराण' का स्वाध्याय करते हैं। जयवंत भी पिता का, पुत्र का एवं पत्नी का खयाल रखकर अच्छे से गृहस्थी निभा रहा है। दु:ख के घने बादल बरसकर अब आँगन में सुख का प्रकाश फैला है। जयवंत, उसकी पत्नी शोभा एवं पुत्र पारस मुनिश्री वर्धमानसागरजी और पूरे संघ के दर्शन करके वापस आ चुके हैं सनावद।

कमलचन्दजी ने पूछा,

"क्या मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने घर के बारे में कुछ पूछा?" तब जयवंतभाई ने बताया कि,

"मुनिश्रीने तो घर के बारे में और आपके बारे में कुछ नहीं पूछा, हम सबको धर्ममार्ग पर चलने को कहा, पारस के सरपर पिच्छिका रखकर आशीर्वाद दिए।"

कुछ चिंतित हो गए कमलचन्दजी। वे नहीं चाहते हैं कि उनका पौत्र भी साधु बन जाय। सो उन्होंने जयवन्त को यह बात अपने तरीके

से समझा दी। मनमें निश्चय कर लिया कि पारस से मुनिश्री वर्धमानसागरजी की कोई बात नही करेंगे। कमलचन्दजी सोचते हैं-

"मैंने और मनोरमा ने बच्चों के लिए कितने दुःख सहे हैं, अब मैं पारस को सम्हालकर रखना चाहता हूँ। यह घर-गृहस्थी में रहे ऐसा मुझे करना पड़ेगा। साधु-संगति से उसे दूर रखना होगा।"

कमलचन्दजी अब छोटे पारस के मन को कथाओं के माध्यम से संसारी सुखों की ओर आकर्षित कर रहे हैं। मानों दूध का जला छाछ को भी फूंक फूंककर पीना चाहता है। कमलचन्दजी पौत्र के भविष्य के बारे में सोच रहे हैं, उसमें ही ज्यादा दिलचस्पी ले रहे हैं।

जयवंत, कमलचन्दजी की वृद्धावस्था का एक मात्र सहारा। कमलचन्दजी के वंश का एकमात्र वारिस। पत्नी एवं पुत्र से घर को आनंद से भर देनेवाले व्यक्तित्व का धनी, पिता को वृद्धावस्था में संबल देने वाला, परिवार का आर्थिक आधारस्तंभ। व्यवहार से सामाजिक रिश्तोंको निभानेवाला पुत्र। विषम परिस्थितियों के बाद घरकी बागडोर सम्हालनेवाला पुत्र। जयवंतसे पूरी तरह से खुश हैं, सुखी हैं, आनंदित हैं कमलचन्दजी। लेकिन भावी के भीतर छिपे राजसे अनभिज्ञ मनुष्य अपने तरीके से परिस्थिति का लेखा-जोखा लगाता रहता है।

एक दिन पूर्ण युवा जयवन्त को अचानक कुछ हो गया। डॉक्टर के पास ले गए, दवाइयाँ दी गई। अस्पतालमें और कुछ निदान हो उससे पहले उनका निधन हो गया। जयवंत अपनी पत्नी, छोटे से पुत्र एवं वयोवृद्ध पिताजी को रोते हुए छोडकर सदा के लिए चल बसा। भर यौवन में ही जीवन-दीप बुझ गया।

जयवंतभाई की धर्मपत्नी शोभा एवं पिता कमलचन्दजी के ऊपर मानों आसमान टूट पड़ा। शोभाजी को युवानी में वैधव्य की वेदना भुगतने को आई। नन्हा सा बालक जो अभी-अभी पढ़ना सीखा है, ऐसे पारस के सिर पर से पिताका छत्र उठ गया। कमलचन्दजी की तो बात

ही मत पूछो । आँखों के सामने एक-के बाद-एक १२ संतानों का निधन, पत्नी का निधन, पुत्र यशवंत का गृहत्याग और अंत में परिवार के, एकमात्र जीवनाधार पुत्र जयवंत की मृत्यु जैसी करुणतम घटनाएँ घटने से पत्थरदिल आदमी भी टूट जाता है तो फिर ये तो हैं बुजुर्ग कमलचन्दजी । कुदरतको अपनी भीतर की पुकार से कह रहे हैं मन-ही-मन,

"जरूरत थी तो मुझे क्यूं नहीं ले लिया, वैसे भी मेरी उम्र तो काफी बढ़ गई है । मुझे यह सब देखने को क्यों जीवित रखा? पूरी जिंदगी दिल पर जख्म ही सहे हैं, अब बुढ़ापे में मेरी ताकत कहाँ ?"

कमलचन्दजी का कंठ अवरुद्ध हो गया । उनके मुँह से कोई आवाज नही निकल रही है । दु:ख के सागरमें डूबे कमलचन्दजी पाषाण की प्रतिमा बन गए । पापकर्मों ने जीवन के आखिरी समय में एक जोरदार चाँटा मारा, सुख का आभास दिखाकर दु:ख के गर्त में धकेल दिया ।

"मैं तो अब पतझड़ का पत्ता हूँ, कभी भी गिर सकता हूँ लेकिन मेरा पौत्र पारस और पुत्रवधू शोभा के सामने पूरी जिन्दगी पडी है, कैसे गुजारेगी यह अपनी जिन्दगी ? पारस की परवरिश कैसे कर पाएगी ? हे प्रभो ! सुना है तू दयालु है तो फिर इतना क्रूर कैसे हुआ, छोटे बालक पर भी दया नही आई ? मौत ही चाहता था तो मुझे ही ले लेना था । वृद्ध पिता के होते हुए युवा पुत्र की मौत ने मानों परिवार को भीषण दावानल में धकेल दिया है । तुझे कैसे दयालु बोल सकता हूँ ? तू क्रूर से भी क्रूर है। प्रभु तुझे भी क्या कहूँ ? मेरे भाग्य में दु:ख ही दु:ख है, अपने पापकर्मों को भुगतना ही पडता है ।"

कमलचन्दजी न तो किसी से बात करते हैं, न कहीं बाहर जाते हैं । पूरा दिन पारस के साथ एवं पांडवपुराण के अध्ययन में घर में ही बिताते हैं । कभी-कभी बारह भावना का चिंतन करते हैं । लगता है उनकी जिजीविषा अब लुप्त होती जाती है । संसार के हर कार्य से नीरस, विरक्त होते जा रहे हैं । कभी-कभी गहरे सोचमें डूबे रहते हैं ।

मैं संसार वृक्ष पर मधुबिंदु के लोभवश लटका रहा । मधुबिंदु लुभाता ही रहा, मैंने कुछ न पाया पूरी जिन्दगी में । छोटी उम्रमें यशवंतने खूब समझदारी से वैराग्यमार्ग का चयन किया है, यशवंत की बात सही है । संसार में सुख है ही नहीं, यह बात अब मेरी समझमें आ गई है । लेकिन "अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत" फिरभी जब जागे तब सवेरा । वैसे तो पूरी जिन्दगी गँवा दी है मैंने दौड़धूपमें । अब जो भी समय बचा है उसको निरर्थक नहीं जाने दूंगा । यशवंतने अपने जीवन को कल्याण के मार्ग पर चलकर सार्थक किया है, सत्य का ज्ञान होते ही मेरे विरोध की परवाह किये बिना ही वह घरसे चल पड़ा, लगता है इसीलिए वह बच पाया ।

सांसारिक बातों से मुँह मोड़ लिया है कमलचन्दजी ने । किसीमें भी उनका मन नही लगता, पारस की मीठी-मीठी बातें भी अब उनको आकर्षित नहीं कर सकती । विचारों में खोये रहते हैं मानों अनंत की यात्रा की तैयारी में लगे हैं । बहू शोभाजी को उन्होंने पास बुलाकर कहा,

"बेटा शोभा ! अब मैं रहूँ, न रहूँ, आप पारस की परवरिश अच्छे से करना, मुनिश्री वर्धमानसागरजी के दर्शन को आप जाया करोगे । उनसे धर्म के मर्म की बात सुनोगे । धर्मका मार्ग ही कल्याण का मार्ग है । जब आप दर्शनार्थ मुनिश्री के पास जाएँ और कुछ बात निकले तो कहना पिताजीने धर्ममार्ग में खूब आगे बढ़ने को कहा है । पारस को लौकिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा भी देना । आप भी धर्म को आधार मानकर जीवनयापन करना । अब मैं ज्यादा जीनेवाला नही हूँ ।"

सही में कमलचन्दजी ज्यादा नही जीए । जयवंत की मृत्यु के सिर्फ १५ दिन बाद ही वे अनन्त की यात्रा को चल पड़े सन् १९८९ में ।

वर्षायोग के अनन्तर संघ विहार कर साबला पहुँचा, आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजी भी आ पहुँची । आचार्यश्री के स्वास्थ्य में आती हुई गिरावट के समाचार सुनकर संघपरंपरा के अन्य साधु भी साबला

पहुँचे । परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के शिष्य आचार्यश्री पुष्पदंतसागरजी महाराज एवं श्री अभिनन्दनसागरजी महाराज भी ससंघ पधारे। करीब ६० साधुओं के समुदाय से साबला सही में धर्मनगरी लग रही है । सभी साधुओं को आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज का स्वास्थ्य चिंतित कर रहा है। कुछ दिन रुककर आचार्यश्री पुष्पदंतसागरजी विहार कर गए ।

अपने स्वास्थ्य की प्रतिकूलता से शरीर का अंत नजदीकी में प्रतिभासित करते हुए ३१ जनवरी १९९० के दिन शुभ मुहूर्त में स्वहस्त से परम पूज्य आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज ने एक पत्र लिखा। क्या लिखा उस पत्र में ?

"संघस्थ मुनिश्री वर्धमानसागरजी को मेरे पश्चात् चारित्र चक्रवर्ती परम पूज्य आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण आचार्य परम्परा का कार्यभार सोंपा जाय और मेरे बाद संघ उन्हें आचार्य स्वीकार करे", ऐसी आज्ञा उस पत्र में देदी ।

इसी दौरान ब्र.सूरजमलजी भी आचार्यश्री की वैयावृत्य हेतु पहुँचे साबला । फरवरी माह में लगभग ५०० कि.मी. की कठिन यात्रा करके आचार्यश्री के गुरुभाई आचार्यकल्पश्री श्रेयांससागरजी महाराज भी आ पहुँचे । पूज्यश्री अभिनंदन सागरजी महाराज के संघस्थ मुनिश्री निर्जरासागरजी की यहाँ समाधि हुई। आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के संघस्थ ऐलकश्री उदयसागरजीने अपनी अस्वस्थता का खयालकर आचार्यदेव के प्रति सल्लेखना ग्रहण करने के भाव रखे। दीक्षा पाकर उदयसागरजी बने मुनि श्री कीर्तिसागरजी और संलग्न हो गए सल्लेखना साधना में। सभी साधुओं के साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी भी लग गए सेवामें। शांत एवं सजग परिणामों से क्षपक मुनिश्री कीर्तिसागरजी की समाधि हुई पन्द्रहवें दिन। सानंद संपन्न अन्तिम मुनि शिष्य की त्वरित सल्लेखना ने आश्चर्यचकित कर दिया समस्त संघ को ।

आचार्यदेव को दो-दो राजरोग लगे हैं सो स्वास्थ्य गिरता ही जाता है। आचार्यश्री को आहार के साथ दिए जानेवाले औषध की व्यवस्था खुद मुनिश्री वर्धमानसागरजी सम्हाल रहे हैं। समागत आचार्यकल्पश्री श्रेयांससागरजी महाराज, मुनिश्री अभिनंदन सागरजी एवं मुनिश्री रयणसागरजी आदि ने सावला से विहार किया। लोहारिया चातुर्मास में स्थित सभी साधु-साध्वी एवं आर्यिका विशुद्धमती माताजी यहाँ रहे। जैसे-जैसे शरीर कमजोर होता जाता है वैसे-वैसे आचार्यश्री की ज्ञान-पिपासा बढ़ती ही जाती है अतः उनकी दिनचर्या में बहुत सा समय शास्त्र-श्रवण में बीतने लगा। आहार के बाद ध्यान का वर्णन करनेवाले शास्त्रों का श्रवण करते रहे और आत्मा में डूबते रहे। शास्त्रों का वाचन संघस्थ आर्यिकाश्री प्रशांतमती आदि माताजी करती रहीं।

पूज्य आचार्यश्री के स्वास्थ्य की गिरती स्थिति देखकर संघस्थ आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजीने अपने संयमी जीवन की समस्त आलोचना करके अत्यंत साहस पूर्वक बारह वर्षीय उत्कृष्ट भक्त प्रत्याख्यान सल्लेखना विधि को आचार्यश्री के समक्ष स्वीकार किया। संघ को सावला आये करीब पाँच माह बीतने आए। वैशाख माह की ग्रीष्म ऋतु चल रही है। वैशाख शुक्ला चतुर्दशी मंगलवार के दिन आचार्यश्रीने संघ के साथ पाक्षिक प्रतिक्रमण किया। स्वास्थ्य की प्रतिकूलता से पाक्षिक प्रतिक्रमण का प्रायश्चित संघ को नहीं दे पाए। रात्रि में स्वास्थ्य ज्यादा बिगड़ा, वैशाख शुक्ला पूर्णिमा प्रातःकाल का प्रतिक्रमण मुनिसंघ के साथ हुआ समस्त संघ ने आचार्यश्री की वंदना की। तत्पश्चात् पूर्व दिवस का शेष रहा पाक्षिक प्रतिक्रमण सम्बन्धी प्रायश्चित समस्त संघ को दिया।

प्रायश्चित लेने के पश्चात् संघ के साधु शौचादि के लिए निकले। कुछ आर्यिका माताजी आचार्यश्री को श्लोक आदि सुना रही थी। मुनिश्री वर्धमानसागरजी उठकर अपने स्थानपर पहुँचे कि माताजीने

आवाज लगाई, सो वापस आ गए । वर्धमानसागरजी देख रहे है आचार्यश्री को घबराहट हो रही है, फिर खून की उल्टी हुई और कुछ क्षण पश्चात् आचार्यश्री संघ के बीच नहीं रहे । पूर्णिमा के प्रभात में एक धर्म-प्रभाकर पश्चिमांचल में गिर गया।

जिनका उदय हुआ था करीब ६५ वर्ष पहले, भोपाल के निकटस्थ आष्टा जनपद से जुडे भौंरा ग्राम में । पिताश्री जबरचन्दजी और माता रुपाबाई की कोख से उदित बालक राजमल माता-पिता की चौथी संतान ने पारिवारिक परिस्थिति के कारण कक्षा ८ तक ही अध्ययन किया किन्तु विलक्षण प्रतिभा से बालक राजमल ने अर्थकारी विद्याकौशल के बजाय आत्मविद्या में दक्षता प्राप्त करना प्रारंभ किया ।

वि.सं. २००० में परम पूज्य आचार्यश्री वीरसागरजी महाराज का चरण सान्निध्य मिला, जिससे जीवन की दिशा ही बदल गई । १७ वर्ष की किशोरावस्था में गुरुदेव की प्रेरणा से प्रभावित होकर जैनागम के ठोस अध्ययन की ओर ध्यान दिया । ज्ञानोदयने प्रवृत्ति को वैराग्योन्मुख कर दिया । मानस को शास्त्रों की इस उक्ति ने प्रेरित किया - "इस दुर्लभ मनुष्य पर्यायको प्राप्त करके भी जो इन्द्रियों में रमते हैं वे मूढ़ दिव्यरत्न को पाकर उसे भस्म के लिए जलाकर राख कर देते हैं ।" नर-जन्म को सार्थक करने हेतु २० वर्ष के नवयौवन मे आचार्यश्री से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत के साथ सप्तम प्रतिमा धारणकर नैष्ठिक जीवन प्रारम्भ किया । प्रखर बुद्धि, लगन और अथक परिश्रम से आगमज्ञान प्राप्ति के फलस्वरू प संघ और समाज में 'महापण्डित' की लोकप्रियता मिली ब्र. राजमलजी को । लेकिन विरक्तमन ब्र. राजमलजी के अंतर में चिन्तन चला कि "ज्ञान का उत्कृष्ट फल चारित्र है, आत्मध्यान लीनता में ही ज्ञान की सफलता है । यदि वह नहीं है तो ज्ञान भार स्वरूप होकर संसार-निस्तरण नहीं करा सकता ।"

उक्त चिन्तन के परिणाम स्वरूप वि.सं.२०१८ कार्तिक शुक्ला

चतुर्थी के दिन सीकर नगर में परम पूज्य आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज से महाव्रत अंगीकार कर के मुनिदीक्षा धारणकर ब्र. राजमलजी बन गए मुनिश्री अजितसागरजी। अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी मुनिश्री ने अपने विद्याभ्यास को और भी वृद्धिंगत करके संस्कृत व्याकरण, जैनन्याय, दर्शन, साहित्य, धर्म-सिद्धान्तादि ग्रन्थोंमें कौशल प्राप्त किया। स्वान्तः सुखाय अध्ययन प्रवृत्ति अब परोन्मुख भी हुई और महाज्ञानी मुनिश्री संघस्थ त्यागियों को अध्ययन करानेमें निमग्न रहे। मुनिश्री ने प्रवास-कालमें ग्रन्थ भण्डार और शास्त्रों की स्थितिको ठीक करवाने के साथ-साथ लगभग १५ अप्रकाशित संस्कृत-हिन्दी रचनाओंका संशोधन कर उन्हें प्रकाशित करवाया। करीब ४२८० श्लोकवाले 'सर्वोपयोगी श्लोक संग्रह' का प्रकाशन एक महनीय कार्य रहा।

पूर्ववर्ती आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराजके स्वर्गारोहणके बाद ७ जून १९८७ को चतुर्विध संघने आपको आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। गौरवर्ण, मध्यमकद, स्वस्थदेह, चौड़ा ललाट, हितमित प्रिय धीमाबोल, संयमित सधी चाल और शांत मुख मुद्रावाले आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज 'यथा नाम तथा गुण' के धारक निस्पृही, भद्रपरिणामी, साधना में कठोर, वात्सल्यमें सुकोमल सरलचित्त थे। परस्पर पूरक विद्वत्ता और चारित्र इन दोनों को दृढ़ता प्रदान करनेवाली श्रद्धा इन तीनों का सही समन्वय था आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के जीवनमें। ३ वर्ष की आचार्यत्व की अवधि में करीब १७ मुमुक्षु जीवों को संसार-सागरसे पार करानेवाली दीक्षा प्रदान करनेवाले आचार्यश्री का वैशाख शुक्ला पूर्णिमा वि. सं २०४७ को समता से समाधि मरण हुआ।

जब आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के स्वास्थ्य में सुधार नही हो रहा था, स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरता ही जाता था तब ब्र. सूरजमलजी बाबाजी एवं (गणिनी आर्यिकाप्रमुख श्री सुपार्श्वमती माताजी संघस्थ) ब्र. बहन डॉ. प्रमिलाजी रातदिन वैयावृत्तिमें लगे हुए थे। "आचार्य श्री

अजितसागरजी महाराजने अपने पश्चात् संघस्थ मुनि श्री वर्धमानसागरजी को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करनेकी भावना से एक पत्र लिखकर रख दिया है” ऐसी जानकारी मिलने पर संघ और समाजमें चारोंओर विभिन्न प्रकारकी प्रतिक्रियाएँ होने लगी। आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज के आदेशपत्र लिखने और संघ एवं बाहरकी प्रतिक्रियाओं के चलने पर श्री निर्मलकुमारजी सेठीने आसाम प्रान्तमें स्थित गणिनी आर्यिका प्रमुख श्री सुपार्श्वमती माताजी से सारी परिस्थिति बताकर आचार्यश्री की आज्ञा के सम्बन्धमें उनके विचार जानने चाहे तो गणिनी आर्यिकाश्री ने अपने मनोभावों को इस प्रकार व्यक्त किया।

“निर्मलजी ! आचार्यश्री के आदेशानुसार आप लोग मुनिश्री वर्धमान सागरजी को आचार्य बनाओ या नहीं वो आप जानो। किन्तु मेरा ज्योतिष ज्ञान कहता है कि वे आचार्य अवश्य बनेंगे, आप पदारोहण समारोह नहीं सम्पन्न कर सके तो संघ उन्हें बादमे बना लेगा।”

आर्यिकाश्री के इन उद्‌गारों से बहुत बड़ा सम्बल मिला उस प्रतिकूल परिस्थिति में। पाठकों को मैं अब सन् १९६५ की याद दिलाना चाहता हूँ। सन् १९६५ में आर्यिकाश्री इन्दुमती माताजी के साथ पूज्य आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी ने पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की जन्मभूमि सनावद में चातुर्मास किया था। उस समय किशोर यशवन्तकुमार आर्यिकाश्री के पास ही अध्ययन करते थे। चातुर्मास के पश्चात् उन्होंने आर्यिका संघ के साथ जाने का मानस भी बनाया था, किन्तु बड़ी माताजी श्री इन्दुमतीजी ने मना किया था। उस समय का वैराग्य बीज सन् १९६७ में गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के वात्सल्यामृत से अंकुरित पुष्पित-पल्लवित हुआ था। सन् १९६५ के पश्चात् तो आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी ने यशवन्त कुमार को सन् १९९९ में श्री महावीरजी में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के रूपमें ही देखा, इससे पूर्व उन्होंने साक्षात् देखा भी नही था, किन्तु अपने ज्योतिष ज्ञान

में जो आया था उसे उक्त शब्दों में सन् १९९० में व्यक्त किया था श्री निर्मलकुमारजी सेठी के सामने ।

संघ में भी प्रेरणाओं से जब विरोधी प्रतिक्रियाएँ तेज होने लगी तब अपने ही कारण चली इस विवाद-चर्चा से मुनि श्री वर्धमानसागरजी बहुत दुःखी हुए । उन्होंने आचार्यश्री के चरणों में मस्तक झुकाकर प्रार्थना की कि "आचार्य भगवन् ! मैं तो साधक ही ठीक हूँ, मुझे साधना में ही रुचि है । मैं नही चाहता कि मेरी वजह से संघ और समाजमें विवाद खड़ा हो । मैं इस पद की जिम्मेदारी को सम्हालने में सक्षम नहीं हूँ । मेरे निर्बल कन्धों पर इतना भार क्यों डालते हो ?"

मुनिश्री के निर्लेप, सरल मनोभावों को सुनकर आचार्य श्री अजितसागरजी महाराजने कहा,

"वर्धमान ! मैंने संघ, समाज और परंपराके हित के लिए सोच-समझकर निर्णय लिया है सो तुम निश्चिन्त रहो ।"

आचार्यश्री के मुखसे ये शब्द सुनकर मुनिश्री उस समय भी निश्चिन्त नही रह सके ।

ग्रीष्म की गरमी से तप्त धरा शाम ढलते ही शीतलता का अहसास कराती है । दिनभर की उड़ान के बाद पंछी अपने घोंसले में आराम फरमा रहे हैं । पशु बैठे-बैठे चैन से जुगाली कर रहे हैं । चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ है, झींगुर की झी-झी वातावरण की शांति भंग कर रही है । अवनि पर अंधकार उतर चुका है । सितारों से सजकर सुधाधर गगन में घूम रहा है, ऐसे निरभ्र अंबर पर वातायन से दृष्टि लगी है मुनिश्री वर्धमानसागरजी की । संन्यस्त जीवनमें आजतक न तो ऐसी दुविधा हुई है न दिलदोज दुःख । पूर्व प्रसंग चित्तपटल पर उठते हैं, गहरे सोच में डूबे हैं मुनिश्री । आचार्यपद स्वीकार करना या नहीं करना ? क्या करना ? ऐसी दुविधा की अवस्था से मुनिश्री गुजर रहे हैं । तब अन्तर्मनसे एक और वर्धमान की आवाज गूंज उठी, "मेरु को हिलते-डुलते कभी सुना और देखा नही
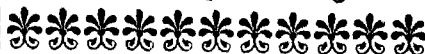
है । आज मैं यह क्या देख रहा हूँ वर्धमान !"

"बचपन से पांडवपुराण का अध्ययन करनेवाले को मुझे अर्जुन को रणभूमि पर दिए गए उपदेश की याद दिलानी होगी ? गुरु-आज्ञा शिरोधार्य करनेवाले में यह कैसी हिचकिचाहट ? चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की आचार्यपरंपरा को वहन करने में देरी क्यों ? सीकरमें गुलाबचन्दजी गोधा से कहे गए दीक्षागुरु आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के वे शब्द "म्हारे संघने तो वर्धमान सम्हाल सके ।" क्या ये पर्याप्त नही? आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के स्वहस्त से लिखा हुआ आदेश और उनके श्रीमुख से कहे गए ये शब्द "मैंने संघ, समाज और परंपरा के हित के लिए सोच-समझकर निर्णय लिया है" को भी नजर अंदाज करना चाहते हो क्या ? आचार्यपद स्वीकार करना तो तुम्हारा धर्म है, तुम्हारा कर्तव्य है, तुम्हारी नियति है यह मत भूलो वर्धमान ।"

"अधिकारी से अधिकारी को लिखित अधिकार प्राप्त है फिर व्यर्थ का विचार क्यों ?" रही बात साधना-स्वकल्याण की, तो सुनलो, स्वकल्याण में परकल्याण निहित है और परकल्याण में ही स्वकल्याण । परम्परामें आजतक जितने आचार्य भगवंत हुए उन्हें स्वकल्याण की चिंता नही रही होगी क्या ? संघ और समाजमें विवाद खड़ा हो, वैसा तुम नही चाहते, सही है लेकिन अपनी चाह से जगत् थोड़ेही चलता है ? संसारचक्र चलानेवाली कर्म शक्ति ही सब करा रही है । भीतर के सत्य पर विश्वास करो वर्धमान ! उस सत्य की प्रतिष्ठा करने के लिए अचल रहकर समभाव से सत्य को प्रकाशित करना है वर्धमान ! सारे संघर्ष-विवाद के विषम विष को पचाकर सम और वात्सल्य का अमृत देना है तुझे वर्धमान ! पद के व्यामोह बिना सहजता से पद का कर्तव्य निभाना है वर्धमान ! इस के लिए तू ही योग्य है, यह सोच-समझकर आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज ने तुझे चुना है । यह तेरा धर्म है, कर्तव्य है, नियति है यह मत भूल वर्धमान !" भीतर की आवाज में पनपते धारदार सत्य के समंदर में

पत्र पढ़ने के बाद पत्र की एक कॉपी (प्रतिछाया) सभा में विराजित मुनिश्री वर्धमानसागरजी को सेठीजी देने लगे तो निस्पृह भाव से भीगे मुनिश्रीने वह पत्र सन्निकट विराजित मुनिश्री पुण्यसागरजी की ओर संकेतकर उन्हें सौंपने को कहा। मुनिश्री वर्धमानसागरजी ने पत्र को देखा तक नहीं। पत्र खुलनेपर संघ के कतिपय साधुओं ने अपने रागालाप से प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की जिससे उपस्थित जनसमूह में क्षोभ हुआ, श्रद्धांजलि सभा अव्यवस्थित हो गई। सेठीजी के साथ आये चैनरुपजी बाकलीवाल आचार्य गुरुदेव के प्रति आक्षेपात्मक भाषा सुनकर बहुत दुःखी हुए। उन्होंने इस प्रकार की भाषा-प्रयोगकर्ताओं के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की। यह सब देखते हुए मुनिश्री वर्धमानसागरजी को लगा कि,

"अब तो इस परिस्थिति में गुरुआज्ञा को स्वीकार करना ही कर्तव्य है - धर्म है। अन्यथा मुनिश्री तो यह तय करके आये थे कि आज्ञापत्र को एकबार स्वीकार करके तत्काल ही आचार्यपद छोड़ देंगे जिससे गुरुआज्ञा का पालन भी हो जायेगा और इस भार से मुक्त भी रहेंगे।"

यह घटनाक्रम तो बहुत लम्बा था जैसा कि जनवरी से अप्रिल-मई तक प्रत्यक्षदर्शियों ने मुझे सुनाया लेकिन वह सब लिखने का यहाँ क्या प्रयोजन ? मैं तो अपने पाठकों को यह बताना चाहता हूँ कि मुनिश्री इस पद की आकांक्षा से निर्लेप थे फिर भी गुरुआज्ञा शिरोधार्य करनी पड़ी थी।

कुछ दिन साबला ज्यादा रुककर वहाँ उपस्थित साधु समुदाय में विचार-विमर्श हुआ। मुनिश्री वर्धमानसागरजी वरिष्ठ हैं सो विहारादि के सम्बन्धमें उन्होंने प्रस्ताव रखकर बातचीत की किन्तु प्रतिकूलता के माहौल में स्वयं ही निर्णयकर साबला से पारसोला की ओर विहार का मानस बनाया। मुनिश्री के साथ उस समय मुनिश्री सौम्यसागरजी,

मुनिश्री प्रमाणसागरजी एवं आर्यिकाश्री जिनमतीजी, श्री विशुद्धमतीजी आदि १९ आर्यिकाओं ने रीछा के लिए विहार किया। संघ रीछा पहुँचा ही था कि सावला से मुनिश्री चिन्मयसागरजी भी विहारकर रीछा पहुँच गए। दूसरे दिन और दो आर्यिका माताजी भी सावला से चलकर संघ में मिल गई।

रीछा में कुछ दिन संघ रुका। यहाँ पारसोला समाज के अग्रणी आये, उनकी प्रार्थना को नजर समक्ष रखते हुए यह निर्णय हुआ कि आषाढ़ शुक्ला दूज को परम पूज्य समाधिस्थ आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज की भावनाओं को तथा उनके लिखित आदेश को साकार रूप देने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर विशाल आयोजन पारसोला में किया जाय। गामड़ी होता हुआ संघ सहर्ष पारसोला पहुँचा। १६ पहाड़ीयो की बीचमें बसा हुआ पारसोला पहले पहाडसोला से जाना जाता था। घिसते-घिसते पारसोला हो गया। यहाँ मुनिश्री वीरसागरजी महाराज भी आ गए।

चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी अक्षुण्ण परंपरा में अखंड श्रद्धान्वित पारसोलावासियों की खुशी का ठिकाना न रहा। चारित्र-चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की परंपरा का आचार्य पदारोहण समारंभ अपने नगर में होनेवाला है, इस बात से ही सब अपने सौभाग्य की सराहना करने लगे। साथ-साथ मुनिश्री वर्धमानसागरजी का आचार्य पदारोहण समारोह ऐसे अनूठे ढंग से राष्ट्रीय स्तर पर मनाना है जिससे प्रसंग में चार चॉद लग जाँय, पारसोला का कीर्तिध्वज दशों दिशाओं में लहराता रहे। सब जुट गए कार्यक्रम के आयोजन में। उत्साहित उपस्थित संघ भी साथ देता रहा, आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजीने श्री निर्मलकुमारजी सेठी आदि श्रेष्ठीजनों को आद्योपांत सारे परामर्श दिये। परम पूज्य आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के गृहस्थ शिष्य भाईश्री हँसमुखजी का असीम हर्ष सब की नजरों में समा गया, तन-मन से समर्पित वे जुट गए समारम्भ के कार्यो

में। श्री हँसमुखजी का उत्साह देखते ही बनता था।

जैसे सुमन की सुरभि यूंही वातावरण में फैल जाती है वैसे ही कार्यक्रम की सूचना फैल चुकी दूर-सुदूर। आचार्यश्री पुष्पदंतसागर महाराजजी भी ससंघ आ गए पारसोला। जिस मंगलमय दिन का बेताबी से इन्तजार था वह दिन आ गया आषाढ़ शुक्ला २, २४ जून सन् १९९० का। भारतभर से आये जनसमुदाय के स्वागत में खड़े हैं पारसोलावासी। विशाल पांडाल में पधारे भक्तजनों की जबान पर एक ही नाम है, मस्तक में एक ही गूंज हैं मुनिश्री वर्धमानसागरजी की। २३ जून से धार्मिक अनुष्ठान प्रारम्भ हो चुके हैं, २४ जून को मध्याह्न १२:३५ पर पदारोहण कार्य प्रारम्भ हुआ। करीब ३० हजार से भी अधिक जनसमुदाय से ठसाठस भरे विशाल पांडाल में उपस्थित जनसमुदाय को परम पूज्य स्व. आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज का आदेश-पत्र दिखाकर सुनाया गया, पत्र पूर्ण होते-होते पूरा सभामंडप आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के जयघोष से ध्वनित होता रहा, बस होता ही रहा लम्बे समय तक। आखिर, आचार्यश्री पुष्पदंत सागरजी महाराजने खड़े होकर सभा में पृच्छा की "इसमें किसीका कोई विरोध तो नहीं है?"

"नहीं" की जोरदार ध्वनि फैल गई विशाल पांडाल में। फिरसे आचार्यश्री वर्धमान सागरजीमहाराज के जयघोष से पारसोला का गगन गुंजायमान होता रहा। उपस्थित संघस्थ साधु, विद्वत्वर्ग एवं श्रेष्ठीवर्ग ने भी आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के आदेश-पत्र की अतिहर्षपूर्वक, भावपूर्वक अनुमोदना की तब आचार्यश्री पुष्पदंतसागरजी ने मुनिश्री वर्धमानसागरजी को सौभाग्यवती स्त्रियों द्वारा पूरित चौक पर आसीन कर संस्कार किये। संस्कार होते रहे, जयघोष की गूंज उठती रही, सभी महानुभावों के हृदयकमल पर बिराजमान हो गए वर्धमानसागरजी आचार्य के रूप में। दूरदर्शी, गम्भीर, मितभाषी तथा दिगम्बर जैन धर्म के दृढ़

श्रद्धालु, अपरिग्रह के अवतार ऐसे मुनि श्री वर्धमानसागरजी को शतेन्द्रपूज्य आचार्यपद प्राप्त होते हुए भी उनके चेहरे पर निर्लेपता ही झलक रही है । आध्यात्मिकता की ऊँचाई का एक परम शिखर, एक नया गौरीशंकर सा दिख रहे हैं आचार्यश्री वर्धमानसागरजी । चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की आचार्य परंपरा शृंखला समृद्ध हो गई एक नई कड़ी जुड़ने से ।

दिगम्बर जैन समाजकी सभी शीर्षस्थ संस्थाओं के शीर्षनेता आज इस मंच पर एक साथ उपस्थित हैं । अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन धर्म संरक्षिणी महासभा, दिगम्बर जैन महासमिति, तीर्थक्षेत्र कमेटी, विद्वत् परिषद्, शास्त्री परिषद् आदि के पदाधिकारी एवं वरिष्ठतम सदस्यगण मंच पर विराजित हैं । सभी संस्थाओं के पदाधिकारियोंने मंच पर खड़े होकर परस्पर विनीत भावसे भविष्य में विचारों के आदान-प्रदान का मार्ग प्रशस्त करनेका संकल्प सा लिया । यह सौमनस्य स्व.आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज की भावनाओं एवं आदेश से नूतन आचार्यपद पर प्रतिष्ठित हुए आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के भीतर बहते वात्सल्य, प्रेम और अहिंसा के निर्झर का ही चमत्कार है ।

卐 महोत्सव मे सम्मिलित साधुजन, प्रमुख विद्वत्जन एवं प्रमुख श्रेष्ठीजन : 卐

- परम पूज्य आचार्यश्री पुष्पदन्त सागरजी महाराज ससंघ
- पूज्य मुनिश्री वीरसागरजी महाराज
- पूज्य मुनिश्री प्रमाणसागरजी महाराज
- पूज्य मुनिश्री चिन्मयसागरजी महाराज

१. पूज्य आर्यिका श्री जिनमतीजी
२. पूज्य आर्यिका श्री विशुद्धमतीजी
३. पूज्य आर्यिका श्री भद्रमतीजी
४. पूज्य आर्यिका श्री गुणमतीजी
५. पूज्य आर्यिका श्री सिद्धमतीजी

६. पूज्य आर्यिका श्री विमलमतीजी
७. पूज्य आर्यिका श्री शुभमतीजी
८. पूज्य आर्यिका श्री शीतलमतीजी
९. पूज्य आर्यिका श्री विपुलमतीजी
१०. पूज्य आर्यिका श्री चेतनमतीजी
११. पूज्य आर्यिका श्री सुवैभवमतीजी
१२. पूज्य आर्यिका श्री नि:संगमतीजी
१३. पूज्य आर्यिका श्री सुदर्शनमतीजी
१४. पूज्य आर्यिका श्री समतामतीजी
१५. पूज्य आर्यिका श्री अक्षयमतीजी
१६. पूज्य आर्यिका श्री प्रशांतमतीजी
१७. पूज्य आर्यिका श्री पवित्रमतीजी
१८. पूज्य आर्यिका श्री अध्यात्ममतीजी
१९. पूज्य आर्यिका श्री अनन्तमतीजी
२०. पूज्य आर्यिका श्री सौम्यमतीजी

संघस्थ ब्रह्मचारी श्री जवाहरलालजी, ब्र. श्री कजोड़मलजी, ब्र. श्री वाड़ीलालजी, ब्रह्मचारिणी डॉ.प्रमिलाजी (संघस्थ गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमतीजी), ब्र. भावना बहनजी आदि अनेक ब्रह्मचारी एवं ब्रह्मचारिणी बहनें भी थी।

विद्वत्‌गण, प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी, डॉ.श्रेयांसकुमारजी, डॉ.चेतनप्रकाशजी पाटनी, पंडित शिवचरणलालजी, पंडित जवाहरलालजी सिद्धांतशास्त्री और प्रतिष्ठाचार्य हँसमुखजी आदि और भी बहुत से विद्वान् उपस्थित रहे।

आसाम, मुंबई, कोलकाता, गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र उत्तरप्रदेश के मुख्यनगर मेरठ और दिल्ली से, राजस्थान के मेवाड़, बागड़ प्रान्त के नगरों से भारी संख्या में गुरुआज्ञा की अनुमोदना

करने जन सैलाब उमड़ पड़ा है पारसोला में ।

महासभा अध्यक्षश्री निर्मलकुमारजी सेठी
महासमिति अध्यक्षश्री रतनलालजी गंगवाल
श्री साहू रमेशचन्द्रजी
श्री उम्मेदमलजी पाण्ड्या
श्री रूपचन्दजी कटारिया
श्री मदनलालजी बैनाड़ा
श्री चैनरूपजी बाकलीवाल
श्री कैलाशचंदजी काला
श्री मिश्रीलालजी बाकलीवाल
श्री हुकमचन्दजी पांडया

श्री संतोषलालजी मेहता
श्री शंकरलालजी लिखमावत
श्री जयनारायणजी जैन, मेरठ
श्री रतनलालजी जैन मेरठ
श्री पूनमचन्दजी गंगवाल
श्री महावीरजी मिण्डा
श्री गुलाबचन्दजी गोधा
श्री रतनलालजी बाकलीवाल

आदि अनेक श्रेष्ठिवर्य उपस्थित रहे ।

इस अवसर पर तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष साहू अशोककुमारजी अपने व्यस्ततम कार्यक्रम के कारण उपस्थित नहीं हो सके सो उन्होंने अपना आत्मीय अनुमोदन पत्र साहू रमेशचन्द्रजी के साथ भेजा । सेठीजी के साथ प्रमुख सूत्रधार रहे श्री उम्मेदमलजी पाण्ड्या ।

२६ जून को सुदूरवर्ती महाराष्ट्र प्रान्त से आचार्यश्री विद्यानन्दजी महाराज ने श्री भरतकुमारजी काला के साथ नूतन आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के लिए पिच्छिका भेजकर इस कार्य में अपने उमंगभाव प्रदर्शित कर कार्य की अनुमोदना की । आचार्य पदारोहण समारोह एवं नूतन आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज की ख्याति फैल गई भारत भर में । प्रशंसा-पुष्पों से प्लावित पारसोला नगर, पूर्ण हुए पवित्र प्रसंग से दिगम्बर जैन इतिहास के पन्ने पर सुवर्ण अक्षरों से अंकित हो गया ।

पारसोला समाज ने उपस्थित संघ से अनुनय किया कि "आचार्य-देव! वर्षायोग सन्निकट है अतः इस वर्ष का चातुर्मास ससंघ यहाँ सम्पन्नकर हमें अनुगृहीत करें ।" समाज की प्रार्थना को स्वीकार करके

आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी को पारसोला में ही नूतन आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने ससंघ वर्षायोग स्थापित किया।

चातुर्मास के मध्य इन्दौर से श्री बाबूलालजी पाटोदी अपने दल-बल के साथ आचार्यश्री से विनती करने आये कि, "परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण परंपरा के पंचम पट्टाचार्य आगामी सन् १९९१ जनवरी माह में सम्पन्न होनेवाले (बड़वानी) बावनगजा महोत्सवमें संघ सहित पधारें। परम पूज्य आचार्यश्री विद्यानन्दजी महाराज की भी हार्दिक इच्छा है कि आप सम्मिलित हों।" इन्दौर समाज की इस प्रार्थना को सुनकर आचार्यश्री ने विचार करने का आश्वासन देकर श्री पाटोदीजी को आशीर्वाद प्रदान किया। बाद में, तत्कालीन परिस्थितियोंमें संघ के कुछ साधु ४०० कि.मी. की यात्रा करने में समर्थ नहीं थे सो महोत्सव में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी नहीं पहुँच पाए।

आचार्यपद के बाद आचार्यश्री वर्धमानसागरजी रत हैं अपने कार्यकलापों में। आचार्यत्व पाकर दूसरे भव्य जीवों को सन्मार्ग में लगाने, उनका मनुष्य जीवन सफल करनेवाली जिनेश्वरी दीक्षा देने का सुअवसर भी पारसोलामें ही आया। उनके करकमलों से प्रथम मुनि दीक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य मिला पिताश्री नवलचन्दजी और माता अमृतबाई के सुपुत्र श्री मूलचन्दजी को जो पारसोला के ही रहने वाले हैं। प्रथम आर्यिका दीक्षा ग्रहण की गौण्डा (महाराष्ट्र) गाँव के पिताश्री जिवसनजी छाबड़ा एवं माता श्रीमती चन्दूबाई की पुत्री ब्र. सुशीलाबाई ने। कार्तिक शुक्ला पंचमीको मुनि दीक्षा के बाद मूलचन्दजी बने मुनिश्री ओमसागरजी और सुशीलाबाई हो गई आर्यिका वैराग्यमतीजी।

कार्तिकी अष्टाह्निका पर्व में धूमधाम से कल्पद्रुम महामंडल विधान संघ सान्निध्यमें अनेक व्रतियों के साथ सम्पन्न हुआ। विधान पूर्ण होने के बाद एक विशेष घटना घटी। कुछ दिन पूर्व मंदिरजी से चोरी चले गए

उपकरण आदि चोर स्वयं रात्रिमें आकर श्रावक के घरमें आवाज लगाकर छोड़ गए, जिससे समाज में हर्ष की लहर व्याप्त हुई ।

जब मैं १९९० के सम्बन्ध में पारसोला समाज के लोगों से जानकारी लेने गया तब श्री पटवारीजी मीठालालजी कलावत, भँवर लालजी कोठारी, धनपालजी बगेरिया, दाड़मचन्दजी घाटलिया एवं अन्य नवयुवक, सब आचार्यपद समारोह के निर्णय से लेकर चातुर्मास पूर्ण होने तक की उक्त जानकारियाँ तेरह साल के बाद भी इस तरह दे रहे थे मानों कलकी ही बात हो । उनके हृदय और आँखों में प्रेम, वात्सल्य, करुणा, अहिंसा और सर्वोदय की भावना से लबालब भरे आचार्यश्री का स्थान अमिट है । आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के द्वारा आचार्यपद का पत्र लिखने से समारोह तक सारी जानकारी प्रतिष्ठाचार्यश्री हँसमुखजीसे भी प्राप्त हुई । वे घटनाक्रम के प्रत्यक्षदर्शी रहे ।

कल्पद्रुम विधान की समापना बेलामें संघ के सभी साधुओं ने पिच्छिका-परिवर्तन किया । पश्चात् संघने पारसोला से नरवाली-खमेरा होते हुए घाटोल की ओर विहार किया ।

आचार्यश्री के ससंघ आगमन से आमोद से भरे घाटोल मे धरियावद से कुछ युवक अपने मनोभावों को मूर्तिमान करने हेतु विनती करने आये । उन्होंने आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के चरणो मे नमित होकर कहा -

"भो आचार्यदेव !

हमने भाद्रपद मासमे अनन्तव्रत करनेका संकल्प लिया था, उसे १४ वर्ष पूर्ण हुए । सो व्रत का उद्यापन आपके ससंघ सान्निध्य में करने का हमारा भाव है अतः आपका मंगल विहार धरियावद की ओर हो, ऐसी प्रार्थना है ।"

वात्सल्यमयी आचार्यश्री ने प्रसन्नचित्त से सब को मंगलआशीर्वाद देकर आश्वस्त किया और कुछ दिन रुककर संघने खूंता होते हुए विहार

किया धरियावद की ओर।

उसी समय किसी घर से रेडियो पर गूंजता साहिर लुधियानवी का यह शेर...... सुनाई दिया -

"हजार बर्फ गिरे, लाख आंधियाँ उठे,
वो फूल खिल के रहेंगे जो खिलनेवाले हैं।"

यँह शेर मानों आचार्यश्री के गृहस्थ और साधक जीवन का अर्क पेश कर रहा है।

संघ धरियावद पहुँचा। वहाँ आचार्यश्री पुष्पदंतसागरजी महाराज के ससंघ आगमन से दोनों संघों के वात्सल्य मिलन के दृश्य मनोहारी रहे। पंडितजी श्रीहँसमुखजी के मार्गदर्शन में अनन्तव्रत उद्यापन उत्सव सानन्द सम्पन्न होते ही आचार्यश्री पुष्पदंतसागरजी महाराज ससंघ विहार कर गए। कुछ दिन और रुककर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज का संघ अतिशयक्षेत्र देवगढ़ के दर्शनकर शांतिनाथतीर्थ (प्रतापगढ़) पहुँचा। शांतिनाथतीर्थ वो जगह है जहाँ परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज ने ई. सन् १९३६ का चातुर्मास संपन्न किया था। अपने दादागुरु के पाद-पंकजसे पवित्र धरा पर डग धरते और क्षेत्र के दर्शन करते ही आचार्यश्री वर्धमानसागरजी आह्लादित हो उठे। यहाँ से, अपने दीक्षागुरु के साथ ई. सन् १९८३ का वर्षायोग जहाँ पूर्ण किया था ऐसी निकटस्थ धर्मनगरी प्रतापगढ़ में आठ दिनके वास्तव्य के बाद, फाल्गुन माह का अष्टाह्निका पर्व आजाने से संघ पुन: शांतिनाथतीर्थ आया। नंदीश्वर द्वीप के अकृत्रिम चैत्यालयों में बिराजमान भव्यातिभव्य रत्नों के जिनबिम्बों के साक्षात् दर्शन भी सम्यक्त्व-प्राप्ति में कारण बनते हैं, ऐसी नंदीश्वर विधान महापूजा अपने सान्निध्य में हर्षोल्लास से पूर्णकर संघ पुन: प्रतापगढ़, धरियावद, भीण्डर होता हुआ पहुँचा अणिन्दा पार्श्वनाथ।

यहाँ गींगला ग्राम के जैन समाज के पंच, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा

हेतु ससंघ आचार्यश्री को निमंत्रण देने आये। बीसा नागदा समाज में किसी प्रसंग को लेकर सामाजिक एकता दीर्घकाल से चले आ रहे दो भागों से भी टूटकर तीन भागों में बँटी हुई है। मात्र गींगला में ही नहीं, आसपास के सारे गाँवों में भी यही परिस्थिति है। इसकी जानकारी आचार्यश्री को जब वे मुनि अवस्था में आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज के साथ गींगला पधारे थे तब से थी। सामाजिक अभ्युदयके लिए सामाजिक एकता के समर्थक हैं आचार्यश्री वर्धमानसागरजी। 'मित्ती मे सव्व भूएसु' की ध्वनि-तरंगें सदैव जिनके व्यक्तित्व में व्याप्त हैं ऐसे आचार्यश्री समाज-विघटनको भला कैसे बरदास्त कर सकते है ? सो उन्होने प्रतिष्ठा का आमंत्रण देनेवालों को कहा -

"समाज एक होगा तो मैं प्रतिष्ठा का आमंत्रण स्वीकार करूँगा।"

आज अणिन्दा पार्श्वनाथ में यह विवाद हितोपदेशी आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के ससंघ सान्निध्य में समाप्त होने से एवं आचार्यश्री द्वारा प्रतिष्ठा का निमंत्रण स्वीकार करने से गींगला समाज एकता के आनंद से भर गया। इससे स्पष्ट प्रतिभासित होता है कि आचार्यश्री का मानस साधर्मी वात्सल्य के लिए कितना चिन्तित रहता है।

"बिखराव से सनी जमीं पे, एकता के सुमन खिला दिये।
वात्सल्यवारिधि ने समाज संगठन के दीये जला दिये।"

सभी श्रावकों के हृदय में हिलोरें ले रहे है आचार्यश्री वात्सल्यवारिधि के रूपमें। यहाँ से संघ भीण्डर-कूण-पाणुन्द-खरका होकर गींगला पहुँचा।

आचार्यपद के पश्चात् यह प्रथम पंचकल्याणक। प्रथम तीर्थंकर देवाधिदेव भगवान आदिनाथ, बाहुबली एवं भरत भगवान स्थानीय मंदिर में बिराजमान हुए संस्तुत्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज द्वारा दिये गए सूरिमंत्रसे। समाज के अनुनय से संघका ग्रीष्मकालीन

वात्सल्य रहा करीब दो माह तक। आचार्यश्री का प्रथम आचार्यपदारोहण वार्षिक समारंभ आषाढ़ शुक्ला २ को समाज एवं संघने सानन्द संपन्न किया। उस समय गींगला तथा आसपास के गाँवों के लोग एवं सनावद से भी कुछ लोग पधारे अपने चहेते संत का आचार्य पदारोहण दिवस समारोह मनाने। सनावद से आये श्रावक सोच रहे हैं, यशवंतजी ने गहरे सोच के साथ विरक्ति से वैराग्य मार्ग का चयन किया, परिषहों को झेलते हुए प्रबल पुरुषार्थ से उस मार्ग पर चलते रहे और आज जैनत्व के शिखर पद पर आरूढ़ हुए उन्हें एकसाल पूर्ण हो गया। उनकी साधना, उनका वात्सल्य, उनकी करुणा, उनकी अहिंसा और उनका ज्ञान अब संसारी जीवों को धर्ममार्ग पर चलने की प्रेरणा प्रदान करता रहेगा। वात्सल्यवारिधि के अगाध वात्सल्यवारि में भीगते जन-जन, दो-दो प्रसंगो से लाभान्वित श्रावक सराह रहे है अपने सौभाग्यको।

सन् १९९१ के सन्निकट वर्षाकाल के लिए संघ यहाँ से विहारकर गुड़ल, गुड़ली, करावड़ होता हुआ पहुँचा अतिशयक्षेत्र अणिन्दा पार्श्वनाथ। आत्मार्थी आचार्यदेव के साथ मुनिश्री प्रमाणसागरजी, सौम्यसागरजी, चिन्मयसागरजी, ओमसागरजी आदि मुनिराज - प्रशान्तमूर्ति विदुषी आर्यिका जिनमतीजी, विशुद्धमतीजी आदि २१ आर्यिका माताजी, कल्याणोत्सुक ब्रह्मचारी सर्वश्री कजोड़ीमलजी, जवाहरलालजी, वाड़ीलालजी, चोखेलालजी, सोहनलालजी, कोमलजी एवं करीबन १३ ब्रह्मचारिणी बहनों से वटवृक्ष सा शोभित साधुसंघ। प्राकृतिक अतिशय क्षेत्र अणिन्दा पार्श्वनाथ में सीमित स्थान की वजहसे वृक्षों तले क्रियाएँ संपन्न करते साधुवृंद के दृश्य द्रष्टा के चित्त में सहज ही चतुर्थकाल की झाँकी कराते। उदयपुर, भीण्डर, गींगला, बाठेड़ा, बाठेड़ाकलां, खरका आदि निकटवर्ती गाँव-शहर के निवासी एवं सुदूरवर्ती स्थानों से दर्शनार्थ, धर्मश्रवणार्थ, आहारदानार्थ पधारे श्रावक ऐसे मनभावन दृश्यों को देखकर होते रहे अभिभूत।

वर्षायोग में आयोजित त्रिदिवसीय तत्त्व संगोष्ठी आनंदपूर्ण रही, प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाशजी, श्री मूलचन्दजी लुहाड़िया, पंडित श्री जवाहरलालजी, डॉ. श्री चेतनप्रकाशजी पाटनी आदि अनेक विद्वत्‌गण की उपस्थिति में। यहाँ का सीमितस्थान भी शोभायमान हो रहा था सुचारु व्यवस्था से। अतिशय क्षेत्र पर का चातुर्मास हराभरा बनारहा संयमसाधना, ज्ञानाराधना, प्रचार-प्रसार एवं धर्मप्रभावना की हरियाली से।

वर्षायोग पूर्ण होने के पश्चात् बाठेड़ाकलां (गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी महाराज की जन्मभूमि) मोड़ी, शिसवी, साकरोदा, लकड़वास, कानपुर होते हुए संघ पहुँचा उदयपुर के उपनगर अशोकनगर में। यहाँ से निकटस्थ आयड़ कोलोनी के वास्तव्य के बीच एक दिन मध्याह्न धर्मसभा में उमड़ पड़े उदयपुर के भक्तजन जहाँ चल रहा है आचार्यश्री का केशलुंचन। स्थानीय अतिथि विशेष के साथ मंचासीन है भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा के अध्यक्ष श्री निर्मलकुमारजी सेठी, श्री शांतिलालजी बड़जात्या, श्री कँवरीलालजी बोहरा आनन्दपुर कालू आदि विशिष्ट श्रेष्ठीजन। केशलुंचन समाप्त होते ही श्री निर्मलकुमारजी सेठी ने आचार्यश्री को ससंघ गिरनार यात्रा कराने का अपना मानस प्रकट करते हुए यात्रार्थ चलने हेतु अंत:करण से प्रार्थना की। जिसे संघने सानन्द स्वीकृति देते हुए योग्य मुहूर्त पर विहार के भाव व्यक्त किये। तीर्थवंदना के उत्सुक उपस्थित श्रावकगण आचार्यश्री की ससंघ सन्निधि मे तीर्थवन्दना करने के भाव से झूम उठे। कई लोगोने संघ के साथ जाने का अपना मानस बनाया। संघ उदयपुर के उपनगरों में विहार करता हुआ हूमड़भवन पहुँचा। इसी बीच श्री संतोषलालजी महेता, श्री प्रभुलालजी, श्री त्रिलोकचन्दजी आदिने उमंगपूर्वक गिरनार-यात्रार्थ संघ की सारी व्यवस्था भी बनाली।

एक सप्ताह बाद ही आया वह शुभ दिन माघ शुक्ला १३,

रविवार दिनांक १६ फरवरी, १९९२ का । ब्रह्मचारिणी भावनाबहन के मंगलाचरण से शुरू हुई प्रात:कालीन धर्मसभा में उदयपुर, भीण्डर, पारसोला आदि कई स्थानों के दिगम्बर जैन समाज के अग्रणी के साथ श्री निर्मलकुमारजी सेठी ने आचार्यश्री के चरणों में आज की मंगलमय बेला में गिरनारजी तीर्थक्षेत्र की ओर वंदनार्थ विहार करने की विनती की । भावनगर (गुजरात) से पधारे श्री पुनमचन्दजी शाहने अपनी सुपुत्री ब्रह्मचारिणी भावनाबहन के साथ गुजरात प्रांतीय सिद्धक्षेत्रों की वंदनाहेतु सविनय अनुनय किया और संघ के साथ विहार के भाव व्यक्त किये । अपने मनोभावो को व्यक्त करते हुए श्री महावीरजी मिंडा, श्री संतोषलालजी महेता के हृदय से उद्‌गार निकले...

"आचार्यश्री की ससंघ गिरनार यात्रा में हम भी साथ हैं ।"

इस धर्मसभा मे श्री महावीरजी मिंडा, श्री सेठीजी, आर्यिका श्री विशुद्धमतीजी और आर्यिका श्री जिनमतीजी के वक्तव्य के अनन्तर आचार्यश्री ने अपने उपदेश में कहा -

"आत्मप्रभावना से धर्मप्रभावना होती है और आत्मप्रभावना होती है रत्नत्रय से । तीर्थवंदना जानेका कारण है रत्नत्रय की अभिवृद्धि । इस यात्रा में तीर्थवंदना-दान-पूजन-भक्ति-तप आदि से धर्मप्रभावना करते रहेंगे श्रावकजन ।"

गिरनार तीर्थक्षेत्र को लक्ष्य बनाकर मध्याह्न १२-१५ को मंगल विहार हुआ सर्वऋतु विलास के महावीर मंदिर की ओर । समाज के आग्रह से कुछ दिन संघ रुका । इसी बीच १९ फरवरी सायं ७-२५ पर बाँसवाड़ा में आचार्यश्री श्रेयांससागरजी महाराज की समाधि हुई, यह समाचार मिलते ही २० फरवरी प्रात: श्रद्धांजलि सभा में पंडित श्री जवाहरलालजी, आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी, आर्यिकाश्री जिनमतीजी एवं आचार्यश्री ने परमपूज्य आचार्यश्री श्रेयांससागरजी महाराज के गुणों का स्मरणकर अपनी श्रद्धांजलि समर्पित की । वे इसी आचार्य

परंपरा में दीक्षित हुए थे सन् १९६५ में आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से ।

आर्यिकाश्री जिनमतीजी एवं आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी के निर्देशन में वृद्ध आर्यिका समूह (१२ आर्यिका) को छोड़कर आचार्यश्री ४ मुनिराज, मुनिश्री प्रमाणसागरजी, श्री सौम्यसागरजी, श्री चिन्मयसागरजी, श्री ओमसागरजी एवं १० आर्यिकाओं आर्यिकाश्री गुणमतीजी, श्री शीतलमतीजी, श्री विपुलमतीजी, श्री सुवैभवमतीजी, श्री सुदर्शनमतीजी, श्री प्रशांतमतीजी, श्री सौम्यमतीजी, श्री चैत्यमतीजी, श्री अनन्तमतीजी और श्री वैराग्यमतीजी के साथ सर्वऋतु-विलास से हिरणमगरी सेक्टर-११ होते हुए गोवर्धन विलास के काया गाँव पहुँचे । काया गॉव मे संघपति श्री सेठीजी अपने साथियों के साथ व्यवस्था सम्हालने पधारे उन्होंने संघ के साथ चल रहे श्रावको से पूरी जानकारी ली ।

श्री सेठीजी साधु-सेवा में श्रेष्ठ और वैयावृत्ति के समुत्सुक शिखर । तन, मन, धन से सदा समर्पित श्रावक । परमपूज्य आचार्य चारित्र-चक्रवर्ती श्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण आचार्य परंपरा के संघ के उत्कर्ष हेतु सदा उत्सुक । यहाँ से बारापाल टी. डी. होते हुए पड़ना पहुँचे । पड़ना से परसाद के मार्ग मे स्वयं सेठीजी संघ के साथ पैदल चले । उदयपुर के सेक्टर-११ से आचार्यश्री ने संघ मे "सर्वार्थ सिद्धि" और "मूलाचार" ग्रंथों का स्वाध्याय प्रारम्भ किया था जो सभी जगह यथाशक्य विहार में चलता रहा । परसाद में आहारचर्या से पहले आचार्यश्री का धर्मोपदेश हुआ ।

इस धर्म-तीर्थयात्रा मे अपने प्रवचनों में माँ जिनवाणी की आराधना कर रहे हैं आचार्यश्री । उनके प्रवचन में जनवाणी या निजवाणी को स्थान कहाँ ? उनकी वाणी मे तो हैं मात्र जिनवाणी । जैन तो जैन, अजैन भी आतुर हैं उनकी प्रवचनगंगा में बहते धर्मामृतका पान करने

को। सरल प्रभावक प्रवचनशैली कर देती हैं सबको मंत्रमुग्ध। जगह-जगह पर श्रावकों के शीश विनत हैं संघको ठहराने को, लेकिन आचार्यश्री पुरुषार्थी हैं अपना लक्ष्य पाने को।

पसाद से पीपलीव होता हुआ संघ पहुँचा देश प्रसिद्ध अतिशयक्षेत्र ऋषभदेव। भगवान श्रीऋषभदेव की अतिशययुक्त मनोहारी मूर्ति के दर्शन, भट्टारक श्री यशकीर्ति गुरुकुल में रत्नप्रतिमा के दर्शन एवं विशाल सरस्वती भवन ने उल्लसित कर दिया सबके उरको। खेरवाडा होता हुआ संघ उत्तरभारत में प्रसिद्ध परमपूज्य आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज (छाणी) की जन्मभूमि छाणी पहुँचा। पहाड़ा होते हुए फाल्गुन शुक्ला ३ को प्रात:कालीन बेला में राजस्थान की सीमा पारकर पाँव रखे गुजरात के प्रवेशद्वार विजयनगर में।

भारत के पश्चिमांचल में अवस्थित राजकीय, ऐतिहासिक सामाजिक एवं धार्मिक योगदान की यशोगाथा दशों दिशाओमें फैलाता हुआ गुजरात प्रांत, अपनी धरती पर बाईसवें तीर्थकर भगवान श्री नेमिनाथ के पावन पाँचों कल्याणकों से पवित्र। परमपूज्य धरसेनाचार्य के द्वारा श्री पुष्पदंत एवं श्री भूतबली महाराज के पुरुषार्थ से श्रुत षट्खंडागम के रूप में लिपिबद्ध होने से प्रसिद्ध। श्री क्षेत्र तारंगा, श्री क्षेत्र शत्रुंजय और श्रीक्षेत्र पावागढ़ जैसे सिद्धक्षेत्र, विघ्नहरा पार्श्वनाथ चिंतामणि पार्श्वनाथ जैसे अतिशय क्षेत्र से ख्याति प्राप्त। वर्तमान मुनि -परम्परा को पुन:जीवित करनेवाले परमपूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी जैसे दिग्गज आचार्य के तीन-तीन वर्षायोग-विहार से गरिमावान। सत्य अहिंसा के पुजारी महात्मा गांधी व श्रीमद् राजचन्द्र जैसे चिंतनशील नररत्नकी जन्म एवं कर्मभूमि से महिमावान। क्या-क्या नहीं दिया इस धरा ने मानव जाति को! ऐसी गुजरात की भूमि आज और भी गरिमा प्राप्त कर रही है आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के चरण-स्पर्श से।

विजयनगर और आसपास के गाँवों के श्रावक दूर से गाजे-बाजे के साथ अगवानी कर आचार्यश्री को ससंघ ले आये नगर में। पांडाल में उच्चासन पर बिराजित हैं आचार्यश्री ससंघ। गुजरात के नगर-गाँव के श्रावक पधारे हैं विजयनगर में। धार्मिक मेले जैसे माहौल में केशलुंचन हुआ मुनि श्री सौम्यसागरजी का। पश्चात् आचार्यश्री ने समाज की धर्मभावना को सराहते हुए धर्मोपदेश में कहा -

"संसारी प्राणी संसार के रंगमंच पर रागादिपरिणति से उपार्जित कर्मों के फलस्वरूप चार गतियो मे जन्म लेकर, विविध रूपों को धरकर नाटक करता है। मिथ्यात्व के कारण आत्मदर्शन और अध्यात्म से दूर होता है। संसार में सुखकी कल्पना यह जीव करता है किन्तु यहाँ दुःख मेरु प्रमाण और सुख सरसों बराबर है।"

बाहर से पधारे श्रावकगण अपने-अपने गाँव-नगर मे विहार के कारण दर्शाकर उस ओर विहार के लिए प्रार्थना करने लगे। आचार्यश्री समझते है श्रावकों की मनःस्थितिको। विजयनगर के भावुक भक्त भी प्रयत्नशील है संघ को अधिक रोकने हेतु। लेकिन साधु रुकते कहाँ है ? चलते रहना ही उनका धर्म है।

विजयनगर से संघ का विहार हुआ प्राकृतिक सौदर्य के बीच बसे अतिशय क्षेत्र पाल की ओर। गुजरात के होते हुए सारे संसार के बने नाथ भगवान श्रीनेमिनाथकी प्राचीन विशाल प्रतिमाजी के अभिषेक दर्शन के साथ जिनेन्द्रभक्ति मे भावविभोर हुआ पूरा संघ। यहाँ से प्रातः टाकाटूंका पहुँचकर सुमतिनाथ जिनमंदिर मे प्राचीन प्रतिमाजी के दर्शन किये। यहाँ परमपूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के शिष्य द्वय मुनिश्री वीरसागरजी एवं आदिसागरजी महाराज ने वि. सं. १९९८ में चातुर्मास किया था और आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज की क्षुल्लक दीक्षा भी श्री वीरसागरजी महाराज के कर-कमलों से यहाँ हुई थी। इस जानकारी से संघ पुलकित हुआ। धर्मोपदेश में जिनालय

के शिखर, ध्वजा, कलश एवं गर्भगृह का माहात्म्य दर्शाते हुए जिनदर्शन-महिमा पर आचार्यश्री का प्रभावक प्रवचन हुआ।

बावन जिनालयों के कारण प्रसिद्धनगर भिलोड़ा में वि. सं. १६२७ से १९२८ तक की प्रतिमाओं और कीर्तिस्तंभ के दर्शनकर अतिशय क्षेत्र चिन्तामणि पार्श्वनाथ होता हुआ संघ आया महु। यहाँ आचार्यश्री वासुपूज्यसागरजी महाराज ने संघ के साथ यथोचित समाचार विधि सम्पन्न करके संघकी मंगलमय यात्रा की शुभ कामना की। महु में वि. सं. १९९३-९४ में चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज के शिष्य आचार्य श्री कुंथुसागरजी महाराज का ११ साधुओं समेत चातुर्मास हुआ था। यहाँ से संघ पहुँचा मोटा कोटड़ा। परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी एवं आचार्यश्री कुंथुसागरजी महाराज के विहार से पावन विहार स्थली पर संघ को अतीव आनंद का अनुभव हुआ। यहाँ पंडित श्री बंशीधरजी शास्त्री - सोलापुर द्वारा लिखित, आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की जीवनी जन्मकुण्डली सहित मिली। पूर्व मे अज्ञात इस पुस्तक को रखलिया साथ, अपूर्वनिधि मानकर। मोटा कोटड़ा में सलाल, पोसीना और गांधीनगर के श्रावकगण अपने-अपने गॉव में पधारने की प्रार्थना लेकर आये आचार्यश्री के सम्मुख। यहाँ से नवा होता हुआ संघ हिमंतनगर आया, जो कपिलभाई कोटड़िया (क्षु. चित्तसागरजी) के कारण परिचित सा है सबके लिये। यहॉ के तीन जिनालयों में निकटवर्ती गाँव साबला में बाँध-बँधने से वहाँ के जिनालय की प्राचीन प्रतिमाएँ लाई गई हैं जो प्राय: वि. सं. १६०० के आसपास की हैं और प्रतिष्ठित होकर स्थापित हैं भट्टारक श्री सकलकीर्तिजी की परम्परा में।

आचार्य श्री शांतिसागरजी और आचार्य श्री कुंथुसागरजी के बाद परम्परा का यह संघ गुजरात के इन सीमावर्ती गाँव-नगरों में प्रथमबार आया है। आचार्यश्री अपनी निर्ग्रंथ दीक्षा के पश्चात् प्रथमबार

ससंघ पधारे हैं अत: भारी उत्साह है श्रावकों में। आचार्यसंघ के दर्शन एवं आचार्यश्री के आध्यात्मिक प्रवचनों से आकर्षित श्रद्धावान श्रावक उत्सुक हैं आहारदान एवं वैयावृत्ति करने में। आगे-आगे के गाँवों से श्रावक आते ही रहते हैं। ईडर, तलोद, वदराड़ आदि गाँव के श्रावकों ने अपने गॉव पधारने हेतु आमंत्रण दिया। सहजता, सरलता, प्रभावक वक्तव्य, सभी के प्रति समान व्यवहार व असीम वात्सल्यने जन-जन के मानस में बिठा दिया आचार्यश्री को जिससे सभी के मन में आचार्यश्री के प्रति उमड़ता रहा अपनत्वका भाव। श्रावको के आग्रहपर थोड़ा सा रुककर सांत्वना देकर, उनकी भावनाओंको समझते हुए संघ चल देता है अपने गंतव्यकी ओर। यहॉ से संघ आया सलाल। श्री बाबुभाई कोटड़िया जो प्रमुख हैं, उन के साथ सलाल एवं समीपवर्ती गाँवों के श्रावको ने संघ की अगवानी की।

यहॉ धर्मसभा मे संघपति श्री निर्मलकुमारजी सेठी, श्री भरतकुमार जी काला, श्री सोभागमलजी कटारिया, श्री मीठालालजी कोठारी, गुणमालाबहन जवेरी आदि संघ के दर्शनार्थ पधारे। पेथापुर, गोरा, छाला, अहमदाबाद के श्रावको ने विशाल समूह मे आकर आचार्यदेव को अपने-अपने गॉव-नगर पधारने हेतु श्रीफल भेंट कर करबद्ध प्रार्थना की। संघस्थ मुनि श्री प्रमाणसागरजी के केशलोच के अनन्तर आचार्यश्री ने मंगल प्रवचन में कहा -

"आत्मतत्त्व कोरी चर्चा से नहीं उसमें चर्या करने से प्राप्त किया जाता है। संसारी प्राणी को राग-ममत्व का अजीर्ण हो रहा है अत: तत्त्वज्ञान औषधि के सेवन और चारित्र-संयम के पथ्यपालन से ही वह दूर होगा।"

सलाल से संघ प्रांतिज होता हुआ मजरा पहुँचा, यहाँ गुजरात के काँग्रेस मंत्री श्री गोविंदभाई आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। छाला, दशेला, आलमपुर होता हुआ संघ पहुँचा गुजरातकी राजधानी

गांधीनगर में ।

आचार्यश्री विहार में अपनी चर्या को सम्हालते हुए कभी-कभी एक गाँव में दो-दो प्रवचन करते हैं। धर्म-पिपासु गुजरात प्रांत के लोगों की बरसों की प्यास बुझाने के लिए ही उनका प्रबल पुरुषार्थ है क्योंकि गुजरात के लोगों ने केवल आत्मा की चर्चा सुनी है, उस आत्मतत्त्व को प्राप्त करने का पुरुषार्थ करनेवाले आचार्य अतीव अंतराल के बाद मिले हैं अत: उनकी जिज्ञासाका आचार्यश्री समाधान कर रहे हैं जिनवाणी से ।

गांधीनगर पहुँचते ही चैत्यालय के दर्शनकर, निर्माणाधीन भव्य जिनालय के सम्मुख प्रांगण में बने पांडाल में आचार्यश्री ने कहा -

"यहाँ नजदीक ही गुजरात विधान सभा भवन है । राजधानी से ही प्रांतवासियों की नीति-निर्धारण और भावी योजनाओं का चिंतन-विचार होता है । अत: हमारी मंगल कामना है कि गांधीनगर में निर्माणाधीन इस जिनालय का शीघ्र निर्माण हो और यह धर्म के प्रचार-प्रसार की राजधानी बना रहे ।" यहाँ से विहारकर संघ श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, कोबा आया । आचार्यश्री ने अपने प्रवचन में कहा कि -

"आज चलता-फिरता आश्रम (संघ) आपके आश्रम में आया है । जहाँ आत्म-सिद्धि के लिए सभी प्रकार के श्रम किये जाते हैं वही आश्रम है ।"

कोबा के अधिष्ठाता श्री आत्मानंदजी ने आचार्यश्री से गृहरत और गृहविरत साधक के सम्बन्ध में चर्चा की जिस पर 'सागर धर्मामृत' ग्रन्थ के आधार से विचार किया गया । कोबा आश्रम से सब साबरमती-धर्मनगर पहुँचे । यहाँ बड़वानी होकर संघपति श्री निर्मलकुमारजी सेठी संघ-दर्शनार्थ पधारे, विहारकी सारी व्यवस्था को उन्होंने समझा । साथ में हैं श्री संतोषलालजी महेता, श्री प्रभुलालजी, श्री प्यारेलालजी कोटड़िया और श्री प्रह्लादजी मिश्रा वैद्य । क्रिश्चियन मिशनरी के कार्यकलापों एवं उनके द्वारा धर्मपरिवर्तन कराने की चर्चा करते हुए श्री सेठीजी ने

कहा -

"हम अपने ही तीर्थों पर अपने ही धर्म के लोगों के लिए सभी प्रकार की प्राथमिक सुविधाएँ नहीं जुटा पाते और क्रिश्चियन लोग जंगलों में जनोपयोगी कार्य कर रहे हैं ।"

परमपूज्य आचार्यश्री ने अपने धर्मोपदेश में त्याग की महत्ता को प्राकृतिक दृष्टांतों से समझाते हुए कहा कि "यदि त्याग की भावना नहीं जगती है तो वृक्ष, बादल, कूप आदि से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए । वे नया अर्जन करते अवश्य हैं किन्तु संचय नहीं करते, समय आने पर छोडते हैं, नहीं तो जन-जन का जीवन कैसे चले ?"

साबरमती (धर्मनगर) से संघ अहमदाबाद शाहपुर अजितनाथ दि. जैन मंदिर मे पहुँचा । शाहपुर में चार दिनका वास्तव्य रहा । आचार्यश्रीने संघ सहित अहमदाबाद के विविध जिनालयों के दर्शन किये ।

आगमोक्त श्रमण सरणी के संवर्धक परमपूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण आचार्य परंपरा के वर्तमान आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज ससंघ प्रथमबार गुजरातकी औद्योगिक नगरी अहमदाबाद में पधारे हैं । बहुत बाते सुनी थी संघकी अहमदाबाद के श्रावकोंने । आज प्रत्यक्ष देखकर अनुभव कर रहे है श्रावक, आचार्य-संघ की चर्या, स्वाध्याय, तप, ज्ञान और उनके वात्सल्य को । जुट गए हैं श्रावक संघस्थ सभी की वैयावृत्ति में । संघ को आहारदान देकर अवर्णनीय आनंद से भरे श्रावक मग्न हैं धर्मश्रवण में ।

आज चैत्रकृष्णा नवमी, प्रथम तीर्थंकर भगवान श्री आदिनाथजी के जन्म-तप कल्याणक का महिमावान दिन । शाहपुर स्थित लालकाका हॉल, अहमदाबाद एवं आसपास के गाँवों के अध्यात्म पिपासु श्रावकों से खचाखच भरा है । इतने बडे हॉलकी जगह आज कम महसूस हो रही है । गुजरात राज्य के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री चिमनभाई पटेल के मुख्य

आतिथ्य में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज का अभिवन्दना समारोह आयोजित हुआ है। प्रारंभिक विधि के पश्चात् श्री ए. के. जैन ने अपने विचार रखे। समारोह के मुख्य वक्ता के रूपमें अपने विचार प्रकट करते हुए एवं आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के प्रति अपनी भक्ति-आस्था प्रगट करते हुए डॉ. शेखरचन्द जैनने कुछ दिन यहाँ और रुकने के लिए प्रार्थना की। इसमें अपनी भावना को जोड़ते हुए उपस्थित सभी श्रावकों ने आचार्यश्री के जयघोष में अपना सुर मिला लिया। समारंभ में श्री निर्मलकुमारजी सेठीने कहा -

"जैनों के परम आराध्य भगवान श्री नेमिनाथ को आदि लेकर करोड़ों मुनिराज की निर्वाणभूमि श्री गिरनारजी तीर्थक्षेत्र की वन्दनार्थ आचार्य संघ गुजरात आया है। प्रतिवर्ष अनेकानेक जैन यात्री श्री गिरनारजी तीर्थ पर आते हैं, किन्तु वहाँ अन्य लोगों के द्वारा यात्रियों को कष्ट होता है। उसके निवारण की व्यवस्था माननीय श्री चिमनभाई पटेल के मुख्यमंत्री काल में अवश्य होनी चाहिए।"

समारोह सभा में मुख्यमंत्री श्री पटेल ने आचार्य संघ की अभिवन्दना के बाद कहा कि, "कई सालों के बाद दिगम्बर जैन धर्म के प्रमुख आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज ससंघ हमारे गुजरात प्रांत मे जैनतीर्थो की वंदनार्थ पधारे हैं, यह हमारा सबका परम सौभाग्य है। गुजरात के नागरिक जीवन पर जैन समाज का अच्छा प्रभाव है। पर्यावरण के क्षेत्र में गिरनार का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। वह जैनों के बाईसवें तीर्थंकर भगवान श्री नेमिनाथ की निर्वाणभूमि है अतः वहाँ आध्यात्मिक पर्यावरण भी है। मैं यहाँ आया हूँ तो गिरनार का रास्ता अवश्य निकलेगा।"

आचार्यश्री ने अपने प्रवचन में कहा -

"बहुत लम्बे समय से गुजरात प्रांतवालों की प्रार्थना और आग्रह रहा कि हम गुजरात आयें। इसमें निमित्त हुई गिरनार यात्रा।

यहाँ से करीब ३३० कि. मी. की दूरीपर प्राणियों की जीवनरक्षा के लिए अहिंसा के आराधक विरक्तमना कुमार नेमिनाथ ने विवाह से मुँह मोड़कर मुक्ति-रमा का वरणकर गिरनार की ओर अपने कदम बढ़ाये। अहिंसा और सत्य के पुजारी महात्मा गांधी ने यहाँ जन्म लिया, वे साबरमती मे आश्रम बनाकर रहे और अहिंसा के बलपर भारत को आजादी दिलवाकर रहे। शिक्षा के क्षेत्र में गुजरात सरकार ने १२वीं कक्षा में मेढ़क काटना बंद करवाकर बहुत उचित कार्य किया है किन्तु इस महानगर मे १४-१५ कत्लखानो का होना आश्चर्य उत्पन्न करता है।"

शेष दिनों मे आचार्यश्री के प्रवचनों से लाभान्वित होता रहा श्रावक समाज। अहमदाबाद से सरखेज होते हुए विहार का क्रम जारी रहा। कही जंगल में तम्बू लगाकर वर्धमाननगर बनजाता, कहीं स्थानकवासी उपाश्रय, तो कहीं उपवन मे संघ ठहरता, बस, विहार ही विहार।

चोटीला से चलकर रामनवमी के दिन संघ बेटी गाँव पहुँचा। रावतभाई आयर के मकान मे संघ ठहरा। गॉव में तेज हवा सी बात फैल गई, आज रामनवमी के दिन भगवान राम सदेह अपने गाँव में आये हैं। देखते-ही-देखते पूरा गॉव इकट्ठा हो गया आचार्यश्री के दर्शन को। गॉववालो ने और रावतभाई ने सपरिवार संघ की श्रद्धापूर्वक भक्तिकर अपने जीवन को धन्य माना। यहाँ रुकने के लिए ग्रामवासियों के आग्रह पर ब्रह्मचारिणी भावना बहन ने गुजराती भाषा में समझाया कि समय कम है और गिरनारजी की यात्रा करनी है। संघ के साथ जयनाद की ध्वनि गुंजायमान करते सब साथ चले दूर तक।

बेटी गाँव से कुवाड़वा राजकोट होते हुए राजकोट से १७ कि. मी. सम्पूर्णानंद आश्रम मे संघ रुका जिसे राजकोट के श्री पोपटभाई ने बनवाया है। यहाँ सत्संग भवन मे सभी धर्मों के प्रमुख ग्रन्थराज विराजमान हैं। श्री पोपटभाई ने आचार्य श्री से ३-४ घन्टे तक आध्यात्मिक

चर्चा की । फलस्वरूप ज्ञानसुधाकर की अमिट छाप अंकित हो गई पोपटभाई के हृदय में ।

यहाँ से जेतपुर होते हुए पोलिस ट्रेनिंग सेन्टर पर संघ रुका । दीक्षित जीवन में प्रथमबार पोलिस ट्रेनिंग सेन्टर पर आचार्यश्री ने प्रवचन करते हुए कहा.....

"जो स्वयं को अनुशासित करता है वही दूसरों को अनुशासन में रख सकता है । स्वयं बुरी आदतों से बचें और समाज को बचायें ।"

मोटा कोटड़ा हो या महु, आलमपुर हो या अहमदाबाद, सत्संग भवन हो या पुलिस सेन्टर आचार्यश्री माँ जिनवाणी की अमूल्य रत्ननिधि लुटा रहे हैं चर्चा और प्रवचन के माध्यम से । जैन हो या अजैन, शिक्षित हो या अशिक्षित, युवक हो या प्रौढ़ सभी प्रभावित हैं गुजरात में आये प्रतिभावंत संत-समागम से । विशिष्ट व्यक्तित्व के धनी वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री शारीरिक अस्वस्थता जैसी बाधाओं को मानों नई ऊर्जा में परिवर्तित कर रहे है, अस्वस्थ होते हुए भी सभी भक्तों को उनके दर्शन, आशीर्वाद एवं उपदेश मिलते रहते हैं । उनकी स्फूर्ति, उनका उत्साह, उनका वात्सल्य संघ के अन्य साधु-साध्वियों के लिए उद्दीपन का कार्य कर रहा है ।

जूनागढ़ होता हुआ संघ आ पहुँचा श्रीक्षेत्र गिरनारजी की तलहटी में । देवाधिदेव भगवान श्री नेमिनाथजी की तप, केवलज्ञान एवं निर्वाणभूमि । श्री धरसेनाचार्य, श्री पुष्पदंत एवं श्रीभूतबली महाराज, श्री कुंदकुंदाचार्य एवं ७२ करोड़ ७०० मुनिराजों के चरणाम्बुजों से पवित्र धरा गिरनारजी में आचार्य श्री निर्मलसागरजी और गणिनी आर्यिका श्री विजयमती माताजी ससंघ विराजमान हैं । गणिनी आर्यिका संघ और आचार्यश्री प्रवेश के समय अगवानी हेतु आये ।

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी, संघस्थ मुनिराज, आर्यिकाएँ, गणिनी आर्यिकाश्री विजयमती माताजी का आर्यिका संघ, सभी ब्रह्मचारी,

ब्रह्मचारिणियाँ, राजस्थान और गुजरात के गाँव-नगरों से साथ आये श्रावकों के सकल संघने भगवान श्री नेमिनाथ एवं परम पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के जयघोष से पर्वत-यात्रा प्रारम्भ की । मार्ग में पड़नेवाले सभी स्थानों के दर्शन करता हुआ संघ पहुँचा श्री क्षेत्र गिरनारजी की प्रथम टोंक पर भगवान श्री नेमिनाथ के चरणों में । पहाड़ी पर संध्या की लालिमा से शोभित विशद विशाल अंबर, अंधकार के आगोश में समाहित होती हुई अवनि, तपस्वियों के तपोबल से परिपूत प्रशस्त वायुमंडल ऐसे वातावरण में समूह में की गई जिनेन्द्रभक्ति से सभी हो रहे हर्षित ।

रात्रि विश्राम के पश्चात् प्रात: संघ ने आगे की पर्वतीय यात्रा शुरू की । दूसरी और तीसरी टोंकपर क्रमश: भगवान श्री अनिरुद्ध और श्री शंभुकुमार के चरणों के दर्शनवंदन कर संघ पहुँचा सबसे ऊँची पाँचवीं टोक पर । देवाधिदेव भगवान श्री नेमिनाथ के चरण एवं प्रतिमाजी के दर्शन से गद्‌गद होते, भक्ति-पाठ स्तुति स्तवन में सराबोर हुए सब । पाँचवीं टोक से लौटते वक्त चौथी टोक पर श्री प्रद्युम्न भगवान की चरण वंदना हुई । पहली टोंक से पूर्व गौमुखी पर २४ भगवान के चरण वंदनकर संघ उतरा सहस्रावन में ।

वहाँ भगवान श्री नेमिनाथ के दीक्षाकल्याणक और केवलज्ञान कल्याणक स्थली के दर्शन-चरणवंदना हुई । गणिनी आर्यिका श्री विजयमती माताजी की आग्रहपूर्ण प्रार्थना पर केवलज्ञान कल्याणक स्थल पर प्रतीकरूप में चतुर्विध संघ को धर्मोपदेश देते हुए आचार्यश्री ने कहा -

"पूर्वोपार्जित कर्मोदय मे सभी अवस्थाओं में सभी के यथायोग्य पुरुषार्थ पूर्वक समताभाव बना रहे, सभी का शीघ्र कल्याण हो, यह तीर्थवंदना सभी के कर्मनिर्जरा और परिणामविशुद्धिका कारण बने ।"

संघपति श्री निर्मलकुमारजी सेठी की मातेश्वरी अपनी पुत्रियों

सहित संघ की सेवा में लगी हैं अहमदाबाद से। खुद सेठीजी भी पहुँच चुके हैं श्री गिरनारजी क्षेत्र पर। वयोवृद्ध मातेश्वरी परिवारजनों के साथ संघस्थ सभी को आहारदान देकर कृतकृत्य हो रही हैं अपने आपमें। सहस्रावन से तलहटी पहुँचकर मध्याह्न सामायिक के बाद आहार हुआ सबका। संघको श्री गिरनार तीर्थक्षेत्र की यात्रा करानेका स्वप्न साकार हुआ सेठीजीका। संघ की निर्विघ्न गिरनार वंदना के उपलक्ष्य में सेठी परिवार की ओर से ठाट-बाट से सम्पन्न हुआ श्री शांतिविधान। ब्रह्मचारिणी भावना बहन के पिताजी भावनगरवाले श्री पूनमचंदजी की ओर से संपूर्ण हुआ श्री ऋषिमंडल विधान।

तदनन्तर तीसरी वंदनार्थ आचार्यश्री निकले कुछ साधु-आर्यिका एवं श्रावकों के साथ। पाँचवी टोंक तक वंदना करके लौटते हुए पहली टोंक के पीछे वनप्रदेश में वह गुफा है जहाँ आचार्यश्री धरसेनस्वामी ने श्री पुष्पदंत - श्री भूतबली मुनिराज को षट्खंडागम की वाचना दी थी, ऐसी गुफा के दर्शनकर आचार्यश्री एवं सभी खो गए अतीत की इस घटना में। आचार्यश्री ने वाचना स्वरूप चर्चा रूप में तत्त्वदेशना प्रदान की।

कभी-कभार ही मिलते हैं सुखद-संयोग। वैशाख कृष्णा ९ का दिन - आचार्यश्री वर्धमान सागरजी के दीक्षागुरु पूर्वाचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज का समाधि दिवस और गणिनी आर्यिकाश्री विजयमती माताजी के संघ के पूर्वाचार्य, आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को गृहस्थावस्था में जिनके प्रथम दर्शन हुए थे ऐसे श्री महावीरकीर्तिजी महाराज का जन्म दिवस। ऐसे सुभग-समन्वय के समय श्रावक कैसे हाथ-पर-हाथ रखकर बैठ सकते थे? उदयपुर के श्रावकों की ओर से श्री चौंसठ ऋद्धिमंडल विधान का आयोजन हुआ। धर्मसभा में दोनों संघों ने दोनों महान् आचार्यों का स्मरणकर अपनी श्रद्धांजलि-विनयांजलि समर्पित की। वात्सल्यपूर्ण धर्ममय वातावरण में आठ दिन का वास्तव्य कब पूरा हुआ

पताही नहीं चला। पूरे समय एक ही संघ जैसी आभा उभरी। आर्यिकाश्री विजयमती माताजी ने क्षेत्र से ससंघ विहार किया। आचार्यश्री ने श्री गिरनार पर्वत की परिक्रमा पूर्ण होने के बाद विहार किया श्री क्षेत्र शत्रुंजय तीर्थ (पालीताणा) की ओर।

पालीताणा का नाम दिगम्बर जैन आम्नाय में शत्रुंजय तीर्थ है। शत्रुंजय पर्वत पर शांतिनाथ मंदिर में पहुँचकर चैत्यवंदन और निर्वाणकांड का पाठकर सिद्धभूमि की वंदना की। संघस्थ मुनि श्री चिन्मयसागरजी का केशलोंच हुआ। परमपूज्य आचार्यदेव ने अपने उद्‌बोधन में कहा -

"अष्टकर्मरूपी शत्रुओं को जीतकर जिन महापुरुषों ने इस क्षेत्र से अनंत सुख को प्राप्त किया उनमें आठ करोड़ मुनिराजों के अतिरिक्त, उपसर्ग विजेता पांडव श्री युधिष्ठिर, श्री भीम और श्री अर्जुन महामुनियों ने भी यहाँ से शाश्वत सुख प्राप्त किया अत: 'शत्रुंजय' यह नाम सार्थक है।"

श्रीक्षेत्र की दो वंदना हर्षोल्लास से पूर्ण हुई। परमपूज्य आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज के तृतीय समाधि दिवस पर मुंबई प्रवासी श्री महेशभाई धामी द्वारा आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के ससंघ सान्निध्य में चौंसठ ऋद्धि विधान का आयोजन हुआ। अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए आचार्यश्री वर्धमानसागरजीने एवं संघस्थ सभी ने उनके द्वारा किये गए जिनधर्म प्रभावक कार्योंका स्मरण किया। तदनन्तर आचार्यश्री के शिक्षा-गुरु आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज के व्यक्तित्व विशेष की स्मृतियाँ संजोकर उनका समाधि-दिवस मनाया गया।

पालीताणा से सोनगढ़ के परमागम मंदिर के दर्शनकर संघ पहुँचा भावनगर हुम्मड डहला दिगम्बर जैन मंदिर में। यहाँ दिल्ली से श्री रूपचंदजी कटारिया संघ दर्शनार्थ पधारे। सात दिवसीय प्रवास के

दौरान तीन दिन तक समयसार ग्रंथ के संवर-निर्जरा-मोक्ष, पुण्य-पाप अधिकार की मुख्य गाथाओं का अवलोकन किया गया। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी का केशलोंच हुआ। घोघा अतिशयक्षेत्र के दर्शनकर संघने विहार किया सिद्धक्षेत्र पावागढ़ की ओर। बीच में धवल-जयधवल, महाधवल ग्रंथों की महापूजा और श्रुतावतार पर आचार्यश्री के मांगलिक - उद्बोधन एवं मूलाचार ग्रंथ के स्वाध्याय द्वारा श्रुतपंचमी का पावन पर्व मनाया गया।

गुजरात प्रांत स्थित एक और सिद्धक्षेत्र है पावागढ़, जहाँ से पाँच करोड़ मुनिराज एवं श्री राम पुत्र लव और कुश को सिद्धत्व की प्राप्ति हुई थी। परम पूज्य आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज ने ई. सन् १९३९ का चातुर्मास भी यहाँ किया था। भीषण गरमी में पर्वतीय मंदिरों की वंदनार्थ न जाने के लिए श्रावकों द्वारा की गई विनती को अस्वीकार कर संघ निकला धर्मशाला से। मूल मंदिर के दर्शनोपरान्त निकटवर्ती पार्श्वनाथ मंदिर के दर्शन कर ही रहे हैं कि अचानक न जाने कहाँ से काले बादल उमड़-घुमड़कर छा गए और जोरों की वर्षा होती रही करीब २०-२५ मिनट तक। श्रावकगण स्तब्ध। यह कुदरत का कैसा करिश्मा! शीतलता छा गई वातस में। प्रकृतिने वृष्टिकर परिताप को पलट दिया आह्लादकता में। पर्वतपर संघ के आगे बढ़ते रुक-रुककर बूंदा-बांदी होती रही। अपूर्व चैत्यवंदन, प्रतिक्रमण, सामायिक एवं पंचस्तोत्र पूर्वक जिनभक्ति से जिनालयों के दर्शन किये। रात्रि विश्राम पर्वत पर ही हुआ। अत्यंत भक्ति पूर्वक पावागढ़ सिद्धक्षेत्रकी दो वन्दनाकर संघ विहारकर पहुँचा तलोद।

तलोद में श्री बेतालीस दशाहुम्मड़ दिगम्बर जैन समाज के करीब २०० परिवार हैं। वहीं आया आषाढ़ शुक्ला २ का दिन। तलोदवासियों ने आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज का द्वितीय आचार्य पदारोहण महोत्सव अत्यंत प्रभावना पूर्वक मनाया। यहाँ

तारंगा सिद्धक्षेत्र कमेटी के सदस्यों के साथ गुजरात प्रांत के विशिष्ट व्यक्तियों ने आचार्यश्री के चरणों में श्रीफल भेंटकर तारंगा सिद्धक्षेत्र पर चातुर्मास-स्थापन हेतु अनुनय किया। संघ की स्वीकृति प्राप्त होते ही सारी सभा मे सानन्द आचार्यश्री की जयकार होती रही।

तलोद से विहारकर संघ ईडर होता हुआ टींबा पहुँचा। यहाँ संघ की ९ आर्यिकाएँ जो गिरनार यात्रा में शामिल नही थीं, उदयपुर में ही रुकी थीं वे जिनमती माताजी के साथ संघ में आ मिलीं। टींबा से विहारकर प्रात: ७-३० बजे संघ श्रीवरदत्त - सागरदत्तादि साढ़े तीन करोड़ मुनिराजों की परमपावन सिद्धभूमि श्री तारंगाजी क्षेत्र पर पहुँचा। तलहटी के दोनो ओर खड़ी सिद्धशिला और कोटिशिला नामक अरवल्लीकी पहाडियॉं, जिनका कंकर-कंकर शंकर है, ऐसे श्री तारंगाजी सिद्धक्षेत्र में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने ससंघ प्रवेश किया। वातावरण जयनाद से निनादित होना स्वाभाविक है। प्रकृति की हरीतिमा की प्रसन्नता प्रकृतिपुरुष के आगमन पर मुखरित है। पाताल में प्रवाहित पानी लालायित है महामुनि के पादप्रक्षालन को। बरसते बादलकी बौछारें उत्सुक हैं अभिषेक से अपनी अभिवंदना अभिव्यक्त करने को। आह्लादक हवाके झोंके आनंदित हैं दशकों के बाद मिले सुगंधित संस्पर्श से। भूमि का कण-कण रोमांचित है पावन पादाम्बुजों के स्पर्शसे। गगन में विचरते विहग व्यक्त कर रहे हैं विशिष्ट आनंद अपनी चहचहाहटसे। रात्रि में व्याघ्र की गर्जना द्योतक है उनके अभिवादन की। उतावले हैं सब नख-शिख निर्ग्रंथ गुणवैभव आचार्य श्री वर्धमानसागरजी ससंघ का सत्कार करने को।

भगवान संभवनाथ की संगमरमर की प्रतिमा के भाव-भक्ति से दर्शन कर प्रमुदित हुए सब। दूसरे दिन आर्यिकाश्री प्रशान्तमतीजी एवं श्री अनंतमतीजी ने राजस्थान में फलासिया में विराजित आर्यिका श्रीविशुद्धमती माताजी के पास चातुर्मास-स्थापन हेतु विहार किया।

श्रमण एवं श्रावक धर्मउद्धारक, चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की पावन अक्षुण्ण आचार्य परंपरा में उनके अतिरिक्त दूसरे किसी भी आचार्यश्री ने सिद्धक्षेत्र पर चातुर्मास स्थापित नहीं किया था। आचार्यश्री वर्धमानसागर जी का मुनि दीक्षा के पश्चात् यह प्रथम सुअवसर है सिद्धक्षेत्र भूमि पर चातुर्मास स्थापनका। गुजरात के सौभाग्यशाली धर्म-पिपासु श्रावक, साधु संघ की सेवा शुश्रूषा में संलग्न होकर धर्म पीयूष का पान करते रहे पूरे वर्षाकाल तक।

चातुर्मास के दौरान क्षेत्र पर व्यवस्था में लगे हैं माननीय श्री बाबुलालजी कोटडिया, श्री बाबुलालजी गांधी, श्री भोगीलालजी, युवा कार्यकर्ता श्री प्रदीपजी कोटडिया, श्री चंदुलालजी शाह, श्री नवनीतलाल शाह, श्री शांतिलालजी जैन, श्री सोभागमलजी कटारिया, श्री हरप्रसादजी जैन और श्री दयाचंदजी जैन अपने तनमनधन से।

कुए मे पानी कम है सो चिंतित हैं श्रावक, क्या होगा ? आचार्य श्री के आगमन के दो-तीन दिन बाद ही मूसलाधार वर्षा हुई। कुआ, तालाब, बावड़ी आदि भर गए पानी से और व्यवस्थापकों के चित्त भर गए प्रसन्नतासे। ऐसा ही हुआ था सलाल और रोजड़ गाँव में। शाम को श्रावक देखते हैं कुए में पानी नहीं हैं, सोचते है आगे जाकर चौका लगाना पड़ेगा। सुबह देखते हैं कुए में पानी आ गया। पावागढ़ में भी पहाड़ पर जाते समय उग्र आतप मे एकाएक उमड़कर आये बादलों ने बरसकर पृथ्वी और पहाड़ को कर दिया शीतल और श्रावकों को कर दिया निश्चिंत। इसके पीछे क्या रहस्य है ? करुणानिधि आचार्यश्री और उनके संघस्थ सभी साधुगण शुद्ध जल का उपयोग करनेवालों से ही आहार ग्रहण करते हैं, स्वयं कुए के पानी का ही उपयोग करते हैं क्योंकि उनके करुणार्द्र हृदय में सभी जीवों के प्रति समान प्रेम है, सभी जीवों को आत्मवत् जानते हैं, मानते हैं। जलकायिक जीवों की विराधना

से खुद तो दूर रहते है और श्रावकों को भी दूर रहने को प्रेरित करते हैं। ऐसी महान् करुणामूर्ति को उनके उपकार का बदला दे रहे हैं शायद जलकायिक जीव। यह प्रतिफलन है वात्सल्य का। न यह चमत्कार है न मंत्र-तंत्र। अगर चमत्कार है तो 'मित्ती मे सव्व भूएसु' मंत्र का।

चातुर्मास के दौरान आये अनेक पर्व-उत्सवों का आयोजन होता रहा। आचार्यश्री एवं संघस्थ सभी के धर्मोपदेश, तत्त्वचर्चा एवं शास्त्र-स्वाध्याय का भरपूर लाभ मिलता रहा गुजरातवासियों को। षोड़शकारण पर्व में संघस्थ मुनि श्री ओमसागरजी महाराज ने ३२ उपवास किये। दशलक्षण महापर्व मे आचार्यश्री ने तत्त्वार्थसूत्र के दशों अध्यायों का विवेचन किया। संघस्थ त्यागी गण एवं आचार्यश्री के दशधर्मो पर प्रवचन हुए। चातुर्मासकाल में श्रीमद् राजचंद्र आश्रम कोबा से श्री सानेजी के साथ आश्रम में साधना रत भाई-बहन क्षेत्रपर आकर संघ सान्निध्य में त्रिदिवसीय सत्संग से लाभान्वित हुए। संघस्थ मुनिश्री ओमसागरजी और आर्यिका श्री भद्रमती माताजी की समतापूर्वक सल्लेखना सम्पन्न हुई। चातुर्मास समापन के समय जम्बूद्वीप महामंडल विधानपूजन एवं क्षेत्र पर विराजमान भगवान श्री बाहुबलीजी का महामस्तकाभिषेक परिपूर्ण हुआ।

महामस्तकाभिषेक की बात चली तब आचार्यश्रीने कहा -

"सन् १९९३ का श्रवणबेलगोला का महामस्तकाभिषेक निकट है पर वृद्धसाधु-साध्वियो का बड़ा समूह संघ में है और २००० कि. मी. की लम्बी दूरी। संघ कब और कैसे पहुँचे ? श्रवणबेलगोला के भगवान श्री बाहुबली के दर्शन और मस्तकाभिषेक का सुयोग तो जीवन में कब मिलेगा ? क्या पता ? अत: बाबुभाई ! हम तो श्री तारंगाजी क्षेत्र के श्री बाहुबली भगवान के मस्तकाभिषेक को ही श्रवणबेलगोला के श्री बाहुबली भगवान का महामस्तकाभिषेक मानकर चित्त में संतुष्टि कर लेंगे।"

आचार्यश्री की उक्त मनोभावना को ध्यान में रखते हुए श्री तारंगा जी सिद्धक्षेत्र के पदाधिकारियों ने बड़े वैभव के साथ श्री बाहुबली भगवान का मस्तकाभिषेक महोत्सव आयोजित किया ।

प्रातः स्मरणीय आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की ससंघ चातुर्मास स्मृति को चिरंजीवी रखने हेतु यहाँ स्थित स्वाध्याय भवन के नवीनीकरण का संकल्प लिया श्रावकों ने । आज स्वाध्याय भवन अपने नवीन रूप से स्थित है श्री तारंगाजी सिद्धक्षेत्र पर । चातुर्मास में संघ परमपूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के साथ पूज्य मुनिश्री प्रमाणसागरजी, पूज्य मुनिश्री सौम्यसागरजी, पूज्य मुनिश्री चिन्मय सागरजी, पूज्य मुनिश्री ओमसागरजी, आर्यिका सर्वश्री जिनमतीमाताजी, भद्रमती माताजी, गुणमती माताजी, सिद्धमती माताजी, विमलमती माताजी, शुभमती माताजी, शीतलमती माताजी, विपुलमती माताजी, चेतनमती माताजी, सुवैभवमती माताजी, निःसंगमती माताजी, सुदर्शनमती माताजी, समतामती माताजी, अक्षयमती माताजी, अध्यात्ममती माताजी, सौम्यमती माताजी, चैत्यमती माताजी, वैराग्यमती माताजी साथ में ११ ब्रह्मचारी ब्रह्मचारिणियों से शोभायमान रहा ।

श्री तारंगा सिद्धक्षेत्र से वड़ाली, खेड़ब्रह्मा होता हुआ संघ देरोल पहुँचा ।

देरोल से ४ कि. मी. की दूरी पर है लक्ष्मीपुरा कंपा, छोटासा गाँव । यहाँ के श्रद्धासभर पटेल बांधव आचार्यश्री के दर्शन करने और उनके श्रीमुखसे बहती गंगाधारा सी पवित्र वाणी सुनने और आचार्यश्री को भक्तिप्रसून अर्पणकर अपने गाँव में पधारने हेतु बारबार प्रार्थना करने आ चुके हैं श्री तारंगाजी क्षेत्र पर । आज भी सभी मिलकर आये हैं आचार्यश्री को अपने गाँव लिवालेने । विशिष्ट अनुनय से अपने गाँव आने की अंतःकरण से अरज की । आखिर भक्तों की भक्ति रंग लाई । पटेल बंधुओंकी भक्ति, तीव्र इच्छाशक्ति एवं समर्पण भाव को देखकर

दया के सागर आचार्यश्री का दिल द्रवीभूत होते ही उन्होंने कहा - "देरोल से लक्ष्मीपुरा के बीच नदी है, कैसे चलेंगे ?"

यह सुनते ही एक युवा भक्त ने कहा -

"महाराज जी ! हम अपने कंधों पर आप सबको बिठाकर ले जाएंगे ।"

यह सुनते ही उपस्थित सभी के चेहरे पर हास्य झलक आया । लक्ष्मीपुरावालो ने हाथ जोड़कर कहा -

"महाराज जी ! भगवान राम के लिए हनुमानजी आदि भक्तों ने समुद्र मे पुल बनाया था वैसे ही आचार्य भगवंत हम भी हमारे श्री रामजी के लिए नदी पर पुल बनवायेंगे । फिर आपको लक्ष्मीपुरा आने की कृपा करनी पड़ेगी ।"

वास्तव में, आचार्यश्री के प्रति अपनी अनन्य भक्ति को प्रदर्शित करते हुए लक्ष्मीपुरा के लोग लकड़ीका नया पुल बनाकर आचार्यश्री को ससंघ अपनी भक्ति की शक्ति के बलबूते पर लक्ष्मीपुरा ले ही गये । पुल परसे नदी पार होते ही रास्ते के दोनों ओर मानव कतारे लगी हुई है, जो दोनो हाथ जोड़कर संघ का अभिवादन करके गूंज उठा रही है जयकार की । बैन्ड-बाजे सहित नाचते-गाते ले गए संघ को अपने गॉव मे । जैनों द्वारा उचित आहारव्यवस्था के अनन्तर आचार्यश्री के प्रवचन-सत्संग का लाभ लिया गॉववालों ने । सभी को लगा आज पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी लक्ष्मीपुरा में पधारे है भगवान रामके रूपमे । एक-एककर आबालवृद्ध सभी आशीर्वाद पाकर अपने को समझने लगे भाग्यवान । लग रहा है वर्धमान होते रहते आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को जैन-अजैन सभी जात-पांत के मानव मान रहे हैं अपने उद्धारक, अपने भगवान । आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की वात्सल्य धाराएँ चारों ओर बाढ़ की तरह सब जीवो की तरफ बहने लगी हैं, कोई कूल-किनारा नही रहा । यहाँ से संघ वापस देरोल आया और रुकने के बाद कडियादरा

होता हुआ गोरल पहुँचा ।

गोरल गुजरात का छोटा सा गाँव, जो बीसवीं सदी के धर्मसूर्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के ई. स. १९३५ एवं १९४० के दो चातुर्मास संपन्न होने से और भी गौरवान्वित है । इस भूमि के स्पर्श से आचार्यश्री को अत्यधिक प्रसन्नता प्राप्त हुई । यहाँ से संघ विजयनगर पहुँचा, जहाँ फलासिया में वर्षायोग पूर्णकर संघस्थ आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी आदि चार आर्यिकाएँ भी आ गई । आचार्यसंघ के आगमन की स्मृति कायम करने को विजयनगर की समाजने संघ सान्निध्य में अतिथिभवन के निर्माण का शिलान्यास किया ।

४ फरवरी, १९९३ को श्रवणबेलगोला से महासभा अध्यक्ष श्री निर्मलकुमारजी सेठी के समाचार मिले कि -

"भट्टारक कर्मयोगी स्वामीजी श्री चारुकीर्तिजी ने भावना व्यक्त की है कि सन् १९९३ में सम्पन्न होनेवाले महामस्तकाभिषेक में आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज की उपस्थिति अवश्यमेव होनी चाहिए । यह महामस्तकाभिषेक चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण परंपरा के आचार्य संघ की प्रमुख सन्निधि में संपन्न होना चाहिए ।"

इस आग्रह के साथ श्री सेठीजी ने यह सूचना भेजी थी कि भट्टारक स्वामीजी का संदेशा लेकर मै और श्री नीरजजी आ रहे हैं ।

आचार्यश्री सोच रहे हैं मैंने अभी तक भगवान श्री गोम्मटेश्वर के दर्शन नहीं किये हैं, साथ में है महामस्तकाभिषेक का अमूल्य अवसर । क्षणभर के लिए लालायित हुए दर्शन को । दूसरे ही क्षण उन्होंने सोचा मेरे संघ में वयोवृद्ध मुनिआर्यिकाएँ हैं, उनसे इतना लम्बा विहार नहीं हो पाएगा । गांधीनगर के श्रावकों ने पंचकल्याणक हेतु कब से विनती कर रखी है सो श्रवणबेलगोला जाने की बात छोड़ देनी चाहिए । उन्होंने संघ के समक्ष अनिच्छा प्रगट कर दी । संघस्थ मुनि-

आर्यिकाओं ने आपस में बहुत विचार-विमर्श किया ।

वृद्ध आर्यिका माताजी ने बताया कि,

"आचार्यश्री ने अब तक भगवान श्री बाहुबली के दर्शन नहीं किये हैं और महामस्तकाभिषेक का पावन प्रसंग भी बारह वर्ष के अन्तराल के बाद आता है अतः आचार्यश्री ससंघ अवश्य श्रवणबेलगोला जाएंगे । क्या हमें सिर्फ अपना ही सोचना है ? हम सभी जाकर उन्हें प्रार्थना करे श्रवणबेलगोला पधारने की ।"

संघस्थ सभी की एक ही आवाज सुनकर आचार्यश्री ने सब की प्रार्थना का स्वीकार किया । फिर ऐसा तय हुआ कि संघ की ३ आर्यिका माताजी विदुषी आर्यिका श्री विशुद्धमतीजी के पास रुकेंगी और ५ आर्यिका माताजी, आर्यिका श्री गुणमती जी के नेतृत्व में राजस्थान की ओर विहार करेगी । बाकी बचा संघ आचार्यश्री के साथ यात्रा में शामिल होगा ।

श्री सेठी जी और श्री नीरजजी यथावसर विजयनगर पहुँचे । श्री सोभागमलजी कटारिया, श्री बाबुलालजी कोटडिया, गांधीनगर से पधारे श्री दिनुभाई शाह और श्री चंदुलालजी शाह आदि ने मिलकर आचार्यश्री से अनुरोध किया कि,

"हे आचार्यदेव ! आपने गांधीनगर के पंचकल्याणक में उपस्थित रहने की स्वीकृति देदी है लेकिन हम सब मिलके आपको श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला जाने के लिए प्रार्थना करते हैं । हमारा कार्य लघु है वहाँ के विश्वस्तरीय विशाल कार्य में आपकी उपस्थिति उपयुक्त है । हमारी ओर से कोई एतराज नहीं आप जरूर जाएँ इससे हमारी प्रसन्नता बढ़ेगी ।"

श्री गिरनारजी तीर्थक्षेत्र की यात्रा के समान श्री निर्मलकुमारजी सेठी ने संघ की श्रवणबेलगोला यात्रा का संघपतित्व भी स्वीकार किया ।

आनन्दोदधि मे गोते लगाते श्री नीरजजी ने कहा कि, "मैं

पहलीबार यह देख रहा हूँ कि संघ से आज प्रातः ही हमने प्रार्थना की और मध्याह्न में संघका मंगल विहार हुआ।"

दिनांक ९ फरवरी, १९९३ फाल्गुन कृष्णा ३ को ठीक १-३० बजे वृषभलग्न में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज ने अपने साथ १० साधु-साध्वियों मुनि श्री सौम्यसागरजी, मुनि श्री चिन्मयसागरजी, विदुषी आर्यिका रत्न श्री जिनमतीजी, आर्यिका श्री शुभमतीजी, आर्यिका शीतलमतीजी, आर्यिका श्री सुदर्शनमतीजी, आर्यिका अनन्तमतीजी, आर्यिकाश्री सौम्यमतीजी, आर्यिका श्री चैत्यमतीजी, आर्यिका श्री वैराग्यमतीजी को साथ लेकर विजयनगर (गुजरात) से श्रवणबेलगोला श्रीक्षेत्र के लिए विहार किया। राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र होते हुए कर्णाटक पहुँचना तय हुआ।

सबकुछ छूटने पर भी त्यागियों को देव-शास्त्र और गुरु के प्रति प्रशस्त राग रहता है, तीर्थवंदना की कामना उठती है उनके मनमें। विश्व विख्यात भगवान श्री बाहुबली की अप्रतिम प्रतिमाजी के दर्शन एवं महामस्तकाभिषेकका अनमोल मौका। अदम्य उत्साह के साथ विहार करता हुआ संघ परमवाड़ा, नयागाँव, छाणी, खेरवाड़ा, देवल, बागदरी होकर डूंगरपुर पहुँचा। यहाँ धर्मोपदेश के विशेष कार्यक्रम हुए। डूंगरपुर से सागवाड़ा, भीलूड़ा, नौगामा, बागीदौरा होता हुआ संघ पहुँचा अतिशय क्षेत्र अंदेश्वर पार्श्वनाथ।

"श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोला के भगवान श्री बाहुबली का महामस्तकाभिषेक, अध्यात्मयोगी आचार्य श्री वर्धमानसागरजी के प्रधानाचार्यत्व में संपन्न होने जा रहा है, इस हेतु आचार्यश्री विहारकर जा रहे हैं कर्णाटक की ओर।"

ये समाचार सनावदवालो के लिए मात्र समाचार नहीं हैं। रोम-रोम को झंकृत कर जिसने जगाई है अंतर में आशा, आँखों में चमकाई है नई रोशनी। भावप्रवण भक्तों के हृदय भर गए भावभक्ति से। सनावद

के प्रमुख लोग निकल पड़े आचार्यश्री के विहार पथ की ओर।

सभी सोच रहे हैं विश्वकल्याणकी कामना लिये चलते-फिरते तीर्थ, अनासक्त आत्मसाधकको जन्मस्थली में आने का आमंत्रण क्या आकर्षित करेगा ? उन्हें लाने का कुछ और तरीका ढूंढना ही पड़ेगा। सोचते-सोचते श्रावकों को मिल गया वह तरीका श्रीक्षेत्र सिद्धवरकूट का सामीप्य। श्री अंदेश्वर पार्श्वनाथ तीर्थ पर पहुँचकर सनावद के श्रावको ने करबद्ध विनती करके कहा -

"हे आचार्य भगवंत ! आप बावनगजा - बड़वानी होकर सीधे महाराष्ट्र निकल रहे हैं, इसकी बजाय आप इन्दौर, सिद्धवरकूट, सनावद होकर निकलें।"

यद्यपि आचार्यश्री बावनगजा होकर सीधे ही निकलना चाहते है किन्तु संघस्थ सभी का आग्रह रहा कि श्री सिद्धवर कूट सिद्धक्षेत्र की वंदना करते हुए ही आगे बढ़ना चाहिए। संघस्थ सभी त्यागियों की श्री सिद्धवर कूट सिद्धक्षेत्र की वंदना के तीव्रतम भाव महसूस करते हुए आचार्यश्री ने स्वीकृति दे दी। सनावद के जैन समाज के अध्यक्ष श्री इंदरचंदजी चौधरी, श्री चांदमलजी जैन, श्री बाबूलालजी जैन, श्री अशोकचंद जैन, श्री लोकेन्द्रकुमार, श्री सुधीरकुमार चौधरी आदि कामयाबी की खुशियाँ नगरजनों को बाँटने चल पड़े सनावद की ओर।

जन-जन को जानकारी मिली आचार्य श्री के आगमन की। लोग फूले नही समाते हैं अपने आपमें। सनावद का एक बालक जो है माँ जिनवाणी की आँखों का अंजन। निःस्पृहता और समता का निर्बाध बहता निर्झर। जो वात्सल्य के विस्तृत आयाम से वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी बनकर दीक्षा के चौबीस साल के पश्चात् इस धरा को अपने पाद पंकजों से पवित्र, पल्लवित करने, निमाड़ एवं मालवा प्रदेश का गौरव आ रहा है अपनी जन्मभूमि की ओर। जुट गया हर इन्सान अपने आराध्य की अगवानी के इन्तजाम में।

संघ कुशलगढ, थांदला, झाबुआ, धार होता हुआ गोम्मटगिरि इन्दौर पहुँचा। झाबुआ में सनावद के लोग अपने चौके लेकर आए। सनावद के किशोर वारिश, श्रेयांस, विजय और अमित ने आचार्य श्री के साथ पदविहार प्रारंभ किया। जगह-जगह पर आचार्य श्री के प्रभावक प्रवचनों से धर्म प्रभावना होती रही।

गोम्मटगिरि पर मुनिश्री सुविधिसागरजी एवं मुनि श्री निजानंद सागरजी महाराज आचार्यसंघ के दर्शनार्थ पधारे। सभी साधुओं का मिलन उत्साहवर्धक रहा। श्री बाबूलालजी पाटोदी, श्री गुलाबचंदजी आदि के साथ पूरा इन्दौर उमड़ पड़ा मालवा-निमाड़रत्न आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की ससंघ भव्य अगवानी के लिए। आचार्यश्री एवं संघस्थ सभी के दर्शनकर, उनको आहारदान देकर, उनसे धर्मोपदेश सुनकर सब हो रहे संतुष्ट चित्त।

यहाँ से संघ उपनगर स्थित जिनालयों के दर्शनकर जैन कॉलोनी पहुँचा। यहाँ आचार्यश्री पुष्पदंत सागर जी के शिष्य मुनिश्री तरुणसागरजी बिराजमान हैं, मुनिश्री और आचार्यश्री का मंगल प्रवचन हुआ। उदयपुर से गिरनारयात्रा हो या विजयनगर से श्रवणबेलगोला की, समाज की वर्तमान परिस्थिति को नजर में रखते हुए, अपनी पूर्ण ताकत से उसमे परिवर्तन हेतु, माँ जिनवाणी की अमूल्य रत्नराशि लुटा रहे हैं आचार्यश्री, जिससे समाज में धार्मिकभावना को बढ़ावा मिले, समाज तीर्थकर भगवंतों और पूर्वाचार्यों के उपदेश को जानकर सुख-शांति के मार्ग पर प्रयाण करे। सर्वोदय की भावना से भरे, वात्सल्यनिधि आचार्यश्री इस बीच कहाँ गिनते हैं अपनी शारीरिक अस्वस्थता को? विहार करते हुए सब सिमरोल आये, यहाँ आचार्यश्री का उपवास हुआ। यहाँ से १५ कि. मी. चलकर चोरल पहुँचना है मार्ग में १० कि. मी. की दूरी पर बाई गाँव में, आचार्यश्री गृहत्याग के २६ साल बाद पहलीबार गृहनगर की ओर जा रहे हैं सो इन्दौर बड़वाह और सनावद

के कई पत्रकारों ने यहाँ आचार्यश्री की मुलाकात ली। आचार्यश्री ने पत्रकारों को उत्तर में बताया, "आजके राजनीतिज्ञ, मुनि और संतों के पास उपदेश सुनने नहीं अपना स्वार्थ साधने जाते हैं। विश्व में अशान्ति का मूल कारण अपरिग्रह और अहिंसा की विस्मृति है।"

मालवा - निमाड़ के दैनिक पत्रों में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के आगमन की खबरे मुख्य-समाचार के रूप में छपती हैं, सब में होड़ लगी है कौन अच्छे से पूरी जानकारी दे। जबरदस्त उत्साह का माहौल बन रहा है मालवा-निमाड़ में।

दूसरे दिन संघ बलवाड़ा पहुँचा। यहाँ सनावद-बड़वाह और निकटवर्ती गाँव के करीब ३०० से अधिक लोग आए। होली-धूलेटी का दिन है, आचार्यश्री का पिछले दिन का उपवास था और आज प्रथम ग्रास में ही अन्तराय आ गई। सभी श्रावक सन्न। अत्यंत प्रसन्नचित्त आचार्यश्री लगे अंतराय कर्म की निर्जरा में। सामायिक के अनन्तर स्वाध्यायियों के साथ तत्त्वचर्चा की और धर्मोपदेश भी दिया।

यहाँ से संघ आया बड़वाह। यह वही नगरी है जहाँ आचार्यश्री ने स्नातक शिक्षा प्राप्त करने हेतु कालेज में प्रवेश लिया था और बी. ए. प्रथम वर्ष के पश्चात् ही अग्रसर हो गए थे वैराग्य के पथ पर। वही बड़वाह नगर सजधजकर अपने लाड़ले के प्रथम प्रवेश पर प्रफुल्लित है उनके दर्शन से। धर्मसभा में चली तत्त्वचर्चा और धर्मोपदेश का अस्खलित वाणी प्रवाह। उदाहरण द्वारा माँ जिनवाणी के रहस्यों को उद्घाटित करने की आचार्यश्री की कुशलता से प्रभावित हुई प्रजा लग गई उनके आगे के प्रवचन सुनने की तैयारी में।

बड़वाह से मोरटक्का पहुँचकर वहाँ आहार और रात्रि विश्राम हुआ संघ का। इन्दौर के श्रेष्ठीजी द्वारा निर्मित विशाल धर्मशाला और साथ में है भव्य जिनालय। यह वही जिनालय है जहाँ आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने अपनी गृहस्थावस्था में परम पूज्य आर्यिकाश्री

ज्ञानमती माताजी से वैराग्य प्रेरक वात्सल्यमयी देशना पाकर संयमपथ की ओर बढ़ने का संकल्प लिया था। आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी ने ई. सन् १९६५ के सनावद चातुर्मास के दौरान जो वैराग्य का बीज बोया था उसका सिंचन और संवर्धन १९६७ में आर्यिका श्री ज्ञानमती जी ने किया, वही पल्लवित वटवृक्ष अब है समाज के सामने। आचार्यश्री मोरटक्का के इस जिनालय को तीर्थरूप ही मानते हैं, वे कहते हैं यह हमारा वैराग्यतीर्थ है। आज गृहत्याग के पश्चात् पहलीबार इस क्षेत्र पर आते ही मन मुदित हो उठा आचार्यश्री का, समाज नहीं होते हुए भी समय दिया। प्रात: दिनांक ११-३-९३ को विहार हुआ ५ कि. मी. की दूरी पर स्थित बहुरत्नावसुंधरा से समलंकृत परम पावन प्रसविनी सनावद नगरी की ओर।

प्रकृतिका हर तत्त्व उत्कंठित है, उल्लसित है अपने दुलारे को दुलार से नहलाने को। नर्मदा के निर्मल नीर आनन्द के अतिरेक में दमकते है दिवाकर के दबदबे में, चमकते हैं चारुचन्द्रकी चाँदनी में। नवतर रूप धरे वासंती वैभव बिखराते पेड़-पौधे झुककर करते हैं अभि-वंदना। आम्रकुंजों में कुहू-कुहू की आवाज से करती हैं कोयल जयनाद की गुंजन। निरभ्र नीलाम्बर में बहते शीतल हवा के आरती उतारते झोंके। प्रकृति पुलकित है अपने पनोते पुत्र की पाद-वंदना से।

नैसर्गिक निखार ही ऐसा है तो फिर नर-नारियों का तो कहना ही क्या! उनका उत्साह, उनकी उत्तेजना, उनकी भक्ति-भावनाओं के फलस्वरूप उनके आयोजन ने पा ली है कभी न प्राप्त हुई ऊँचाईको। पूरा निमाड़-मालवा उमड़ पड़ा है सनावद से तीन कि.मी. की दूरी पर आचार्य श्री वर्धमानसागरजी की ससंघ अगवानी के लिए, अभिवंदना के लिए। प्रात:काल से ही जाति, संप्रदाय, पंथ से परे नागरिकों का उत्साहित हुजूम भावविह्वल होकर मंगलमय भव्य शोभायात्रा निकलनेवाले स्थान पर एकत्र हो रहा है। सभी लालायित हैं परीषह

विजयी, प्रात:वंदनीय प्रकृति पुरुष के दर्शन-प्रसाद के लिए। तभी तो उनके पथ पर पलक-पावड़े बिछाए गिन रहे हैं युगों जैसी लम्बी इन्तजार की घड़ियाँ।

बड़ी माँ रूपाबाईजी के आनन्द का ठिकाना नहीं। वे कह रही हैं भगवान राम चौदह साल पश्चात् अवधपुरी में वापस आए थे। मेरा राम - यशवंत आज आचार्यश्री वर्धमानसागरजी बनकर चौबीस साल बाद आरहा है, पंचमकाल की अयोध्या बनने जा रहे सनावद में।

केसरिया साड़ी पहने हुए सौभाग्यवती स्त्रियों के सिर पर सुवर्णमय मंगलकलश, उसके ऊपर पड़ती बाल अरुण की स्वर्णिम अरुणिमा, स्वर्णरज सी चमकती सनावद की धरती और सफेद कुर्ता पाजामा पर केशरिया दुपट्टा धारण किये हुए युवकगण। यह देदीप्यमान दृश्य अपने आपमे एक अनोखे माहौल को प्रदर्शित करता है। जैसे आज धरती से गगन का, फूलों से चमन का, घटाओं से पवन का, गुरु से भक्तों का होने जा रहा है मिलन सनावद में।

दिव्य विभूति के भक्तिभाव से दर्शनकर, उनसे आशीर्वाद प्राप्तकर, मंगलवर्धिनी अमृतवाणी का पान करने न जाने कहाँ-कहॉ से आ रहे हैं लोग, बस आते ही रहते हैं। कर्णेन्द्रिय को सतर्क कर ये आए....... ये आए......... भावों से विह्वल होकर निष्पलक निहार रहे हैं पथ को। सनावद के जिस-जिस मार्ग से आचार्यश्री वर्धमानसागरजी पधारने वाले हैं उस मार्ग पर स्वयमेव वाहनों के लिए कर्फ्यु लग गया है। क्योंकि जनता ही इतनी है कि वाहन तो क्या मनुष्य को चलना भी मुश्किल हो गया है।

आचार्यश्री के जयघोष की दूर से आती आवाज सुनाई दी। स्वागत के लिए सजग नर-नारी रास्ते के दोनों किनारे हो गए कतारबद्ध और करने लगे जयकार का नाद। नजदीक आते ही उनके दर्शन से अपार आनन्द की अनुभूति करते हुए मिल जाते हैं जुलूस में और चलने

लगते हैं आचार्यश्री के साथ ।

आज दुल्हन सी सजी-धजी सनावद नगरी का रूप रंग व ठस्सा दर्शनीय है । जगह-जगह पर सौ से अधिक बंदनवार, कलात्मक कमानें, घर-घर के ऊपर फहराती धर्मध्वजाएँ, थोड़े-थोड़े अंतर पर लगे आचार्य श्री वर्धमानसागरजी की आकृति के कट आउट, तोरण द्वार और अभिनन्दन बेनर से सजी हुई हर गली, हर मोहल्ला । चाहे वह हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई या जैन का हो । आबाल-वृद्ध सभी के आनन्द का उफान भीतर से बाहर बहने लगा है क्योंकि दीक्षा ग्रहण के २४ वर्ष और गृहत्याग के २६ साल के पश्चात् श्रवणबेलगोला की ओर भगवान श्री गोम्मटेश्वर के दर्शनार्थ एवं महामस्तकाभिषेक में सान्निध्य प्रदान करने हेतु किये मंगल विहार के मध्य पधारे हैं इस नगर में आचार्यश्री ससंघ ।

आचार्यश्री के गुजरनेवाले मार्ग पर अपने घर के आगे हल्दी, कंकु, अक्षत व मोतियों के चौक पूरे गये हैं, लोग पाटे लगाकर, श्रीफल, जल, दूध, अक्षत और आरती लिये खड़े हैं पाद प्रक्षालनकर, श्रीफल, अक्षत का अर्घ अर्पितकर आरती उतारने हेतु । मकानों की अटारियाँ खचाखच भरी है मानवों से । सबको प्रतीक्षा है अपने आराध्य की ।

सनावद का हर व्यक्ति, आचार्यश्री की गृहस्थावस्था के मित्र, उनके बुजुर्ग, शिक्षक, सभी आचार्यश्री की गृहस्थावस्था की यादें ताजा कर रहे हैं । न्यूज-पेपरों की हेडलाइनें आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के सनावद प्रवेश से मुखरित हैं । कई ने तो आचार्यश्री के जन्म से लेकर सनावद मंगलप्रवेश तक की माहिति, उनकी विविध फोटुओं के साथ अपनी विशिष्ट पूर्तियों में प्रकाशित की है । विजय, श्रेयांस और राजू जैसे युवाओं के हृदय अनूठे भक्ति-भाव से भर गए हैं । पूरा सनावद हो गया है आचार्यश्री वर्धमानसागर से ओतप्रोत ।

आ गई वो धन्य घड़ी सनावद में प्रवेश की । करीब ३५००० से

अधिक जनता, बड़नगर के जनता बैन्ड का म्यूजिक, रामायण मंडल, सीताराम मंडल के युवकों का स्तुतिगान, सुशोभित हाथी, घोड़े, केसरिया वस्त्र पहने हुए महिलाएँ, गरबानृत्य करतीं बालिकाएँ, नाचते-गाते युवक। जयघोष ध्वनि की तीव्रतासे पासवाले की बात सुनना भी मुश्किल। बस, यही लग रहा है आज मालवा-निमाड़ के सभी संप्रदायों के लोग बिना भेदभाव से अपने आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के सत्कार में कोई कमी-त्रुटि न रखकर नए कीर्तिमान स्थापित करना चाहते हैं। नगर के माहौल को धार्मिक भावना से सराबोर करनेवाली यह शोभायात्रा सबसे बडी निरूपित हुई।

नगरप्रवेश पर ही सर्व प्रथम आया श्री मायाचंद दि. जैन उच्च माध्यमिक विद्यालय। यह वही विद्यालय है जिसमें आचार्यश्री ने अपने विद्यार्थी जीवन में अध्ययन किया है। विद्यालय के द्वारपर आचार्य संघ का स्वागत मध्य प्रदेश लघु उद्योग निगम के पूर्व अध्यक्ष श्री विमलचंद जी काला, दिगम्बर जैन समाज के अध्यक्ष श्री इन्दरचंद जी चौधरी, श्री अमीचंद जी आदि ने पादप्रक्षालन, अर्घ समर्पितकर एवं आरती उतारकर किया। तत् पश्चात् आचार्यश्री को धार्मिक और लौकिक शिक्षा प्रदाता श्री मूलचंदजी शास्त्री द्वारा पादप्रक्षालन के वक्त भाव-विभोर हृदय से, बिखरते हर्षाश्रु में गद्‌गद यही शब्द निकले 'आज मैं धन्य हो गया' और गुरुका सिर झुक गया शिष्य के चरणों में जो आज विश्व संत बने हुए हैं। आचार्यश्री के विद्यार्थीकाल के कुछ अध्यापक एवं समग्र विद्यालय परिवार अनुभव कर रहा था अनुपम गौरवका। आचार्यश्री का सारगर्भित उद्‌बोधन हुआ।

भक्ति के उठते फौबारे के साथ स्वागत यात्रा आगे बढ़ रही है। बीच में छोटे बच्चों के विद्यालय में बच्चों को कर्तव्यपरायण बनने हेतु प्रेरणा दी और आशीर्वाद दिये। समस्त नगर में स्वागत यात्रा के परिभ्रमण के मध्य जगह-जगह पर पुरजनों की श्रद्धा-भक्ति को रुक-रुक

कर स्वीकार करते हुए संघने नगर के ४ जिनालयों एवं ४ चैत्यालयों के दर्शन किये। स्वागत शोभायात्रा धर्मशाला भवन पर विसर्जित हुई।

मध्याह्न काल में, पहले जो एसोसियेशन चौकसे, बाद में महात्मा गांधी चौकसे और आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के आने के बाद अब जो वर्धमान चौकसे जाना जाता है वहाँ आचार्यश्री का प्रवचन आयोजित हुआ। दृष्टि की सीमा तक नजर आ रहे हैं मानव ही मानव। परम पूज्य आचार्यश्री ससंघ मंच की ओर आ रहे दिखते ही जनता का जयघोष शुरू हुआ जो संघ के आसनस्थ होने तक गूंजता रहा। मंगलाचरण की मंगलध्वनि प्रारंभ होते ही जाज्वल्यमान धर्मदिवाकर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के प्रवचनामृत पीने को लोग ऐसे सतर्क और शांत हो गए कि पासवाले की श्वासोच्छ्वास की ध्वनि भी सुनाई दे।

आचार्यश्री ने अपने प्रवचन मे सद् कर्म द्वारा पुरुषार्थ को जागृत कर अपने गंतव्य की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा दी।

आचार्यश्री के उद्‌बोधन के बाद सनावद के किशोर श्री श्रेयांस एवं श्री वारिश, विजय और अमित जिन्होंने मुनिसंघ के साथ झाबुआ से सनावद तक की करीब ३०० कि. मी. की पदयात्रा की उन्हें समाज ने सम्मानित कर धन्यवाद प्रेषित किया। चारों किशोरों ने आचार्यश्री के साथ पद-विहार में मिली प्रसन्नता को प्रस्तुत किया।

इसी सभा में आचार्यश्री के १० वर्षीय सांसारिक भतीजे पारस जैन ने अपनी विनयांजलि अर्पित करते आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को अपने ताऊजी बताकर उनके आगमन की स्मृति को चिरस्थायी बनाये रखने हेतु सनावद में जैन चैत्यालय एवं पुस्तकालय की स्थापना का संकल्प प्रवचन-स्थल पर संक्षिप्त प्रभावी संबोधन में घोषित किया।

आचार्यश्री वर्धमानसागर जी के आगमन से जन्मभूमि सनावद

एवं पूरा निमाड़-मालवा प्रांत कृतकृत्य हो गया। दिनांक ११-३-९३ से १६-३-९३ तक प्रातः और दोपहर दोनों समय आचार्यश्री के मंगल प्रवचनों से ऐसा माहौल बना मानों धर्मगंगा में ही अवगाहन कर रहे हों। आध्यात्मिक परिवेश में दिये गये आचार्यश्री के प्रभावक प्रवचनों ने रोम-रोम झंकृत कर दिया। माँ जिनवाणी के रहस्यों को एक-एककर अपनी प्रवाहित वाणी में समझाते उनके स्वर के आरोह-अवरोह के साथ लोगों ने अपने भावों का तादात्म्य बना लिया। अग्रिम पंक्ति में अपना स्थान निश्चित कर प्रभावित मुमुक्षुओं ने बडी तादाद में धर्मलाभ लिया।

आचार्यश्री ने अपने प्रवचन में भगवान श्री राम एवं उनके आदर्श को भारतीय संस्कृति और प्राचीन परंपरा की स्मृति दिलाते हुए जैन रामायण का अवलोकन कराकर देश मे रामराज्य का वातावरण उत्पन्न करें जिससे शांति की स्थापना होगी, ऐसा कहा। जिसे सुनकर अजैन भी आचार्यश्री को अपने ही गुरुवर समझ रहे।

अग्रणियो के बारबार आग्रह करने पर मुमुक्षुमंडल के सीमंधर समवसरण जिनालय के स्वाध्याय भवन में आचार्यश्री के प्रवचन का आयोजन हुआ। स्वाध्याय भवन के परिसर में तिल रखने की भी जगह नहीं रही। श्री सोनचरणजी जैन ने संघ का सादर स्वागत किया। आचार्यश्री ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि, "सब छोड़कर संघ की शरण में जाने से मोह - माया, ममता व मिथ्या-बुद्धि का विसर्जन होता है। कार्यसिद्धि के लिए तप-साधना द्वारा चारित्रिक वृद्धि से आत्मशुद्धि होने के पश्चात् रत्नत्रय सम्यक्‌दर्शन, सम्यक्‌ज्ञान व सम्यक्‌चारित्र की प्राप्ति होगी। जिनवाणी के माध्यम से अंतर को जागृत करने से अनंत सुख की प्राप्ति संभव है।"

आचार्यश्री को मुमुक्षु मंडल द्वारा स्थापित श्री सीमंधर समवसरण मंदिर ट्रस्ट द्वारा प्रवचन के लिए आमंत्रित किये जाने की महत्त्वपूर्ण

घटना का आकलन करें तो आचार्यश्री की महत्ता और बढ़ जाती है। इससे यह स्पष्ट जाहिर होता है कि समग्र जैन समाज में राष्ट्रीय स्तर पर एकता का श्रीगणेश आचार्यश्री ने कर दिया। इन दिनों में हुए प्रवचनों का प्रभाव निश्चित ही इस क्षेत्र के वातावरण में शीघ्र झलकेगा इसमें दो राय नहीं। रात्रि में भी संघस्थ ब्र. बहनें भावनाबहन, विमलाबहन, कलाबहन, मनोरमाबहन के प्रवचन होते रहे।

प्रात: प्रभातफेरी, विशाल रथयात्रा के साथ १००८ भगवान श्री आदिनाथ जी का जन्म कल्याणक उत्साह एवं आनंद के साथ मनाया गया। दोपहर आचार्यश्री द्वारा भगवान श्री आदिनाथजी के जीवन पर धर्मोपदेश हुआ।

आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य मे १४ मार्च को तीर्थक्षेत्र विकास पर संगोष्ठी हुई। इस अवसर पर श्री निर्मलकुमारजी सेठी, पद्मश्री बाबूलालजी पाटोदी, समाज के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री देवकुमारसिंहजी कासलीवाल, श्री शांतिलालजी बड़जात्या, श्री कैलाशचंदजी चौधरी, श्री हेमंतजी काला, श्री नेमीचंदजी बाकलीवाल आदि उपस्थित रहे। प्रति १२ वर्ष के अंतराल से श्रवणबेलगोला भगवान श्री गोम्मटेश्वर - बाहुबली के महामस्तकाभिषेक के अवसर पर प्रधान आचार्य के रूप में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के चयन से अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महासभा के प्रतिनिधि के रूप में, महामस्तकाभिषेक समिति की ओर से, जैन समाज के श्रेष्ठीजनों ने इस हेतु आचार्यश्री को यहाँ निमंत्रण देकर श्रीफल भेंटकर अपनी चरम प्रसन्नता प्रकट की। सभा में उपस्थित सभी सनावदवासियों को इस बात का गौरव है कि इस विराट समारोह का निर्देशन सनावद की माटी के सपूत के प्रधानाचार्यत्व में होनेवाला है इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है!

दिनांक १६ मार्च को सायंकाल सिद्धक्षेत्र सिद्धवरकूट की वंदनार्थ विहार हुआ। जिनालयों के दर्शन-वंदन के पश्चात् आचार्यश्री का

मंगल प्रवचन हुआ। ओंकारेश्वर धर्मशाला में रात्रि विश्रामकर १९ मार्च को पुन: सनावद नगर में प्रवेश हुआ। सनावद का आसमान आंदोलित हो उठा जयघोष के नारो से।

मालवा-निमाड़ के न्यूज पेपर की हेडलाइनें मुखरित हैं आचार्य श्री वर्धमानसागरजी के कार्यकलापों से। हररोज की गतिविधियों की सूचना बख़ूबी से प्रसिद्ध होती रहती हैं जिससे लाभान्वित होती रही जनता। आज २१ मार्च प्रात: आचार्यश्री वर्धमानसागरजी और संघस्थ मुनि श्री चिन्मयसागरजी के केशलोंच समारोह के अवसर पर मानव प्रवाह बहता आ रहा है वर्धमान चौक में। वर्धमान चौक बना जनसमुदाय का सागर जो हिलोरे लेता रहा आचार्यश्री के जयघोष से।

केशलुंचन के अनन्तर धर्मसभा में सनावद के बाल ब्रह्मचारीश्री जतीशचन्द्र शास्त्री का सम्मान किया गया। उन्होंने उद्‌बोधन भी दिया। परम पूज्य गुरुदेव वर्धमानसागरजी के तपोमय जीवन से प्रेरणा पाकर जनमानस में चला व्रत अंगीकार करने का अविरत सिलसिला।

श्री विजयभैया - पिता श्री कंवरचंदजी जैन और श्री श्रेयांसकुमार पिता श्री सुधीरकुमार जैन ने पाँच वर्ष तक का ब्रह्मचर्यव्रत लिया। श्री विजयभैया ने संकल्प लिया था कि आचार्यश्री के सनावद आगमन तक मैं घी का सेवन नही करूँगा। आचार्यश्री के मगंल सनावद प्रवेश के दिन विजय भैया ने लड्डू की प्रभावना कर अपना संकल्प पूरा किया। आज विजय भैया और श्रेयांस भैया दोनों दिगम्बर मुनिराज के पद पर स्थित है। शिक्षिका सुश्री आशाबहन, पिता श्री कमलचंदजी जैन और मृदुलाबहन, पिताश्री वीरेन्द्रकुमार जी जैन ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। कुमारी प्रेरणाने पाँच साल के ब्रह्मचर्य व्रत का नियम लिया। कुमारी चंदना (संघस्थ आर्यिका ज्ञानमतीजी) पिता प्रकाशचंदजी सराफ ने दो वर्ष ब्रह्मचारिणी रहने का संकल्प लिया। हाथ में श्रीफल

लिये खड़े हैं एक बुजुर्ग । आचार्यश्री के सामने कर रहे हैं करबद्ध प्रार्थना । उपस्थित सभी के हृदय हो उठे रोमांचित और आँखें निहार रहीं निष्पलक इस दृश्य को । वे हैं पण्डित मूलचन्द जी शास्त्री आचार्यश्री के लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा दाता । एक गुरु अपने शिष्य - जो आज चारित्र - संयम साधना से जगत्गुरु के परम पावन आचार्यपद पर आरूढ़ है, उनसे संसार-सागर पार उतरने के लिए ले रहे हैं आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ।

५५ वर्षीय श्री तिलोकचंदजी जैन सराफ ने एक वर्ष की अवधि में गृहत्यागकर मुनिदीक्षा ग्रहण करने का संकल्प लिया, बाद में वे हुए मुनि श्री चारित्रसागरजी, श्रीचंदजीने छह माह मुनिसंघों में रहने का नियम लिया । अनेक लोगोंने शुद्ध भोजन ग्रहण करने का नियम लिया ।

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के श्रीमुखसे प्रवचनामृत का पान करते हुए भी अजैनो के अंतरमें भाव है, मनोवांछा है, समारंभ संयोजन की अपनी भक्ति प्रकट करने में वे कैसे अलग रहें ? आचार्यश्री को आग्रहपूर्वक निवेदनकर आयोजित हुआ सर्वधर्म सम्मेलन, जिसमें हिन्दू, सिख, मुसलमान, ईसाई और जैन समाजने भाग लिया ।

सभी सांप्रदायिक नदियाँ मिलकर गुर्जर छात्रावास बन गया मानव समुदाय का महासागर । कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ ब्रह्मचारिणी बहनों के मंगलाचरण से । तदनन्तर सर्वप्रथम नगर के प्रसिद्ध पंडितश्री भगवन्तरावजी दुबे ने आचार्यश्री के प्रति सम्मान भाव प्रगट करते हुए कहा कि, "आचार्यश्री वर्धमानसागरजी सनावद के पारलौकिक गौरव हैं ।" पूर्व मंत्री श्री अमोलकचन्दजी छाजेड़ ने कहा -

"सनावद उच्च मुनिरत्न के कारण धन्य हैं ।"

मानव समिति के प्रमुख डॉ. श्री गजानन वर्मा ने कहा -

"कथनी और करनी की एकता के धनी मुनिश्री धन्य हैं ।"
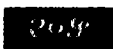
'जेसीज क्लब' की ओर से श्रीरामकिशन माहेश्वरी ने गीता भेंट की। लायन्स अध्यक्ष श्री कल्याणजी लाड़ ने कहा - "संत किसी समाज विशेष का नहीं, विश्वका होता है। आचार्यश्री सही में विश्वसंत हैं।"

गुर्जर समाज की ओर से श्री ताराचंद पटेल ने एवं मुस्लिम समाज की ओर से श्री हमीदखान ने भी सम्मान प्रकट किया। संघस्थ विदुषी आर्यिकारत्न श्री जिनमती माताजी एवं भावना बहनके प्रवचन के पश्चात् सनावद के पारलौकिक गौरव, लाड़ले यशवंत कुमार - वर्तमान के सर्वप्रिय आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने अपने निश्चल विद्वत्तापूर्ण प्रवचन में सदा सुखी रहने का मार्ग दिखाते, "जितात्मा, हितात्मा और जितेन्द्रिय बन आत्मकल्याण करें" ऐसा उपदेश दिया। अन्य धर्मावलम्बियोंने भी अपनी बात रखी।

विरागी के स्नेह और वात्सल्य में बँधे सभी सरागी विहूवल हैं उनके श्री विहार से। नेत्रों से झरते मोतियों को आचार्यश्री के चरणो मे चढ़ाकर, व्याकुलता कम करने का कर रहे हैं प्रयास। लेकिन संत तो जीते हैं जलकमलवत्। सदा रहते हैं अपनी मस्ती मे मस्त। यह देखकर कई लोगो के हृदय से अर्चना का यह गीत गूंज उठा -

दिखलाई हमें राह संयम त्याग की महान्,
सनावद के संत तूने कर दिया कमाल।
हाँ, हाँ करदिया कमाल
बिखराई तप साधना की सौरभ अपार,
सनावद के संत तूने कर दिया कमाल।
हाँ, हाँ करदिया कमाल
माता मनोरमाजी के पूत दुलारे,
पिता कमलचंदजी की आँखो के तारे,
धन्य भई धरती निमाड़की रसाल

सनावद के संत तूने कर दिया कमाल।
हाँ, हाँ करदिया कमाल
ज्ञान-ध्यान आचार की ज्योति जगाई,
क्रोधादि कषाय छोड़ कर्मरजको नशाई
ले लिया नगन वेश वैराग्य का महान्
सनावद के संत तूने कर दिया कमाल।
हाँ, हाँ करदिया कमाल
समाज संगठन का बिगुल बजाया,
अहिंसा, सत्य प्रेम का संदेश सुनाया,
दे दिया अजितसूरिने आचार्यपद महान्
सनावद के संत तेरे चरणों मे प्रणाम।
हॉ, हाँ चरणों में प्रणाम
वात्सल्यगुण - वैभव जो सबको लुटाया
करूणा के वारि में तूने सबको भिगोया
वात्सल्य की मूर्ति तू है जगमें बेमिसाल
वात्सल्य-वारिधि तेरे चरणों में प्रणाम।
हाँ, हाँ चरणों में प्रणाम।

गीत की गूंज के साथ संघस्थ सभी के कदम उठे बेड़िया भीकनगाँव होते हुए खंडवा की ओर।

इन्दौर से लेकर खंडवा और आगे बुरहानपुर - आसीरगढ़ तक के विहार में निमाड़ और मालवा के भक्तगण आते ही रहे। लगता है इस क्षेत्र में आचार्यश्री के प्रथम विहार के क्षण-क्षण का उपयोग कर आत्मकल्याण के लिए अग्रसर होना चाहते हैं।

प्राची मे प्रभाकर प्रगट हुआ। तत् पश्चात् ज्ञान का प्रकाश लेकर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ससंघ पहुँचे खंडवा। दोनों समय होते रहे प्रवचन अविरत तीन दिन तक। यहाँ पर भी मुमुक्षु मंडल के

अति आग्रह से जिनालय के समीपवर्ती मैदान पर प्रातःकालीन प्रवचन हुआ और मध्याह्न का प्रवचन घासपुरा मंदिर के सामने होकर वहाँ से ही विहार हुआ पन्धाना की ओर। पन्धाना नगर के इतिहास में दिगम्बर मुनिराज का आगमन है प्रथमबार। आचार्यश्री का स्वास्थ्य कुछ प्रभावित है, वे विश्राम के लिए उद्यत ही हुए कि खंडवा से मुमुक्षु विद्वान् श्री अशोक जी मलकापुरवाले आये। खंडवा में आचार्यश्री के आध्यात्मिक वक्तव्य से आकर्षित हो वे तत्त्वचर्चा के लिए चले आए। उनसे तत्त्वचर्चा के अनन्तर ही धर्मसभा में 'क्रमबद्ध पर्याय' को प्रमुखकर आचार्यश्री का मंगल प्रवचन हुआ। आगम और अनेकान्त सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य में यह प्रवचन प्रभावी रहा।

पन्धाना से ३५ कि. मी. की दूरी पर है असीरगढ़ जहाँ समाज का एक भी घर नहीं। सनावद - बड़वाह, खंडवा आदि नगर एवं अन्य गाँवों के बहुत से लोग यहाँ पहुँचे। आज महावीर जयन्ती के विशेष अवसर पर संघ के चैत्यालय मे अभिषेक-पूजन हुई। मध्याह्न मुमुक्षु संगीत मंडल के आध्यात्मिक भजनो के पश्चात् आचार्यश्री का भगवान महावीर के जीवन व सिद्धांतो पर बहुत सारगर्भ प्रवचन हुआ।

यहाँ से निकलकर बुरहानपुर नगर मे भी लोगो के आग्रहवश ज्ञानवर्धिनी सभाभवन में भगवान महावीर के जीवन और दर्शन पर संघस्थ विदुषी आर्यिकारत्न श्री जिनमती माताजी एवं आचार्यश्री के मंगल प्रवचन हुए। ब्रह्मचारिणी भावना बहन का भी उद्बोधन हुआ सभा का संचालन किया डॉ. श्री सुरेन्द्रभारती ने। यहाँ उल्टे शंखपर भगवान श्री नेमिनाथजी और उनके चारो ओर शेष २३ तीर्थंकरों की विशिष्ट प्रतिमाजी के दर्शन से आनन्द मिला।

यहाँ से कुछ आगे महाराष्ट्रप्रांत की सीमा में प्रवेशकर भुसावर होता हुआ संघ अजंता पहुँचा। यहाँ विश्वप्रसिद्ध गुफाएँ हैं। यहाँ से विहार कर एलोरा गुरुकुल में, जो आचार्यश्री समन्तभद्र महाराज की

प्रेरणा से शिक्षा और धार्मिक संस्कारों का बड़ा केन्द्र है, संघ ठहरा। एलोरा में जैन गुफाएँ भी हैं। एक गुफा में भगवान बाहुबली की प्रतिमाजी पर बेलें चढ़ी हैं, बेलों को हटाती हुई ब्राह्मी और सुंदरी की प्रतिमाएँ अंकित की गई हैं। करीब ३३ गुफाओं का अवलोकन कर लौटकर आहारचर्या एवं सामायिक के पश्चात् धर्मचर्चा व प्रवचन हुए।

अतिशयक्षेत्र जटवाड़ा जहाँ सर्वप्रथम सन् १९८७ में और बाद में प्राय: अष्टमी या चतुर्दशी को अनेकबार सर्प देखा गया। एक मुसलमान भाई के मकानके पास और श्री पद्मप्रभु भगवान के मंदिर में स्थित तलघर में से २१ प्रतिमाजी निकलीं। जब आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज यहाँ पधारे थे तब उन्होंने बताया था कि यहाँ से ८० प्रतिमाजी निकलनी चाहिए। यहाँ दर्शनकर संघ पहुँचा महाराष्ट्र के ऐतिहासिक नगर औरंगाबाद। ६ मंदिरजी - ६ चैत्यालय एवं बोर्डिंग स्थित चैत्यालय के दर्शनकर संघ राजाबाजार स्थित शांतिनाथ मंदिर में ठहरा। अक्षय तृतीया भगवान श्री आदिनाथजी के प्रथम आहार का पर्व, जो भगवान श्री ऋषभदेव के जीवनदर्शन की झाँकी आचार्यश्री ने कराते हुए प्रभावना पूर्वक मनाया गया। यहाँ सनावद से साथ चल रहे श्री विजय भैया और श्री राजू भैया ने आचार्यश्री से आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण किया। आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में यहाँ की समाज ने 'संत निवास भवन' का शिलान्यास संपन्न किया और चातुर्मास-स्थापन यहाँ हो ऐसी विनती की। लेकिन अपने लक्ष्य को नजर में रखकर संघ पहुँचा अतिशय क्षेत्र कचनेर।

यहाँ पर ब्रह्मचारीजी श्री हीरालालजी (बाद में हुए आचार्यश्री वीरसागरजी) पाठशाला चलाते थे और उसी पाठशाला में अड़गाँव निवासी ब्रह्मचारीजी श्री हीरालालजी (बाद में आचार्यश्री शिवसागरजी) विद्यार्थी थे। औरंगाबाद से कचनेर के विहारपथ में आया अड़गाँव, जो

है आचार्य परंपरा के तीसरे आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज की जन्मभूमि। जैन का एक मात्र घर, यहाँ भगवान श्री पार्श्वनाथ के दर्शन गृह चैत्यालय मे कर आह्लादित हुए सब। चिंतामणि पार्श्वनाथ भगवान की अतिशययुक्त मूर्ति से, श्री महावीर जी क्षेत्र की तरह कचनेर भी अजैनों के लिए भक्ति-आस्था का केन्द्र बना है। कचनेर से अतिशय क्षेत्र पैठण पर भगवान श्री मुनिसुव्रतनाथ के दर्शन से उत्साहित हुआ संघ। भगवान श्री गोम्मटेश्वर - बाहुबली के दर्शनार्थ होने वाले इस मंगलविहार से सहज ही मार्ग में आते अनेक तीर्थों की वंदना, जिनालयों के दर्शन आचार्यश्री अपने जीवन में प्रथमबार ही कर रहे हैं। विहार की गति तेज होते हुए भी अंतर में उमड़ते उत्साह से संघ को न तो थकावट महसूस होती है न चर्या का भार।

यहाँ से पंचालेश्वर - गेवराई होकर बीड़मार्ग से कोलवाड़ी गाँव आये। स्थान नहीं होने से टेन्ट लगवाये। अब गरमी ज्यादा शुरू हुई। यहाँ परम पूज्य आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज का समाधि दिवस मनाया। जैसे ही यहाँ से विहार हुआ, जमके बारिश हुई। प्रकृति ने मानों मार्ग को स्वच्छ कर वातावरण को ठंडक से भर दिया। सनावद से लेकर पूरे विहार में दोपहरतक गरमी, बाद मे विहार के समय आकाश मे बादल छा जाते हैं, आकाश बादलों का वितान ताने रहता है। सच्चे संत को तो अनुकूलता-प्रतिकूलता स्पर्शती ही नहीं। फिर भी प्रकृति अपने प्रकृति पुरुष का खयाल करते हुए पहुँचा रही है अनुकूलता।

कोलवाड़ी से विहारकर संघ आया कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र पर। बाल ब्रह्मचारी श्री कुलभूषण - श्री देशभूषण भगवान की निर्वाणभूमि। २०वी शताब्दी के प्रथम आचार्य चारित्र - चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज, जिन्होंने अपने अथक परिश्रम से लुप्त होती हुई मुनि परंपरा को पुनः जीवित किया, उनकी तपोभूमि। इतना ही नही, यहाँ अपने प्रथम मुनि शिष्य श्री वीरसागरजी महाराज

को आचार्य पद प्रदान कर ३६ दिवसीय सल्लेखना को आगमोक्त रीति से संपन्न किया । अपना अंतिम संदेश भी यहाँ पर दिया, ऐसी निर्वाण-भूमि, तपोसाधना भूमि, अंतिम देशना भूमि, सल्लेखना समाधि भूमि के पहाड़ की ५ वंदना कर संघ कृतकृत्य हुआ । आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण आचार्य परंपरा के पूर्ववर्ती चार आचार्यश्री न तो दक्षिण भारत की यात्रा कर पाए थे, न आचार्यप्रमुख की समाधिस्थली के दर्शन । दर्शनों का दुर्लभ दिलकश अवसर पाकर उत्कृष्ट आनंदानुभूति से तरबतर हो गए सब ।

यहाँ क्षेत्र के ट्रस्टीगण एवं आसपास के समाज के लोग आए । आचार्यश्री के दो दिवसीय वास्तव्य में धर्मोपदेश, तत्त्वचर्चा एवं आहारदान से लाभान्वित हुए श्रावक । कुंथलगिरि की वंदना से अतिहर्षित संघस्थ सभी मंगल विहार कर भूम - माणकेश्वर - देवगॉव होकर बार्शी के मधुवन में पहुँचे । आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज का यह चातुर्मास स्थान रहा है । मधुवन श्री प्रेमचंदजी माडेकर परिवार का है । वे आचार्यश्री शांतिसागरजी के अनन्य भक्त रहे । उसी परंपरा के वर्तमान आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के दर्शन से गद्गद होकर उन्होंने अनन्य भक्ति व्यक्त की ।

यहाँ से शेल गॉव, काम्बला होते हुए सोलापुर श्राविकाश्रम मे आचार्यश्री का प्रवचन हुआ । श्री सुमतिबाईजी शहा जिन्होंने चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज से ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण किया था और जो आजीवन ब्रह्मचारिणी रहीं उन्हे आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने प्रेरक उद्बोधन दिया । सोलापुर शहर में जिनालयों के दर्शनार्थ संघ गया । मंदिर में दर्शनकर आचार्यश्री कुछ देर रुके । इसी दौरान कई प्रबुद्ध लोगों का समूह मंदिर में एकत्र होता गया । उन्होंने आचार्यश्री से प्रार्थना की कि, "हे आचार्यदेव ! हमने धवल ग्रन्थराज का स्वाध्याय प्रारंभ किया हुआ है अत: उपदेश के बजाय आप स्वाध्याय ही करायें ।"

आचार्यश्री को आचार्यश्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती का स्मरण आया कि चामुन्डराय के आने पर उन्होंने षट्खण्डागम ग्रन्थ का स्वाध्याय बन्द कर दिया था। अब श्रावकों को स्वाध्याय कराये या नहीं ? फिर मन में विचार आय कि ये लोग स्वाध्याय कर ही रहे हैं तो स्वाध्याय करना चाहिए। आचार्यश्री ने धवल प्रथम पुस्तक के १२वें गुणस्थान का स्वरूप बतानेवाले सूत्र की विवेचना करते हुए स्वाध्याय किया। धवल ग्रन्थ के स्वाध्याय मे ज्यादा रुचि रखनेवाले सभी स्वाध्यायी बन्धुओं ने सोलापुर चातुर्मास-स्थापन के लिए अत्यंत आग्रह किया। स्वतंत्रता से विहार करनेवाले संत बाँधते जरूर हैं बँधते कभी नहीं।

लम्बा विहार तयकर संघ ने प्रवेश किया कर्णाटक प्रांत के बीजापुर के सहस्रफणी पार्श्वनाथ मंदिर में। श्रवणबेलगोला के श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी अपने पूरे दलबल के साथ आ चुके है। उन्होने आचार्यश्री का ससंघ कर्णाटक के तौर-तरीके से हार्दिक स्वागत किया। भट्टारकश्री के निर्देशन - मार्गदर्शन में सहस्रफणी पार्श्वनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार कार्य बिना किसी नवीनता से प्राचीन निर्माण को मजबूती देते हुए चल रहा है। धर्मशाला का निर्माण भी हो चुका है। सहस्रफणी भगवान श्री पार्श्वनाथ का महाभिषेक हुआ। भट्टारक श्री महास्वामीजी ने आचार्यश्री से श्रवणबेलगोला पधारने और वहाँ चातुर्मास स्थापन के लिए निवेदन किया। दो दिवसीय विश्राम के बाद बीजापुर शहर के मंदिरों के दर्शनकर संघने विहार किया श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला की ओर।

श्रीयुत डी. आर. शाह बीजापुर - इन्डी में रहनेवाले, मुनिभक्ति में पूर्णरूपेण समर्पित स्वाध्यायी श्रावक। कम बोल कर ज्यादा काम करनेवाले सज्जन। संघ के साथ विहार एवं संघस्थ सभी की वैयावृत्ति करते हुए संघ के विहार का बखूबी प्रबंध कर रहे हैं। उनके कार्यकलापों में दृष्टिगोचर होती है उनकी भीतरी भक्ति।

संघ के हास्पेट पहुँचते ही स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी पुनः पधारे । धर्मचर्चा के अनन्तर श्रवणबेलगोला में प्रवेश की चर्चा होते दिनांक ३० जून '९३ को प्रवेश करना निश्चित हुआ । हास्पेट से विहारकर संघ आया हरपनहल्ली (हरपनगाँव) । यहाँ संघस्थ आर्यिकाश्री जिनमती माताजी का स्वास्थ्य खराब हुआ । कुछ समय तक आचार्यश्री वर्धमानसागरजी भी सोच में पड़ गए । स्वयं माताजी भी गहरे विचार में डूबी - फिर आचार्यश्री ने कहा -

"संघ को चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं । माताजी का स्वास्थ्य अनुकूल होने पर ही हम विहार करेंगे, अन्यथा चातुर्मास यहीं पर कर लेगे । भगवान श्री गोम्मटेश्वर और गुरुजनों की कृपा दृष्टि ही हमें राह दिखाएगी ।"

आचार्यश्री के वात्सल्य सभर वचनों से संघस्थ सभी के चेहरे सूर्यकिरणों से खिलते सरोज सम विकसित हो उठे । गद्‌गदित अंतर से सबके मुँह से यही उद्‌गार निकल पड़े -

"हे वात्सल्यवारिधि गुरुदेव ! आपकी वत्सलता विश्व में बेजोड़ है । संघस्थ सभी की अस्वस्थता से चिंतित चतुर्विध संघनायक आप कभी व्याकुल नहीं हुए अपना स्वास्थ्य बिगड़ने पर भी । द्रुत गति से इतने लम्बे विहार में हमें शक्ति मिलती है आप के आभा मंडल से । किसी भी परिस्थिति में प्रसन्नचित्त चेहरे पर प्रफुल्लित प्रसून ही हमारे उद्दीपक हैं प्रशान्तमूर्ति गुरुदेव ।"

यह सुनते ही सरल स्वभावी मृदुवाणीभूषण आचार्यश्री के मुँह से भाव-प्रवण यही शब्द निकले -

"विजयनगर (गुजरात) से योगचक्रवर्ती भगवान श्री बाहुबली की भक्ति में छिपी अदृश्य शक्ति से हम इतनी जल्द चले आए हैं, अब मात्र १५ दिन मार्ग का श्रम करना है फिर तो हम होंगे भगवान श्री गोम्मटेश्वर के श्रीचरणों में । ब्रह्मचारिणी भावनाबहन, मंजुबहन,

मनोरमाबहन, कलाबहन, विमलाबहन, कस्तूरीबाई एवं ब्रह्मचारी सर्व श्री बाड़ीलालजी, जवाहरलालजी, चोखेरामजी, राजू भैया, विजय भैया, अतुल भैया साथ में उदयपुर - राजस्थान के श्रावकों का सख्त परिश्रम हमारा सहयोगी है ।"

आचार्यश्री के वचनामृत पीते रहे सब अपने कर्णद्वार से । तीसरे दिन पूज्य माताजी का स्वास्थ्य ठीक हुआ तब संघ विहारकर आरसीकेरे - उच्चंगी दुर्ग, कुन्दनकोवी, होलनकेरे होता हुआ होसदुर्ग पहुँचा दिनांक २० जून, १९९३ की प्रात:बेला में । आज का दिन है आषाढ़ शुक्ला दूज का । धर्मप्रतिपादक आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के आचार्य पदारोहण का तृतीय स्मृति दिवस । पूर्वनिर्धारित कार्यक्रमानुसार संघ के भाई-बहन और होसदुर्ग समाज ने आनन्दोत्साह के साथ यह पर्व मनाया । संघस्थ ब्रह्मचारीवर्ग, आर्यिका वर्ग, मुनिगण ने सर्वहितचिंतक आचार्यश्री के प्रति अपनी विनयांजलि समर्पित की । अन्त में आशिषात्मक अपने मंगलमय प्रवचन में आचार्य श्री ने कहा -

"चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज के इस शताब्दी में प्रवर्तित चारित्र साम्राज्य को हम संघ रूपी वज्रजंघ की मदद से ही सम्हाल सकेंगे । हम तो गुरुजनों से इस अभ्युदय की आकांक्षा करते हैं कि आपके कृपा-प्रसाद से परमपूज्य आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज ने आचार्यपद का गुरुतर भार सौंपा है, इस कार्य को सम्पन्न करने का सामर्थ्य प्राप्त हो ।"

होसदुर्ग से आचार्यश्री ससंघ विहारकर पहुँचे सोमसन्द्रा - हेग्गेरे । यहाँ के होयसलवंशीय राजा विष्णुवर्धन-पट्ट महादेवी शान्तला द्वारा निर्मित १००० वर्ष प्राचीन सुपार्श्वनाथजी के मंदिर मे भगवान के दर्शनकर हीरेसावी होते हुए झूटनहल्ली के लिए विहार किया । संघ चला जा रहा है अपनी मंजिल की ओर, लगता है....

छोटा सा सूर्य आसमान से
जैसे धरती पर उतर आया हो;
मुखमंडल पर वैसी ओजस्वी आभा लिये,
संपूर्ण अकिंचनत्व को धारे हुए,
परिपूर्ण पंचाचार का दक्षता से पालन करते हुए,
समष्टि के कल्याण की इच्छा रखते हुए,
भावों में भरपूर भक्ति लिये,
हृदय मे अतुल उत्साह भरे,
मन की अनन्य उत्कंठा के समाधान के लिए,
दृष्टि को अवनि और अंबर में
झुकाते - उठाते चले जा रहे हैं ।
जमीं पर पॉव रुकते नही,
मानों उड़ते जा रहे हैं हवा में ।
चलते रहना ही जिनका धर्म है
सब चले जा रहे हैं साथ में
अपने गंतव्य की ओर ।
दूर-दूर कुछ दिखा
हाँ कुछ खंभे जैसा ।
एक ने दूसरे को, दूसरे ने तीसरे को पूछा,
"क्या यही हैं ?"
साथवालों में से किसी की आवाज आई,
"लगता तो यही है, धीरे - धीरे आगे स्पष्ट होता जाएगा ।"

एक बालक को इशारे से, चले जा रहे संघ के नायक आचार्य-श्री ने पूछा, तब कन्नड में बालक बोल उठा -

"दोड्ड बेट्ट" (बड़ा पहाड़)

थोड़ा आगे जाने के बाद इन्द्रगिरि (विन्ध्यगिरि) पर्वत पर स्थित

भगवान बाहुबली स्तम्भाकार में दिखाई दिये अर्थात् उनका मुख स्पष्ट नहीं दिखाई दे रहा है। आचार्यश्री के साथ मुनिश्री चिन्मयसागरजी महाराज एवं ब्रह्मचारी राजू भैया व विजय भैया भी हैं। बस ! आचार्य श्री तो वहीं पर बैठ गए और भगवान श्री गोम्मटेश्वर की अस्पष्ट मुखाकृति की भी वंदना की। इतनी दूर से भी पहलीबार निहारने के वे क्षण विशेष रूप से अनुभूति में आए। हर्षाश्रु बह चले आचार्यश्री के चक्षुओंसे। सभी के द्वारा किया गया पुरुषार्थ प्रारब्ध की ओर है। वंदना के पश्चात्भी आचार्यश्री वहीं पर बैठे रहे और अस्पष्ट छवि को अपलक निहारते रहे, बस, निहारते ही रहे पीछे से पूरा संघ आने तक। आचार्य श्री चाहते हैं आनन्द के इन क्षणों में सभी संघस्थ एवं श्रावक सम्मिलित हो। सबके पहुँचने पर पुनः एकसाथ वंदना करके संघ झूटनहल्ली की ओर बढ़ा। सुदेहल्ली पहुँचते ही भगवान श्री गोम्मटेश्वर की मुखाकृति के स्पष्ट दर्शन हो रहे। ऐसा लग रहा है मानों भगवान के सम्मुख ही है, बस, अब लक्ष्य ३ - ४ कि. मी. ही दूर है।

३० जून, १९९३ को आहार के अनन्तर सुदेहल्ली से विहार किया। यहाँ से २ कि. मी. का फासला तय हुआ कि सामने से श्रवणबेलगोला मे पहले से विराजित मुनिश्री हितसागरजी और मुनिश्री पुण्यसागरजी आए। आचार्यपद के पश्चात् प्रथमबार आचार्यश्री के दर्शन किये। उपस्थित सभी वात्सल्यसभर हर्षातिरेकका दृश्य देखते रहे।

कुछ और आगे बढ़ने पर श्रवणबेलगोला में विराजित सभी मुनि जन - आर्यिका माताएँ एवं अन्य त्यागीगण ने आकर आचार्यश्री के मंगल प्रवेश के अवसर पर आचार्यश्री के प्रति अपने अहोभाव - विनय व्यक्त करके अगवानी की। श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोला के स्वस्तिश्री चारुकीर्तिजी भट्टारक महास्वामीजी, महोत्सव कमेटीके पदाधिकारीश्री साहू अशोककुमारजी, श्री निर्मलकुमारजी सेठी, श्री रतनलालजी गंगवाल,

श्री प्रेमचंदजी जैन, श्री अरविंदभाई दोशी, श्री वीरेन्द्रजी हेगडे, श्री चैनरूपजी बाकलीवाल आदि प्रमुख लोग, श्रवणबेलगोला एवं आसपास के गाँवों के समाज द्वारा आचार्य संघ का अभूतपूर्व सत्कार हुआ दक्षिण भारत की परंपरा के अनुसार। तोरण द्वारों से सजे रास्ते, अभिनन्दन बेनर, जगह-जगह लगे बंदनवारों में से रुक-रुककर होती रहती पुष्पवृष्टि। आगत सभी प्रमोद से प्रफुल्लित। भगवान श्री गोमटेश एवं आचार्यश्री की जयगूंज से गगन होता रहा गुंजायमान।

प्रथम मठ-मंदिर में मंगल प्रवेश के अनन्तर भंडारबसदि के दर्शन कर आचार्यश्री सहित सभी बिराजे श्रुतकेवली भद्रबाहु सभा मंडप मे। धर्मसभा ने अभिवन्दन सभा का रूप ले लिया। परम पूज्य आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के सुशिष्य मुनि श्री योगसागरजी भी अपने संघ के अन्य मुनिराज के साथ यहाँ विद्यमान हैं। अन्य वक्ताओं के बाद जब मुनिश्री योगसागरजी महाराज आचार्यश्री की अभिवंदना में वक्तव्य देने लगे तो उन्होंने आचार्य महाराज की उपस्थिति के हर्ष को व्यक्त करते कहा -

"अबतक हमसब यहाँ मास्टर ही मास्टर थे, आज आचार्य ही नही (प्राचार्य) हेडमास्टर हमारे बीच हैं, हमें अत्यंत आनन्द है; अब सब ठीक ही ठीक होगा।"

समारोह के मुख्य अतिथि, लोकसभा के सदस्य और पूर्व प्रधानमंत्री श्री देवगौडा ने अपने अभिभाषण में कहा,

"अहिंसा मार्ग का आचरण करने से ज्ञानोदय और सबका अभ्युदय होगा।"

समारंभ में परमपूज्य जगद्गुरु कर्मयोगी स्वस्तिश्री भट्टारक महास्वामीजी, श्री साहू अशोककुमारजी, श्री निर्मलकुमारजी सेठी आदि ने अपने आदरपूर्ण विचार व्यक्त किये। आचार्यश्री का उद्बोधन भी हुआ। अभिवन्दना सभा समाप्त होते ही सभी साधु सामायिक आदि

आवश्यक क्रियाओं में संलग्न हुए । अनन्तर अष्टाह्निका पर्व के अवसर पर पूर्व में प्रारम्भ सिद्धचक्र महामंडल विधान आराधना में, उसी पांडाल में साधुओं का धर्मोपदेश हुआ ।

सुबह १ जुलाई, १९९३ को विश्वविख्यात भगवान श्री बाहुबलीजी की अलौकिक मूर्ति की वंदनाहेतु प्रस्थान करना है इस विचार मात्र से रोमांचित हो उठे सब आंतर मन में ।

आमने-सामने खड़े सहोदर पहाड़ । उत्तरमे चन्द्रगिरि व दक्षिण में विन्ध्यगिरि (इन्द्रगिरि) दोनों के बीच तलहटी में बसा हुआ है श्रवणबेलगोला (जैनबद्री) । यहाँ का अति प्राचीन इतिहास जैन धर्मावलम्बियो द्वारा देव-शास्त्र-गुरु की उपासना का साक्षी है । समय-समय पर अनेक जिनालयों की स्थापना होती रही, एक विसर्जित हुआ तो दूसरा प्रतिष्ठित । जैन संस्कृति के वचनामृत को सुरक्षित रखने के लिए लिपिबद्ध करने का कार्य भी यहाँ की धरा पर विकसित हुआ ।

अंतिम श्रुतकेवली आचार्यश्री भद्रबाहु स्वामी द्वादश सहस्त्र निर्ग्रन्थ मुनिराजों को साथ लेकर भीषण दुष्काल में उत्तरापथ से चलकर यहाँ आए । आचार्यश्री भद्रबाहुस्वामी ने अपनी समाधि-साधना के लिए इसी स्थान का चयन किया । उनकी समाधि के पश्चात् उनके चरण-चिह्नो की वंदनार्थ प्रायः सभी महान् आचार्य श्री विशाखाचार्य, षट्खण्डागम के सूत्रधार श्री पुष्पदंत और श्री भूतबली, आचार्य पद्मनन्दी (कुन्दकुन्दाचार्य), गृद्धपिच्छ आचार्य उमास्वामी, तार्किक विद्वान् गमकगुरु स्वामी समन्तभद्र, आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी, श्रुतज्ञ सिद्धांतचक्रवर्ती आचार्य श्री नेमिचन्द्रजी जैसे महान् पूर्वाचार्य अपने संघस्थ मुनिराजो सहित यहाँ आये । यहाँ शास्त्रलेखन द्वारा श्रुतसंवर्धन एवं जैन संस्कृति का संरक्षण हुआ । घोर तपाराधना से उन्नत आत्मसाधना कर अंतसमय की पावन समाधि-साधना की उत्कृष्ट भूमि रही है इस चन्द्रगिरि की ।

तलकाडु के धर्मप्राण श्रावक महाबलय्य और माता कालल

देवी का लाड़ला (बेटा) गोम्मट, जिनेन्द्रभक्ति और मातृभक्ति का अनुपम उदाहरण। जो हुए इतिहासप्रसिद्ध गंगवंश के प्रतापी जैन राजा राचमल्लजी के मंत्री, महासेनापति, महामात्य वीरचामुण्डराय। उनकी विलक्षण राजनीति, कुशल सैन्य संचालन पद्धति एवं परम स्वामिभक्ति के कारण वीरमार्तण्ड, भुजविक्रम, समरकेसरी, सुभटचूड़ामणि जैसे अनेक उपनामों से अलंकृत हुए चामुण्डराय। एक हाथ में शस्त्र और दूसरे हाथ में शास्त्र से समाज एवं धर्म दोनों की रक्षा करनेवाले परम संरक्षक। षट्खंडागम सिद्धांतग्रंथ जो (सामान्य) अल्पबुद्धि जिज्ञासुओं के लिए अत्यन्त क्लिष्ट था ऐसे ग्रंथ को सरल शब्दों में उपलब्ध कराने को आचार्यश्री नेमिचन्द्रजी को अनुनय किया श्री चामुण्डराय ने। आचार्यश्रीने इसे सरल, संक्षिप्त एवं ग्राह्यरूप देकर नाम दिया 'पंचसंग्रह'। बाद में चामुण्डराय के लाड़ले नाम गोम्मट से यह ग्रंथ प्रसिद्ध हुआ 'गोम्मटसार' नाम से।

माता काललदेवी को बाहुबली के लोकोत्तर त्याग, तपश्चरण का प्रसंग बार-बार सुनने से अंतर में भगवान बाहुबली के दर्शन की अदम्य अभिलाषा उत्पन्न हुई। श्री भरतचक्रवर्ती द्वारा पोदनपुर में निर्मित भगवान श्री बाहुबली की पूर्ण अवगाहनावाली मूर्ति के दर्शन की आकांक्षा लेकर आचार्य श्री नेमिचन्द्रजी सिद्धांतचक्रवर्ती के साथ चतुर्विध संघ निकल पड़ा पोदनपुर की ओर। श्रवणबेलगोला आकर संघ रुका। यहाँ आचार्यश्री नेमिचन्द्रजी के चिंतन में आया कि कोटि-कोटि सागर काल व्यतीत होने पर चतुर्थकाल के प्रारम्भ में स्थापित मूर्ति का सुरक्षित रहना असम्भव है। सतत चिंतन-मनन से आचार्य श्री नेमिचन्द्रजी को स्वप्न संकेत मिला कि पोदनपुर का दुर्गम स्थान ढूंढना निरर्थक है। साथ में ऐसा भी संकेत पाया कि समर्थ, श्रद्धावान दृढ़संकल्पी चामुण्डराय द्वारा यहाँ पोदनपुर के बाहुबली की अनुकृति साकार की जा सकती है।

संयोगवश श्री चामुण्डराय ने भी ऐसा ही स्वप्न देखा। चन्द्रगिरि

परसे शर-सन्धान कर एक तीर विन्ध्यगिरि की दिशा में छोड़ने पर बाण जिस शिलाको चिह्नांकित करदेगा उसी शिला में से बाहुबली की मूर्ति बनेगी ।

शर-सन्धान से उल्टे कटोरे जैसे आकारवाली विन्ध्यगिरि की अखंड पहाड़ी की शिला चिह्नित हुई । परम श्रद्धालु काललदेवी की अपार भक्ति, अपूर्व प्रतिभावंत प्रखर पुण्यशाली अनन्य मातृभक्त महापुरुष चामुण्डराय की प्रबल शक्ति, आचार्यश्री नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती की अनोखी - कल्पना - वैसी ही पावन प्रेरणा और निर्देशन की मिली जुली त्रिवेणी में, शिल्पी की एकरस तन्मयता, अप्रतिम सौंदर्य दृष्टि, शुभ्र भक्तिभावना, निष्ठा एवं समर्पण के साथ आकंठ डूबे रहने से ही एक ही पाषाण मे निराधार गढ़ी गयी संसार की इस सबसे ऊँची (५७ फीटकी) अप्रतिम सौंदर्ययुक्त पाषाण प्रतिमा का आविर्भाव हुआ ।

भुवनमोहिनी छवि का अद्वितीय लोकोत्तर सौंदर्य, उनकी अकल्पनीय मनोज़ता, प्रचुर प्रभावकता से प्रभावित, ऊँच-नीच, छोटे-बडे, जाति-पांति के भेदभाव से परे सभी भक्तों को "अहिंसा से सुख व त्याग से शांति" का सन्देश सुनाती है । ऐसे भगवान श्री बाहुबली की प्रतिमा १००० से भी अधिक साल से विन्ध्यगिरि पर भक्ति का केन्द्र बनी हुई है ।

संघस्थ साधु-साध्वी, ब्रह्मचारी वर्ग, राजस्थान के श्रावक-श्राविका तथा यहाँ पूर्व में विराजित मुनि व आर्यिकाओं स्वय चतुर्विध संघ के सहित आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने प्रस्थान किया विन्ध्यगिरि की पहाड़ी की ओर । भगवान श्री गोमटेश के दिलकश दर्शन के लिए दत्तचित्त सभी जैसे-जैसे आगे बढ़ते जाते है, वैसे-वैसे बढ़ती जाती है उनके दिमाग में उत्कंठा ।

आचार्य श्री सोच रहे हैं.......

भगवान बाहुबली की इस प्रतिमा के परोक्ष वंदन किये हैं,

प्रत्यक्ष वंदन कब होंगे, मैं नहीं जानता था। आज जीवन के ४३ बसन्त बीतने पर यह शुभ अवसर पाया। विजयनगर से ९ फरवरी को विहारकर आज १४३ वें दिन संघ के कदम इन्द्रगिरि पर भगवान श्री गोम्मटेश्वर - बाहुबली दर्शन के लिए बढ़ रहे हैं। सभी को साथ लेकर आज के अवर्णनीय आनन्द के सहभागी बनाना चाहते हैं आचार्य भगवंत।

मार्ग में विराजित जिन-प्रतिमाओं के दर्शन करते हुए आगे-आगे आचार्यश्री वर्धमानसागरजी, पीछे-पीछे चतुर्विध संघ भगवान श्री गोम्मटेश और आचार्यश्री का जयघोष करते चढ़ाई चढ़ रहे हैं।

परिक्रमा परिसर में पहुँचते ही दिखाई दिया भगवान का मुखमंडल। बस, देखते ही रहे अपलक। परिक्रमा परिसर की तीन प्रदक्षिणा पूर्ण होते ही भीतर प्रवेश हुआ। चरण-दर्शन से आगे बढ़ते-बढ़ते मस्तक तक के दर्शन हुए, साथ आनन्दाश्रुओं का अतिरेक मुखमंडल को भिगोता रहा। जिनकी प्रतिमा इतनी मनमोहिनी है तो असंख्यात वर्ष पूर्व प्रथम कामदेव भगवान श्री बाहुबली कितने अप्रतिम सौंदर्य के धनी रहे होंगे ? निर्निमेष निहारते हुए सोचते हैं आत्मनिष्ठ योगी। भगवान श्री बाहुबली की दृष्टि पर अनिमेष दृष्टि लगाए खडे हैं आचार्यश्री अडोल अकंप। मंत्रमुग्ध सभी निर्निमेष दृष्टि से खो गए नयनाभिराम अप्रतिम सौंदर्य प्रतिमा में स्वत: न जाने कहाँ तक ! सबसे प्रथम भाव-समाधि खंडित हुई ब्रह्मचारी विजय भैया की फिर ब्रह्मचारी राजू भैया की। दोनों ब्रह्मचारी कभी आचार्यश्री के मुखारविंद को देखते हैं तो कभी भगवान श्री बाहुबली के मुखारविन्द को। एक क्षण उन्हें लगा कि भगवान श्री बाहुबली और आचार्य श्री वर्धमानसागरजी का मुखारविंद एकाकार हो गया। यह अलभ्य दर्शन उन दोनों के जीवन का बना धन्य दर्शन। आचार्यश्री की भाव-समाधि टूटते ही सभी ने भगवान बाहुबली के जयघोष से विन्ध्यगिरि की पहाड़ियों को गुंजायमान कर दिया। विन्ध्यगिरि की पहाड़ियों ने पिछले १००० से भी अधिक साल से पहरा

दे रहे श्रवणबेलगोला के संरक्षक भगवानश्री बाहुबली के जयघोष का प्रत्युत्तर दिया प्रतिघोष से ।

सुधी पाठकगण ! जब मैं (लेखक) श्रवणबेलगोला आचार्यश्री के बारे मे माहिती लेने गया तब परम पूज्य जगद्गुरु कर्मयोगी स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी ने मुझे वात्सल्यभाव के साथ माहिती प्रदान करने की पूर्ण व्यवस्था करवा दी । इसके अतिरिक्त वहाँ के पुजारी जी, विन्ध्यगिरि व चन्द्रगिरि स्थित कर्मचारीगण आदि सभी ने संपूर्ण सहयोग प्रदान किया ।

श्रवणबेलगोला से आकर जब आचार्यश्री के दर्शनार्थ भीण्डर गया तब आचार्यश्री से पूछा, "आचार्यश्री ! भगवान श्री बाहुबली के प्रथम दर्शन के वक्त आप कैसे अनुभव से गुजरे ?"

आचार्यश्री ने बताया, "विनोदजी ! बस, वह सब कुछ वैसे का वैसा अबतक हृदय-पटल पर अंकित है । उसे शब्दों में सीमित नही किया जा सकता ।"

भगवान श्री बाहुबली का चरणाभिषेक देखने के अनन्तर अन्य जिन प्रतिमाजी के दर्शनकर इन्द्रगिरि से संघ आया चन्द्रगिरि पर ।

चन्द्रगिरि ! कन्नड मे बोलते हैं चिक्कबेट्ट (छोटा पहाड़) तीसरी शताब्दी ईसवीसन् पूर्व में अंतिम श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु स्वामी के विशाल मुनिसंघ सहित पदार्पण से पवित्र चन्द्रगिरि जैन संस्कृति एवं साधु समाधि-साधना का स्तुत्य स्थल । जिसकी हर जगह समाधि साधना की कथा से जिवंत है ऐसा समाधि साधना का शिखर । जैन संस्कृति से संबंधित शिला-लेखों का कोषागार । २३०० वर्ष से प्रकाशमान पहाड़ । श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु स्वामी का आगमन और उनकी समाधि-साधना के अनन्तर उनके चरण चिह्नों की वन्दनार्थ पधारे अनेक आचार्यों के ससंघ वास्तव्य से यह दिव्यगिरि 'कटवप्रसरि' कन्नड में जैनो की काशी है । मौर्य से लेकर मैसूर के राजवंश अर्थात् चन्द्रगुप्त से

लेकर राजर्षि नाल्वडी कृष्णराज तक अनेक राजाओं ने यहाँ आकर अपना माथा नवाया है। ऐसे चन्द्रगिरि-धर्मगिरि पर वात्सल्यवारिधि आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज ने ससंघ अंतिम श्रुतकेवली श्री भद्रबाहुस्वामी की गुफा में भक्ति-भाव पूर्वक चरणवंदनाकर, पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा की गई वंदना की पारंपरिक शृंखला में परमपूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण आचार्य परंपरा के आचार्य द्वारा की गई वंदना की एक नयी कड़ी जोड़ दी। ऋषिगिरि आज एकबार फिर वर्तमान प्रज्ञाश्रमण आचार्यश्री वर्धमानसागरजी एवं अन्य साधु-साध्वी के उस पर पड़े पादाम्बुजों से पावन हो रही। समस्त देवस्थानों के दर्शन से अतीव आनन्द के सहभागी सब आ गए अपने स्थान पर।

दूसरे दिन २ जुलाई, आषाढ़ शुक्ला १४ को समस्त साधुओं ने उपवास पूर्वक वार्षिक प्रतिक्रमण एवं सायं भगवान श्री बाहुबली के श्री चरणों मे आचार्य श्री वर्धमानसागरजी के साथ करीब ५० से ज्यादा साधु-साध्वियो ने चातुर्मास स्थापनकर साधु संस्था के परस्पर वात्सल्य का उदाहरण प्रस्तुत किया। ऐसे सुनहरे दृश्य को देख हर्षित हुए सभी श्रावक एवं विद्वत् गण। स्वयं भट्टारक श्री चारुकीर्ति महास्वामीजी आह्लादित हैं आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की सहजता - सरलता, धर्म-प्रेम व वात्सल्यभाव की प्रभावकतासे। फलस्वरूप आज विविध संघों के साधुजन अपूर्व धर्मप्रभावना पूर्वक बिराजित हैं एकसाथ।

आचार्यश्री की सन्निधि में विशेष चातुर्मासिक कार्यक्रम प्रारम्भ हुए। गुरुपूर्णिमा - वीरशासन जयन्ती - भगवान श्री पार्श्वनाथ मोक्ष कल्याणक, रक्षाबंधन पर्व, षोड़शकारण पर्व - दशलक्षणपर्व आदि विशिष्ट धर्म माहात्म्य कार्यक्रम भट्टकारजी की दीर्घदर्शिता से आयोजित होते रहे।

बेंगलोर मे आयोजित 'इन्टरनेशनल एसोसिएशन फोर रिलीजियस

फ्रीडम' के अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में अमेरिका, केनेडा, हॉलेन्ड, ब्रिटेन, जर्मनी, न्यूजीलेन्ड आदि देशों से आये प्रतिनिधियों का एक दल करीब ४० विदेशी, विश्व-विख्यात भगवानश्री बाहुबली के दर्शनार्थ पधारे। उस समय विदेशीदल ने परम पूज्य आचार्यश्री वर्धमान सागरजी महाराज एवं स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी दोनों से मिलकर धर्मचर्चा की। दल के नायक श्री जीनकेल ने बताया -

"भगवानश्री बाहुबली की मूर्ति के दर्शन से हमको शांति और आनन्द की अनुभूति हुई। आचार्यश्री एवं स्वामीजी के दर्शन से हम को जो प्रसन्नता का अनुभव हुआ उसे हम शब्दो में व्यक्त नहीं कर सकते।"

रक्षाबंधन पर्वपर कथा के विभिन्न पात्रों की मुख्यता में साधुओं के प्रवचन हुए। अन्त में, आचार्यश्री ने श्रुतसागर मुनिराज को आधार बनाकर पर्व का महत्त्व समझाते हुए, मुनिराजश्री का धर्म-धर्मात्माओं की रक्षा हेतु गुरुआज्ञा के पालन आदि का सुंदर चित्रण प्रस्तुत किया। वर्तमान में धर्मरक्षा - आत्मरक्षा और धर्मायतन रक्षा हेतु समाज के कर्तव्यो का बोध कराया। षोड़शकारण पर्व पर दिये गये आचार्यश्री के महत्त्वपूर्ण प्रवचनों की ओडियो केसेट बनाई गई।

आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज की ३८ वीं पुण्यतिथि (समाधि दिवस) के निमित्त वीरसेवादल के स्वयंसेवकों ने आचार्य श्री विद्यानन्दजी की जन्मभूमि नगर शेडवाल से शांति सद्भावना रेली निकाली जिसका स्तवनिधि, बेलगाँव, हुबली मार्ग से श्रवणबेलगोला पहुँचते ही भव्य स्वागत हुआ। श्री भद्रबाहु सभामंडप में आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण परंपरा के वर्तमान आचार्यश्री वर्धमानसागरजी, सभी साधु-साध्वी, श्री चारुकीर्ति स्वामीजी नांदणी - श्री जिनसेन भट्टारक स्वामीजी, धर्मस्थल के मातुश्री श्रीमती रत्नम्माजी हेगडे, श्री वीरकुमार पाटील, श्री के. पी. मगण्यवर, श्री गुडप्पा कांते, श्री डी. आर

शाह, श्री निर्मल जैन, श्री शांतिनाथ आदि गण्यव्यक्ति उपस्थित रहे ।

समारोह में श्री साहू अशोककुमार जैन, श्री शांतिनाथ पाटील, श्री आर. के. जैन, श्री रमेश देसाई, श्री रत्नाकर फडे, श्री बापु साहब पाटिल, श्रीमती उज्ज्वल अडमोटे, श्री कल्पना वोड आदि ने अपने विचार व्यक्त किये ।

वीर सेवा दल के वीराचार्य श्री बाबा साहेब कुछनोरे चेरीटेबल ट्रस्ट एवं श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला के सहयोग से आयोजित भव्य समारोह में अपने उद्गार व्यक्त करते श्री स्वामीजीने आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के बहु आयामी उपकार को स्मरण करते हुए बताया, "व्यसनमुक्त आंदोलन यशस्वीपूर्वक वीर सेवादल के स्वयंसेवक कर रहे हैं यह प्रशंसनीय है ।"

इस अवसर पर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने आशीर्वचन में कहा, "चारित्र पुन:निर्माण के लिए सूर्य के उद्गम जैसे उद्भूत आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज आदर्श महापुरुष हैं । धर्म परंपरा को आगे की पीढ़ी में बढ़ाने के लिए उनका मार्ग आदर्शमार्ग है ।"

समारम्भ समारोह में डॉ. एस. पी. पाटिल संपादित 'शांतिसागर गीते' पुस्तक का और वीरसेवा दल के विशेषांक, शांति गीत एवं केसेट का आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने विमोचन किया ।

"चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज की स्मृति में शांतिसागर उद्यानवन निर्माण करके कीर्तिस्तंभ स्थापित किया जाएगा ।"

ऐसा कर्मयोगी स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी ने कहा ।

आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज का दीक्षा दिवस मनाया गया ।

दशलक्षण पर्व पर प्रात: दशधर्म तथा मध्याह्न में आचार्यश्री

द्वारा तत्त्वार्थसूत्र के १० अध्यायों पर सर्वार्थसिद्धि ग्रन्थ के आधार से विवेचन हुआ। दशलक्षण पर्व के प्रारम्भ और अंत में विशेष जुलूस निकाला गया। भगवान श्री महावीर स्वामी का निर्वाणोत्सव सम्पन्न होने के बाद वर्षायोग का समापन हुआ।

वर्षायोग अंतर्गत विविध कार्यक्रम परम पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के ससंघ सान्निध्यमें और कर्मयोगी स्वस्तिश्री भट्टारक चारुकीर्ति महास्वामीजी के निर्देशनमें होते रहे। कर्णाटक के मुख्यमंत्री, मंत्रीमंडल के अन्य सदस्य, केन्द्रीय मंत्री, सांसद एवं अनेक राजनेताओंने समदर्शी आचार्यश्री के दर्शन एवं आशीर्वाद पाकर अपने को सुभागी समझा।

तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष साहूश्री अशोककुमारजी उन दिनो तीर्थराज सम्मेदशिखरजी पर दिगम्बर जैन समाज के अधिकारो की सुरक्षा के प्रति काफी चिंतित रहे, वे आचार्यश्री को सारी गतिविधियो से अवगत कराते हुए समय-समय पर आशीर्वाद प्राप्त करते रहे। श्रवणबेलगोला में वर्षायोग - स्थापन के कुछ दिन पश्चात् पंडित श्री सुमेरुचंद्रजी दिवाकर द्वारा लिखित परम पूज्य आचार्यश्री शांतिसागरजी के जीवनचरित्र 'चारित्र चक्रवर्ती' के कन्नड संस्करणका विमोचन अतीव आनंद के साथ आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने अपने करकमलों से संपन्नकर अपने दादागुरु के प्रति अपनी भक्ति, विनयांजलि अर्पित की।

आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण आचार्य परंपरा के आचार्य, साधु-समुदायकी आहार आदि चर्या संबंधी व्यवस्था किसी मठ या समिति से स्वीकार नही करते। यहाँ भी संघ के प्रवास की सारी व्यवस्था का स्वैच्छिक वहन प्रमुख व्यक्तियों ने किया। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी कट्टर हैं परंपरा के, नियमों के निर्वाह में कटिबद्ध हैं उनके परिपालनमे।

सदी के अंतिम महामस्तकाभिषेक की प्रबंध-सबंधी सारी धूमधाम है आखिरी तौर पर। हरकोई संलग्न है कार्य को पूर्णता प्रदान करने में। महोत्सव समिति के राज्य अध्यक्ष एवं कर्णाटक के मुख्यमंत्री श्री विरप्पा मोहीली ने १५ नवम्बरको संपन्न हुए भव्य समारोह में शुद्धात्म के मंगल साधक परमपूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को श्रीफल समर्पित करके महामहोत्सव में ससंघ पावन सामीप्य प्रदान करने हेतु सविनय अनुनय किया। संसदीय कानून मंत्री ऑनरेबल श्री रामस्वामीजी, और राष्ट्रीय महासमिति महामस्तकाभिषेक के अध्यक्ष साहूश्री अशोककुमारजी ने श्रीफल भेंटकर गद्‌गद होते हुए महोत्सव में पधारने को विनती की।

इस मंगलमय अवसर पर जिनधर्मप्रभावक आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने अपने उद्‌बोधन में कहा,

"भारतीय संस्कृति के अमर प्रतीक गोमेटेश भगवान बाहुबली हैं। उनका त्याग वैराग्य सारे विश्व में प्रसारित है। भगवान गोमटेश की अद्वितीय मूर्ति को पानेवाले कर्णाटक के लोग भाग्यवान हैं। दक्षिण और उत्तर भारत को एकसाथ जोड़नेवालों में श्रवणबेलगोला का प्रमुख स्थान है। महोत्सव में भाग लेना सब के लिए संतोष, शांति व आनंद का विषय है।"

नवम्बर २४ को दोपहर १ बजे से भंडार वसदि में गणधर वलय विधान आयोजित हुआ और २५ नवम्बर को भद्रबाहु सभामंडप में आयोजित हुआ दीक्षा समारोह। तकदीर खुली आचार्यश्री के सन्निकट रहनेवाले सनावद के श्री त्रिलोकचंदजी सराफकी जिन्होंने सनावद में ही आचार्यश्री के सम्मुख एक वर्षकी अवधि में निर्ग्रंथ दीक्षा लेने का संकल्प लिया था। दूसरे ब्रह्मचारीश्री सरदारमलजी और तीसरे आर्यिकाश्री सुप्रकाशमतीजी के संघस्थ बाल ब्रह्मचारी नवयुवकश्री भुजबलीजी, तीनों दीक्षार्थियों की प्रार्थना को स्वीकार करते हुए आचार्यश्रीने दीक्षा

प्रदान की। अभिजित मुहूर्त में आगमरीत्यनुसार श्री त्रिलोकचंदजी हुए मुनि श्री चारित्रसागरजी, ब्रह्मचारी सरदारमलजी और भुजबलीजी क्रमश: हुए क्षुल्लक श्री नम्रसागरजी एवं श्री विनम्रसागरजी । नामकरण घोषित होते ही जनता ने गगन गुंजायमान कर दिया जयकारसे ।

चातुर्मास काल में वर्षा की कमी, साथमें महामस्तकाभिषेक की नजदीकी । उपस्थित रहनेवाले लाखों लोगों के लिए जल - व्यवस्था को लेकर महोत्सव कमेटी के सदस्य डूबे गहरे सोच में । क्या इन्तजाम किया जाय ? महोत्सव शुरू होने के कुछ दिन पहले ही कर दिया बन्दोबस्त प्रकृतिने अपने आप । एक सप्ताह तक सतत चलनेवाली बारिश ने व्यवस्थापको की चिंता को धो डाला । तारंगा हो या सलाल, रोज़ड़ हो या पावागढ़ या ऐसे ही दूसरे गाँव । आचार्यश्री की सेवामें मानों जलकायिक जीव रहते हैं सदा तत्पर अपने उपकारका बदला चुकाने । आचार्यश्री के जीवन की माहिती इकट्ठी करने मैं और मेरी श्रीमतीजी जहाँ - जहाँ घूमे वहाँ - वहाँ के लोगों के मुखसे आचार्यश्री की कृपादृष्टि एवं पुण्य प्रभावकी अनेक बातें सामने आई । उनमे से कुछ कोही यहाँ प्रस्तुत किया है ।

श्रवणबेलगोला से पूर्व दिशामे ३ किलोमीटर दूरी पर महामस्तकाभिषेक स्थलको सजाया गया है । साधुओं के लिए संपूर्ण व्यवस्थाएँ हो जानेपर नवम्बर माह के अंतिम सप्ताह में स्वस्ति श्री भट्टारक चारुकीर्तिजी महास्वामीने आचार्यश्री से प्रार्थना की कि, "आप एवं उपस्थित सभी साधुवृंद महोत्सवस्थली पर पधारें ।" अत: महोत्सव प्रारंभ होने के कुछ दिन पूर्व ही आचार्यश्री वहाँ पहुँचे सभी साधु-साध्वियों के साथ ।

जिस दिन का बेकरारी से इन्तजार था उस दिवस २ दिसम्बर १९९३ के मंगलमय प्रभात के शुभमुहूर्त में महोत्सव का एवं पंचकल्याणक का उद्घाटन देश के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री शंकरदयालजी शर्मा के

वरद हस्त से हुआ । समारंभ का शुभारंभ हुआ प्रख्यात गायिका श्रीमती वाणीजयराम द्वारा भगवान गोमटेश की स्तुति से । राष्ट्रपतिजी ने अपने वक्तव्य में कहा-

"अहिंसा के आचरण से हमारा वैयक्तिक जीवन राष्ट्र के लिए उत्तम परिणाम लानेवाला हो सकता है । श्रवणबेलगोला विश्वविख्यात क्षेत्र है, भगवान गोमटेश्वर की भव्यमूर्ति वास्तु शिल्प में अद्‌भुत है, मूर्ति की सुंदरताका वर्णन नहीं कर सकते हैं ।"

महोत्सव - उद्‌घाटन के साथ ही आचार्यश्री एवं साधु-संघकी उपस्थिति में महोत्सव मंच से लगभग २ किलोमीटर और आगे निर्मित प्राकृतभवन और नवनिर्मित अधिगण्य अतिथि निवास को राष्ट्रपतिजी ने उद्‌घाटित किया । राष्ट्रपतिजीने आचार्यश्री और महास्वामीजी के निकट बैठकर चर्चाकी एवं आशीर्वाद प्राप्त किये । समारोह में कर्णाटक राज्य के मुख्यमंत्री श्री विरप्पामोहीलीजी, मंत्रीगण, महोत्सव की स्वागत समिति के अध्यक्ष, धर्मस्थल के धर्माधिकारी श्री वीरेन्द्रकुमारजी हेगड़े, लोकसभा के सदस्य श्री देवगौड़ाजी आदि महानुभाव पधारे ।

स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी ने कहा, "भक्ति से ही मुक्ति मिल सकती है । इस महोत्सव का धार्मिक परंपरा के साथ सांस्कृतिक पर्व के रूप में आचरण किया जा रहा है ।"

आचार्यश्री वर्धमानसागरजीने कहा-

"महोत्सव के लिए राज्य एवं केन्द्र सरकार के सहयोग से धर्म - प्रभावना संपन्न हो रही है ।"

चामुण्डराय मंडप में करीब ३५,००० लोगोंकी उपस्थिति में भागचंदजी पहाड़ियाने ध्वजारोहण किया ।

यद्यपि श्रवणबेलगोलामें प्रत्येक महामस्तकाभिषेक के समय पंचकल्याणक संपन्न होता रहा है, किन्तु इसबार उत्तर भारतीय पद्धति से विशालस्तर पर भगवान आदिनाथ पंचकल्याणक महोत्सव में अभ्यन्तर

सारी क्रियाएँ दक्षिण भारतीय विद्वानोंने पंडित श्री सुकुमालजी उपाध्ये के नेतृत्व में संपन्न कीं। मंच पर मंचित बहिरंग क्रियाएँ पंडित श्री मोतीलालजी मार्तण्ड के नेतृत्व में चलती रहीं। सभी प्रतिष्ठेय मूर्तियों के 'सूरिमंत्र' संस्कार संपन्न हुए आचार्यश्री वर्धमानसागरजी द्वारा।

महोत्सव स्थलपर ही १५, १६, १७ दिसम्बर को आयोजित हुई विद्वत् संगोष्ठी। भारतवर्ष के चोटी के प्राचीन, अर्वाचीन एवं डॉक्टरेट डिग्रीधारी करीब ४० विद्वान् बिना किसी भेदभाव के सभी विचारधारा वाले इसमें सम्मिलित हुए। श्रावकाचार से संबंधित विषयों पर आलेख पढ़े गये। आरंभ सत्र एवं समापन सत्र में आचार्यश्री और साधु समुदाय की उपस्थिति रही। इसी बीच महामस्तकाभिषेक के निमित्त आचार्यश्री सुबलसागरजी महाराज भी ससंघ यहाँ पधारे। महोत्सव स्थल पर दोनों आचार्यों का मिलन दृश्य दर्शनीय था। पश्चात् आचार्यश्री सुबलसागरजी ससंघ श्रवणबेलगोला चले गए।

१८ दिसम्बर, १९९३ महोत्सव स्थल से पश्चिम में ६-७ किलोमीटर की दूरी पर विशाल मैदान में सजाया गया है सभा - मंडप। मुख्य अतिथि हैं भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिंहराव। उपस्थित हैं कर्णाटक के मुख्यमंत्री, उनके मंत्रीगण, साहूश्री अशोककुमारजी एवं धर्मस्थल के धर्माधिकारी श्री वीरेन्द्रजी हेगेड़े। सभा प्रारम्भ होने से पूर्व स्वस्तिश्री भट्टारक चारुकीर्तिजी महास्वामी, आचार्यश्री वर्धमानसागरजी विस्तृत साधु-समुदाय के साथ पधारे। प्रधानमंत्रीश्री नरसिंहराव ने वहाँ पहुँचते ही आचार्यश्री से मंगल आशीर्वाद प्राप्त किये एवं आचार्यश्री से और भट्टारक स्वामीजी के साथ चर्चा की।

जनसमूह से ठसाठस भरा है सभामंडप, उपस्थित महानुभावों एवं सभामंडप में विशेष रूप से सजाए गए शामियाने में त्यागीवृंद से घिरे हुए बीचोंबीच विराजमान आचार्यश्री दिख रहे हैं अध्यात्मके सुमेरुसम। बस, देखते ही बनता है यह अनुपम दृश्य। कुछ विशिष्ट

वक्ताओं के बोलने के पश्चात् प्रधानमंत्रीजी ने अपने वक्तव्य में कहा, "शांति के लिए त्याग करना अत्यंत आवश्यक है। जिस प्रकार एक छोटा सा बीज बोने से एक महान् वृक्ष बन जाता है उसी तरह त्याग रूपी छोटा सा बीज बोने से जीवन सार्थक हो जाता है। पेट्रोल समाप्त होने पर वाहन में पेट्रोल डलवाना पड़ता है उसी प्रकार प्रेरकशक्ति कम होने पर ऐसे पुण्यक्षेत्र पर आकर या गुरूवरों के पास जाकर शक्ति संचित करना जरूरी होता है।"

भट्टारकश्री चारुकीर्तिजी महास्वामीने कहा कि, "जबतक इस विश्व में लोभ, आकांक्षा बनी रहेगी, तब तक भगवानश्री बाहुबली का त्याग का संदेश रहेगा। त्याग से तृप्ति निश्चित है।"

आचार्यश्री वर्धमानसागरजीने अपने आशीर्वादात्मक मंगल प्रवचन में कहा, "भारतीय संस्कृतिकी आत्मा अहिंसा है, संघर्ष से कभी शांति नहीं मिल सकती। भरत-बाहुबली के बीच शस्त्र रहित युद्ध हुआ था। राष्ट्रीय महोत्सव के रूपमें जो महामस्तकाभिषेक सम्पन्न हो रहा है इससे हमें संतोष है।"

प्रधानमंत्रीजीने हेलीकोप्टर से भगवान गोम्मटेश्वर पर पुष्पवृष्टि कर अपनी श्रद्धा-भक्ति प्रकट की। १९ दिसम्बर सुबह भगवान श्री बाहुबली का महामस्तकाभिषेक प्रारम्भ होना है अतः महोत्सवस्थल से आचार्यश्री वर्धमानसागरजी और नगर में विराजित आचार्यश्री सुबलसागरजी दोनों, साधु-समुदाय के साथ पहुँचे इन्द्रगिरि पर्वत पर। श्वेताम्बर स्थानकवासी संप्रदायकी कुछ साध्वियाँ भी उपस्थित रहीं पर्वत पर। सभीने अपना-अपना स्थान ग्रहण कर लिया। जनोदधि उमड़ रहा है इन्द्रगिरि के पास। देश-विदेश से उत्साहित लोग, भगवान गोमटेश के दर्शन करने, महामस्तकाभिषेक में सम्मिलित होने और आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण परंपरा के वर्तमान आचार्यश्री वर्धमानसागरजी एवं साधुसमुदाय के दर्शन कर लाभान्वित होने और

भक्ति सरोवर में गोते लगाने आ पहुँचे । विविध वेषभूषाओं में सजेधजे आबाल-वृद्ध का नजर आ रहा है आनंद-नर्तन ।

भारत के सांस्कृतिक इतिहास की एक विस्मयकारक घटना है भगवान बाहुबली की यह प्रतिमा । प्रथम कामदेव भगवान बाहुबली की श्रवणबेलगोला स्थित यह प्रतिमा भारतीय संस्कृति की धरोहर है । आज लाजवाब मूर्ति की छवि और भी निखरी-निखरी लग रही है । प्रतिमाजी के आसपास पत्र-मालाओं की सज्जा, पलाश रोली से पूरे चौक और प्रांगण मे स्थापित कलशों के चारों कोनों पर आम्रपत्र, केशरिया चीनांशुक में आवृत श्रीफल सहित पुष्पमालाओं से शोभित मंगलघट। कर्णाटक सरकार के सहयोग से अद्भुत सुविधाजनक साज-सज्जावाला अभिषेक मंच । यह सब प्रकार से अत्यन्त शोभायमान सारा अलौकिक दृश्य नयन-मन मोह रहा है उपस्थित सभी का । महामहोत्सव का आँखों देखा-हाल प्रसारित करने हेतु दूरदर्शन की व्यवस्था की गई है एक ओर केबिनमें । आँखों-देखा-हाल सुना रहे हैं जैन जगत् के विख्यात मनीषीश्री नीरजजी जैन सतना एवं इतिहासज्ञ प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी फिरोजाबाद । टेलीविजन के सामने टिकी हुई अरबों आँखों को इन्तजार है महामस्तकाभिषेक का । समग्र विश्व ८५वाँ महामस्तकाभिषेक देखने को है लालायित । टेलीफोन से समय की जानकारी लेकर, भारत के तत्कालीन राष्ट्रपतिश्री शंकरदयालजी शर्मा उत्सुकता से प्रतीक्षारत हैं टेलीविजन के सामने ।

भगवान श्री गोमटेश के मस्तक पर प्रथमकलश से अभिषेक करने का सौभाग्य पाया दिल्लीनिवासी श्रीमान्श्री प्रेमचंदजी कागजी परिवार ने । भगवान श्री बाहुबलीकी वंदना करके एवं आचार्यश्री वर्धमानसागरजी से आशीर्वाद प्राप्तकर जैसे ही उन्होंने प्रथम कलश उठाया अपने करकमलों में, कि पूरे परिसर में उपस्थित लाखों- लाखों लोगोंने भगवान बाहुबली की जयकार से भर दिया श्रवणबेलगोला का

वातस। चरमसीमा को स्पर्शती भक्तों की भक्ति और उनके बावरे नयन निर्निमेष लगे हैं मनोहारिणी मूर्ति पर।

धर्मदिवाकर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी और स्वस्तिश्री भट्टारक चारुकीर्तिजी महास्वामी को अपने साथ लेकर अभिषेक मंच पर आरोहण कर रहा है श्री प्रेमचंदजी कागजी परिवार। मंचपर सभी को आगे बढ़ते देख करीब १०१२ साल पुरानी कल्पना स्मृतिमें सजीव हो उठी हाजिर सभी के चित्तपटल पर। महामात्य चामुण्डराय ने अपनी मातृभक्ति से प्रेरित होकर श्रवणबेलगोला की इस पहाड़ी पर करुणा, आशिष और कल्याणकी निर्झरिणी सी विशाल खड्गासन भगवानश्री गोम्मटेश्वर की ५७ फुट ऊँची एक ही चट्टान में से निराधार गढ़ी गई सातिशययुक्त दिगम्बर - भुवनमोहिनी मूर्ति का निर्माण करवाया। योगचक्रपति भगवानश्री बाहुबली की मूर्तिका प्रथम मस्तकाभिषेक जैसे आचार्यश्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती के सान्निध्य में संपन्न हुआ था वैसे विश्व हितैषी आचार्यश्री वर्धमानसागरजी का ससंघ सान्निध्य अतीत के उस दृश्य को आज तादृश कर रहा है।

मंत्रोच्चार की मंगलध्वनि के साथ प्रथमकलश से अभिषेक प्रारम्भ करते दृश्य को देश-विदेश के जैन-जैनेतर जगत् ने देखा, श्री नीरजजी और प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी की भक्ति सभर माहिती का ऑखों - देखा हाल सुनते ही करोड़ों - करोड़ों हृदय गद्‌गदित से भक्ति-सरिता में विहार करने लगे।

पूरब से पश्चिम से,
उत्तर से दक्षिण से,
धरती के कोने-कोने से,
अवनि से अम्बरतक
बाढ़सी लहर उठी
भगवान गोमटेश की

जयकार, जयकारकी
आचार्यश्री की
जयकार जयकारकी
गूंज गूंजती रही, गूंजती ही रही

गुंजित जयकार ध्वनि की तरंगें वातस में तरंगित होते-होते फैल गई पूरे विश्व में, त्याग व शांति का सुनहरा सन्देश लेकर।

शुद्धजल के अतिरिक्त प्राकृतिक पदार्थ दूध, लालचंदन, श्वेत चंदन, हरिद्रा (हल्दी), चावलचूर्ण (कल्कचूर्ण), अनेक औषधियों का कषाय (काढ़ा), सुगंधित जल आदि द्रव्यों का उपयोग अभिषेक में क्रमशः होता रहा। सफेद, केशरिया, लाल, सफेद, कत्थई, स्फटिक सा पारदर्शी आदि रंग एक के बाद एक मूर्ति पर चढ़ते रहे उतरते रहे। कभी एक, कभी दो या तीन रंगों के चढ़े पट भगवान गोमटेश की छवि-सुषमा को सँवारते रहे, फलतः एक से बढ़कर एक नूतन रूप का प्राकट्य होता रहा। उस रंगबिरंगे नवीनतम रूप को प्राची का प्रभाकर अपनी बिखरी हुई स्वर्णिम प्रभा से अभिषिक्त कर और भी प्रभावशाली बनाता रहा। उपस्थित प्रजाजन भक्तिभाव से मूर्ति के साथ तदाकार होकर भगवान के नये-नये रूपो को पीते रहे, बस, पीते ही रहे, नयनों के माध्यम से। साथ-साथ अपने भीतर से जयकार की गूंज उठाते रहे, उठाते ही रहे लम्बे समय तक। हरकोई उतावला है अभिषेक के लिए। सभी के बावरे नयन अपनी बारी के लिए बेताबी से हैं प्रतीक्षारत। उत्तेजित जनसमुदाय की जल्दबाजी से एकसमय ऐसा लगा कि सारी व्यवस्था निष्फल हो जाएगी। उसी समय कुशाग्रबुद्धि के धनी, दीर्घदर्शी, कर्मयोगी स्वस्तिश्री चारुकीर्तिजी भट्टारक महास्वामीजीने अभिषेक के कलशों की बागडोर अपने हाथो में लेकर सभी को अनुशासित एवं आश्वस्त किया। चारों ओर उनकी आयोजनशक्ति की भूरि-भूरि प्रशंसा होने लगी। अन्त में, शांतिधारा के पश्चात् सायं ४-३० बजे आचार्यश्री महोत्सव स्थलपर

लौट आये । १९ दिसम्बर १९९३ से महामस्तकाभिषेक का प्रारम्भ होकर ५ जून, १९९४ को इसका समापन घोषित किया गया । ऐसे विश्वस्तरीय महोत्सवका बखूबी आयोजन करनेवाले प्रशस्य प्रतिभावंत व्यक्तित्व हैं श्री चारुकीर्तिजी भट्टारक महास्वामीजी । क्या है भट्टारक परंपरा ?

भट्टारक परंपरा जैन संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन का एक महत्त्वपूर्ण अंग रही है । मुगल शासन के दौरान जब पूरे देश में दिगम्बर मुनि परंपरा लगभग अंतर्हित होने लगी तब भट्टारकों ने ही जैन जनताको जिनधर्म से जोड़े रखा । धार्मिक परंपराओं का निर्वाह, मन्दिरो का निर्माण, मूर्तियों की प्रतिष्ठा और जैन ग्रन्थों की सुरक्षा करके, अति विषम परिस्थितियों में भी श्रावकों की धार्मिक आस्था को अडिग रखा। जैनत्व के संस्कारों को अपने अथक पुरुषार्थ से बचाए रखकर जैनधर्म की बागडोर संभालनेका श्रेय मिलता है भट्टारक परंपराको । भीषण विपत्तिकाल में समाज को विनाश की मुठभेड़ में भी अपने साहस एवं पुरुषार्थ से नव-निर्माण की कल्याणी प्रेरणा देकर जैन सिद्धांत और जैन संस्कृति की रक्षा मे लगे रहे भट्टारकगण ।

जैन संस्कृति के लिए औदार्यसभर समर्पण भाव युक्त ऐसी भट्टारक प्रणाली दक्षिण में कई सदियो से सक्रिय है । उन भट्टारकों को जैनाचार्यों, मुनिराजों द्वारा भरपूर वात्सल्य मिलता रहा है । चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी सल्लेखना के समय भट्टारक श्री लक्ष्मीसेनजी कोल्हापुरवाले एवं भट्टारक श्री जिनसेन स्वामी को उनकी सेवा-वैयावृत्तिकर आचार्यश्री के साथ रहने का सुअवसर मिला । उस समय प्रथमाचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजने उपस्थित भट्टारक द्वयको आज्ञावाचक आशीर्वाद दिये -

"धर्मकी रक्षा करते रहो, समाज की रक्षा करते रहो और साधु-संतों की रक्षा करते रहो ।" भट्टारक परंपरा और मुनि परंपरा दोनों के बीच धर्मानुराग से वात्सल्य एवं सहिष्णुता की भावना विकसित होती

रही है, भट्टारको को साधुओं और श्रावकों दोनों का विश्वास प्राप्त होता रहा है।

जैन शासन के ऐसे सच्चे सेवक, जैन संस्कृति के प्रचार-प्रसार में प्रभावक,समाज के उत्कर्ष में अग्रगण्य, बहुमुखी प्रतिभा- संपन्न,चुम्बकीय व्यक्तित्व के धनी हैं श्रवणबेलगोला के वर्तमान पीठासीन भट्टारक कर्मयोगी स्वस्तिश्री चारुकीर्ति पण्डिताचार्यवर भट्टारक महास्वामीजी। इनका जन्म सिद्धक्षेत्र वारंगा में श्री चन्द्रराजजी इन्द्र के घर श्रीमती कान्तेजी की कोख से सन् १९४९ में हुआ। विशिष्ट गुणों के धनी बालक का नामकरण हुआ रत्नवर्मा। सही में बहुमूल्य गुणरत्नों की खान।

कुन्दकुन्द विद्यापीठ में रत्नवर्माजी के अभ्यासकाल के दौरान श्रवणबेलगोला मठ के तत्कालीन पीठाधीश श्री भट्टाकलंक चारुकीर्ति स्वामीजीने अपने जीवनकाल में ही उत्तराधिकारी की नियुक्ति हेतु, कुन्दुकुन्द विद्यापीठ के अधिष्ठाता से सुयोग्य विद्यार्थियों की कुण्डलियाँ मँगवाकर, उन्हें गहराई से परखकर उनमें से जिनको १२ दिसम्बर, १९६९ मे संन्यास दीक्षा और १९७० में पट्टाभिषेक संपन्न करवाया, वह कुण्डली थी श्री रत्नवर्माजीकी। एक सौम्य, विनयशील, आस्थावान, विज्ञ, सक्षम और संकल्पशील तरुण हुए इस मठ के पीठाधिकारी स्वस्तिश्री चारुकीर्ति भट्टारक स्वामीजी। तबसे श्रीक्षेत्रकी अभिवृद्धि, श्रुतसंवर्धन, समाजकल्याण और बच्चो के लिए शिक्षा सुविधा के कार्यों में जुट गए श्री स्वामीजी।

श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोला का नवतर रूप, ३० से अधिक मंदिरों का जीर्णोद्धार, साफ-सुथरे विन्ध्यगिरि-चन्द्रगिरि एवं गाँव के सभी मंदिर, जिनमे एक ही साथ होती अभिषेक - पूजन, उनके अनमोल मार्गदर्शन एवं व्यवस्था शक्ति के द्योतक हैं।

कन्नड, अंग्रेजी, संस्कृत तथा हिन्दी भाषा पर असाधारण प्रभुत्व, सरल आकर्षक व्यक्तित्व, सुचारु लेखनी, जैनागम के मर्मज्ञ, भारतीय

दर्शनों के अतिरिक्त पाश्चात्य दर्शनों के अध्ययन से अमेरिका, अफ्रीका, इंग्लैंड, बर्मा, थाईलैंड आदि अनेक देशों में अतिथि वक्ता के रूप में आमंत्रित। सन १९८८ में इंग्लैंड के लेस्टर शहर में भगवान श्री बाहुबलीजी की प्रतिमाका प्रतिष्ठापन उनके मार्गदर्शन में संपन्न होने से, एवं कारकल, कनकगिरि, कम्मदहल्ली अर्हत्सुगिरिमठ, मूडबिद्री मठ आदि के धर्मप्रभावी कार्यों में कार्यरत होने से उनका कौशल निखरता है बहुआयामी कार्यकलापो में।

भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव के शुभप्रसंग पर, भगवान गोम्मटेश्वर सहस्त्राब्दी महोत्सव के मुख्य प्रेरणास्त्रोत रहे श्री चारुकीर्ति भट्टारक स्वामीजी। यह महोत्सव सन् १९८१ के महामस्तकाभिषेक महोत्सव के साथ एकाकार हुआ। महोत्सव को चिरस्मरणीय बनाया स्वामीजी की अनवरत लगन और अथक परिश्रमने। तभी तो तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधीने श्री स्वामीजी को 'कर्मयोगी' की उपाधि से अलंकृत कर यथोचित गौरव प्रदान किया।

वर्तमान परिस्थिति में समायोजन के साथ धर्माचरण को लेकर दूरदर्शितापूर्ण व्यवहार से श्रीक्षेत्र पर आनेवाला यात्री भगवान गोमटेश के दर्शन से 'अहिंसा से सुख व त्याग से शांति' का सन्देश एवं स्वामीजी के दर्शन-मुलाकात से अपने साथ उनके आशीर्वाद और आनंदकी अनुभूति ले जाता है। चेहरे पर झलकती तेजस्विता टपकती है उनके वाणी-व्यवहार में। हृदयकी वत्सलता, संकल्पशीलता, कुशाग्रबुद्धि निखरती है उनके बहुआयामी कार्यकलापों में। कौशल से उभरता चुम्बकीय व्यक्तित्व खींचता रहता है सभी को अपनी ओर।

ऐसे भट्टारक स्वामीजी को आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की सरलता, करुणा, सभी के साथ सहजता से होता सौहार्दपूर्ण वात्सल्यमयी व्यवहार मन भाया। २३०० साल प्राचीन इतिहासप्रसिद्ध चन्द्रगिरि पर्वत के नीचे सुन्दर महाद्वार का निर्माण करवाकर उसका उद्‌घाटन

बेलगाँव के श्री महावीरजी पाटील के वरद हस्त से आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की सन्निधिमें संपन्न हुआ ।

३० जून १९९३ को प्रवेशकर १० फरवरी १९९४ तक आचार्यश्री का ससंघ प्रवास रहा श्रवणबेलगोला के पावन क्षेत्र पर। ११ फरवरी को मध्याह्न की सामायिक के अनन्तर गोम्मटगिरि - कनकगिरि आदि तीर्थो के दर्शनार्थ संघ का मंगल विहार हुआ मैसूर की ओर। क्षेत्र पर उपस्थित सभीने दूर तक भक्ति-भाव से संघ के साथ विहार में भाग लिया। करीब ५० कि.मी. विहार हुआ होगा कि भर्या से शालीग्राम के रास्ते मे एक भैंसने संघस्थ आर्यिका श्री अनन्तमतीजी को धक्का लगाकर गिरा दिया। शालीग्राम ५ जिनालयों एवं श्रावकों के १५० घरों की आबादीवाला धार्मिक प्रवृत्ति और वैयावृत्ति की भावना से हराभरा गाँव। माताजी को कमर और पैरमें चोट आने से २२ दिन तक शालीग्राम मे संघ रुका, इस दौरान श्रावकों की सेवा-शुश्रूषा सराहनीय रही। तदनन्तर कुछ संघ को साथ लेकर आचार्यश्री गोम्मटगिरि पहुँचे। भगवान बाहुबली की ११ फुटी प्रतिमा का पंचामृत अभिषेक हुआ। वहाँ से विहार कर आचार्यश्री श्रीसिद्धक्षेत्र कनकगिरि (मलेयूर) आये।

प्राचीन हेमांग देश का ही वर्तमान नाम है कनकगिरि। आगमसे प्रमाणित है कि भगवान महावीर स्वामी का समवसरण कर्णाटक प्रान्त के हेमांग देशमे आया था। भगवान श्री नेमिनाथ स्वामी की यक्षिणी श्रीआम्र कूष्माण्डिनी देवी और भगवानश्री पार्श्वनाथ स्वामीकी यक्षिणी श्री पद्मावती देवी आमने-सामने स्थापित हों, ऐसा भारतवर्षका एकमात्र स्थान है कनकगिरि। सुप्रसिद्ध महामुनि ज्ञानचंद की निर्वाणभूमि होने से कर्णाटक का एकमात्र सिद्धक्षेत्र। जो पैरों में गगनगामी लेप लगाकर विदेह क्षेत्र को जाया करते थे ऐसे महर्षि पूज्यपाद आचार्यश्री की साधना-समाधि-भूमि और भारत के प्रसिद्ध रसविद्याप्रवीण नागार्जुन की साधनाभूमि ऐसे कनकगिरि क्षेत्र पर आचार्यश्री वर्धमानसागरजीने

ससंघ पदार्पण किया आदिनाथ जिनालय में। रात्रिविश्राम के समय अर्धरात्रि व्यतीत होने के पश्चात् आचार्यश्री को एक स्वप्न आया, जिसमें उन्होंने दो धवलवर्णी विशालकाय फण उठाये हुए सर्प देखे। कुछ देरके बाद ध्वनि हुई, "नहीं जाने देंगे - नहीं जाने देंगे" जब निद्रा खुली तो न तो वहाँ सर्प थे और ध्वनि भी नहीं थी। आचार्यश्री अपनी आवश्यक क्रियाओं में संलग्न हो गए।

कनकगिरि की वंदना कर २-३ दिनमें शालीग्राम की ओर पुन: विहार करना चाहते हैं आचार्यश्री, ताकि शेष संघ भी शालीग्राम से आकर कनकगिरि तीर्थकी वंदना कर सके। अपनी आवश्यक क्रियाएँ संपन्न कर आचार्यश्री लघुशंका के लिए बैठे तो खड़े नहीं हो सके, बायें पैर के तलुवे में अंगूठे के पास दर्द के कारण वे पैर ठीक से टिका नही पाए। चलना - फिरना भी बड़ी कठिनाई से होता है। स्वस्तिश्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी के कनकगिरि पहुँचने पर आचार्यश्रीने उन्हें इस घटनासे अवगत कराया तब वे बोले, "संभवत: यहाँ के देव आपको रोककर इस क्षेत्र का विकास चाहते हैं।"

जब मैं और मेरी धर्मपत्नी, आचार्यश्री के बारे में माहिती प्राप्त करने हेतु श्रवणबेलगोला गए तब स्वामीजी के साथ चर्चा के दौरान कनकगिरि का उल्लेख आया तो स्वामीजी ने बताया कि "कनकगिरि की घटना से हमें आचार्यश्री के पैर देखने का अवसर प्राप्त हुआ। आचार्यश्री के पैर में चक्र है।"

मैंने पूछा, "स्वामीजी ! इसका क्या मतलब होता है ?"

स्वामीजीने बताया, "सामुद्रिकशास्त्र के आधार से इसका अर्थ फलित होता है कि आचार्यश्री के द्वारा धर्म का बहुत बड़ा प्रचार, प्रसार और धर्मप्रभावना होगी।"

शारीरिक परिषह को समता एवं आनंदपूर्वक सहते हुए उसे कर्म - निर्जराका सुअवसर मानना सहज हो गया है आचार्यश्री वर्धमानसागरजी

को। कुछ दिन मलेयूर गाँव के मंदिर में दो मुनिराज और दो क्षुल्लकजी के साथ रुके। साथ में आये संघ के अन्य साधु लौटे और शेष साधु शालीग्राम से आकर क्षेत्र - वंदनाकर शालीग्राम वापस चले गए, तब तक आचार्यश्री ठीक नहीं हो पाए। फिर कनकगिरि पहाड़ पर जाकर वास्तव्य किया। आचार्यश्री को ४६ दिन तक कनकगिरि में रुकना पड़ा। किसी कवि ने सही कहा है -

"जहाँ पड़े गुरुचरण वहाँ की रज चंदन हो जाती है,
मरुस्थल में भी कलकल बहती कालिन्दी बन जाती है।
पावन पाँव दो धरनेसे भू पूज्यभूमि बन जाती है,
निर्जन मे भी पहचानीसी पगडंडी बन जाती है॥"

अब कनकगिरि के लिए श्री भुवनकीर्तिजी भट्टारकजी की नियुक्ति हो गई है, उस क्षेत्र का विकासकार्य तीव्र गतिसे हो रहा है। समर्पण भावनासे ओतप्रोत, ऊर्जा के भंडार, बुद्धिशाली, प्रबल पुरुषार्थी भट्टारक श्री भुवनकीर्तिजीने बहुत कम समय मे कनकगिरि को सुविधायुक्त बना दिया है, इसलिए वे प्रशंसा के अधिकारी हैं ही। जटवाड़ा (औरंगाबाद) में सम्पन्न भट्टारक सम्मेलन मे भट्टारक श्रीभुवनकीर्तिजी 'संस्कृतिभूषण' उपाधि से सम्मानित किये गये। यह कनकगिरि क्षेत्र राजमार्ग नंजनगूड शहर से २५ किलोमीटर,मलेयूर गॉव के बस स्टेन्ड से एक किलोमीटरकी दूरी पर है। पहाड़ी पर पार्श्वनाथ जिनालय में भगवान पार्श्वनाथ की १५०० साल पुरानी प्रतिमा, पूज्यपाद आचार्यदेव के चरण एवं अन्य चरण भी स्थापित हैं। ज्यादा- से- ज्यादा रुकने को जी करे, ऐसा मनोरम्य है क्षेत्र, बड़ा लुभावना है कनकगिरिकी पहाड़ी का दृश्य।

कनकगिरि से ३० अप्रेल को २ मुनि और २ क्षुल्लकजी के साथ आचार्यश्रीने विहार किया श्रवणबेलगोला की ओर। स्वास्थ्य कमजोर होने से विहारकी गति मंद रही। श्रीरंगपट्टन में ९०० वर्ष प्राचीन आदिनाथ जिनालय मे भगवान आदिनाथ के दर्शन किये एवं अक्षयतृतीया पर्व मनाया। जिनालय के सामने है टीपू सुलतान का महल। यहाँ से

विहार कर कम्मदहल्ली आए। यहाँ भी कनकगिरि के समान भट्टारक पीठ की स्थापना कर स्वस्तिश्री भानुकीर्तिजी भट्टारक की नियुक्ति की गई है। यहाँ जिनालय के दर्शन कर आचार्यश्री श्रवणबेलगोला पहुँचे, शेष संघ भी शालीग्राम से विहार कर यहाँ पहुँचा।

१९ दिसम्बर १९९३ से प्रारम्भ हुए भगवानश्री बाहुबली के महामस्तकाभिषेक का समापन ५ जून, १९९४ को आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में हुआ। समापन घोषणा के बावजूद भी पूरे भारत से लोग आते ही रहे सो मस्तकाभिषेक चालू रहा जिसका अक्टूबर माह में गुरुपुष्यामृत योग में समापन हुआ।

१० जुलाई, १९९४ आषाढ़ शुक्ला २ को आचार्यश्री का आचार्य पदारोहण का चतुर्थ स्मृतिपर्व अत्यन्त प्रभावना के साथ मनाया गया। २०वीं शताब्दी के प्रथमाचार्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी के स्मारक निर्माण हेतु शुभमुहूर्त में शिलान्यास भी संघ- सान्निध्य में किया गया। आषाढ़ शुक्ला १४, २२ जुलाई १९९४ को २५ साधुओं सहित आचार्यश्री वर्धमानसागरजीने श्रवणबेलगोलामें वर्षायोग स्थापित किया। सन् १९९३ के चातुर्मास की तरह यह भी अनेक धर्मप्रभावक कार्यो एवं आत्म-साधना के साथ सम्पन्न हुआ।

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी, चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी अक्षुण्ण आचार्य परंपराको मूलभूत तरीके से वहन करनेवाले समर्थ आचार्य। प्रांत-प्रांत से आते उनके भक्तजन पा जाते सहजता से उनके दर्शन व आशीर्वाद। बालक से वृद्धतक, अबुध से पंडित तक, गरीब से धनवान तक सभी के लिए अविरत बहता रहता है उनका वात्सल्य झरना। समता साधना की लकीर इतनी बुलंद है कि रागद्वेष प्रवेश ही नही कर पाते। परंपरा से निर्धारित आहार-विहार की प्रक्रिया, न मान, न लोभ, न कोई मोह, न आचार्यपद का कोई भार, प्रशंसा, प्रमाद, परिग्रह और प्रचार से कोसों दूर रहकर, अपने संघ के

अस्तित्व को अस्तित्व की सहज सरल घटना माननेवाले आचार्य। संघ के साधु-साध्वी सहजता से अनुशासनका पालनकर समर्पण भाव से ऐसे जीते हैं - साधना करते हैं कि संघ का संचालन अपने आप सहजता से हो जाता है। सारा संघ आचार्यश्री के हस्तावलंबन से संसार सागर पार करने की कामना रखता है। आचार्यश्री के बालसहज निर्दोष मुस्कराहटभरे चेहरे पर सदा आत्मानंद की वसंत ही वसंत है।

ऐसे स्व-पर हितैषी आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को चातुर्मास के मध्य धर्मस्थल के धर्माधिकारी श्री हेगड़ेजी ने श्रवणबेलगोला आकर प्रार्थना की, कि "फरवरी १९९५ में धर्मस्थल में विराजित भगवानश्री बाहुबली का मस्तकाभिषेक होना है अतः आपका ससंघ सान्निध्य, इस अवसर पर, प्राप्त हो ऐसी भावना और अनुनय है।"

दक्षिण भारत की यात्रा पर पहली बार आये आचार्यश्रीने दोहरालाभ, धर्मस्थलतीर्थ की वन्दना एवं भगवान बाहुबली का एक और मस्तकाभिषेक, जानकर श्री हेगडेजी को स्वीकृति दे दी। विहार के पूर्व श्रवणबेलगोला के सिद्धांत-दर्शन में रत्न प्रतिमाओं के दर्शन किये। १२ दिसम्बर, १९९४ को दोपहर दो बजे विहारकर आचार्यश्री हासन, हलेबिडु, भद्रावती, शिमोगा होते हुए हुमच पद्मावती पहुँचे। हुमचके भट्टारकश्री देवेन्द्रकीर्तिजी स्वामीने पहले से मार्ग में ही अगवानी प्रारम्भ कर दी। यहाँ मूल मंदिर के प्रवेशद्वार पर दो शिलापट्ट हैं जिन पर 'उत्तरपुराण' मे वर्णित भगवान पार्श्वनाथ के उपसर्ग - निवारण की घटना को अंकित किया गया है। चार दिन के वास्तव्य के दौरान यहाँ के पंचवसदि के दर्शन और पहाड़ी पर सहस्त्र साल से भी अधिक प्राचीन श्री बाहुबली भगवान की प्रतिमा के दर्शन किये। भट्टारक श्री देवेन्द्र कीर्ति द्वारा यहाँ स्थित रत्नप्रतिमाओं के करवाये गये दर्शन से आचार्यश्री को बड़ा हर्ष हुआ। क्षेत्र की लोकप्रियताका मुख्य अंग है यहाँ का पद्मावती देवी का मंदिर। दक्षिण भारत के तीर्थों पर दिगम्बर

जैन रक्षा का कार्य यहाँ स्थित जैन मठ और उनके पीठाधीश भट्टारकों द्वारा सम्पन्न हुआ है, हो रहा है और आज की गतिविधियों को देखकर कह सकते हैं कि भविष्य में भी होता रहेगा।

यहाँ से आचार्यश्री ससंघ पहुँचे कुन्दाद्रि पहाड़की तलहटी में। यहाँ भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी एवं भट्टारक श्री देवेन्द्रकीर्तिजी दोनों साथ पहुँचे, उन्होंने कुन्दाद्रि के इतिहास से अवगत कराते हुए कहा, "यह आचार्य कुंदकुंद देव की तपोभूमि रही है। इस पर्वत पर रहकर हुमचाके पूर्ववर्ती भट्टारक श्री देवेन्द्रकीर्तिजी के सान्निध्य में गुरुकुल में दोनों श्री चारुकीर्तिजी और श्रीदेवेन्द्रकीर्तिजी भट्टारक स्वामियों का ब्रह्मचर्यावस्था में अध्ययन हुआ। ५ किलोमीटर की चढ़ाईवाले कुन्दाद्रि पर्वत पर पार्श्वनाथ जिनालय, मानस्तंभ, कुंदकुंदाचार्य के चरण हैं। यहाँ से आगे आगुम्बे घाट उतरकर आचार्यसंघने कर्णाटक प्रान्त के दक्षिण कन्नड जिले मे प्रवेश किया। कारकल एवं हुमच के भट्टारक स्वामीजी के साथ श्री हेगडेजी ने महती धर्मसभा में स्वागत किया। यहाँ से भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी (श्रवणबेलगोला) की जन्मस्थली वारंग के मूल मंदिर में भगवान नेमिनाथ, महावीर भगवान, चन्द्रकान्तमणि की भगवान आदिनाथजी की प्रतिमा एवं कच्चे पन्नाकी एक जिन प्रतिमा के दर्शन से आचार्यश्री का मन आह्लादित हुआ। यहाँ सरोवरमें भी चतुर्मुखी प्रतिमा बिराजमान है। यहाँ के सभी जिनालयों के दर्शन कर संघ धर्मस्थल की ओर बढ़ता हुआ कारकल पहुँचा।

कारकल में १६वीं शताब्दी से इतिहास मिलता है। सम्भवत: इस तीर्थ का उद्भव और बाहुबलीजी की प्रतिमा सोलहवी शताब्दी में स्थापित होना योगानुयोग है। यह समय जैनधर्म के प्रभुत्व का प्रमाण है। कारकल में श्री ललितकीर्ति भट्टारकजी के सान्निध्य में भगवानश्री बाहुबली का अभिषेक विशेष रूप से हुआ। यहाँ विद्यार्थियों के आश्रममें महावीर जिनालय, आश्रम के सामने पार्श्वनाथ बसदि, आश्रम के मार्ग

में भी जिनालय और सरोवर में चतुर्मुख जिनालय है। यहाँ छात्राओं का आश्रम भी है। मठ मंदिर मे चन्द्रनाथ भगवान बिराजमान हैं। जिनालयों के दर्शन के साथ-साथ रत्नप्रतिमाओं के दर्शन हुए। यहाँ से विहारकर संघ वैभवी प्रतिमाओं की नगरी मूड़बिद्री पहुँचा।

मूड़बिद्री में ६ दिवस के प्रवास के दौरान वहाँ के 'सिद्धांतदर्शन' एवं रत्नप्रतिमाओं के दर्शन आचार्यश्रीने ससंघ किये। अब तक आचार्यश्रीने मूड़बिद्री की चर्चा सुनीथी, उससे कई गुना अधिक सांस्कृतिक अमूल्य वैभव को निहारकर पूर्ण प्रसन्नता से भर गया हृदय-मन आचार्यश्री का। यहाँ के छोटे-मोटे १००० खंभोंवाले 'त्रिभुवन तिलक चूड़ामणि' जिनालय मे एक से बढ़कर एक बहुमूल्य प्रतिमाओं के दर्शन से अद्वितीय आनंदानुभूति से रोम-रोम पुलकित हो उठा। जिन्हें देखकर विदेशी भी दंग रह जाते हैं ऐसी सारी मूर्तियाँ हीरा, पन्ना, माणेक, नीलम, स्फटिक एवं स्वर्णकी बनी हुई मालूम होती है।

मंदिर के गर्भगृह में मूलनायक भगवान चन्द्रप्रभुकी १५ फुट ऊँची देदीप्यमान चद्रसी प्रतिमा ऐसी लग रही है जैसे रजत से बनी हो और ऊपर से स्फटिक का पट लगा हो, मूर्ति में से निकलती किरणें आँखों को चकाचौंध कर देती है। ऐसा लगता है कि,

"चन्द्र किरण सम शांति प्रदाता चन्द्रप्रभु जिनराजा,
श्वेतचन्द्रवत् तनकी आभा चन्द्र द्वितीय बिराजा।"

लोग चन्द्रप्रभु भगवान की मूर्ति का रूप अनिमेष निहारते नही अघाते। इस प्रतिमादर्शन से वर्तमान काल में तीर्थंकर भगवान के रूप का आंशिक अंदाज लगाने का प्रयास कर सकते हैं। त्रिभुवन के तिलक समान इस जिनालय में बिराजित ऐसी अद्वितीय मूर्ति विश्व में अन्यत्र कहीं नही है।

आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में जिनालय का रूप निखरा-निखरा लग रहा है इस जिनालय के प्रसिद्ध लक्ष दीपोत्सव में। संपूर्ण

जिनालय प्रज्वलित लक्षदीप प्रकाश से जगमगा रहा है। यह लक्ष दीपोत्सव वर्ष में एकबार मनाया जाता है। ऐसे मूड़बिद्री में संघस्थ ब्रह्मचारीजी श्रीचोखेरामजी का स्वास्थ्य अचानक खराब हुआ और आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में उन्होंने अत्यन्त शान्त भाव से सल्लेखना-पूर्वक समाधिमरण प्राप्त किया।

मूड़बिद्री से विहारकर सिद्धवन गुरुकुल होते हुए २५ जनवरी, १९९५ को धर्मस्थल में प्रात:कालीन मंगलबेला में आचार्य संघ के प्रवेश के अवसर पर उत्सव मनाया गया। सभामंडप में आयोजित धर्मसभा मे श्री हेगड़ेजी के स्वागतभाषण के पश्चात् - आचार्यश्री ने कहा, "धर्मस्थल तीर्थ अपने नाम में ही विशेषता लिये हुए है। प्रत्येक तीर्थ धर्मका ही स्थल होता है, अत: धर्म के स्थल इन तीर्थों की संसारी प्राणी यात्रा करता है जिससे उसे स्वयं के धर्मस्थल होने का अर्थात् आत्मा को परमात्मा होने की शक्ति का परिचय प्राप्त हो।"

धर्मस्थल दो संस्कृतियों का मिला-जुला तीर्थ है। सभी लोगों के लिए बिना भेदभाव खुला और सभी के लिए अन्नपूर्णा भोजनशाला खुली। सही में समन्वयवादी सर्वोदयतीर्थ। एक ओर ऊँचाई पर चन्द्रप्रभ जिनालय, दूसरी ओर पहाड़ी पर खड्गासन भगवान बाहुबली विराजमान, जिनका मस्तकाभिषेक आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में संपन्न होना है। बीचों-बीच भव्य 'मंजूनाथ' शिवालय मंदिर जिसके धर्माधिकारी हेगड़े परिवार के सदस्य होते हैं, यह परंपरा शताब्दियोंसे चली आ रही है। अल्पायु में धर्माधिकारीका पद ग्रहण करनेवाले श्रीवीरेन्द्रजी हेगड़े के सुसंस्कारित परिवार में माताजीश्री रत्नाम्माजी अत्यंत धार्मिक एवं वात्सल्यमयी हैं। हेगड़ेजी के आवास-परिसर में एक जिनालय एवं घरमें चैत्यालय भी है जहाँ स्वयं हेगड़ेजी पूजा-अर्चना करते हैं। बड़ी वैभवी दक्षिण भारतीय प्रणाली के अनुसार अतीव वैभवी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं भगवान बाहुबली का मस्तकाभिषेक भी बड़ी धूमधाम से सानंद

संपन्न हुआ।

संघस्थ ब्रह्मचारीश्री वाड़ीलालजी महेता अहमदाबादवाले बीमार हुए। प्रात: उन्होंने जिनेन्द्रभगवान की पूजन की, दिनभर साधुजनों के बीच धर्मचर्चामें संलग्न रहे। आचार्यश्री ने उन्हें अन्तिम श्रावक प्रतिक्रमण भी करवाया। चन्द्रप्रभु भगवान की स्तुतिका पाठ करते- करते वे पूर्ण सजगता से समाधिमरण को प्राप्त हुए।

गुजरात के देरोल में जन्मे श्री चुनीलाल रायचंद महेता के सुपुत्र श्री वाड़ीलालजी शुरू से ही धार्मिक प्रकृति के थे। आचार्यश्री सन्मति सागरजी महाराज से प्रेरणा पाकर प्रतिमाव्रतग्रहण किये। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के आचार्यपद ग्रहण करने के समय से उनकी सेवा मे संघमे रहे। संघमे रह कर गुरुवर से जैनधर्म की महती शिक्षा पाई और धर्माराधन करते-करते समाधिमरण प्राप्तकर मनुष्यभव सार्थक किया।

आचार्यश्री के सान्निध्य में रत्नत्रय विधानपूजन के साथ भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा (धर्मसंरक्षिणी)ने शताब्दी महोत्सव का प्रारम्भ किया। महासभा के प्राय: सभी पदाधिकारी यहाँ पहुँचे। श्री निर्मलकुमारजी सेठी, श्री उम्मेदमलजी पांड्या, श्रीचैनरूपजी बाकलीवाल, श्री पूनमचंदजी गंगवाल, श्री रूपचंदजी कटारिया, श्री मदनलालजी बैनाड़ा, श्री त्रिलोकचंदजी कोठारी, श्री बाबूभाई गांधी, श्री आर. के. जैन आदि महानुभाव उपस्थित रहे। महासभा अधिवेशन की अध्यक्षता श्री वीरेन्द्रजी हेगड़ेने की एवं भट्टारकगण भी सम्मिलित होने से शताब्दी महोत्सव अनूठा सिद्ध हुआ।

करीब २० दिन तक धर्मस्थल में रुककर संघ विहार कर सिद्धवन आया, जहाँ श्री हेगड़ेजीने प्रारम्भिक अध्ययन किया था उस गुरुकुल मे संघ रुका। आचार्यश्री का स्वास्थ्य गड़बड़ होने से यहाँ ज्यादा रुककर फिर चारमड़ीघाट होते हुए संघ नरसिंहराजपुर पहुँचा। यहाँ पर भट्टारक श्री लक्ष्मीसेन स्वामीजी से मुलाकात हुई। यह ज्वालामालिनी देवी के

तीर्थ से ख्यातनाम है। यहाँ से शिमोगा होते हुए हुबली पहुँचे। हुबली उपाध्यायश्री निजानन्दसागरजी की जन्मभूमि। यहाँ के १२०० वर्ष प्राचीन अनन्तनाथ मंदिर एवं चन्द्रनाथ मंदिर में सोने - चांदी से निर्मित जिनप्रतिमाओं के दर्शन किये।

प्रकृति-सौंदर्य की लीलास्थली है कर्णाटक प्रांत। यहाँ पर कहीं चन्दन के तो कहीं इलायची और काली मिर्च के जंगल के जंगल दिखाई पड़ते हैं। प्रकृतिने अपना सौदर्य यहाँ उन्मुक्त हाथों से बिखेर दिया है। ऐसा कर्णाटक प्रांत अपने में कुछ और विशिष्टताएँ लिये बैठा है। कुदरत ने बक्षा है खजाना चावल, लोंग, चंदन, इलायची, सुपारी, श्रीफल, काजू आदि का जिनकी उपज से मेहनतकश मानवी संतुष्ट, श्रद्धावान, सरल, दानी एवं पापभीरु हैं। धार्मिक संस्कार जन्मजात पाए जाते है। जिनेन्द्र - पूजन के अष्टद्रव्य यहाँ सहजता से उत्पन्न होते हैं। धर्मरक्षक देव-देवियों की ओर पूर्ण श्रद्धायुक्त मानस ने वैभवी ठाटबाटसे जिनेन्द्रपूजन की आगमोक्त रीतियों को सम्भाला है। आधुनिक भौतिकयुग मे भी बच्चे गुरुकुल में शिक्षा हेतु भेजे जाते हैं। नारियल, सुपारी, चंदन, केला जैसे वृक्षोंसे शोभायमान विन्ध्यगिरि की पर्वतमालाएँ। बरगद आदि घटादार वृक्षोंसे लिपटी हुई लताओं को देखकर लगता है जगह-जगह बाहुबली विद्यमान हैं।

जगह-जगह ताम्रपत्र, ताड़पत्र पर लिखे शास्त्रोंका खजाना। अमूल्य रत्नों एवं कलात्मक, विराट्काय वैभवी मूर्तियों का भंडार, शिलालेखों से युक्त मूड़बिद्री - जैनबिद्री याने दक्षिणका प्रदेश। लुप्त होती हुई भट्टारक परंपराको वैसे ही अक्षुण्ण रखनेवाला प्रदेश। कनकगिरि सिद्धक्षेत्र और आचार्य कुन्दकुन्द की तपोभूमि कुंदाद्रि, चामुण्डराय जैसे अनेक जैनधर्मी राजाओं से जैनत्व से भरपूर अतीत। दिगम्बर आचार्यों, मुनिराजों, आर्यिकामाताओं तथा भट्टारकोंकी जन्मभूमि। धन्य है दक्षिण देश।

ऐसी परमपावन भूमि का मानो कोई भी स्थान आचार्यश्री अदेखा छोड़ना नहीं चाहते विहार के दौरान । हुबली से विहारकर आये अमीनाबावी जो धारवाड़ - बेलगाँव मार्ग पर स्थित है । यहाँ के जिनालय मे एक ही पाषाण पर लगभग दो फुट ऊँचाई तक बहुत ही सुन्दर २४ प्रतिमाएँ हैं । मध्यकी मूर्ति खड्गासन सवा फुट की है । यह मूर्ति अंग्रेजों के शासनकाल में सरकार ले गई थी । यहाँ के लोगोंने प्रीविकौंसिल से मुकदमा लड़कर इंग्लैंड के म्यूजियम से इसे वापस प्राप्त किया। यह है यहाँ के लोगों की संस्कृति और धर्मसंरक्षण की भावनाएँ। बेलगाँव होता हुआ संघ कनगल पहुँचा । यहाँ पर चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की पितृभूमि भोज पर संघ सान्निध्य में विशेष कार्यक्रम करने हेतु प्रार्थना करने विशिष्ट व्यक्ति आये । ११ से १४ मई तक कार्यक्रम करना तय हुआ । कनगल से विहार कर आचार्यश्री संघ सहित प्रसिद्धतीर्थ स्तवनिधि पहुँचे । यहाँ संघ ३ दिन रुका । स्तवनिधि से विहारकर आचार्यसंघ आचार्यश्री देशभूषणजी महाराज की जन्मभूमि कोथली आया । आचार्यश्री देशभूषणजी महाराज की प्रेरणा से यहाँ शांतिगिरि का निर्माण पहाड़ पर हुआ है । त्रिदिवसीय प्रवास में नगर और शांतिगिरि के विशाल सांस्कृतिक वैभव को सबने रुचिपूर्वक देखा । इसी बीच अक्षयतृतीया के दिन शान्तिगिरि पर विराजित भगवान आदिनाथ की विशाल प्रतिमा का मस्तकाभिषेक आचार्यश्री एवं संघ सान्निध्य में सम्पन्न हुआ । यहाँ से विहारकर संघ शमनेवाड़ी-बेड़किहाल होता हुआ पूर्व निर्धारित दिनके अनुसार ७ मई को भोज पहुँचा ।

भोज, इस शताब्दी के प्रथमाचार्य, चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की पैतृकभूमि, उनके परिवार के लोग आजभी यहाँ निवास करते हैं । १६ दिनके वास्तव्यके दौरान आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के सान्निध्य में शांतिविधान आराधना हुई । प्रतिदिन

मध्याह्न बेला के बाद आचार्यश्री का धर्मोपदेश होता रहा । आचार्यसंघ गाँव के निकट निर्मित आचार्यश्री शांतिसागर स्मारक में ही ठहरा । ११ मई से १४ मई तक 'आचार्य परमेष्ठीः' एक अनुचिंतन विषय पर संगोष्ठी का आयोजन भट्टारकश्री चारुकीर्तिजी महास्वामी श्रवणबेलगोला के मार्गदर्शन में हुआ । देशप्रसिद्ध अनेक विद्वानों के अतिरिक्त कर्णाटक-महाराष्ट्र प्रांत के कतिपय विद्वानोंने भी इस आयोजन में भाग लिया। विशिष्ट श्रेष्ठीजन भी इस अवसर पर भोज आये । भोज के समाजप्रमुख श्री अशोकजी पाटील ने इस आयोजन को सम्पन्न करनेमें तन-मन-धन से योगदान किया । प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी और श्री नीरजजी ने संगोष्ठी सुचारु रीत्या चलाई । इस अवसर पर धर्मसंरक्षिणी दिगम्बर जैन महासभा के श्रेष्ठीजनों से श्री निर्मलकुमारजी सेठीने विचार - विमर्शकर आई.टी.आई. शिक्षण संस्थान के लिए भोज में महासभा की ओर से ५ लाख रुपये का दान घोषित किया । दक्षिण भारत जैनसभा के पदाधिकारी गणभी उपस्थित रहे । वीर सेवादल केन्द्रीय समिति और गाँव-गॉव में स्थित शाखाओं के कार्यकर्ता भी बहुत भारी संख्या में उपस्थित रहे । महाराष्ट्र प्रांत के कोल्हापुर व सांगली तथा कर्णाटक के बेलगॉव जिले की समाज भी आयी । भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी महास्वामीकी परिकल्पना के अनुसार चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की पैतृक भूमि पर उन्ही की परम्परा के आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज का ससंघ सान्निध्य और साथ में श्रवणबेलगोला, कोल्हापुर, नांदणीमठ के भट्टारक त्रय की उपस्थिति ने इस ऐतिहासिक कार्यक्रम को और भी महिमावान बनाया । आचार्यश्री वर्धमानसागरजी अपने दादागुरु के घर, दुकान व खेत में जाकर उनकी स्मृति की परिकल्पना से खूब हर्षित हुए । बड़े बुजुर्गोसे आचार्यश्री शांतिसागरजी के बारे में जितनी जानकारी मिलती रही उसे पाने में उन्होंने अनन्य आनंद पाया ।

चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी अक्षुण्ण परंपरा के कोई भी आचार्य अब तक भोज गाँव नहीं आये हैं। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी का पवित्र नगर भोज में आना प्रथम प्रसंग है। गाँव के एवं निकटवर्ती गाँवों से आये श्रावक और अन्य धर्मियों का उत्साह अनन्य है, कह रहे हैं "हमारे शांतिसागरजी ही आये हों, ऐसा ही लग रहा है।" क्यों ऐसा लग रहा है ?

चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजकी परंपरा का हूबहू पालन करना परमपूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी का मकसद रहा है। परंपरा को समर्पित होते हुए बखूबी परंपरा का निर्वाह कर रहे हैं।

क्या है परंपरा ? शुद्ध पानी पीनेवालों से आहार लेना। कुए के पानी का ही उपयोग करना। अंगीठी पर बना आहार लेना। सजातीय विवाह करनेवालों से ही आहार ग्रहण करना। क्या यही परंपरा है। ये तो मात्र परंपरा-सरिता की कुछ बूंदें हैं। शुद्धता और अहिंसा को मध्यनजर रखते हुए बने आचरण के नियम हैं। काल-क्षेत्र परिवर्तन के साथ उसमें परिवर्तन की संभावना है। युग प्रवर्तक, दीर्घद्रष्टा आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की मात्र यही परंपरा कैसे हो सकती है ? उनकी परंपरा में तो किसी भी संस्था के साथ संलग्न हुए बिना निरपेक्ष भाव से निस्पृहता से साधना करना, विवाद से दूर रहकर स्व-साधना में मग्न रहना, समाज की कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न करना, समाज की एकता-संगठन को ही महत्त्व देकर उसके लिए समाज को प्रेरित करना, प्रशस्ति, पुरस्कार और उपाधि ग्रहण करने से दूर रहना। ऐसी समाज एवं श्रावकों के हितार्थ और आत्मसाधना हितार्थ बहुतसी बातें जुड़ी हुई हैं इस परंपरा से।

परमपूज्य चारित्र चूड़ामणि आचार्यश्री वीरसागरजी, परम पूज्य सिद्धांत संरक्षक आचार्यश्री शिवसागरजी, परमपूज्य चारित्र शिरोमणि आचार्यश्री धर्मसागरजी, परमपूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्यश्री

अजितसागरजी महाराजने इस परंपरा को आचरण के नियमों के साथ निभाया है । परंपरा के वर्तमान आचार्य भगवंत जिनधर्मप्रभावक श्री वर्धमानसागरजी महाराज भी इस परंपरा को दृढ़ता से निभा रहे हैं । कभी ऐसा लगता नहीं कि आचार्यश्री परंपरा से बँध गये हैं, संकीर्ण हो गये हैं । परंपरा को निभानेवाले वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज से संकीर्णता की सीमाएँ हार गई हैं । वे इतने खुले हुए हैं, इतने विशाल हैं, करुणा और वात्सल्यसे ऐसे छलाछल भरे हुए हैं कि उनके संपर्क में आनेवाले जैन-अजैन सभी उनके प्रशंसक, भक्त हो जाते हैं, उनसे बँध जाते है, लेकिन जलकमलवत् रहते आचार्यश्री मगन हैं स्वात्मा में । इसलिए वे आचार्यश्री शांतिसागरजी जैसे दिख रहे हैं ।

भोज से विहार कर संघ प्रसिद्ध क्षेत्र कुम्भोज बाहुबली पहुँचा । यहाँ इस साल का चातुर्मास करना तय हुआ । चातुर्मास-स्थापन में देरी होने से आचार्यश्री आसपास के गॉवोंमें विहार का मानस बनाकर ससंघ धर्मनगर पहुँचे । यहॉ धर्मनाथ भगवान की ११ फुट ऊँची खड्गासन प्रतिमा विराजमान है, क्षेत्र के निर्माण की प्रेरणा आचार्यश्री बाहुबली महाराजने दी थी ।

इचलकरंजी के लिए विहार हुआ । यहाँ समाज विभाजित होने से भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा १५ सालों से जमीन पर कपड़े से ढकी हुई रखी है । समाज का विघटन होने से प्रतिष्ठा नहीं हो पाई । सर्वोदयी भावनासे ओतप्रोत आचार्यश्री वर्धमानसागरजीने समाज को उद्‌बोधन देकर उनके हृदय में धर्म, धर्मायतनों के प्रति श्रद्धा को और एकता की भावना को उजागर कर समाज को पंचकल्याणक के लिए संकल्पबद्ध करवाया । यदि समाज एकता के साथ पंचकल्याणक महोत्सव आयोजित करे तो अपना सान्निध्य प्रदान करने का आश्वासन दिया । करुणासिंधु आचार्य भगवंत की उद्‌बोधन वर्षा में समाज का वर्षोंका कालुष्य धुल गया । समाज में एकता और आनन्द की लहर फैल गई। वर्षों से चला

आ रहा वैमनस्य दूर हो गया ।

विविध जगहों पर अनेक लोगों के साक्षात्कार से मुझे लगा कि भक्तों के हृदय में अपने प्रेम, वात्सल्य, करुणा, अहिंसा, ज्ञान, वक्तृत्व और सर्वोदय की भावना से आकंठ डूबे हुए आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को, न प्रचार की जरूरत है न प्रसार की । उनकी चर्या ही उनका प्रचार है । उनका चारित्र ही धर्म प्रभावना का प्रेरक है । उनका वात्सल्य ही उन्हें सर्वप्रिय बनाता है । जहाँ- जहाँ उनके पद - पंकज स्पर्श करते हैं वहाँ से वैमनस्य और विवाद दूर भागते हैं । ऐसा सिर्फ दिगम्बर समाज में ही होता है ऐसा नहीं, बहुत से ऐसे प्रसंग मुझे जानने को मिले जहाँ दिगम्बर समाज के अलावा भी आचार्यश्री वर्धमानसागरजीने समाज संगठन के दीप प्रज्वलित किये । आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ऐसे वैरागी है कि उनके संपर्क मे आनेवाला उनका अनुरागी बन जाता है ।

आचार्य संघने सदलगा के जिनालयों के दर्शनकर बोरगाँव जाकर आहार किया । सदलगा आचार्यश्री विद्यासागरजी की जन्मभूमि है । बोरगाँव में अनेक साधुओं का प्रवास रहा तथा ५ मुनिराजों के समाधिस्थल भी यहाँ पर हैं । यहाँ से आचार्यश्री ससंघ नांदणी पहुँचे । अभी यहाँ भट्टारकश्री जिनसेन स्वामी विद्यमान है । वे आचार्यश्रीसे अच्छी तरह से परिचित हैं । विहार करके आचार्यश्री ससंघ कुंजवन आये । यह स्थल १०८ श्री आदिसागरजी महाराज अंकलीकर और १०८ श्री आदिसागरजी बोरगाँवकर का समाधिस्थल है । दोनों परम तपस्वियों की समाधि मे १ या २ दिन का अंतराल है । कुंजवन में दोनों छत्रियो मे दोनों तपस्वी आत्मसाधकों के चरण स्थापित हैं । छत्रियों की प्रशस्तियो में दोनों के लिए मुनि श्री आदिसागर लिखा हुआ है, जो आचार्यश्रीने स्वयं देखा ।

यहाँ (उदगाँव) से ३ किलोमीटर पर अंकलीगाँव है, यहीं के मुनिराज आदिसागरजी के नाम के आगे 'अंकलीकर' विशेषण लगता

रहा है। आचार्यश्री ससंघ यहाँ दो दिन रुके। यहाँ पार्श्वनाथ जिनालय में लगी फोटो पर परम तपस्वी १०८ मुनि आदिसागरजी लिखा हुआ देखा, आचार्य नहीं लिखा था। यहाँ आदिसागरजी महाराज के गृहस्थावस्था के दो भतीजों के साथ आचार्यश्री की चर्चा हुई, उस वक्त समाज के प्रतिष्ठित लोग भी उपस्थित थे। उन्होंने बताया, "आदिसागरजी मुनि महाराज प्रायः कुंजवन में ही रहा करते थे। वे आचार्य नहीं थे, यदि वे आचार्य होते तो हम भी गौरव से कहते, किन्तु वे आचार्य नहीं थे। हमारी जानकारी में उन्होंने इतनी दीक्षाएँ भी नहीं दीं जितनी अब बतायी जा रही हैं। उनकी समाधि में भी अधिक साधु नहीं, १०८ श्री महावीरकीर्तिजी महाराज अवश्य थे। आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज आये थे। अन्यभी मुनि, क्षुल्लक-क्षुल्लिका माताजी रही होंगी। आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज भी कुंजवन से उदगाँव आकर ठहरे थे। वहाँ आदिसागरजी महाराज के पास नही थे। एक आदिसागरजी बोरगाँवकर भी वहाँ पहुँचे थे और अगले दिन या तीसरे दिन उनकी भी समाधि हो गई थी।" इत्यादि जानकारी आचार्यश्री वर्धमानसागरजीने अंकली गाँव में श्रावकों से प्राप्त की। ऐसी जानकारियाँ आसपास के गाँवों में ७५-८० वर्ष से भी अधिक उम्रवाले लोगोंने आचार्यश्री को दी।

अंकली से विहारकर आचार्यसंघ सांगली के नेमिनाथनगर (कॉलोनी)में बिराजित रहा। यहाँ आचार्यश्री वर्धमानसागरजी का ५ वाँ आचार्यपदारोहण स्मृति दिवस मनाया गया। भट्टारक चारुकीर्तिजी भी इस अवसर पर उपस्थित रहे। यहाँ से संघ समडोली पहुँचा। यहाँ आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज का सन् १९२५ में चातुर्मास हुआ था। उसी समय उनका आचार्यपद और उसी दिन मुनिश्री वीरसागरजी और मुनिश्री नेमिसागरजी महाराज की मुनि दीक्षा भी हुई थी। आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज ने नदी के किनारे स्थित मंदिर में चातुर्मास स्थापित किया था। वर्षा में नदी में बाढ़ आने से फिर महाराज

संघ सहित एक खेतमें आये, उसी खेत में शेष वर्षायोग व्यतीत हुआ और उसी स्थान पर उनका आचार्यपद समारोह भी हुआ था । यहाँ आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ससंघ २ दिन ठहरे । संघ के आने से यहाँ बहुत चौके लगे । यहाँ श्रावकों के ५०० घर हैं ।

आज के युग के परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो आचार्यश्री को आहार देना कठिन सा मालूम होता है, फिरभी जगह - जगह चौके स्वयंभू लग जाते हैं । आचार्यश्री की आरती के लिए आबालवृद्ध सभी समय से पहले आकर अपना स्थान ग्रहणकर लेते हैं । हर जगह इतनी भाव-भक्ति से आरती होती है कि आरती में उपस्थित होना, आरती करना सौभाग्य माना जाता है । सामान्यत: सभी को आरती का सम-अवसर मिले, ऐसी व्यवस्था हो जाती है ।

समडोली से विहारकर संघ वापस कुम्भोज-बाहुबली क्षेत्र पर पहुँचा और १९९५ का चातुर्मास - स्थापन हुआ ।

पहाड़की तलहटी मे स्थित कुम्भोज-बाहुबली क्षेत्र पर पहाड़ पर बाहुबली भगवानकी २८ फुट ऊँची प्राचीन प्रतिमा है । इसे बाहुबली पहाड भी कहते हैं । यहाँ पाँच सिद्धक्षेत्रों (तीर्थंकरों की निर्वाण भूमियों) की प्रतिकृतियाँ हैं, करीबन सभी सिद्धक्षेत्रों की रचना है । आसपास की दीवालों पर आध्यात्मिक ग्रंथ लिखे हुए हैं । मानस्तम्भ, जिनालय और बहुत बड़ा सरस्वती भवन भी है । चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की हूबहू काँस्यकी प्रतिमा है । कुम्भोज क्षेत्र का विकास करानेवाले आचार्यश्री समंतभद्र महाराज शिक्षाप्रेमी थे । उन्होंने ५ विद्यार्थियो को लेकर पहाड़की तलहटी में गुरुकुल स्थापित किया, आज यह लौकिक, नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा का केन्द्र है । यहाँ गुरुकुल पद्धति से अध्ययन कराया जाता है । फिर भी क्षेत्र का विकास करानेवाले समंतभद्र महाराज का कहीं भी नाम अंकित नहीं है, यह है उनकी निस्पृहता ।

यहाँ गजाबहन एवं समंतभद्र महाराज के अन्य ब्रह्मचारी शिष्य आदि संस्था का संचालन अच्छे से करते हैं। चातुर्मास के दौरान रविवार को प्रवचन के अतिरिक्त करणानुयोग - द्रव्यानुयोग तथा न्यायग्रन्थोंका विशेष अध्ययन चला। भीसीकर गुरुजी आदि ने संघ की समुचित व्यवस्था की। क्षेत्रस्थित एवं आसपास के लोगोंने संघ को आहार देने का और धर्मश्रवण का लाभ लिया। संघ के अनुशासन और अध्ययन की रूचि को देख लोग दंग रह गए। चातुर्मास के दौरान धर्मस्थल के श्री वीरेन्द्रजी हेगड़े और साहू अशोककुमारजी आदिने क्षेत्रपर ध्यान दिया और दान देने से आचार्यश्री समंतभद्र महाराज के स्वप्न ने साकार रूप लिया। ५ किलोमीटर दूर स्थित वारुणा नदी का जल पाइप लाइन के माध्यम से यहाँ लाया गया है। आचार्यश्री के सान्निध्य में यहाँ भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी महास्वामी की भावनाओं के अनुसार उनकी उपस्थिति में समंतभद्र निलय का शिलान्यास भी हुआ।

वर्षायोग पूर्णकर आचार्यश्री ससंघ विहारकर शुक्रवार पेठ कोल्हापुर मे श्री लक्ष्मीसेन मठ पहुँचे। आठ दिन के वास्तव्य में 'सर्वतोभद्र महामंडल विधान' यहाँ के भट्टारक श्री लक्ष्मीसेनजी और आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में हुआ। शुक्रवार पेठ से विहारकर कोल्हापुर के उपनगर शाहपुरी होकर संघ सांगली पहुँचा। सांगली पहुँचने पर आर्यिकाश्री जिनमतीजी - शुभमतीजी माताजी मिलीं। अपने स्वास्थ्य को नज़र समक्ष रखते हुए आर्यिकाश्री जिनमतीजी ने 'सल्लेखना' की भावना व्यक्त की।'

सांगली से कुण्डलाकार पर्वत के मध्यभाग में जिनमंदिर और ऊपरी भाग पर श्री श्रीधरकेवली के चरण स्थापित हैं ऐसे कुण्डलक्षेत्र पर संघ पहुँचा। यहाँ से दूधनी की ओर विहार करते कुड़ची आया, जो आचार्यश्री नेमिसागरजी महाराज (पोदनपुर - मुम्बई का निर्माण जिनकी प्रेरणा से हुआ) की जन्मभूमि है। कुड़ची से तेरदाल में सल्लेखनारत

मुनिश्री महाबल महाराज मिले। गाँव-गाँव विहार और प्रवचनादि से धर्मप्रभावना करते हुए संघ ने दूधनी के मानस्तम्भ की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा पूर्णकर पुनः इचलकरंजी की ओर विहार प्रारम्भ किया।

सहस्त्रफणी पार्श्वनाथ बीजापुर होकर अतिशयक्षेत्र बाबानगर में श्री पार्श्वनाथ भगवान के दर्शन किये। ऐनापुर-अक्कीवाट आदि अनेक गाँवों में प्रवचन करते और आहारादि करते हुए संघने आगे प्रयाण किया। ऐनापुर, आचार्यश्री कुंथुसागरजी (आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के शिष्य) की जन्मभूमि है। इचलकरंजी की प्रतिष्ठा सन्निकट होने से द्रुत गति से विहार चलता रहा।

कभी खुले आकाश के नीचे खेतमें, कभी पेट्रोल पंप के पास, कभी कही स्कूल में तो कहीं खुले चबूतरे पर रात्रिविश्राम रहा। द्वादशविध तपका संतपन, दशविध धर्मका अनुपालन, द्वादश अनुप्रेक्षाओंका अनुप्रेक्षण और बावीस परिषहोंका संहनन यह सब आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की निजी संपत्ति बन गई है। फलतः प्रत्येक परिस्थिति मे सहजता, सरलता से चेहरे पर झलकती है बालकसी निर्दोष मुस्कान।

तीव्रगति से विहारमें भी प्रवचनादि से समाज को लाभान्वित करते हुए आचार्यश्री ससंघ ठीक समय पर इचलकरंजी आगए और उसी दिन वहाँ झंडारोहण सम्पन्न हुआ। आचार्यश्री के प्रभाव से सामाजिक मन-मुटाव भी दूर हुआ और संपूर्ण समाज के तन-मन-धन के सहयोग से श्री पार्श्वनाथ भगवान का पंचकल्याणक महोत्सव पंडितश्री हँसमुखजी के प्रतिष्ठाचार्यत्व मे अत्यन्त धर्मप्रभावना के साथ सानन्द संपन्न हुआ। आचार्यश्रीने शताधिक छोटी-बड़ी प्रतिमाओं के संस्कार किये और संघस्थ मुनिराजो के सहयोग से सूरिमंत्र संस्कारभी विधिपूर्वक सम्पन्न किये। निर्विघ्नतया पंचकल्याणक सम्पन्नकर आचार्यश्री विहारकर मसक्कड आये।

मसवड परमविदुषी आर्यिका श्री जिनमतीजी एवं श्री पद्मावतीजी का गृहनगर । दोनों आर्यिकाएँ माताजी चारित्र-चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी की परम्परा में परम तपस्वी आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज से दीक्षित थीं। यह कैसा संयोग ! घर छोड़ने और दीक्षा ग्रहण के बाद गृहनगर के सन्निकट सांगली में ही ३१ जनवरी, १९९६ को आर्यिका श्री जिनमती माताजी की समाधि हो गई ।

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की मुनि दीक्षा के पश्चात् खानियाजी(जयपुर) में उनकी नेत्रज्योति चली गई तब शान्ति-भक्ति में सम्मिलित होनेवाली वात्सल्यमयी माँ जिनमतीजी का जन्म फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा वीर संवत् १९९० ई. सन् १९३४ के दिन अकलूज (महाराष्ट्र) में पिता फूलचंदजी और माता कस्तूरीदेवी की कोख से हुआ था । होली के दिन अवतरित हुई यह बालिका सही अर्थ में कर्मों की होली जलाकर, आत्मोन्नति के पथपर चलेगी, साथ में पिताश्री फूलचंदजी की फोरम एवं माता कस्तूरीदेवी की कस्तूरीसी सुगंध फैलायेगी, यह तो भावी ने ही बताया । बालिका का नाम रखा प्रभावती ।

प्रभावती के दुर्भाग्य से माता-पिता शीघ्र कालकवलित हो गए। नन्ही सी बालिका का लालन-पालन मामा के घर मसवड में हुआ । अपने मिलनसार स्वभाव से उसने सभी के दिल जीत लिये । उनकी लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा प्रारम्भ हुई ।

सन् १९५५ में पूज्य आर्यिकारत्नश्री ज्ञानमती माताजी के मसवड में चातुर्मास के दौरान अनेक बालाएँ पूज्य माताजी से द्रव्यसंग्रह, तत्त्वार्थसूत्र, कातन्त्र व्याकरण आदि अनेक ग्रंथों का अध्ययन करने आती थी । बीस वर्षीय प्रभावती भी उनमें शामिल थी । धर्म में रुचि, शास्त्रों का अध्ययन एवं पूज्य माताजी के सत्संग, वात्सल्य- सान्निध्य ने प्रभावती को वैराग्य मार्ग की ओर प्रेरित किया । दीपावली के दिन पूज्य आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी से दसवीं प्रतिमा तक के व्रत ग्रहण

किये । ई. सन् १९५६ में ब्रह्मचारिणी प्रभावतीबहन, पूज्य आचार्यश्री वीरसागरजी महाराज के करकमलों से क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहणकर बन गई क्षुल्लिका जिनमतीजी और उनका जन में से जिन बनने का पुरुषार्थ प्रारम्भ हुआ । ई.स. १९६१ में कार्तिक शुक्ला ४ को सीकर राजस्थान मे चातुर्मास काल के बीज पूज्य आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज से क्षुल्लिकाश्री जिनमतीजी ने पाया स्त्री- पर्याय का सर्वोत्कृष्ट आर्यिका पद । आर्यिका चर्याका निरतिचार पालन करते हुए अनेक कठोरतम व्रतो की आराधना शुरू की ।

अपनी प्रखर बुद्धि एवं पूज्य आर्यिकाश्री ज्ञानमतीजी के प्रबल निमित्त से अनेक शास्त्रों में पारंगत होकर सही में प्रभावतीजी ने (आर्यिकाश्री जिनमतीजीने) अपनी ज्ञानप्रभा का प्रसार किया । प्रमेयकमल- मार्तण्ड जैसे महान् दार्शनिक ग्रंथकी २०३६ पृष्ठो में हिन्दी टीका लिखकर इस ग्रन्थराज का अभ्यास सरल बनाया । मरणकंडिका ग्रन्थ का अनुवाद करके समाज को अपना महान् योगदान किया ।

विदुषी आर्यिकाश्री जिनमती माताजीने जैनधर्म के सिद्धांत, तदनुसार चर्या और उपदेश की पुष्प - पराग समाज में बिखराते-बिखराते द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव की प्रतिकूलता को सदैव अनुकूल बनाने मे पूर्ण दक्षता पा ली । अपने साथ रहती दूसरी आर्यिकाओं को भी इसी ढँाचे में ढालने का प्रयास वे सतत करती रही । अपने हित-मित-प्रिय वचनसे सबका मन मोह लेतीं तो षट् आवश्यक क्रियाओं में इतनी ही कठोर और समयकी सख्त पाबंद ।

ऐसी महान् विभूति ने मानवजीवन का सर्वोत्तम चरण सल्लेखना व्रत १२ जनवरी, १९९६ के दिन ग्रहण किया । ३१ जनवरी शाम ६-१५ बजे मुनिश्री चारित्रसागरजी, श्री चिन्मयसागरजी आदि मुनिराज एवं श्री शुभमतीजी आदि आर्यिकाओं के श्रीमुखसे णमोकारमंत्र का श्रवण करते-करते देह त्याग किया । उनकी समाधि-साधनामें आर्यिका श्री

शुभमती माताजी का विशेष सहाय रहा। अंतेवासी शिष्या श्री शुभमतीजी ने अंतिम समय तक वैयावृत्तिकर पूर्ण सहयोग दिया।

न्याय-व्याकरण, साहित्य-सिद्धान्त की पण्डिता विदुषी आर्यिकाश्री जिनमतीजी का जीवन प्रसिद्धि से बहुत दूर अत्यन्त निस्पृह था। चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के दर्शनों का सौभाग्य उन्हें अपनी दीक्षा के पूर्व मिला था। दीक्षा के बाद आचार्यश्री वीरसागरजी, आचार्यश्री शिवसागरजी, आचार्यश्री धर्मसागरजी, आचार्यश्री अजितसागरजी और आचार्यश्री वर्धमानसागरजी इन पाँचो आचार्यो के आचार्यकाल में पूज्य आर्यिकाश्री जिनमती माताजी संघ में रहकर अपने साथ-साथ संघ और समाज के अभ्युदय के लिए प्रयासरत रहीं।

मसवड से विहारकर अकलूज, मालशिरस, नातेपुते, दहीगाँव होकर संघ फलटण पहुँचा। यह सारा क्षेत्र आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज एवं उनके कुछ शिष्यों की विहारभूमि रहा। फलटण मे आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के ३-४ चातुर्मास सम्पन्न हुए हैं। सन् १९५२ में यहॉं आचार्यश्री का हीरक जयन्ती महोत्सव मनाया गया था। आचार्यश्री की महती प्रेरणा से ताम्रपत्र पर अंकित धवल-जयधवल आदि सिद्धान्त ग्रन्थ विराजमान हैं। सन् १९५४ का चातुर्मास संपन्नकर आचार्यश्रीने कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र की ओर विहार किया था जहाँ भाद्रपद्र शुक्ला २ सन् १९५५ को उनकी समाधि सम्पन हुई। फलटण में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के ससंघ सान्निध्य में आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज का दीक्षा अमृत महोत्सव मनाया गया।

फलटण से आचार्यश्री बारामती पहुँचे। यहाँ जैन समाज के करीब ३०० घर हैं। "हरिजन की जिनमंदिर में प्रवेश का निषेध रूप फैसला और जैनधर्म स्वतंत्र धर्म है, वह हिन्दूधर्म की शाखा नहीं है" इत्यादि निर्णय बम्बई हाईकोर्ट से होने के बाद करीब साढ़े तीन वर्ष तक अन्नत्याग नियम के पश्चात् आचार्यश्री शांतिसागरजी ने रक्षाबंधन के

दिन अन्नग्रहण किया था ।

बारामती से विहारकर आचार्यश्री ससंघ श्रीरामपुर पहुँचे । यह आचार्यश्री श्रेयांससागरजी महाराज (श्री फूलचंदजी पहाड़े) की गृहस्थ जीवन में कर्मभूमि रहा है । श्री शरदकुमार पहाड़े के यहाँ आचार्यश्री का आहार हुआ ।

दक्षिण भारत के विहार दौरान आचार्यश्री वर्धमानसागरजी चारित्र-चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज से लेकर अपने संघ और अन्य संघ के साधकों की विहारमार्ग में आती जन्मभूमि की सभी जगहों पर गये और वहाँ आहार भी किया । यह दर्शाता है, विशालमना आचार्यश्री के हृदय में बिना भेदभाव के भरा, मोक्षमार्ग के सभी साधकों के प्रति असीम प्रेम ।

लम्बा रास्ता तयकर आचार्यश्री ससंघ कोपरगाँव आये । यहाँ से आचार्यश्रीने श्री सौम्यसागरजी, श्री चारित्रसागरजी, श्री चिन्मयसागरजी एवं कुछ आर्यिका माताजी के साथ गजपंथा की ओर विहार किया तथा शेष संघने श्री हितसागरजी, श्री पुण्यसागरजी मुनिराज के साथ राजस्थान की ओर विहार किया ।

जहाँ से सात बलभद्र और असंख्य यादवों को मुक्ति प्राप्त हुई है ऐसे गजपंथा पहाड़ एवं तलहटी के मंदिर के दर्शनकर संघ मांगीतुंगी गया । यहाँ से श्री रामचंद्रजी, श्री हनुमान, श्री सुग्रीव, श्री नील, श्री महानील ऐसे ९९ करोड़ मुनिराज मोक्ष गए हैं । दक्षिण की ओर जाते समय आचार्यश्री भद्रबाहु स्वामी यहाँ पधारे थे, यहाँ की गुफा में उनकी ध्यानस्थ मूर्ति विराजमान है । क्षेत्र की वंदनाकर संघ दसवेल होकर मालेगाँव पहुँचा । यहाँ नांदगाँव से चलकर मुनिश्री देवनंदीजी अपने संघ सहित आचार्यश्री के दर्शन हेतु पहले ही आ चुके थे । दोनों संघों के मिलन एवं प्रवचनादि का कार्यक्रम अच्छा रहा ।

मालेगाँव से विहारकर संघ प्रख्यात बावनगजा (चूलगिरि)

सिद्धक्षेत्र पहुँचा । यहाँ से इन्द्रजीत, कुंभकरण आदि अनेक मुनि मोक्ष पधारे । भगवान आदिनाथजी की ५२ गज (२७ मीटर) ८४ फुट ऊँची प्रतिमा पाषाण में उकेरी गई है । सिद्धक्षेत्र बावनगजा की वन्दना आचार्यश्री दीक्षा के बाद पहलीबार कर रहे हैं । इन्दौर एवं निमाड़ प्रांत के लोग भारी संख्या में उपस्थित रहे । श्री बाबूलालजी पाटोदी अपने सहयोगियों के साथ अगवानी हेतु पधारे ।

मई माह शुरू हो चुका है करीब ४५० से भी अधिक किलोमीटर का विहार कर, २६ मई से प्रारम्भ होनेवाले उदयपुर के पंचकल्याणक में पहुँचना है । साहस एवं धैर्य से निमाड़ प्रांत की भीषण गर्मी में विहार करता हुआ संघ अंदेश्वर पार्श्वनाथ, कलिंजरा, बागीदौरा होता हुआ पालोदा पहुँचा । यहाँ संघस्थ आर्यिका श्री विशुद्धमतीजी, श्री प्रशान्तमतीजी श्रीपवित्रमतीजी एवं श्रीचेतनमतीजी मिली, जिन्हें विजयनगर छोड़कर आचार्यश्री श्रवणबेलगोला गए थे । सबको एक-दूसरे से मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई । यहाँ से साबला होते हुए आचार्यश्री संघ सहित सलुम्बर पहुँचे । यहाँ कोपरगाँव से आगे राजस्थान की ओर विहार किये हुए श्रीहितसागरजी, पुण्यसागरजी आदि मुनिसंघ से आचार्यश्री ४७ दिन में करीब ४५० किलोमीटर से अधिक चलकर ससंघ आ मिले । यहाँ समस्त संघ सान्निध्य में श्रुत पंचमी पर्व मनाकर श्रुतस्कन्ध विधान सम्पन्न हुआ । सलुम्बर से विहार में मुनिश्री वीरसागरजी (परसादवाले) भी साथ हो गए और संघ २६ मई को प्रात: बेलामें उदयपुर नगर सेक्टर नं. ११ में पहुँचा । यहाँ आचार्यश्री कनकनंदीजी महाराज थे । दोनों संघों के मिलन का दृश्य भावविभोर करनेवाला था । दोनों आचार्य संघों की उपस्थिति में आदिनाथ जिनालय की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का ध्वजारोहण हुआ ।

इस प्रकार संघस्थ ब्रह्मचारिणी - ब्रह्मचारी वर्ग का पुरुषार्थ सफल हुआ और आचार्यश्री दक्षिण भारत के महाराष्ट्र एवं कर्णाटक

प्रान्त के सिद्धक्षेत्रों, अतिशयक्षेत्रों की वन्दना और धर्मप्रभावना कर पुन: राजस्थान के उदयपुरनगर में प्रतिष्ठा के निर्धारित समय पर आ पहुँचे। दक्षिण की यात्रा में श्रवणबेलगोला और धर्मस्थल के दो-दो बाहुबली भगवान के मस्तकाभिषेक महोत्सव हुए, दो पंचकल्याणक महाराष्ट्र मे सम्पन्न हुए। महती धर्मप्रभावनाकर भीषण गर्मी में करीब १४०० किलोमीटर का जल्दी से विहारकर आये हुए आचार्यश्री एवं संघस्थसभी प्रसन्नचित्त नजर आ रहे हैं। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के निजानंद के सामने शारीरिकश्रम प्रभावहीन बनजाता है।

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी एवं आचार्यश्री कनकनंदीजी के ससंघ सान्निध्य में, पंडितश्री हँसमुखजी के प्रतिष्ठाचार्यत्व में पंचकल्याणक निर्विघ्न सानन्द सम्पन्न होकर नूतन मंदिर में भगवान विराजमान हुए। प्रतिष्ठा के पश्चात् उदयपुर के उपनगरों मे कुछ दिन विहारकर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज सर्वऋतुविलास के श्री १००८ महावीर जिनालय में रुके। आषाढ़ शुक्ला २ को बड़ी धर्मप्रभावना के साथ उत्साहपूर्वक आचार्यश्री के आचार्य पदारोहण को ६ वर्ष हो जाने के उपलक्ष मे समस्त उदयपुरनगर की जैनाजैन जनता के मध्य टाउन हॉल मैदान पर महोत्सव मनाया गया। पूर्व दिन ६४ ऋद्धि मंडल विधान सम्पन्न हुआ।

चातुर्मास सन्निकट है, उदयपुर की जनता की कामना है कि आचार्यश्री का ससंघ चातुर्मास उदयपुर में हो सो सभी ने विनयपूर्वक चातुर्मास के लिए विनती की किन्तु आचार्यश्री यथासमय विहारकर चातुर्मास हेतु गींगला पहुँचे। यहाँ आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी आदि चार आर्यिकाएँ भी आ गई थीं। मुनिश्री वीरसागरजी (परसादवाले) के साथ समस्त संघ का चातुर्मास-स्थापन हुआ। ग्रामवासियों ने धर्मप्रभावना पूर्वक आचार्य संघ का चातुर्मास सम्पन्न कराया। समापन बेला में आर्यिका श्री विशुद्धमतीजी का मार्गदर्शन पाकर आचार्यश्री के

ससंघ सान्निध्य में परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर कीर्तिस्तम्भ का शिलान्यास समारोह सम्पन्न हुआ ।

संघस्थ ब्रह्मचारिणी कस्तूरीबाई, विमलाबहन, भावनाबहन,और केशरबहनने आर्यिका दीक्षा के लिए आचार्यश्री के श्रीचरणों में प्रार्थना की । प्रसन्नवदन आचार्यश्रीने मंगल आशीर्वाद दिये । तदनन्तर संघस्थ ब्रह्मचारी एवं ब्रह्मचारिणी बहनें गींगला से तीर्थयात्रा पर गये ।

गींगला से २७ दिसम्बर १९९६ को विहारकर आचार्यश्री आसपास के गाँवों में धर्मप्रभावना करते हुए भीण्डर पधारे । यहाँ ध्यानडूंगरी क्षेत्र पर स्थापित भगवान ऋषभदेव एवं चतुर्विंशति तीर्थंकरों की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा आचार्यश्री के सान्निध्यमें प्रतिष्ठाचार्य पंडितश्री हँसमुखजी के प्रतिष्ठाचार्यत्व में १३ फरवरी से १७ फरवरी तक संपन्न हुई । श्री आदिनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव ध्यानडूंगरी के अंतर्गत भगवान श्री आदिनाथजी के दीक्षा कल्याणक महोत्सव के दिन, दिनांक १५ फरवरी १९९७ को ४ ब्रह्मचारिणी बहनों की आर्यिका दीक्षा संपन्न हुई । दीक्षा के संस्कार परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की अक्षुण्ण परंपरा के वर्तमान आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के पुनीत कर - कमलों द्वारा संपन्न हुए । सकल आचार्यसंघ के पावन सान्निध्य के साथ कर्मयोगी स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी श्रवणबेलगोला, श्रीयुत वीरेन्द्रजी हेगडे धर्माधिकारी धर्मस्थल और ब्रह्मचारिणी गजाबहन कुम्भोज-बाहुबली विशेषरूप से उपस्थित रहे ।

दीक्षा बहिर्यात्रा से अन्तर्यात्रा की, भोग से योग की, राग से वैराग्य की ओर जाने की प्रक्रिया है । निकटवर्ती एवं दूर-सुदूर प्रांतों से भाविक भक्त उमड़ पड़े हैं भीण्डर में । दीक्षा विधि के पूर्व श्री शान्तिविधान पूजन, दीक्षार्थियों की विशाल शोभायात्रा, गणधरवलय विधान पूजन एवं साथ में पंचकल्याणक की विविध क्रियाएँ होती रहीं ।

दीक्षार्थी ब्रह्मचारिणी कस्तूरीबाई का जन्म आजसे करीब ६० साल पूर्व श्रीरतनलालजी कण्ठालिया की धर्मपत्नी पानुबाई की कोख से उदयपुर जिले की सलुम्बर तहसील के जाम्बुड़ा ग्राम में हुआ था। पारिवारिक धार्मिक संस्कारों के साथ मिला कुछ लौकिक शिक्षण। योग्य समय पर जाम्बुड़ा में ही विवाह सम्पन्न हुआ। तदनन्तर कस्तूरीबाई ने मातृत्व धारण किया। पुत्री प्रेमा चार माह की ही हुई थी कि अशुभोदय से पतिवियोग हो गया। आपने धैर्यपूर्वक पुत्रीका लालन-पालन कर दुःखमें भी सुख की राह ढूंढ ली। प्रेमाबाई की शादी करवाकर कस्तूरीबाई अपना जीवन सार्थक करने हेतु ३० वर्ष पूर्व दृढ़ अनुशास्ता आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज के संघ में आ मिली।

चारित्र पथपर अग्रसर होते हुए उन्होंने क्रमशः आचार्यश्री शिवसागरजी से द्वितीय प्रतिमा, आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी से पाँचवीं प्रतिमा एवं आचार्यश्री धर्मसागरजी से सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहणकर आर्यिकाश्री सुशीलमतीजी से धार्मिक अध्ययन एवं गुरुजनों के श्रीमुख से धर्मश्रवणकर ज्ञानप्राप्तिका पुरुषार्थ किया। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी से नारीजीवन की सफलता रूप आर्यिका पद ग्रहणकर बनी आर्यिकाश्री वंदितमतीजी सही में सद्गुणों की कस्तूरी सुवास फैला रही हैं।

कर्ममल से विमल होने का अभियान चलानेवाली ब्रह्मचारिणी विमलाबहन का जन्म १ नवम्बर, १९५३ को सलुम्बर के श्री मोतीलालजी पारड़िया की धर्मपत्नी सज्जनबाईजी की कोख से हुआ। योग्य समय पर विद्याध्ययन प्रारंभ हुआ और ९वीं कक्षा तक शिक्षण प्राप्त कर लेने के पश्चात् धरियावद के श्री मीठालालजी झूठावत के सुपुत्र श्री फतेहलालजी के साथ विवाह हुआ। गार्हस्थ्य जीवन के लगभग ७ वर्ष बीत जाने पर संसार-शरीर - भोगों की विषमता को जानकर विमलाबहन का मन गृहवास से निकलने को छटपटाता रहा। सौभाग्य से सन् १९८२ में

परमपूज्य आचार्यप्रवरश्री धर्मसागरजी महाराज अपने विशाल संघ के साथ धरियावद पधारे। गुरुसमागम से आपका मन दृढ़ होता गया और आपने परिजनों के समक्ष अपना निर्णय रख दिया। फलस्वरूप अधिकतर समय संघमें ही रहने लगीं। संघ में रहकर संघस्थ आर्यिकाश्री विद्यामतीजी के पास धार्मिक अध्ययन प्रारम्भ किया। संघस्थ अन्य बहिनों के साथ श्री वर्धमानसागरजी से छहढाला, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, द्रव्यसंग्रह एवं मोक्षशास्त्र आदि ग्रन्थों का शिक्षण प्राप्त किया। गुरुसेवा के साथ-साथ कई ग्रन्थों का स्वाध्याय करके ज्ञानप्राप्ति की किन्तु चारित्राभिवृद्धि के पुरुषार्थ में भी पीछे नहीं रहीं। आचार्यश्री धर्मसागरजी एवं आचार्यश्री अजितसागरजी से प्राप्त देशव्रतों की वृद्धि करके वर्तमान आचार्यश्री वर्धमानसागरजी से सप्तम प्रतिमा के व्रत १९९१ में ग्रहण किये, अब आर्यिका दीक्षा पाकर बनी वत्सलमतीजी अपने शुभ परिणामों को और भी वृद्धिंगत करेंगी।

गुजरात के भावनगर में १ दिसम्बर, १९५९ को जन्मी बाल ब्रह्मचारिणी भावनाबहनने अपनी माता श्रीमती प्रमिलाबहन और पिताश्री पूनमचंदजी से जन्मघूंटी में ही धार्मिक संस्कार प्राप्त किये। नानीजी और दादीजी के मार्गदर्शन में साधुसंगति में रहकर उन संस्कारों को विशेष परिपुष्ट किया। साथ में लौकिक शिक्षा में स्टेटिस्टिकस्में बी.एस.सी. ऑनर्स, साहित्य में कोविद तक एवं धर्म में छहढाला, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, द्रव्यसंग्रह, मोक्षशास्त्र, क्षत्रचूडामणि एवं धनंजय नाममाला की शिक्षा पाई। शिक्षाप्राप्ति के अनन्तर अपनी अग्रजा बालब्रह्मचारिणी पंकज एम.एससी. ऑनर्स का अनुसरण करते हुए सन् १९८४ में भगवान नेमिनाथजीकी निर्वाणस्थली श्री गिरनारजी सिद्धक्षेत्र पर मुनिश्री विरागसागरजी से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। धार्मिक सांस्कृतिक कार्यक्रम में अग्रसर रह कर सलाल, भावनगर, अहमदाबाद में नाटक प्रस्तुत किये। सन् १९८६ में पंकजबहन की

आर्यिका दीक्षा के समय उन जैसा बनने का निर्धार किया और तभी से प्राय: साधुसंघ में रहना प्रारम्भ कर दिया । ११ वर्षो में आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज, आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज, मुनिश्री विरागसागरजी महाराज, परमविदुषी आर्यिकाश्री जिनमतीजी एवं आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी से सागारधर्मामृत, प्रमा-प्रमेय, सर्वार्थसिद्धि, आलापपद्धति, त्रिलोकसार, तिलोयपण्णत्ती, गोम्मटसार, कर्मकाण्ड, लब्धिसार - क्षपणासार आदि धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन किया । आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की प्रेरणा से 'आलाप पद्धति' के प्रश्नोत्तर भी लिखे । वक्तृत्व कलामे निपुण सदैव प्रसन्नवदना भावनाबहनने सन् १९८७-८८ मे आचार्यश्री धर्मसागरजी एवं आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज से क्रमश: द्वितीय एवं तृतीय प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये । उनकी शेष चार बहिनें, एक भाई एवं माता-पिता स्वकीय परिजनों के साथ प्राय: साधुसंघ मे आकर आध्यात्मिक संस्कार बनाने का पुरुषार्थ करते हैं । अग्रजा बहिन पंकज (आर्यिकाश्री प्रशांतमती माताजी) का अनुसरण कर मानों दोनों बहनो ने ब्राह्मीसुन्दरी का अनुगमन किया । आर्यिका दीक्षा ग्रहणकर ११ वर्ष पूर्व लिये अपने संकल्प को पूरा किया। हो गई आर्यिकाश्री वर्धितमतीजी जो अपने मोक्षप्राप्ति का पुरुषार्थ प्रतिदिन वर्धित करती रहेगी ।

सलुम्बर में श्री ओंकारलालजी रगज्योत के घर ३१ जनवरी, १९६१ में पैदा हुई बच्ची का नाम रखा केशर । लौकिक शिक्षा एवं धार्मिक शिक्षा दिलवाकर समय आनेपर उनका विवाह निकटस्थ ग्राम इंटालीखेडा निवासी और नागपुर प्रवासी श्री अशोककुमारजी के साथ सम्पन्न करवाया । कुछ वर्ष पश्चात् दुर्दैव से वैधव्य को प्राप्त हुई । किन्तु इस दु:ख से विचलित न होकर श्रावकोचित धार्मिक क्रियाएँ करते समय बिताने लगी । सन् १९८१ में सौभाग्य से आर्यिकाश्री निर्मलमतीजी और आर्यिकाश्री सुवैभवमतीजी का वर्षायोग नागपुर में हुआ । आर्यिका

द्वय की सत्संगति से आपकी धार्मिक भावना को बढ़ावा मिला और आपने गृह त्यागकर संघ की शरण ली । मुनिश्री दयासागरजी के संघ में दोनों माताजी के पास रहकर धार्मिक अध्ययन किया । तत्पश्चात् आचार्यप्रवरश्री धर्मसागरजी के संघ में आकर संघस्थ अन्य बहिनों के साथ मुनि श्री वर्धमानसागरजी महाराज से छहढाला, रत्नकरण्ड श्रावकाचार एवं मोक्षशास्त्र आदि ग्रन्थो का अध्ययन किया । कई वर्षों से द्वितीय प्रतिमा के व्रतों का पालन करते हुए संघ में सतत स्वाध्यायरत रहीं और ज्ञानप्राप्तिका पुरुषार्थ करके चारित्रपथ पर अग्रसर हुई । १४ साल से प्राप्त गुरुजनो की संगति के फलस्वरूप आर्यिका दीक्षा पाकर बन गई आर्यिकाश्री विलोकमतीजी ।

पंचकल्याणक के अनन्तर आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में संघस्थ मुनिश्री शाश्वतसागरजी, आर्यिकाश्री दयामतीजी, आर्यिकाश्री सरस्वतीमतीजी, आर्यिकाश्री समतामतीजी और आर्यिकाश्री पवित्रमतीजी ने १२ वर्षीय उत्कृष्ट सल्लेखना की याचना की किन्तु आचार्यश्रीने सभी को पृथक्-पृथक् क्रमशः ११ वर्ष, १० वर्ष, १२ वर्ष, ९ वर्ष और ७ वर्ष की अवधि सीमा का सुझाव दिया जिसे सभी ने स्वीकार किया । ऐसा अवसर आचार्यश्री के जीवन में प्रथमबार आया । यहाँ भीण्डर मे आर्यिकाश्री चेतनमतीजी की समाधि हुई । इसके पश्चात् मुनिश्री शाश्वतसागरजी का स्वास्थ्य अचानक बिगड़ा और उनकी भी समाधि शीघ्र ही हो गई । आर्यिकाश्री पवित्रमती माताजी का स्वास्थ्य खराब होने पर संघस्थ आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी का संबोधन प्राप्त कर एवं आचार्यश्री के मार्गदर्शन में उन्होंने भी अत्यन्त पवित्र परिणामों से सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण किया ।

भीण्डर से १२ मार्च १९९७ को आचार्यश्रीने मुनिश्री पुण्यसागरजी एवं चिन्मयसागरजी महाराज को साथ लेकर अडिन्दा अतिशय क्षेत्र की ओर विहार किया । पूर्व निर्धारित कार्यक्रमानुसार उदयपुर में विराजित

आचार्यश्री अभिनन्दनसागरजी भी मुनिश्री भद्रसागरजी को साथ लेकर अडिन्दा पहुँचे । १४ मार्च को आचार्य युगल का मिलन हुआ । दोनों आचार्यो ने साथ बैठकर निर्णय लिया कि "दोनों ही आचार्य, चारित्र-चक्रवर्ती आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज की परम्परा के वर्तमान आचार्य हैं ।" यह बात सारे समाज में फैल गई । समाज के लोग हर्ष से झूम उठे । अडिन्दा पार्श्वनाथ से १५ मार्च को विहारकर आचार्यश्री पुन: भीण्डर आ गए ।

यहाँ से ५ अप्रेल १९९७ को विहारकर धरियावद होकर आसपास के गॉवों मे धर्मप्रभावना करते हुए आचार्यश्री मुनिसमुदाय के साथ पंचकल्याणक हेतु १८ मई को अंदेश्वर पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र पर पहुँचे । इस प्रतिष्ठा को लेकर पूरे बागड़ प्रान्त में संघर्ष का वातावरण बना हुआ था । क्षेत्र कमेटी और आसपास की समाज में संघर्ष के चलते रहने परभी आचार्यश्री साहसपूर्वक अंदेश्वर पधारे, अपना ससंघ सान्निध्य प्रदानकर आपने प्रभावनापूर्वक पंचकल्याणक पूर्ण करवाया । यहॉ से २२ मई को विहारकर ७ जून को इंटालीखेड़ा जाकर वहॉ पंचकल्याणक संपन्न करवाकर १९ जून को सलुम्बर आये । यहॉ की जनता ने आचार्यश्री का ७वॉ आचार्यपदारोहण स्मृति दिवस भक्तिभावपूर्वक मनाया जिसमे उपस्थित रहे प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी, डॉ. फूलचन्दजी एवं डॉ. कमलेशजी । विद्वत्त्रय की उपस्थिति में एक विचार संगोष्ठी का आयोजन भी हुआ ।

सलुम्बर से विहारकर आचार्यश्री ससंघ पहुँचे पारसोला । चातुर्मास स्थापन से अति आह्लादित पारसोलावासी डटकर धर्मलाभ लेना चाह रहे हैं । आयोजित हुआ सम्यग्ज्ञान श्रावक साधना शिक्षण शिविर आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य मे । माध्यमिक विद्यालय में आयोजित शिविर में लगभग ४५० शिविरार्थी सुबह ५-३० बजे से ध्यान की कक्षा पूर्णकर पश्चात् जिनेन्द्र भगवान की अभिषेक पूजन करते हैं । संघ में

शिक्षण शिविर के प्रथम अवसर पर संघस्थ ब्रह्मचारी वर्ग, आर्यिकावर्ग, मुनिजनों एवं स्वयं आचार्यश्रीने शिविरार्थियों को अध्ययन कराया। आचार्यश्री जब शिविर में एक वृक्ष के नीचे तत्त्वार्थसूत्र की कक्षा लेते थे तो लगता था गुरुकुल चल रहा हो। धर्मोद्योत प्रश्नोत्तर माला, छहढाला, द्रव्यसंग्रह, तत्त्वार्थसूत्र आदि विषयों का अध्ययन करते नगरवासी कृतज्ञता से भर गए। इसके साथ शिविर में विविध धार्मिक अनुष्ठान भी सम्पन्न हुए। चातुर्मास में संघस्थ क्षुल्लक नम्रसागरजी की सल्लेखना हुई।

चातुर्मास पूर्णकर आचार्यश्री विहार कर गामड़ी - निठउवा पहुँचे। कुछ दिन ठहरकर कुछ माताजी को यहाँ छोड़कर, बिजौलिया अतिशयक्षेत्र पर सम्पन्न होनेवाली विशालस्तरीय पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हेतु आचार्यश्री का ससंघ मंगल विहार हुआ। प्रतापगढ़ पहुँचने पर निकटस्थ शान्तिनाथ क्षेत्र के दर्शनकर नीमच (म.प्र.) पहुँचे। त्रिदिवसीय प्रवास मे आचार्यश्री के पब्लिक प्रवचनों से महती धर्मप्रभावना हुई। नीमच से विहारकर २ फरवरी को आचार्यश्री ६ मुनिराजों और लगभग १४ आर्यिकामाताजी सहित ससंघ बिजौलिया अतिशय क्षेत्र पर पहुँचे।

विंध्याचली पार्श्वनाथ तीर्थक्षेत्र बिजौलिया, भगवान पार्श्वनाथकी तपोभूमि, धरणेन्द्र पद्मावती द्वारा कमठकृत उपसर्ग निवारण भूमि एवं केवलज्ञान-प्राप्ति-स्थल। यत्र-तत्र सर्वत्र फैले बड़े-बड़े पत्थर कहानी कहते हैं कमठ द्वारा किये गये उपसर्गकी। इसी प्रकार का अभिमत है इतिहासज्ञ (स्व.) डॉ. कस्तूरचन्दजी कासलीवाल का। चौबीस तीर्थकरो के १२० कल्याणकों में से राजस्थान में मात्र एक भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञान-कल्याणककी कल्याणी भूमि बिजौलिया।

२ फरवरी सन् १९९८ को मध्याह्न की शुभ बेला में सजे-धजे बंदनवार, दरवाजे, पग-पग पर आरतियाँ, उल्लसित श्रावकों की गगन-गुंजित जयकार ध्वनि के साथ धर्मभास्कर, श्रुताभ्यासी परमपूज्य आचार्यश्री

वर्धमानसागरजी महाराज का ससंघ गाजे-बाजे सहित मंगल पदार्पण हुआ। मालीपुरा ग्रामसे होते हुए क्षेत्र तक साढ़े तीन किलोमीटर लम्बे जुलूस में जनता का धर्मोत्साह, अनन्यभक्ति प्रतिबिंबित हो उठे। सर्वाधिक आर्यिका दीक्षा प्रदात्री परमपूज्य गणिनी आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजी, जो पहले ही क्षेत्र पर पधारचुकी थीं, वे गॉव के बड़े दरवाजे पर अगवानी हेतु पधारी। अत्यंत भक्तिपूर्वक मुनिसंघ को नमोस्तु करने का, युगल आर्यिका संघ के वंदामि-प्रतिवंदामि अद्वितीय मिलन के दृश्य से ग्रामवासियो के हृदय हर्ष से गद्गद हो उठे। क्षेत्रपर अनेक विशिष्ट विकास कार्य संपन्न होने से, आज लम्बे समय के बाद प्रतिष्ठा महोत्सव का सौभाग्य, मुनिदीक्षा का पावन प्रसंग, साथ मे धवलकीर्तिधारक आचार्य संघ एवं भद्रशिरोमणि आर्यिका संघ के सुबहान सान्निध्य से महोत्सव मे चार चाँद लग जाएंगे इसी सोच मे सब झूमने लगे।

धर्मानुरागी श्री भॅवरलालजी पटवारी के द्वारा निर्माणाधीन चौबीस जिनालय, भगवानश्री पार्श्वनाथ भव्य समवसरण एवं मानस्तंभ की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा दिनांक ७ फरवरी से १३ फरवरी तक और इसी बीच युगल ब्रह्मचारीजी की मुनि दीक्षा। सोने मे सुगंध। भारत के कोने-कोने से एवं राजस्थान से पधारे जनसमूह त्रिविध लाभ का सौभाग्य पाकर धन्यता का अनुभव कर रहे।

८ फरवरी को बिजौलिया में गाजेबाजे के साथ निकले जुलूस मे हाथियो पर बैठे गौरवर्णवाले दोनों ब्रह्मचारी दिख रहे हैं राजकुमार। पिताश्री पं. फणीन्द्रकुमारजी जैन एवं माता श्रीमती रतनबाईजी का अनमोल रतन बालब्रह्मचारी श्री राजूभैया जिनकी सगाई भी हो चुकी थी, फिर भी उन्होने गृहलक्ष्मी को छोड़कर मुक्तिलक्ष्मी का वरण करने हेतु दिगम्बरी दीक्षा अंगीकार करने को कदम बढ़ाए। दूसरे बाल ब्रह्मचारी श्री विजय भैया पिताश्री कंवरचन्दजी जैन और माता श्रीमती

सुशीलाबाईजी के सुशील समझदार बेटे ने भी मुक्तिरमा का ही चयन किया। धन्य हो गए दोनों परिवार। पुत्र से बिछुड़ने के गम से माँ का दिल एक ओर रोता है तो दूसरी ओर ऐसे होनहार पुत्र को जन्म देने से धन्यता का भी अनुभव करता है।

आज से पाँच साल पूर्व करुणामूर्ति आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज से दोनोंने आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहणकर, उनके ससंघ सान्निध्य में आगम का अध्ययन प्रारम्भ किया। उन्हीं से दिग्दर्शित चारित्र-चरणों पर चलकर इम्तिहान में शत-प्रतिशत खरे उतरने के बाद- अब आत्मसाधना के लिए श्रेष्ठ जैनेश्वरी दीक्षा पाने का मौका आया है। मनचाहा मिलनेकी खुशी से ब्रह्मचारी द्वय का चेहरा खिला-खिला है।

मुनिदीक्षा की लगन से ऐसी आग लगी है कि मूर्छा जलने लगी है, सारी ग्रंथियाँ, सारे शल्य, अहंकार और आंकाक्षायें जलने लगी हैं। ऐसी मुनिदीक्षा की तीव्रतम प्रतीक्षा है ब्रह्मचारीद्वय को। अपनी सीमा और घेरे से बाहर उठना ही है दीक्षा। मन वचन काय से बहिरात्मपने को छोड़कर अंतरात्मा में प्रवेश करना ही है मुनिदीक्षा। ऐसी मुनिदीक्षा उद्धाम वेग, महत संकल्प और सारे जीवन को दाँव पर लगा देने की आकांक्षा के बिना नहीं ली जा सकती।

९ फरवरी की मंगलप्रद बेला, ठीक १२-३० बजे करीब ३० से ३५ हजार जनसमुदाय से खचाखच भरे सुशोभित पांडाल में उच्च सिंहासन पर अचल ज्ञानधारी परमपूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज बिराजमान हैं, साथ मे है मुनिसंघ। दूसरी ओर बिराजमान हैं पूज्य गणिनी आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजी ससंघ। मंचासीन अनेक महानुभावों में श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा के लोकप्रिय अध्यक्षश्री निर्मलकुमारजी सेठी, अन्य पदाधिकारी गण, प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी, डॉ. भागचंदजी एवं डॉ. श्रेयांसकुमार जैन आदि हैं। सनावद से आये दोनों ब्रह्मचारीजी के परिजन पुरजन

पांडाल में उपस्थित हैं ।

मंगलाचरण के तुरन्त बाद ब्रह्मचारीजी राजूभैयाने खडे होकर, परमपूज्य आचार्यश्री एवं उपस्थित सभी महानुभावों से दीक्षा के लिए करबद्ध प्रार्थना करते हुए बताया कि "दु:खो से छुडाने के लिए सच्चे संत ही आधार हैं, उनका प्रथम दर्शन ही मेरे जीवन में मंगलभूत बना। संसार असार है मोहांधकार को भगाने में माँ जिनवाणी का प्रकाश हमारे जीवन मे पथ प्रदर्शित करता रहेगा ।" अपने परिवार से, गुरुदेव एवं समस्त संघ से क्षमा याचना के बाद गुरुचरणों में दिगम्बरदीक्षा देकर अपने को कृतार्थ करने का अनुनय किया । ब्रह्मचारीजी विजय भैया के क्षमा एवं दीक्षा - याचना के साथ उद्‌गार निकले, "मैं अपने भावो को मन - ही-मन अनुभव कर रहा हूँ, कई भवों का थोक पुण्य उदय में आया है जो आज जैनेश्वरी दीक्षा पा रहा हूँ ।"

सभा-संचालन कर रहे ख्याति-प्राप्त विद्वान् इतिहासज्ञश्री नीरजजी जैन सतना ने अपनी अभिव्यक्ति मे बताया कि "संसार, शरीर और भोग आंतरिक संताप उत्पन्न करते हैं ,प्यास लगने पर क्षारयुक्त जलकी ओर न दौडकर मीठे स्रोत "मुनि दीक्षा" की याचना कर रहे हैं, सबसे स्वीकृति चाह रहे है ।"

उच्चासन बिराजित परमपूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज ने दीक्षा प्रदान करने हेतु सबकी स्वीकृति चाही, मुनिसंघ, आर्यिका संघ, उनके परिवारजनो, पांडाल स्थित जन सैलाब एवं क्षेत्रवासियों की । सभी की अनुमोदना मिलने पर आचार्यश्रीने अपनी गुणगंभीरवाणी मे कहा - "यह तीर्थंकरो का मोक्षद मार्ग है, चारित्रचक्रवर्ती परमपूज्य आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराजजी की परम विशुद्ध चारित्रमार्ग की अक्षुण्ण परंपरा को निर्बाध गति से चलाने के लिए प्रतिप्रादित मार्ग में चलना होगा, परंपरा का गौरव बढ़ाना होगा, अनुशासन में रहना होगा, एकल विहार या बिना आज्ञा विहार नहीं करना । इन सब बातों का

पालन अवश्यमेव करना होगा।” ब्रह्मचारी द्वय ने अपने हृदय की अपूर्व भावनाओं को गुरुचरणों में अर्पित करके इन सब बातों को स्वीकार किया ।

ब्र. राजूभैया का केशलुंचन हुआ मुनिश्री पुण्यसागरजी महाराज द्वारा और ब्र. विजय भैया का लोंच हुआ आचार्यश्री के करकमलों से। दोनों के मस्तक पर श्रीलेखन करके आचार्यश्रीने दीक्षा- संस्कार किये । हजारों नरनारियों की करतलध्वनि एवं जयघोष के साथ दीक्षा-विधि संपन्न हुई । राजूभैया का नामकरण हुआ मुनिश्री अपूर्वसागरजी और विजय भैया हुए मुनिश्री अर्पितसागरजी ।

दोनों माया-ममता, संसार-वैभव को निस्सार समझकर, अनमोल मानव जीवन का सही-सही इस्तेमाल करने कर्मसंहार के पथपर चल दिये । दोनों ने अंधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर बढ़ती जाती अखण्ड ज्योतिर्मय जीवन यात्रा का प्रारम्भ किया । जो है बाहर से अन्दर उतरने की आध्यात्मिक साधना, साथ में अन्दर से बाहर फैलकर समाज को कुछ देने से सामाजिक साधना ।

परमपूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी हैं इस युग में उसी भगवान वर्धमान की देशना देनेवाले, परम वात्सल्य का वैभव लुटानेवाले आचार्य । उनके ही ससंघ सान्निध्य-प्रभाव से तपोपसर्ग- कैवल्यधाम बिजौलिया में पंचकल्याणक के अंतर्गत हुई अद्वितीय द्वय मुनि दीक्षा । महासभा के नैमित्तिक अधिवेशन में तीर्थ उद्धारक भामाशाह श्रेष्ठी श्री भँवरलालजी पटवारी को “मेवाड़ गौरव” की उपाधि से अलंकृतकर अभिनन्दन पत्र भेंट किया गया । आचार्यश्री और नवदीक्षित मुनिराज के जयघोष की गड़गड़ाहटसी ध्वनि से बिजली सा चमकार हुआ क्षेत्र बिजौलिया में और उपस्थित जनसमूह की आँखें हो गईं चकाचौंध । सबके भावविभोर हृदय की भक्ति बह रही थी आँखों से ।

इसी अवसर पर सनावद के निकटस्थ ग्राम के ब्रह्मचारीजी श्री चक्रेशजी ने संघ-प्रवेश की अनुमति मांगी, जिसे आचार्यश्री ने स्वीकार किया।

प्रतिष्ठाविधि पंडितश्री हँसमुखजी के प्रतिष्ठाचार्यत्व में सम्पन होने के पश्चात् सूरिमंत्र आचार्यश्री द्वारा दिये जाकर जिनबिंब प्रतिष्ठित हुए। अनन्तर १५ फरवरी को आचार्यश्री ससंघ बिजौलिया नगर में बिराजे। नगर में लगभग १५ दिन का प्रवास रहा। तदनन्तर निकटस्थ गॉव महुआ में संघ का मंगल प्रवेश हुआ। आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में यहॉ की समाजने फाल्गुन की अष्टाह्निका में श्री सिद्धचक्र महामण्डलविधान सम्पन्न किया। आचार्यश्री धर्मसागरजी (उस समय मुनिश्री धर्मसागरजी थे) के संघ एवं श्रीज्ञानभूषणजी के संघ के साथ समाज द्वारा २९ वर्ष पूर्व हुए अभद्र व्यवहार के लिए समाज के सभी स्त्री-पुरुषों और युवको ने आचार्यश्री एवं संघ के सम्मुख क्षमा याचना की एवं प्रायश्चित लिया। सभी लोग हर्षित हैं अपराधका शुद्धीकरण होने से। बन्धुओ! यह मात्र एक उदाहरण है पर अनुकरणीय भी। सन् १९८१ मे आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज के साथ स्वयं मुनिश्री वर्धमानसागरजी (वर्तमान आचार्यश्री) इसी ग्राम के निकट से भीलवाड़ा चातुर्मास हेतु पधारे किन्तु यहाँ नहीं जा पाए थे, वह अवसर १८ साल के बाद आचार्यश्री को मिला।

महुआ से विहारकर आचार्यश्री चॅवलेश्वर पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र के दर्शनकर बेगूंनगर पहुँचे। यहॉ अति प्राचीन किले के मंदिर के एवं नवीन मंदिर के दर्शन किये। बिजौलिया के आसपास के इन गॉवों में आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज का मुनि अवस्था में २९ वर्ष पूर्व मुनिसंघ सहित मंगल विहार हुआ था। २९ वर्ष बाद उन्हीं के शिष्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के मंगल विहार से इस क्षेत्र की समाज ने अपने को धन्यभागी समझा और आचार्यश्री से चातुर्मास हेतु प्रार्थना

की। किन्तु इन गाँवों में अल्पकालीन प्रवासकर १४ अप्रेल को आचार्यश्री वापस बेगूं लौट आये। क्योंकि आचार्यश्रीने भीण्डर नगर के सन्निकट खरका ग्राम में सम्पन्न होनेवाली पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में अपने सान्निध्य की स्वीकृति दे रखी थी। संघस्थ मुनिश्री अपूर्वसागरजी (नवदीक्षित मुनिराज) को अन्तरायों की प्रबलता के कारण आचार्यश्रीने, मुनिश्री चारित्रसागरजी, श्री अर्पितसागरजी, आर्यिकाश्री शीतलमतीजी, श्री विपुलमतीजी, श्री सौम्यमतीजी, श्रीवत्सलमतीजी एवं श्रीवर्धितमतीजी को मुनिश्री के पास छोड़कर चित्तौड़ की ओर विहार किया। यहाँ से मंगलवाड़ भीण्डर होते हुए २ मई, १९९८ को गर्मी में भी अधिक दूरी कम समय में चलकर खरका पहुँचे। १६ मई को प्रतिष्ठा सम्पन्न होने के बाद निकटस्थ ग्राम गींगला में कुछ दिन का वास्तव्य रहा। यहाँ से पुनः खरका आये। चातुर्मास के लिए मदनगंज-किशनगढ़ को लक्ष्य बनाकर भीण्डर - कलवल मंगलवाड़ होकर संघ शास्त्रीनगर चित्तौड़ पहुँचा। यहाँ से हरिणी महादेव पहुँचने पर बेगूं में जिन ३ मुनियों और ५ माताजी को छोड़ा था वे संघ में आकर मिले। अब संघ आचार्यश्री सहित ८ मुनिराज १८ आर्यिका माताजी एवं साथ में रहे ब्रह्मचारी - ब्रह्मचारिणियों से शोभायमान है। १७ जून को आचार्यश्री ने प्रातः अपने विशाल संघ के साथ भीलवाड़ा नगर में मंगल-प्रवेश किया। आमलियों की बाड़ी में १० दिवसीय प्रवास के दौरान आषाढ़ शुक्ला २ को आचार्यश्री के ८वें आचार्य पदारोहण स्मृति दिवस के उपलक्ष में यहाँ की समाज ने त्रिदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया। कुन्दकुन्दाचार्य देव के अष्ट पाहुड़ ग्रन्थ पर आयोजित इस संगोष्ठी का निर्धारण दो माह पूर्वकर पंडितश्री हँसमुख जी धरियावद ने शास्त्री परिषद् - विद्वत्परिषद् के अनेक विद्वानों को आमंत्रित किया। इस अवसर पर फिरोजाबाद से प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी, डॉ. श्रेयांसकुमारजी बड़ौत, डॉ. फूलचन्दजी, डॉ. कमलेशजी वाराणसी, डॉ. जयकुमारजी मुजफ्फरनगर, डॉ. रतनचन्दजी

भोपाल, डॉ. सुरेन्द्रभारतीजी बुरहानपुर, श्री निर्मलकुमारजी सतना आदि लगभग १५ विद्वानों ने अपने-अपने आलेख का वाचन किया। संघस्थ मुनिश्री पुण्यसागरजी, श्रीचारित्रसागरजी, श्री अपूर्वसागरजी, श्री अर्पितसागरजी, आर्यिकाश्री शुभमतीजी, आर्यिकाश्री वर्द्धितमतीजी आदिने भी इस प्रसंग पर अपने-अपने आलेख प्रस्तुत किये। भीषण गर्मी मे भी संघ की सहज चर्या को निहारते विद्ववत्‌जन आश्चर्यान्वित हुए। डॉ. रतनचन्द्रजी ने तो अपनी विनयांजलि में यह कहा भी, "ऐसी कठोर चर्या का पालन करनेवाला और भी संघ है ? मैं आचार्यश्री और संघ की चर्या से प्रभावित हुआ।" संगोष्ठी मे समागत विद्वानों ने एवं संघस्थ मुनि - आर्यिका माताजीने आचार्यश्री के प्रति अपनी हार्दिक विनम्रविनयांजलि अभिव्यक्त की। सनावद (म.प्र.) से आई हुई बाल ब्रह्मचारिणी बहन मृदुलाजी एवं अर्चनाजी ने आचार्यश्री से प्रार्थनाकर संघप्रवेश की अनुमति मांगी जिसे आचार्यश्रीने स्वीकारा।

भीलवाड़ा की इस संगोष्ठी के समय मैं और प्रदीपभाई कोटड़िया भीलवाड़ा गये थे। मै ने देखी आचार्यश्री की वक्तकी पाबंदी। संगोष्ठी मे आरम्भ से अंत तक आचार्यश्री ससंघ सान्निध्य प्रदान करते रहे। बहुत ध्यान से विद्वानों के विचारों को सुनते रहे। जब-जब भी मैं आचार्यश्री के दर्शन के लिए गया हूँ तब-तब मुझे तुरन्त ऐसे ही दर्शन मिले है जैसा श्री मधुराष्टकम् (कृष्णाष्टकम्) का छंद जो मेरे दिल मे गूंजता रहता है -

"अधरं मधुरं वदनं मधुरं
नयनं मधुरं हसितं मधुरम्।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं
मधुराधिपते अखिलं मधुरम्॥"

भीलवाड़ा से विहारकर नसीराबाद होते हुए किशनगढ़ शहर और वहाँ से मदनगंज में आषाढ़ शुक्ला १२ की प्रात:कालीन बेला में

आचार्यश्री का मंगल प्रवेश हुआ। मुनिसुव्रतनाथ पंचायत के, आदिनाथ पंचायत के तथा अन्य सब मिलाकर लगभग ६०० घरों की समाज यहाँ निवास करती है। मुनिसुव्रतनाथ मंदिर, आदिनाथ मंदिर, चन्द्रप्रभ मंदिर, नेमिनाथ मंदिर आदि जिनालय एवं बीस पंथ और तेरापंथ दोनों ही विचारधाराओं के लोग यहाँ हैं। यहाँ के चन्द्रप्रभमंदिर परिसर में आर्यिका संघ ठहरा, जैन भवन में स्वयं आचार्यश्री मुनिराजों के साथ ठहरे एवं आदिनाथ भवन में संघ के मंगल प्रवचन होते रहे। संघ की चातुर्मास व्यवस्था एवं वैयावृत्य में सम्पूर्ण समाज संलग्न रही।

आचार्यश्री की सायंकालीन भक्तामरस्तोत्र आदि की कक्षा में ४००-५०० लोगों ने धर्मलाभ लिया। आचार्यश्रीने भक्तामर स्तोत्र और कल्याणमंदिर स्तोत्र के शुद्ध उच्चारण एवं अर्थ-भावार्थ को बड़े अच्छे ढंग से समझाया। आचार्यश्री के संघ-सान्निध्य में यहाँ सम्यग्ज्ञान श्रावक साधना शिक्षण शिविर का विशाल आयोजन के. डी. जैन हायर सेकण्डरी स्कूल परिसर में सम्पन्न हुआ। डॉ. चेतनप्रकाशजी पाटनी का यह गृहनगर है, वे भी इस शिविर संचालन के सहभागी रहे। पंडितश्री हँसमुखजी प्रारम्भ से ही यहाँ कार्यरत रहे है। दीपावली की छुट्टियों में सम्पन्न इस शिविर में ध्यान से प्रारम्भ होकर पूजन विधि एवं धार्मिक अध्ययन मे शिविरार्थी सम्मिलित होते रहे। भाद्रपद मास में संघस्थ आर्यिकाश्री समतामतीजी की सल्लेखना आचार्यश्री एवं संघ-सान्निध्य मे समतापूर्वक सम्पन्न हुई।

चातुर्मास के अंतिमचरण में यहाँ की समाजने चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर स्मारक बनाने का निर्णय लिया। आर. के मार्बल्स के श्री अशोककुमार पाटनी परिवार ने अपनी जयपुर रोड स्थित भूमि इस कार्य में दानस्वरूप प्रदान की। समाज ने और भी जमीन खरीदकर वहाँ संघ- सान्निध्य में शिलान्यास सम्पन्न कर आचार्यश्री के ससंघ चातुर्मास की यादें कायम कर दीं। सर्वतोभद्र विधान का भी

आयोजन हुआ। विधान की समापन बेला पर ३५ वर्ष के बाद तेरापंथ - बीसपंथ समाज एक साथ धार्मिक महोत्सव में पहलीबार पंचायत स्तर पर आचार्यश्री के आशीर्वाद से प्रीतिभोज में सम्मिलित हुई। आचार्यश्री का अनेकविध धार्मिक प्रवृत्तियोंवाला चातुर्मास, सर्वतोभद्र विधान और वात्सल्य से समाज को संगठित करने का आचार्यश्री का उपक्रम मदनगंज - किशनगढ़ की समाज आज भी याद कर रही है और आचार्यश्री के श्रीचरणों में अपनी भावोर्मिका अर्घसमर्पित कर रही है। वात्सल्य वारिधि के वात्सल्य से जगी स्नेहभावना से समाज- संगठन के दीप प्रज्वलित हो उठे।

मदनगंज - किशनगढ़ के अनेकविध कार्यक्रमसभर चातुर्मास के दौरान अन्तरायो की बहुलता से प्रभावित नवदीक्षित मुनिश्री अपूर्वसागरजी अत्यंत अस्वस्थ हो गए। स्वयं आचार्यश्री, समस्त संघ एवं समाज अतिशय चिंतित है उनके स्वास्थ्य को लेकर। असाता वेदनीय कर्म के उदय से घिरे हुए मुनिश्री अपूर्वसागरजी के साथ मुनिश्री चारित्रसागरजी, मुनिश्री अर्पितसागरजी, आर्यिकाश्री विपुलमतीजी, श्री वत्सलमतीजी, श्री वर्धितमतीजी, ब्रह्मचारीश्री सचिनभैया, ब्रह्मचारिणी मृदुलाबहन, अर्चनाबहन को मदनगंज में ही छोड़कर बस्सी ग्राम की ओर विहार किया आचार्यश्रीने।

सन् १९९५ के कुम्भोज बाहुबली चातुर्मास में इचलकरंजी के जो लोग संघ की विशेष वैयावृत्यकर गुप्तरूप से व्यवस्था में अग्रेसर रहे थे उन्ही गुरुभक्तो का गृहनगर है बस्सी ग्राम। उन्हीं गुरुभक्तो की आग्रहभरी भक्ति एवं अनुनय से ४ मुनिराज और १४ आर्यिकामाताजी सहित यहाँ पधारे है आचार्यश्री वर्धमानसागरजी। दो सप्ताह से भी अधिक समय तक के प्रवास में यहाँ विधानमंडल पूजन और आचार्यश्री का केशलुंचन कार्यक्रम हुआ। प्रवचन-सभर प्रसन्न वातावरण में पर्व जैसा माहौल उभर आया। इचलकरंजी से गृहनगर में आये और स्थानीय श्रावक सभी

धन्यता का अनुभव कर रहे ।

बस्सी से विहारकर आचार्यश्री पुनः ससंघ मदनगंज पहुँचे । लगभग १२ दिन यहाँ ठहरने के पश्चात् भी मुनिश्री अपूर्वसागरजी के स्वास्थ्य में जब कोई सुधार नहीं दिखा तो मार्ग के श्रम से विश्राम हेतु दो मुनिराज और तीन आर्यिकामाताजी को उनके पास और छोड़कर वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने करुणार्द्र हृदय से मंगल विहार किया । शांतिवीरनगर - श्रीमहावीरजी की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा निकटथी । ऐसी विकट परिस्थिति में शिष्य को छोड़ना तो नहीं चाहते थे किन्तु पंचकल्याणक में उपस्थिति भी अनिवार्य थी ।

प्रसिद्ध तीर्थ मौजमाबाद, जो जयपुर के नजदीक है, वहाँ के जिनालयों के दर्शनकर फागी, माधोराजपुर - (गणिनी आर्यिकाश्री ज्ञानमतीमाताजी की दीक्षास्थली) होते हुए चाकसू ग्राम पहुँचे आचार्यश्री ससंघ । इसी स्थान से आचार्यश्री के परमभक्त 'एल. एस. डी. एण्ड ग्रुप' जयपुर के सदस्योंने श्री गुलाबचन्दजी गोधा किशनगढ़, श्री गोपीचन्दजी सांगानेर आदि के साथ आचार्यश्री को ससंघ श्रीमहावीरजी की ओर मंगल विहार कराया । चांदनगाँव होते हुए ९ जनवरी को प्रातः आचार्यश्री श्रीमहावीरजी पहुँचे तब वहाँ के अध्यक्ष श्री एन. के. सेठीजी मंगल प्रवेश के समय उपस्थित रहे अपनी समिति के साथ । आचार्यश्री के आगमन पर यहाँ पहले से विराजित गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी ने आचार्यश्री एवं मुनिजनो की भावभक्तिपूर्वक वंदना की । श्री सुपार्श्वमती माताजी ने सन् १९६५ में आचार्यश्री को (तब यशवंतकुमार) गृहस्थावस्था में उनके गृहनगर सनावद में चातुर्मास काल में अध्ययन कराया था । उसके बाद आज सन् १९९९ में उनके आचार्यपद पर प्रतिष्ठित रूप में दर्शनकर गणिनीश्री सुपार्श्वमतीमाताजी के हृदय का ममताभरा धर्मभाव आनन्दातिरेक से मन्द-मन्द स्मित की मुखमुद्रा और बहते हर्षाश्रुसे झरने लगा । आचार्यश्री भी अपने हर्ष को रोक नहीं पाये । इस साधु

सम्मिलन के पश्चात् श्री महावीर भगवान के जिनालय में ३० साल पुरानी स्मृतियों को स्मृतिपटल पर फैलाते हुए प्रवेश किया आचार्यश्रीने और खो गये अपने आपमें । यही है वह मंदिर जहाँ आचार्यश्रीने यशवंतकुमार के रूप में आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के पावन चरणों में दिगम्बरी जैनेश्वरी दीक्षा हेतु श्रीफल समर्पित कर स्वीकृति पाई थी। दीक्षा-समय के उज्ज्वल परिणाम स्मृति में आते ही आचार्यश्री अतीत और वर्तमान को देखते हुए मानों पढ़ रहे हैं मोक्षमार्ग की मंजिल के मील के पत्थर को । निकाल रहे हैं अपनी प्रगति का लेखा जोखा। मंजिल की दूरियों की मानों जाँचकर, प्रगतिमय पुरुषार्थ को तीव्रतम कर मंजिल हासिल करने हेतु बन रहे हैं दृढ़ संकल्पी ।

यहाँ से आचार्यश्री एवं गणिनी आर्यिकाश्री ने ससंघ विहार किया नदी के उस पार प्रतिष्ठास्थल शांतिवीरनगर के लिए । चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज और उनके प्रथम शिष्य एवं पट्टाचार्यश्री वीरसागरजी महाराज की स्मृति में ब्र. श्रीलालजी, ब्र. श्री लाड़मलजी एवं ब्र. श्री सूरजमलजी ने परम्पराचार्य श्री शिवसागरजी एवं आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी की छत्रछाया रूप आशीर्वाद एवं प्रेरणा से इस नगर की स्थापना लगभग ५० वर्ष पूर्व की थी । एक जिनालय, गुरुकुल और प्रेस से प्रगतिशील था शांतिवीर संस्थान । पंडितश्री अजितकुमार जी शास्त्री यहाँ से 'श्रेयोमार्ग' पत्रिका निकालते थे । प्रवचनसार, अष्टपाहुड आदि ग्रन्थों का प्रकाशन भी हुआ यहाँ से । आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज यहाँ सन् १९६९ में भगवान शांतिनाथ एवं चौबीसी जिनालय, सहस्रकूट चैत्यालय, मानस्तम्भ आदि की प्रतिष्ठा हेतु विशाल संघ सहित पधारे थे किन्तु प्रतिष्ठा से पूर्व ही उनकी आकस्मिक समाधि हो जाने से आचार्यश्री धर्मसागरजी के आचार्यत्व में ब्र. सूरजमलजीने यह प्रतिष्ठा सम्पन्न करायी । इसी प्रतिष्ठा में ११ दीक्षाएँ सम्पन्न हुई थीं जिनमें सबसे छोटे दीक्षार्थी यशवंतकुमार की

मुनिदीक्षा भी सम्पन्न हुई थी।

सन् १९६४ में यहाँ एक जिनालय का निर्माण होकर उसकी प्रतिष्ठा आचार्यश्री शिवसागरजी के सान्निध्य में की गई, वही जिनालय जब प्राकृतिक प्रकोप से गिर गया तो उसी स्थान पर उन्हीं प्राचीन प्रतिष्ठित मूर्तियों के लिए भव्य जिनालयका निर्माण हुआ। संस्थान के वर्तमान युवामंत्री श्री राजकुमारजी कोठारी - जयपुर की देखरेख में निर्मित इसी जिनालय की प्रतिष्ठा के लिए अपनी दीक्षास्थली पर ३० वर्ष बाद आये हैं आचार्यश्री वर्धमानसागरजी। आसपास के गाँवों से आये हुए लोगों का उत्साह असीम है। पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सानन्द सम्पन्न होने के अनन्तर यहाँ से मंगल विहार कर आचार्यश्री के कदम बढ़े जयपुरकी ओर।

खानिया (जयपुर) होते हुए आचार्यश्रीने ससंघ मंगल प्रवेश किया भट्टारकजी की नसियाँमे। फाल्गुन माह की अष्टाह्निका में यहाँ आयोजित है श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान। आचार्यश्री के मंगल प्रवचन के अनन्तर श्री एन. के. सेठीजी ने बताया कि "आचार्यश्री संघ सहित यहाँ से ३½ किलोमीटर दूर पार्श्वनाथभवन आहारचर्या हेतु जायेंगे क्योंकि यहाँ कुए में पानी नहीं है।" यह सुनते ही विशाल सभामंडप में खलबली मचगई। कुछ लोग खड़े होकर कहने लगे, "नही, नहीं, ऐसा नही होगा। हम अपने कंधों पर शहर से पानी लायेंगे किन्तु संघका आहार यहीं होगा।" यह सुनते ही परम करुणावान आचार्यश्रीने श्रावको को समझाते हुए कहा, "आपकी भक्ति-सभर भावनाएँ श्रेष्ठ हैं, साधु-संघ के प्रति आपके भीतर पनपती सेवा-शुश्रूषा सराहनीय है, किन्तु ऐसा करना इष्ट नहीं होगा, अतः निर्णयानुसार संघ पार्श्वनाथभवन जाएगा।"

आहार के लिए संघस्थ सभी त्यागीव्रती पार्श्वनाथ भवन गए और सामायिक से पूर्व संघ वापस भट्टारकजी की नसियाँ आ गया। यह

क्रम चला ६ दिन तक। वात्सल्य वारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी नहीं चाहते कि उनके निमित्त से श्रावकों को - व्यवस्थापकों को तकलीफ हो। श्रावकों की मुश्किलों को नजर में रखते हुए अपनी चर्या को संभालनेवाले आचार्य। विधान के सातवें दिन पहले से चल रहा पुरुषार्थ सफल हुआ, भट्टारकजी की नसियाँ स्थित कुए की खुदाई और सफाई से पानी आ गया। अब संघ की आहार-व्यवस्था समाज द्वारा नसियाँजी मे हुई। अत्यंत भव्यता एवं धर्मप्रभावना के साथ सम्पन्न हुए विधानपूजन के विधानाचार्य थे सलूम्बर के पं. श्री सुरेन्द्रकुमारजी। आचार्यश्री एवं संघस्थ मुनि, आर्यिकाओं के प्रवचनों से प्रभावित जयपुर की जनता की भावना बनी आचार्यश्री का इस वर्ष का चातुर्मास यहीं सम्पन्न कराकर और भी लाभान्वित होने की।

श्रीमहावीरजी की प्रतिष्ठा हेतु निकले आचार्यश्री का ध्यान निरंतर बना हुआ है मदनगंज-किशनगढ़ में स्थित संघ की ओर। मुनिश्री अपूर्वसागरजी यद्यपि स्वास्थ्यलाभ कर रहे है तथापि आचार्यश्री के वात्सल्य ने मानस बनाया किशनगढ़ लौटने का। एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक के सभी जीव, अपने संघ के या और संघ के साधुजन, भक्त हों या आलोचक सभी भीगते रहे हैं आचार्यश्री की अविरत बहती करुणागंगा में। फिर तो जिन्होंने गुरुचरणों मे अपना सबकुछ समर्पित किया हो ऐसे शिष्यो के प्रति उनकी मातृवत् रक्षा की एवं पितृवत् पालन की भावना बलवती बनी रहे, तो इसमे आश्चर्य क्या। मुनिश्री सौम्यसागरजी को साथ लेकर और शेष संघ को जयपुर मे ही छोड़कर आचार्यश्री चल पड़े किशनगढ़ के पथ पर। किशनगढ़ पहुँचने पर आचार्यश्री के दर्शन पाकर वहाँ स्थित संघस्थ सभी के हृदय हो गये गद्गद। दोनों ओर से भीतरी भावना कुछ क्षणो के लिए छलक पड़ी नेत्रो से। आचार्यश्री के साधर्मी वात्सल्य को देखकर किशनगढ़वासी भी द्रवीभूत होकर बोल उठे "कैसा निश्चल अगाध वात्सल्य है आचार्यश्री का अपने संघस्थ

साधुओं के प्रति। सही में वात्सल्य के वारिधि हैं आचार्यश्री।" मुनिश्री अपूर्व सागरजी के स्वस्थ हो जाने पर भगवानश्री महावीर स्वामी के जन्म-जयन्ती महोत्सव मे अपना सान्निध्य प्रदानकर धर्मप्रभावना के पश्चात् ४ मुनियों एवं ३ आर्यिका माताजी को साथ लेकर आचार्यश्री का मंगल विहार हुआ अजमेर नगर की ओर।

अजमेर में छोटे धड़े की नसियाँ में आदिनाथ जिनालय में भगवान के दर्शनकर संघ ठहरा धर्मसागर स्वाध्याय भवन मे। यहाँ के प्रवास के दौरान वैशाख कृष्णा ९ के दिन परम पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की १३वी पुण्यतिथि का भव्य आयोजन किया गया, आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य मे अजमेरवासियो द्वारा। ज्येष्ठ कृष्णा १५ को आचार्यश्री देशभूषणजी एवं आचार्यश्री ज्ञानसागरजी का समाधि दिवस विशेष आयोजन पूर्वक मनाया अजमेरवासियों ने। प्रतिदिन आचार्यश्री एवं संघस्थ साधुओं के मंगल प्रवचनों से होती महती धर्म प्रभावना के बीच श्रुतपंचमी पर्व पर संघ ने तिलोयपण्णत्ति ग्रन्थ का स्वाध्याय प्रारंभ किया। संघ की प्रेरणा से यहाँ ग्रीष्मकालीन छुट्टियों में विशाल सम्यग्ज्ञान शिक्षिण शिविर का आयोजन हुआ। आचार्यश्री एवं संघ के सान्निध्य और श्री कपूरचन्दजी जैन (रिटायर्ड डायरेक्टर शिक्षा विभाग) के मार्गदर्शन एवं श्री कैलाशचंदजी पाटनी के संयोजकत्व में भव्यता के साथ सम्यग्ज्ञान शिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ।

शिविर-समापन के पश्चात् आचार्यश्री ने ससंघ जयपुर की ओर विहार करते हुए मदनगंज में सात दिवसीय एवं आगे जाकर एक गाँव में पंच दिवसीय शिक्षिण शिविर संपन्न किया। तीनों शिविरों में आचार्यश्री एवं संघस्थ मुनि - आर्यिकाओंने कक्षाएँ लीं। बच्चों में संस्कारों की नींव डालनेवाला एवं बड़ों को और भी धार्मिक दृढ़ता प्रदान करानेवाला शिविर महत्त्वपूर्ण रहा। ग्रीष्मकालीन तीन-तीन शिविरों के आयोजन से धार्मिकज्ञान का वितरण करता हुआ संघ

फुलेरा-सांभर होता हुआ अतिशय क्षेत्र लूणवाँ पहुँचा । लग रहा है भगवान वर्धमान की देशना को जन-जन तक पहुँचाने और उसे दृढ़ीभूत करने के लिए कटिबद्ध हैं वर्तमान में एक वर्धमान (आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज) । शिक्षण शिविर हो या विद्वत् गोष्ठी, प्रवचन हो या सामूहिक स्वाध्याय, प्रतिष्ठा हो या विधानपूजन, शास्त्र-प्रकाशनकी प्रेरणा हो या अपनी चर्या से चारित्र का प्रसार, किसी भी प्रकार से आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज जन-जन को भगवान वर्धमान की देशना रूप माँ जिनवाणी के रहस्यों को उद्घाटित कर लाभान्वित करन में कोई कसर छोड़ना नहीं चाहते ।

लूणवाँ मे आषाढ़ शुक्ला २, आचार्यश्री के १० वें आचार्य पदारोहण स्मृति दिवस के दो दिन पूर्व से त्रिदिवसीय कार्यक्रम पूर्व योजनानुसार प्रारम्भ हुआ । 'महर्षि पूज्यपाद आचार्य: व्यक्तित्व और कृतित्व' विषय पर एक विद्वत् संगोष्ठी का आयोजन शास्त्री परिषद् एवं विद्वत् परिषद् के अनेक उच्चस्तरीय विद्वानों की उपस्थिति में पंडितश्री हॅसमुखजी धरियावद ने किया । यहाँ से टोडाभीम आदि गाँवो से विहार करते हुए, आचार्यश्री के ससंघ कदम बढ़े जयपुरनगर के समीप स्थित बैनाड क्षेत्र की ओर । वहाँ के दर्शन करते हुए झोटवाड़ा - शास्त्रीनगर होते हुए २५ जुलाई को आचार्यश्री ने मंगल प्रवेश किया श्री भट्टारकजी की नसियाँ में । गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमतीमाताजी आचार्यसंघ से आ मिलीं । इससे पूर्व २४ जुलाई को संघ का वह हिस्सा जिसे छोड़कर आचार्यश्री किशनगढ़ की ओर गये थे वे सभी साधु आ मिले संघ में।

आषाढ़ शुक्ला १४ को आचार्यश्रीने ९ मुनिराज एवं गणिनी आर्यिका सुपार्श्वमती माताजी आदि २० आर्यिका, इस प्रकार २९ साधु-साध्वी सहित भट्टारकजी की नसियाँ में मंगल वर्षायोग स्थापित किया। मंगल-कलश-स्थापन का सौभाग्य मिला श्री नानकरामजी जौहरी को । श्री एन. के. सेठीजी के नेतृत्व मे वर्षायोग समिति पूरे चातुर्मास तक

अनेक विध धर्मप्रभावक कार्यक्रम सम्पन्न कराती रही। वर्षायोग में धर्म-सभा में राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत एवं अनेक राजनेता समय-समय पर आचार्यश्रीके दर्शनार्थ और आशीर्वाद-लाभ के लिए आते रहे। कर्णाटक प्रान्त के दक्षिण कन्नड जिले के धर्मस्थल तीर्थ के धर्माधिकारी श्री वीरेन्द्रजी हेगडे भी आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। लोग आचार्यश्री के दर्शन और आशीर्वाद में अपनी कामनाओं की सफलता मानते हैं।

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के पास जयपुर के और बाहर से आये हुए श्रेष्ठी बैठे हुए हैं। जरूरी चर्चा चल रही है तभी नीचे से किसीने आकर आचार्यश्री को बिलकुल धीरे से विनति के स्वर में कुछ कहा, आचार्यश्री सभी को बातों में छोड़कर फौरन नीचे चले आये। देखते हैं एक अपाहिज को जो ऊपर नहीं आ सकता वह आँखों में दर्शन की उत्सुकता लिये बैठा है, उसे बड़ी करुणा व स्नेह से आचार्यश्री ने आशीर्वाद दिया। साथ आये रिश्तेदार की आँखें डबडबा गईं। ऐसे हैं अगाध वात्सल्य के धनी, करुणा के सागर, भक्तवत्सल आचार्यश्री वर्धमानसागरजी।

भाद्रपद मास मे आर्यिकाश्री अचलमतीजी की सल्लेखना-साधना आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में एवं गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी के सम्बोधन के साथ पूर्ण हुई। एक दिन श्री एन. के. सेठीजी ने कहा कि, "आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के पास आते हैं तो टेन्शन फ्री हो जाते हैं। दूसरों के पास जाते हैं तो टेन्शन लेके आते हैं।" ऐसा अनुभव करीब सभी भक्तों को हुआ है, क्योंकि आचार्यश्री के हृदय में वात्सल्य ही वात्सल्य भरा हैं, तो चेहरे पर आनंद ही आनंद झलकता है।

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी उन थोड़े से मस्त महामुनियों में से एक है जो कदाचित् प्राप्त होते हैं। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी वात्सल्य-

वारिधि हैं। उनके पास जाओगे तो चंदनसी शीतलता पाओगे। उनमें डूबोगे तो अमृत ही अमृत पाओगे। बड़ा स्नेह, बड़ी करुणा है आचार्यश्री वर्धमानसागरजी में। एक से लगते हुए भी अनूठे हैं आचार्यश्री वर्धमानसागरजी।

बालककी निर्दोषता, युवक की कर्मठता और ज्ञान की प्रौढ़ता है आचार्यश्री वर्धमानसागरजी मे। करुणा, वात्सल्य और समता की त्रिवेणी हैं आचार्यश्री। धर्म के बसंत ही बसंत और आनंद के सागर हैं वर्धमानसागरजी। उनके सान्निध्य मे ज्ञानानंद ही पाओगे।

चातुर्मास काल में आते विशेष कार्यक्रम के अतिरिक्त दीपावली अवकाश के समय शिक्षण शिविर के भव्य आयोजन में करीब ७०० से अधिक शिविरार्थियों ने भक्तामर, मोक्षशास्त्र, छहढाला, द्रव्यसंग्रह, धर्मोद्योत प्रश्नोत्तरमाला आदि विषयो के साथ श्रावकों के षट्आवश्यकर्मो से पूजन-अभिषेक का शिक्षण प्राप्त किया। संघस्थ साधु-साध्वी एवं आचार्यश्री स्वयं भी कक्षा लेते रहे। प्रातः ५-४५ बजे से ध्यान की कक्षा से प्रारम्भ होकर रात्रि शास्त्र-सभा एवं प्रश्नमंच के बाद सांस्कृतिक कार्यक्रमो तक शिविर का कार्य चलता रहा। इस शिविर का संयोजन सदा की भांति पं.श्री हँसमुखभाई धरियावद एवं डॉ. श्री चेतनप्रकाशजी पाटनी, जोधपुर के निर्देशन में हुआ। पूजन की कक्षा स्थानीय विद्वत्वर्ग लेते रहे। वर्षायोग समापन बेला में महामण्डल विधान सम्पन्न हुआ। डॉक्टरों के सेमिनार को सम्बोधते हुए आचार्यश्री ने कहा... "चौके से रोग का प्रारम्भ भी होता है और चौके से रोग का निवारण भी होता है सो चौके को अस्पताल के ऑपरेशन थियेटर की तरह स्वच्छ और शुद्ध रखना चाहिए।"

वर्षायोग समापन के कुछ समय पश्चात् आर्यिकाश्री सरस्वती माताजी की चातुर्मास काल से ही चल रही सल्लेखना-साधना आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के निर्यापकत्व एवं संघ सान्निध्य में पूर्ण हुई। तदनन्तर

आचार्यश्री ससंघ रामगंज बाजार-बक्सी के चौक में गए। यहाँ रहते हुए जयपुर शहर के लगभग सभी प्रमुख मंदिरों के संघने दर्शन किये। दिनांक २६ जनवरी, २००० को आमेर के मंदिरों के दर्शन करने संघ गया। यहाँ आचार्यश्री की सन्निधि में कई दिनों से एक कमरे मे बन्द अनेकानेक प्रतिमाओं का विशाल चैत्यालय सभी के दर्शन के लिए बाहर निकाला गया, प्रतिमाओं की अभिषेक-पूजन श्रावकों ने की। वहाँ से वापस जयपुर लौटकर संघ भट्टारकजी की नसियाँ पहुँचा। जयपुर जौहरी बाजार महिला मंडल द्वारा निर्मित आदिनाथ शुद्ध भोजनालय भवन में संस्कार-उद्योग के लिए महिला मंडलने आचार्यश्री का आशीर्वाद प्राप्तकर मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत से उद्‌घाटन करवाया।

चातुर्मास दौरान और बाद में जयपुर नगर मे स्थित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से श्री डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, श्री रतनचन्दजी भारिल्ल, श्री जतीशभाई शास्त्री, श्री पूनमचंदजी सेठी, ब्र. यशपालजी आदि ५-६ बार निमंत्रण देने हेतु आचार्यश्री के पास आये। उनकी भावना थी कि आचार्यश्री टोडरमल स्मारक भवन में पधारें और वहाँ उनका उपदेश भी हो। इसी प्रयोजन से उन्होंने आचार्यश्री से दिन निश्चित करने के लिए निवेदन भी किया। दिन तो आचार्यश्रीने निश्चित नहीं किया, किन्तु ३० जनवरी, २००० को मंगल प्रभात में आचार्यश्री संघ सहित टोडरमल स्मारक बापूनगर के जिनालय के दर्शन करने अचानक पहुँचे। दर्शन करने के पश्चात् डॉ. हुकमचंदजी आदि के आग्रहभरे निवेदन पर वहाँ आचार्यश्री का मंगल प्रवचन हुआ।

३० जनवरी मध्याह्न सामायिक के पश्चात् आचार्यश्री, मुनिराजों एवं गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमतीजी आदि आर्यिका समूह के साथ पहुँचे नेमिसागर कॉलोनी (वैशालीनगर जयपुर)। यहाँ माघ मास के शुक्ल पक्ष में फरवरी माह में भगवान नेमिनाथजी की प्रतिष्ठा आचार्यश्री

के ससंघ सान्निध्य में एवं पं. श्री हँसमुखभाई के प्रतिष्ठाचार्यत्व में पूर्ण हुई। धर्मप्रभावनापूर्वक सम्पन्न इस प्रतिष्ठा के मध्य आचार्यश्रीने ब्र. श्री नौरतनमलजी (कानपुर) एवं ब्र. श्री गोपीचन्दजी (सांगानेर) को मुनिदीक्षा प्रदानकर क्रमश: श्री देवेन्द्रसागरजी एवं श्री देवेशसागरजी नामकरण किया। नेमिसागर कॉलोनी में श्री पूनमचंदजी गंगवाल परिवार ने इस जिनालय का निर्माण करवाकर निजी द्रव्य से यह प्रतिष्ठा सम्पन्न कराई।

नेमिसागर कॉलोनी से श्यामनगर होते हुए संघ मानसरोवर पहुँचा। जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर द्वारा दिनांक १२ से १४ मार्च २००० में आयोजित अखिल भारतीय जैन विद्या संगोष्ठी में पावन पथदर्शक आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज ने 'जैन धर्म में पर्यावरण चेतना एवं संरक्षण' पर अपने प्रवचन में, प्रकृति के उपकार, प्रदूषित विकास और उसका फल, पर्यावरण मे प्रदूषण के प्रकार और जैनधर्म के सिद्धांतों के पालन से उनके उपायों की विशद छान-बीन अपने सारगर्भ प्रवचन मे की। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज के प्रवचन से प्रभावित कुलपतिजी ने अहिंसा भवन के लिए जमीन प्रदान करने की घोषणा की।

मानसरोवर से विहारकर संघ कीर्तिनगर, महावीरनगर, दुर्गापुरा के जिनालयों के दर्शनकर, चित्रकूट कॉलोनी (सांगानेर) होता हुआ पहुँचा अतिशय क्षेत्र पदमपुरा के दर्शनार्थ। संघस्थ नवदीक्षित मुनिराजश्री देवेशसागरजी की जन्मभूमि चंदलाई होता हुआ संघ आया निवाई मे। आचार्यश्री, ३ मुनिराज एवं ४ माताजी, शेष संघ को निवाई ही छोड़कर विहारकर टोडारायसिंह पहुँचे। यहाँ से २ मुनियो एवं २ आर्यिकामाताजी को आज्ञा देकर विहार कराया धरियावद की ओर। सन् २००० का चातुर्मास निवाई में करने के विचार से आचार्यश्री पुन: निवाई लौटना चाहते हैं किन्तु आचार्यश्री का

स्वास्थ्य खराब होने से विहार नहीं हो पाया ।

११वें आचार्य पदारोहण स्मृति दिवस पर पूर्वनिर्धारित कार्यक्रमानुसार पं. श्री हँसमुखजी के संयोजन में प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाशजी आदि लगभग ११ विद्वानों की उपस्थिति में निवाई स्थित मुनिसंघ के सान्निध्य में "आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती का जैनागम को अवदान" विषय पर २ दिवसीय संगोष्ठी सम्पन्न करके सभी विद्वत्जन टोडारायसिंह आये और यहाँ मुख्य दिवस पर आचार्यश्री के प्रति विनयांजलि अर्पित की । पश्चात् आचार्यश्रीने १ मुनिराज व २ माताजी के साथ निवाई की ओर विहार का पुरुषार्थ किया किन्तु १० किलोमीटर चलने के बाद अस्वस्थता के कारण उसी ग्राम में रुके रहे आचार्यश्री । निवाई से भी शेष संघ वहीं आया और फिर आचार्यश्री ने बड़ी कठिनाई से संघ के साथ विहार किया टोडारायसिंह की ओर चातुर्मास हेतु । चातुर्मास में वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी को पाकर आनन्द की हिलोरें लेती हुई युवापीढ़ी अपनी धर्मरुचि को जागृत करने और बढ़ावा देने हेतु अग्रसर हुई । टोडारायसिंह परम्परा के पट्टाचार्यश्री वीरसागरजी महाराज की चातुर्मास स्थली, आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी की क्षुल्लक दीक्षास्थली एवं वर्तमान मे संघस्थमुनि श्री सौम्यसागरजी की जन्मस्थली है । अनेकविध धर्मप्रभावक कार्यक्रम सम्पन्न होते हुए चातुर्मास व्यतीत होता रहा । राजस्थान के तत्कालीन ऊर्जामंत्री दो बार आचार्यश्री के दर्शनार्थ, आशीर्वाद के लिए पधारे । हर साल की तरह श्रीसंघ सान्निध्य में सम्यग्ज्ञान शिक्षण शिविर का आयोजन भी हुआ। पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा की फणा टूटी हुई है उसमें लोहे की कील थी । कील को निकालकर फणा को सात दिन तक घृत और शक्कर के मिश्रण में रखने से उस का संधान हो गया । इस घटना से गाँव में अतीव आनंद की लहर फैल गई । आचार्यश्री की प्रेरणा से चातुर्मास के दौरान यहाँ के जिनालयों में निर्माण कार्य सम्पन्न होने से जिनालयों

ने नवीन परिवर्तित रूप पाया । शांतिनाथ जिनालय का शिलान्यास आचार्यश्री के सान्निध्य में हुआ और वह बनकर तैयार भी हो गया ।

टोडारायसिंह के चातुर्मास के अनन्तर ससंघ विहारकर निकटस्थश्री शांतिनाथ अतिशयक्षेत्र, बघेरा पर आचार्यश्री का तीन-चार दिन का प्रवास रहा । शांतिनाथ जिनालय के सम्मुख यहाँ की अग्रवाल जैन समाजने भी एक विशाल जिनालय का निर्माण कराया है, इसके बारे में समाज ने आग्रहपूर्वक आचार्यश्री से जो मार्गदर्शन चाहा उसे आचार्यश्रीने दिया । केकड़ी निवासी व दिल्ली प्रवासी श्रीरूपचंदजी कटारिया आचार्यश्री एवं संघ के परमभक्त हैं, कई दिनों से उनकी भक्ति-श्रद्धाभरी प्रार्थना रही संघ को केकड़ी ले जाने की । अत: केकड़ी के समाज की कई बार प्रार्थना के फलस्वरूप बघेरा से संघ केकड़ी पहुँचा । ९ दिसम्बर २००० का मंगल प्रभात केकड़ी की समाज के लिए भाग्योदय लेकर आया । इस दिन संघ का पावन पदार्पण हुआ और स्वाध्याय आदि धार्मिक कार्यक्रम प्रारंभ हुए । पाठक ध्यान दें कि केकड़ी में कटारिया परिवार के अनेक स्वाध्यायी अच्छे विद्वान् हो गये हैं । अन्यभी विद्वान् इस नगर मे हुए और आजभी विद्यमान हैं । ९ दिसम्बर से २७ दिसम्बर तक के प्रवास मे संघस्थ साधु-साध्वियो के मंगल प्रवचनों से महती धर्मप्रभावना के साथ संघ की चर्या से और ज्ञानप्राप्ति की ललक से केकड़ी समाज अत्यधिक प्रभावित हुई । समाज ने आगामी चातुर्मास केकड़ी में ही स्थापित करने के लिए करबद्ध प्रार्थना की । "चातुर्मास अभी बहुत दूर है" ऐसा कहकर समाज की मंगल भावनाओं को आशीर्वाद दिये आचार्यश्री ने । धरियावद मे महावीर जिनालय की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा फरवरी, २००१ में आयोजित होने से धरियावद समाज की विनती पर ध्यान देते हुए २७ दिसम्बर को आचार्यश्री का विहार हुआ धरियावद की ओर । १ जनवरी, २००१ को शाहपुर नगर में आचार्यश्री ने अपने प्रवचन मे वर्ष परिवर्तन एवं शताब्दी के बदलने की मंगल बेला

से प्रेरणा लेकर श्रावकों को अपने जीवन में परिवर्तन लाते हुए धर्मधारण करने की प्रेरणा दी ।

शाहपुर से बोहेड़ा होता हुआ संघ श्वेताम्बर स्थानकवासी समाज की जनसंख्यावाले भद्रेसर गाँव में आया । यहाँ किसी कारणवश स्थानकवासी समाज में भेद हो गया था, आचार्यश्री तो इस बात से बिलकुल अनभिज्ञ थे । आचार्यश्री ने सहजभाव से अपने तीनों प्रवचनो में संगठन पर बल देते हुए समाज-विघटन करनेवाली भावनाओं के त्याग की प्रेरणा दी । संत जैसे जीते है वैसी ही वाणी उचरते हैं । उनके कथन अंत:स्थल से आते हैं इसलिए शब्दों का असर अवश्यमेव होता है । परिणामस्वरूप दोनो पक्ष स्वयमेव अपनी अंत:प्रेरणा से एक दूसरे से क्षमायाचना करने लगे । पिछले कई वर्षों का मतभेद जो अभी मनभेद बन चुका था, वह दूर हुआ । आश्चर्यचकित से रह गये आचार्यश्री। आखिर बात क्या है ?

तब समाज के प्रमुखने खड़े होकर माइक पर घोषणा की कि,

"हे आचार्य भगवंत ! हमारे बीच का मतभेद मनभेद बन गया था, बहिन-बेटियों का, अपनी ही होकर भी दोनों पक्षों में आना-जाना परस्पर में बन्द था । दोनों पक्षो के कार्यक्रमों में, व्यवहार में भोजन-व्यवहार भी बन्द था, यों कहें बिलकुल अलग हो चुके थे । हम आज आपके उपदेश से प्रभावित होकर पिछले कई वर्षो से चले आ रहे मतभेद जो कि अब मनभेद बनकर वैमनस्य बनने जा रहा था, उसे आपके श्रीचरणों में समाप्त करके परस्पर अपनी बहिन-बेटियों के यहाँ आना-जाना शुरू करते हैं और पहले जैसे मिलकर रहने का संकल्प करते हैं ।"

वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्रीने सभी को मंगल आशीर्वाद दिये । श्वेताम्बर समाज में सहज संगठन स्थापित कर आगे मंगल विहार किया। वात्सल्यवारिधि की वत्सलता और उनके पाद पंकज के स्पर्श से वैर-वैमनस्य, विवाद नौ दो ग्यारह हो गया ।

बस्सी, चित्तौड़गढ़, निक्कुम, बड़ी सादड़ी, बान्सी, आरामपुरा होते हुए संघ का धरियावद में मंगल प्रवेश हुआ। उसी दिन २७ जनवरी, २००१ को ही समाधि-साधना-रत संघस्थ आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी की कुशलता ज्ञात करने धरियावद से आचार्यश्री पहुँचे ससंघ नन्दनवन। समाधि-साधनारत आर्यिकाश्री ने अपने निर्यापक आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के दर्शन से अतीव आनन्द की अनुभूति की। माताजी का द्वादशवर्षीय सल्लेखना काल अब पूर्णता की ओर है, अत: आचार्यश्री पधारे हैं ससंघ। किन्हीं भी मुनिराज को साथ लेकर आचार्यश्री प्राय: प्रतिदिन धरियावद से नन्दनवन क्षपक आर्यिकाश्री की कुशलता ज्ञात करने जाते रहे, क्षपक आर्यिकाश्री भी प्रतिदिन आचार्यश्री के दर्शन पाकर कृतकृत्य होती रही। फरवरी माह में महावीर जिनालय स्थित जिनबिंबों की प्रतिष्ठा सानन्द सम्पन्न हुई आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में। फाल्गुन माह के अष्टाह्निका पर्व में आचार्य संघ नवीन जिनालय में ठहरा। इसी मंदिर प्रांगण मे संघस्थ ब्रह्मचारिणी शान्ताबहन दाहोद वालो ने आचार्यश्री से क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की। इन्होंने आचार्यश्री के समक्ष सल्लेखना-साधना की प्रार्थना की। आगे चलकर इन्होंने आचार्यश्री से आर्यिका दीक्षा ग्रहणकर भीण्डर में सन् २००३ में सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण किया।

अप्रिल २००१ मे नन्दनवन में विश्व के सबसे छोटे चन्द्रप्रभु जिनालय की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में प्रतिष्ठाचार्य श्री हँसमुखजीने सौधर्म इन्द्र बनकर सम्पन्न कराई। प्रतिष्ठा में आसपास के गॉवो के लोगों एवं धरियावद की समाज का पूर्ण सहयोग रहा। श्रवणबेलगोला के भट्टारक महास्वामीश्री चारुकीर्तिजी, कनकगिरि के श्री भुवनकीर्तिजी एवं अर्हन्तगिरि (तामिलनाडु) के श्री धवलकीर्तिजी भट्टारक विशेष रूप से पधारे। पंडितश्री नीरजजी सतना, प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी आदि विद्वान् भी इस अवसर पर उपस्थित

रहे। लोगों का मानना था कि यह पंचकल्याणक प्रतिष्ठा आदर्श थी। हर्षोल्लास के साथ जिनालय में चन्द्रप्रभु भगवान बिराजमान हुए। यह नन्दनवन स्थल प्रतिष्ठाचार्यश्री हँसमुखभाई धरियावद ने आचार्यश्री से आशीर्वाद प्राप्त कर सन् १९९७ में निजी भूमि पर विकसित किया है। सन् १९९७ का चातुर्मास आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी ने यहीं सम्पन्न किया। उनके साथ आर्यिकाश्री प्रशान्तमती माताजी छाया की तरह उनकी सेवा में सदैव तत्पर रहे। उनका दीक्षापूर्व नाम पंकजबहन, वे भावनगर (गुजरात) के पिताश्री पूनमचंदजी और माता प्रमिलाबहन की सबसे बड़ी संतान। स्टेटिस्टिक्स में एम.एससी. तक की शिक्षा प्राप्त कर स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र एवं बैंक ऑफ बड़ौदा भावनगर में काम किया। किन्तु माता-पिता एवं नाना-नानी आदि बुजुर्गों के धार्मिक संस्कार, मुनिसंघ-विहार में सदैव तत्पर, मंदिरजी के पास में ही मकान आदि संयोगों से संसार-भोगों से विरक्त होकर, पंकजने आचार्यश्री सुबलसागरजी के पास नसलापुर महाराष्ट्र में आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण किया। श्री शीतलसागरजी महाराज से दो प्रतिमा के व्रत, आचार्यश्री सन्मतिसागरजी से सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहणकर, आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी के पास तीन साल धार्मिक शिक्षण प्राप्त किया। पंकज के नानाजी थे मुनिश्री धर्मकीर्ति महाराज और नानीजी भी सप्तम प्रतिमा के व्रत पालन करती थी। पंकज बहन आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज के शिष्य मुनिश्री दयासागरजी से सलुम्बर में चैत्र शुक्ला चतुर्दशी दिनांक २३ अप्रिल सन् १९८६ में आर्यिका दीक्षा पाकर विदुषी आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी के साथ रहीं। आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजी के सल्लेखना काल में तो पलभर के लिए भी माताजी से अलग रहना बर्दाश्त नहीं करती थीं, पूर्ण रूपेण समर्पित भाव से सेवा में संलग्न रहीं आर्यिकाश्री प्रशांतमतीजी समाधि-साधना पूर्ण होने तक।

आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजीने आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज

के समक्ष निवेदन कर १९९० में द्वादशवर्षीय उत्कृष्ट सल्लेखनाव्रत ग्रहण किया था । वे पिछले ११ वर्षों से निरन्तर अपनी साधना में रत हैं ।

सन् २००० का चातुर्मास सम्पन्न करने के पश्चात् आचार्यश्री सन् २००१ जनवरी मे धरियावद पहुँचे किन्तु वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्रीने सन् २००० में ही चातुर्मास हेतु २ मुनिराजों व २ आर्यिका माताजी को भेज दिया था धरियावद - नन्दनवन । २७ जनवरी को जब क्षपक आर्यिका माताजीने अपने निर्यापकाचार्य के ससंघ दर्शन कर आनन्दानुभव, किया तब संघ मे चार नवदीक्षित मुनिराजों के दर्शनपाकर हर्षित हुई ।

नन्दनवन में स्थित लघु चन्द्रप्रभु जिनालय ३७ शिखरोंवाला है वह हैमवत जिनालय के नाम से प्रसिद्ध हुआ । अब क्षपक श्री आर्यिका माताजी प्रतिदिन शिखरबन्द जिनालय के दर्शन पाकर मन में संतोष पा रही हैं । नन्दनवन से धरियावद ३ किलोमीटर की दूरी पर होने से वहाँ जा पाना उनके लिए सम्भव नही है इसी कारण श्री हँसमुखभाई ने शास्त्रोक्त विधि से इस लघुकाय जिनालय का निर्माण कराकर प्रतिष्ठा सम्पन्न की । प्रतिष्ठा पूर्ण होने तक आचार्यश्री ससंघ १० अप्रिल से २९ अप्रिल २००१ तक नन्दनवन में ही विराजित रहे। प्रतिष्ठा और आर्यिका माताजी की समाधि- साधना पर ध्यान रखते हुए आचार्यश्री एवं संघ अपनी आवश्यक क्रियाओं को सहजता से कर रहे हैं ।

जहाँ समता की साधना, एकत्व की आराधना होती हैं, निर्जरा की निर्झरणी जहाँ से बहती है, जहाँ से संसार के अंत की ओर गति होती है वैसी सामायिक में मग्न हैं आचार्यश्री वर्धमानसागरजी । आचार्यश्री सामायिक के लिए अपने चर्मचक्षुओं को बंद करते ही अन्यक्षेत्र- संबंध से जुदा हो जाते हैं, बाद में अपने तन- संबंध से और फिर परभावो से भिन्न होकर स्वभाव में लीन हो जाते हैं । उनकी यह साधना इतनी सहज हो गई है कि वे क्षणार्ध में स्वभाव में लीन हो जाते हैं । यह लीनता ही समता की साधना है, एकत्व की आराधना है,

निर्जरा की जननी है, सुख, आनन्द और मुक्ति के लिए ऐसी सामायिक निर्ग्रन्थ अवस्थामें ही प्राप्त होती है । कुछ समय बाद जब अपने आत्मरमण से बाहर आये, सामायिक पूर्ण हुई तो निजानंद से भर गए आचार्यश्री वर्धमानसागरजी। सामायिक के पश्चात् उनके आभावर्तुल से प्रसारित होती किरणों से दर्शनार्थी भक्तों के अन्तरमन में आनन्द की, सुख की, प्रसन्नता की, शुभ्रता की हरियाली छा जाती है । मैंने और मेरी श्रीमतीजी ने इसका अनुभव किया है और दोनों ने आपस में अपने अनुभव का आदान- प्रदान करके सत्य का प्रमाण लिया है । सुना है बहुत से भक्त गुजरे हैं ऐसे अनुभव से ।

२९ अप्रिल को नन्दनवन से चलकर संघ के कुछ साधु पहुँचे खूंता ग्राम । आचार्यश्री शेष संघ के साथ अभी नन्दनवन में ही हैं विराजमान । समाधिरत आर्यिकाश्रीने मरणकण्डिका ग्रन्थ की वाचना सुनी आचार्यश्री के श्रीमुख से । कुछ दिन पश्चात् आचार्यश्री भी पहुँचे खूंता । यहाँ कुछ दिन के प्रवास के दौरान बालाचार्यश्री योगीन्द्रसागरजी महाराज वात्सल्य बारिधि आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे । दोनों संघों का स्नेहपूर्ण मिलन हुआ । यहाँ से आचार्यश्री मुंगाणा आये । मुंगाणा मे सनावद नगर की समाज के आग्रह भरे अनुनय - निमंत्रण को ध्यान मे रखते हुए आचार्यश्रीने ४ मुनिराजों एवं एक ऐलकजी को सनावद की ओर विहार करने की आज्ञा प्रदान की । आचार्यश्री रयणसागरजी के शिष्यश्री अमेयसागरजी भी १ अन्य मुनिराज के साथ धरियावद से संघ के साथ आये हैं, उन्होंने भी यहाँ से विहार किया । १५ जून २००१ को आचार्यश्री ५ मुनिराजों और १५ माताजी के साथ पुन: खूंता होते हुए धरियावद पहुँचे । यहाँ आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में भव्यशिक्षण शिविर का आयोजन हुआ । शिक्षण शिविर समापन पश्चात् आचार्यश्री ससंघ नन्दनवन पधारे और ३० जून को चातुर्मास हेतु धरियावद में प्रवेश किया ।

वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के वात्सल्य को देखकर - पहचान कर प्रतापगढ़ से एक माताजी सल्लेखना-साधना के उद्देश्य से धरियावद आ गये। उन्होंने संघ के साथ ही चातुर्मास किया। आषाढ़ शुक्ला २ को नन्दनवन में बड़ी भव्यता के साथ आचार्यश्री का आचार्य पदारोहणदिवस मनाया गया। उसी दिन प्रतिष्ठाचार्यश्री हँसमुख जी एवं अन्य ७ परिवारोंने प्रतिवर्ष आहारदान के लिए संघ में आने का नियम लिया। सन् १९९० में आचार्य पदारोहण के मुख्य कार्यक्रम के पश्चात् आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी ११ वर्ष के अन्तराल से आचार्य पदारोहण स्मृति समारोह देखकर अतीव आनन्द का अनुभव कर रही।

विक्रम संवत् २०५७ के वर्षायोग की स्थापना आषाढ़ शुक्ला १४ को आचार्यश्री ने ६ मुनिराजों और २० आर्यिका माताजी सहित धरियावद में की। आचार्यश्री एवं संघस्थ साधु-साध्वियों के प्रवचन और समय-समय पर आयोजित विविध धार्मिक कार्यक्रमों से महती धर्मप्रभावना होती रही, धरियावद बनी धर्मनगरी। संघस्थ आर्यिकाश्री विपुलमतीजी और आगन्तुक आर्यिकाश्री सुपारसमती माताजीने वर्षायोग मे अपनी मनोभावना व्यक्त करते हुए कहा - "हे आचार्यदेव ! अब हमारा शरीर संयम में बाधक होता जा रहा है, अतः हमे सल्लेखनाव्रत ग्रहण करके अपनी इस पर्याय का अवसान करना है।"

आचार्यश्रीने समस्त संघ से विचार विमर्श किया क्योंकि नन्दनवन मे स्थित सल्लेखना-साधनारत आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी धरियावद से ३ कि. मी. दूर हैं। उनकी परिचर्या मे ३ माताजी पहले से ही आचार्यश्री द्वारा नियुक्त की हुई हैं। संघ ने आचार्यश्री की भावनाओं को समझकर उदारतापूर्वक स्वीकृति प्रदान करते हुए जब बताया कि संघ पूर्ण शक्ति लगाकर इन आर्यिका द्वय की वैयावृत्य - परिचर्या और संबोधन, ग्रन्थ वाचना आदि के लिए तत्पर रहेगा, तब फिर दोनों आर्यिका माताजी को

भी आचार्यश्रीने सल्लेखना-साधनाका क्रम समझाकर सल्लेखना प्रारम्भ करवाई, उधर नन्दनवनमें आचार्यश्री का आनेजानेका क्रम बराबर बना रहा। नियमसार ग्रन्थ की वाचना क्षपक माताजीश्री विशुद्धमतीजी के लिए चल रही है। संघ और सल्लेखना साधना की गतिविधि पर पूर्ण ध्यान रखते हुए आचार्यश्री दिखाई देते हैं कभी नन्दनवन में तो कभी धरियावद में। प्रातः नन्दनवन तो मध्याह्न या सायं धरियावद, कभी प्रातः धरियावद तो सायं या मध्याह्न में नन्दनवन में मिलते हैं आचार्यश्री के दर्शन। फिरभी अथक परिश्रम का आभास कभी दिखाई नहीं देता आचार्यश्री की मुखमुद्रा पर। धरियावद में मुनिश्री पुण्यसागरजी, नन्दनवन में आचार्यश्री तो कभी नन्दनवन में मुनिश्री पुण्यसागरजी और धरियावद में आचार्यश्री, ऐसा क्रम चलता रहा। शेष संघ यथाशक्य दोनों स्थानों पर उपस्थित रहा। इस प्रकार एक साथ चलती तीन-तीन सल्लेखना-साधना में जहाँ जब जिनको विशेष संबोधन एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता महसूस हुई वहाँ तब उनको आचार्यश्री का सान्निध्य बराबर मिलता रहा। द्वादशवर्षीय उत्कृष्ट सल्लेखना साधनारत आर्यिकाश्री का अंतिम चरण चल रहा है। चातुर्मास की समाप्ति के कुछ दिन बाद धरियावद में दोनों आर्यिका माताजी की सल्लेखना होने के पश्चात् समस्त संघ पहुँच गया नन्दनवन।

इधर सीकर नगर में चातुर्मास व्यतीत कर लगभग ५०० किलोमीटर की दूरी तय करती हुई गणिनी आर्यिका श्री सुपार्श्वमती माताजी के ससंघ नन्दनवन पहुँचने पर समस्त संघ एवं क्षपक माताजी, दीक्षामें अपने से बड़ी माताजी को सन्निकट पाकर अतीव आनन्द का अनुभव कर रही। जिस दिन गणिनी माताजी नन्दनवन पहुँची तब आचार्यश्री ने कहा कि,

"आज चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी की अक्षुण्ण आचार्य परम्परा में आचार्यश्री वीरसागरजी से लेकर आचार्य वर्धमानसागर

तक की पाँच पीढ़ियों के साधु-साध्वी यहाँ उपस्थित हैं, इससे अधिक हर्ष की बात क्या हो सकती है। गणिनी माताजी अधिक अनुभवी हैं, उनके अनुभव भी इस सल्लेखना मे बहुत महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान करेंगे।"

हुआ भी यही, गणिनी माताजी के आने से जहाँ सल्लेखना-साधना,सुचारु चलती रही, वहीं संघ को भी परम्परा के पिछले अनुभवों और पूर्वाचार्यों के काल के घटनाक्रमो का इतिहास जानने को मिला। इस प्रकार साधना के दिन बीत रहे हैं कि क्षपक आर्यिका माताजीश्री विशुद्धमतीजी की परीक्षा का दिन नजदीक आ गया। पौष शुक्ला ३ विक्रम संवत् २०५८, १६ जनवरी २००२ को १२ वर्ष की अवधि पूर्ण होने को है, अंतिम पानी लेकर चारो प्रकार के आहार का त्याग किया और पौष शुक्ला ८ दिनांक २२ जनवरी को प्रातः ब्रह्ममौहूर्तिक बेला में परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त करते हुए उन्होने निर्यापकाचार्य, आर्यिका-प्रमुख व समस्तसंघ की उपस्थिति मे इस नश्वर देह का परित्याग किया। इसी दिन रात्रि ९ बजे सनावद नगर मे चातुर्मासरत आचार्यश्री के द्वितीय मुनि शिष्यश्री चारित्रसागरजी महाराजकी समाधि, मुनिश्री हितसागरजी, मुनिश्री अपूर्वसागरजी, मुनिश्री देवेन्द्रसागरजी एवं ऐलकश्री नमितसागरजी के सान्निध्यमें हुई।

विदुषी आर्यिकाश्री विशुद्धमती माताजी का जन्म हुआ था मध्यप्रदेश में जबलपुर जिले के रीठी ग्राममें। श्रीलक्ष्मणलाल सिंघई के यहाँ चैत्र शुक्ला तृतीया संवत् १९८६ दिनांक १२ अप्रैल १९२९ के दिन पाँचवीं संतान के रूप में पैदा हुई बालिका का नाम रखा गया सुमित्रा। उस समय किसी को यह कल्पना भी नहीं थी कि यह लड़की बड़ी होकर अगाध आगमज्ञान ग्रहणकर, कठोर तपश्चर्या रूप आत्मसाधना कर दूसरो को भी मंगल पथ पर चलने की प्रेरणा प्रदान करती हुई, स्व-पर कल्याण के पथ पर आरूढ़ होकर, अपनी स्त्रीपर्याय की उत्कृष्ट उपलब्धि

आर्यिका पद प्राप्त करेगी ।

प्रसिद्ध संतश्री गणेशप्रसादजी वर्णी के निकट-संपर्क से संस्कारित एवं माता-पिता से मिले सदाचार, दया धर्म के संस्कार संचित सुमित्रा ने अल्पआयु में समीपवर्ती ग्राम बाकल के सामान्य घर की वधू बनकर गृहस्थ जीवन प्रारम्भ किया । छोटी वयमें पितृवियोग, विवाह के तुरन्त बाद मातृवियोग और डेढ़ साल के भीतर-भीतर पतिवियोग के आघात से वैधव्य का बोझ आ पड़ा । लेकिन यौवन के द्वार पर खड़ी धैर्यशीला किशोरीने वैधव्य के अभिशाप को कर्म की परिणति मानकर सह लिया । आगे विद्याभ्यास कर, सागर के उसी जैन महिलाश्रममें, जिसमें एक दिन खुद की शिक्षाका श्रीगणेश हुआ था, अध्यापिका बनकर सुमित्राजीने दूसरों के लिए ज्ञान-दान का अनुष्ठान प्रारम्भ कर दिया । दिगम्बर जैन महिलाश्रम सागर मे बारह वर्ष तक सुमित्राजीने प्रधानाध्यापिका पद पर रहकर अपना योगदान किया । उसी समय उन्होने आगे अध्ययन करके साहित्यरत्न और विद्यालंकार आदि उपाधियॉ अर्जित की । मूर्धन्य विद्वान् पंडितश्री पन्नालालजी साहित्याचार्य ने पुत्रीवत् स्नेह जताकर उन्हे शास्त्री पर्यन्त आगमज्ञान की विपुल सम्पदा प्रदान की । बढ़ती हुई ज्ञानाराधना के फलस्वरूप सुमित्राजी के जीवन की राह बदलने लगी । सन् १९६१ में वर्णीजी की सल्लेखना के दृश्यों से जीवन पटल पर विराग के रंग गाढ़े बने । पूज्य मुनिश्री धर्मसागरजी महाराज (जो बाद में आचार्य बने) के सागर में व्यतीत हुए चातुर्मास में महिलाश्रम की उस प्रधानाध्यापिकाने 'आर्यिका' बनने का संकल्प कर, उसके मंगलाचरण के रूप में मुनिश्री धर्मसागरजी से सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये ।

विक्रम संवत् २०२१ की श्रावण शुक्ला सप्तमी, भगवान श्री पार्श्वनाथ के मोक्षकल्याणक का पावन दिवस, दिनांक १४ अगस्त सन् १९६४ चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी के द्वितीय पट्टाचार्य

चारित्र शिरोमणि आचार्यश्री शिवसागरजी के करकमलोंसे अतिशय क्षेत्रश्री पपौराजी के प्रांगण में ब्रह्मचारिणी सुमित्राजीने पाई पर्यायकी उत्तम पदवी आर्यिका दीक्षा। आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी बनकर संघ की प्रणाली के अनुसार माताजी का नियमित शास्त्राभ्यास प्रारम्भ हुआ। एक ओर पूज्यश्री श्रुतसागरजी, पूज्यश्री अजितसागरजी महाराज ने अध्ययन कराया तो दूसरी ओर ब्र. श्री रतनचंदजी मुख्तार भी बड़े तौर पर सहायक हुए।

जैनागम की दार्शनिक और सैद्धांतिक सूझ-बूझ प्राप्त होते ही आचार्य महाराज के आदेश से साहित्य-सृजन रूप माँ जिनवाणी की सेवा का प्रयास प्रारम्भ हुआ, जिसके फलस्वरूप छह ग्रंथो की भाषा टीकाएँ, पाँच मौलिक रचनाएँ, पाँच प्रश्नोत्तर लेखन और संकलन-सम्पादन की बाईस पुस्तिकाएँ प्रकाशित हुईं। इस तरह माताजीने आगम ज्ञान के अथाह सागर में गोते लगाकर उसमें से रत्नराशि-मणि-माणिक्य चुन-चुनकर उन्हें विद्वत्जन और समाज तक पहुँचाने का अति प्रबल पुरुषार्थ किया।

व्रती जीवन की सार्थकता 'समाधिमरण' को ध्यान में रखते हुए सन् १९९० मे पूज्य आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज के सम्मुख बारहवर्ष की उत्कृष्ट सल्लेखना का संकल्प व्यक्तकर उनसे सल्लेखना व्रत की याचना की। आचार्यश्रीने इस महान् संकल्प के लिए माताजी को अपना आशीर्वाद देते हुए सल्लेखना का नियम दिया। कुछ समय पश्चात् आचार्यश्री अजितसागरजी की समाधि हो जाने से नवीन आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज ने माताजी की सल्लेखना हेतु निर्यापकाचार्य का उत्तरदायित्व सम्हाला। श्रावण शुक्ला सप्तमी २७ जुलाई २००१ को अपने ३८ वे दीक्षा दिवस के अवसर पर माताजी ने पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज और समस्त संघ के समक्ष सब से क्षमायाचना के साथ सभी प्रकार के अन्न का जीवन

पर्यन्त के लिए त्याग किया।

पूज्य आचार्यश्री धर्मसागरजी के सुशिष्य मुनिश्री दयासागरजी से सलूम्बर में, भावनगर की ब्र. पंकजबहन दीक्षाग्रहण कर बनी आर्यिकाश्री प्रशांतमती माताजी आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी के साथ उनका साया बनकर रहीं। सल्लेखना-साधना के समय उनकी उत्कृष्ट सेवा व जो समर्पणभाव रहा वह प्राय: देखने को नहीं मिलता। पौष शुक्ला अष्टमी दिनांक २२ जनवरी २००२ को प्रात: चार बजकर उनतीस मिनट पर आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजीने महामंत्र को सुनते-सुनते इस नश्वरदेह का परित्याग किया। नन्दनवन में स्थित, प्रतिष्ठाचार्यश्री हँसमुखजी द्वारा बनवाई गई पूज्य माताजी की समाधि-स्थली द्योतक है उनकी पुत्रवत् भक्ति की।

गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजीने विहार किया श्री क्षेत्र गिरनार यात्रा का लक्ष्य बनाकर। सल्लेखना सम्पन्न होने के पश्चात् आचार्यश्री पहुँचे ससंघ पारसोला। करीब दो माह के प्रवास में ग्रन्थों का स्वाध्याय चला। इसी बीच संघस्थ आर्यिकाश्री सौम्यमतीजी की सल्लेखना साधना चली। चैत्र शुक्ला १३ वि. सं. २०५८ महावीर जयन्ती की रात्रि में आचार्य संघ के सान्निध्य में पंचपरमेष्ठी के नाम स्मरण करते-करते शांत भाव से समाधि हुई उनकी। आचार्यश्री की आज्ञा से सनावद चातुर्मास करने गए श्री हितसागरजी आदि तीन मुनिराज एवं ऐलकजी संघ में आकर मिले पारसोला में।

२९ अप्रैल को पारसोला से निठुअवा, रींछा, साबला, मुंगेड, आसपुर, झलारा, सलुम्बर, डाल, टोड़ा, बड़गाँव, सलाडा आदि गाँवों में धर्मप्रभावना करते हुए आचार्यश्री ससंघ पहुँचे झालोड़। यहाँ मुनिश्री सुकुमालनन्दीजी भी ससंघ पहुँचे। दोनों संघों के, आचार्यश्री सहित ११ मुनिराज, १८ माताजी और अनेक ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणियों के सान्निध्य में १००८ भगवानश्री मल्लिनाथजी का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

सानन्द सम्पन्न हुआ । लगभग सवाचार फुट पद्मासन बादामी रंग की पाषाण की भगवान मल्लिनाथ जी की अत्यन्त मनोज्ञ प्रतिमाजी के संस्कार कर सूरिमंत्र दिया आचार्यश्रीने । साथ मे अनेक प्रतिमाजी प्रतिष्ठित हुईं । मुनिश्री सुकुमालनन्दीजी सन् २००१ का चातुर्मास यहाँ कर चुके हैं अत: प्रतिष्ठा मे उनका आगमन समाज में हर्षकारी रहा । उनके प्रवचनों से धर्मप्रभावना अच्छी हुई । प्रतिष्ठा महोत्सव समिति ने अपनी आय में से १ करोड़ रुपये का दान महिला-चिकित्सालय झालोड़ के लिए घोषित किया । आचार्यश्री का अपने विशाल संघ सहित प्रथमबार आगमन हुआ है यहॉ अत: सराहनीय है लोगों का उत्साह, और आचार्यश्री के प्रति भक्ति । अतीत मे यहॉ के प्राचीन मंदिर का जीर्णोद्धार आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के दीक्षागुरु आचार्य शिरोमणि श्री धर्मसागरजी के आगमन पर उनसे आशीर्वाद पाकर समाजने किया था ।

२५ मई २००२ को झालोड़ से विहारकर आचार्यश्री ससंघ पहुँचे गींगला । ६ वर्ष पूर्व आचार्यश्री के संघ के मंगल वर्षायोग में चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर कीर्तिस्तम्भ का शिलान्यास हुआ था, वह कीर्तिस्तम्भ प्रतिष्ठाचार्य श्री हॅसमुखजी के निर्देशन में बनकर तैयार हो चुका है । उस कीर्तिस्तम्भ की प्रतिष्ठा आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के ससंघ सान्निध्य मे सम्पन्न कराने का संकल्प था समाजका, अत: कीर्तिस्तम्भ की प्रतिष्ठा बड़े ठाटबाट से सानन्द सम्पन्न कर आचार्यश्री विहारकर खरका, पाणुंदा, मोतीदा ग्राम होकर १३ जून को प्रात: भीण्डर नगर के जिनालयों के दर्शनकर ध्यानडूंगरी आये । भगवानश्री आदिनाथ एवं चतुर्विशति जिनालय के पंचकल्याणक महोत्सव में सान्निध्य प्रदान करने हेतु आगमन हुआ है आचार्यश्री का ससंघ । ग्रीष्मकाल में लम्बे विहार के दौरान ही झालोड़, गींगला और अब भीण्डर ये तीनों प्रतिष्ठाएँ आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य मे और श्री हॅसमुखजी के प्रतिष्ठाचार्यत्व

में पूर्ण हो सकीं । वात्सल्य विमण्डित आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज सदा रहते हैं तत्पर, श्रावकों को धर्ममार्ग पर लगाने के लिए ।

प्रतिष्ठा के अनन्तर ही संघ बांसड़ा, खैरोदा होते हुए आया अतिशयक्षेत्र अडिन्दा पार्श्वनाथ । अतिशय क्षेत्र के जिनालयों के दर्शनकर, दो दिवसीय प्रवास के पश्चात् विहारकर संघने १ जुलाई, २००२ को मंगल प्रवेश किया, दिगम्बर मुनिराजों की जननी, साधु-साध्वियों के विचरण से पावन, महाराजा प्रताप की वीर भूमि, झीलों से सुशोभित धर्ममय नगरी उदयपुर में । इसी दिन गिरनारजी तीर्थक्षेत्र की यात्रा कर लौटी हुई गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी ने भी आचार्यश्री के साथ मंगल प्रवेश किया नगर में । कैसा समय का समायोजन !

नगर के प्रमुख जिनालयों के दर्शनकर आचार्यश्री का मंगल पदार्पण हुआ हुम्मडभवन में ससंघ । मुनिश्री वीरसागरजी महाराज भी चातुर्मास हेतु यहाँ पधारे । आज के प्रभात में ९ मुनिराज, १८ आर्यिका माताजी, १ ऐलकजी, १ क्षुल्लकजी, ब्रह्मचारीगण और ब्रह्मचारिणियों सहित बड़े संघ को पाकर उदयपुरवासियों का अंतर भर गया आह्लाद से, क्योंकि चातुर्मास सन्निकट ही तो है । पार्श्वनाथ भवन एवं साधुभवन मे आर्यिका समुदाय ठहरा ।

जिनकी अंत:चेतना के उदधि में वात्सल्यवारि हिलोरे लेता है ऐसे वात्सल्य वारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी का आचार्य पदारोहण स्मृति दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया, आषाढ़ शुक्ला २ को हुम्मड भवन में । आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी की सायंबेला में आचार्य संघने एवं गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी ने आचार्यश्री के साथ ही चातुर्मास स्थापना की, वे सर्वऋतु विलास जिनालय मे जाकर रहे ।

चातुर्मास काल में प्रतिवर्ष की भाँति वीरशासन जयन्ती, भगवानश्री पार्श्वनाथ निर्वाण दिवस, रक्षाबंधन (वात्सल्यपूर्णिमा) पर्व, षोड़शकारण पर्व, चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज

का ४७वाँ समाधि दिवस, दशलक्षण महापर्व, चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज का ७८वाँ आचार्य पदारोहण दिवस, भगवानश्री महावीर स्वामी निर्वाणदिन दीपावली पर्व आदि नैमित्तिक पर्वों के विशेष आयोजनो के साथ दैनिक प्रवचनों की शृंखला भी चली। महाचेता आचार्यश्री के अतिरिक्त संघस्थ साधु-साध्वियों के प्रवचनों के साथ-साथ समय-समय पर आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी के प्रवचनों का लाभ भी धर्मानुरागी उदयपुर की जनता को मिलता रहा। समय की पाबन्द समाज, विनय एवं भक्ति में भी अनुकरणीय है। प्रवचन के ठीक पॉच मिनिट पहले खाली दिखता सभामंडप ठीक समय पर खचाखच भर जाता और प्रवचन के बाद आचार्यश्री एवं संघस्थ साधु-साध्वियों की आहारचर्या के पश्चात् वहाँ कोई नहीं दिखता। सभामंडप भी दर्शनीय बना।

मै और मेरी पत्नी श्रीमती इन्दु, आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के जीवन पर पुस्तक लिखने का निश्चय कर दिनांक ३० अगस्त, २००२ को आचार्यश्री के दर्शन एवं आशीर्वाद पाने उदयपुर गये। तीन दिन तक आचार्यश्री के सान्निध्य मे रहे, तब मुझे लगा सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र के विकास से व्यक्ति पारदर्शी हो जाता है। उनके भीतर जलते हुए दीये को बाहरसे भी देखा जा सकता है। बाह्य कोई भी क्रिया चल रही हो लेकिन आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के लिए भीतर प्रमत्त-अप्रमत्त मे झूलना सहज हो गया है। तब मुझे कविश्री बसन्तकुमार परिहार की काव्य पंक्तियो का स्मरण हो आया....

इस यात्रा में शुरू होता है
मन का संवाद अन्त:पुरुष के साथ,
और तेल से लबालब भरे,
दीपक की बाती
प्रज्वलित हो उठती है प्रशांत

बाहर का शोर थम जाता है
और तब,
बाहर से भीतर के दरवाजों को
बन्द करने या खोलने का खेल
रचाने की आवश्यकता नहीं रह जाती
संकीर्तन बन जाता है सारा माहौल
अन्दर और बाहर ।

स्वरमण में रत रहते हुए भी असहाय व अपंगों के प्रति और संसार के सर्व संतप्त जीवों के प्रति बिना भेदभाव आचार्यश्रीकी करुणा और वात्सल्य का असीम निर्झर अविरत बहता रहता है । आचार्यश्री और उनके संघ की अयाचक, अपरिग्रह वृत्ति के कारण सतत विनती करते रहते हैं, श्रावक सेवा का लाभ प्राप्त करने को । लेकिन मौका मिलना मुश्किल हो जाता है ।

दो व्यक्तियों ने आकर आचार्यश्री के दर्शनोपरान्त कहा,

"महाराज जी ५ साल हो गए हमें सेवा का कोई अवसर प्राप्त हुआ नहीं, कुछ तो बताओ ?"

आचार्यश्रीने जवाब दिया,

"भैया, अभी कोई जरूरत नहीं है, जब जरूरत होगी तब अवश्य बता देंगे ।"

एक भाईने आकर कहा,

"महाराजजी, हेन्डबेग को सात साल हो गये हैं, नई बना लाऊँ ?"

आचार्यश्रीने अपनी हेन्डबेग दिखाते हुए कहा,

"देखो, अच्छी है न, बदलने की जरूरत ही नहीं ।"

तब वह फिरसे विनंति के साथ बोला,

"महाराजजी ! अन्य मुनिभगवंतों के लिए कहो, तो ला दूँ ।"

तब आचार्यश्रीने कहा,

"आप जाकर अर्पितसागरजी महाराज से मिलो और बाद में उन्हें मेरे पास भेजो ।"

कुछ समय पश्चात् पूज्य अर्पितसागरजी महाराज ने आकर कहा,

"महाराजजी ! बेग की किसी को भी जरूरत नहीं ।"

मेरे मित्रश्री प्रदीपभाई कोटडिया तारंगा चातुर्मास के पश्चात् से संघस्थ आर्यिका माताजी और ब्रह्मचारिणी बहनो को साड़ी अर्पण करने की विनती करते आ रहे हैं, तब आचार्यश्रीने कहा -

"प्रदीपभाई ! जहाँ चातुर्मास होता है वहाँ से माताजी को साड़ी मिल जाती है और दो से ज्यादा तो वे नही रख सकते । आपको तो जब जरूरत पड़े तब कह सकते हैं ।"

अपरिग्रही आचार्यश्री भक्तों की भावना को देखते हुए भी अपनी चर्या रखते है निस्पृह । संघ मे ऐसा स्वयंभू अनुशासन रहता है कि कोई भी त्यागी श्रावक से बॉलपेन या पेन्सिल जैसी सामान्य चीज भी नही लेता । अगर जरूरत पड़े तो आचार्यश्री से ही कहते हैं ऐसा निस्पृह और अनुशासित संघ सभी की प्रशंसा पाए तो इसमें आश्चर्य क्या !

उदयपुर के चातुर्मास के दौरान दशलक्षण महापर्व में पूज्य गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी की विद्वत्ता का सभी को भरपूर लाभ मिले, इस हेतु से तत्त्वार्थसूत्र के विवेचन का कार्य आचार्यश्री ने पूज्य माताजी को प्रदान किया । दो समय स्वाध्याय नियमित चलता रहा । माताजी के अतल गहरे ज्ञान और अनुभवों को समझने का अवसर मिलने से लाभान्वित हुए संघ और स्वाध्यायप्रेमी श्रावक । पूज्य माताजीने अनेक ग्रन्थों की संस्कृत टीकाओं का हिन्दी अनुवाद कर जिनागम के भण्डार में अभिवृद्धिकर समाज को लाभान्वित

किया है। माताजी के अगाध ज्ञानने पूरा प्रभाव छोड़ा। दशलक्षणपर्व के पूर्व ही आचार्यश्री के दशधर्म के प्रवचनों की आस्था चेनल ने रेकार्डिंग की और उसे पर्व के दिनों में प्रसारित करके लाखों लोगों को सुनने का अवसर दिया।

सर्वऋतु विलास जिनालय में आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में कलशारोहण समारोह प्रभावना पूर्वक सम्पन्न हुआ। इसी जिनालय मे गुरुमंदिर का निर्माण भव्यता के साथ किया गया है। उसका लोकार्पण भी आचार्यश्री के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज अपनी गुरु परम्परा के प्रति और अपने शिक्षागुरु के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हुए नतमस्तक हैं सो उनकी मंगल प्रेरणा से आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी की पावन स्मृति में श्रुतसागर नाम से एक ग्रन्थ संग्रहालय का निर्माण हुआ। इस ग्रन्थालय में कई दिनों के परिश्रमपूर्वक आचार्यसंघ में संगृहीत ग्रन्थों को विराजमान किया गया। इस विशाल संग्रह मे विराजित कई ग्रन्थ बड़ी कठिनता से प्राप्य हैं। यह है एक अनमोल खजाना। संग्रहालय को सुव्यवस्थित करने का श्रेय संघ के साधु वर्ग के साथ ही आचार्यश्री की अनन्य शिष्या आर्यिकाश्री वर्द्धितमतीजी को भी विशेष रूप से जाता है।

जब मैं और मेरी श्रीमतीजी फिरसे उदयपुर आचार्यश्री के दर्शन व आशीर्वाद के लिए गये तब सनावद से कुछ युवक और प्रौढ़ आचार्यश्री को सनावद प्रतिष्ठा हेतु निमंत्रण देने एवं मार्गदर्शन के लिए पधारे थे। सनावदवासियों के साथ चर्चा करते हुए आचार्यश्रीने बताया

"विनोदजी ! सनावद जानेकी मेरी इच्छा नहीं थी लेकिन इन नवजवानों ने कॉलोनी, क्लब हाउस बनाने के बजाय क्षेत्रनिर्माण का निर्णय लिया तो मैं नवयुवकों का उत्साह देखकर उन्हे निराश नहीं करपाया। ऐसे चार-पाँच युवक मिलकर इतना महान कार्य सम्पन्न कर रहे हैं इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है।"

मैं महसूस कर रहा था आचार्यश्री के श्रीमुखसे निकले स्नेह सभर शब्दों में टपकते वात्सल्य को और युवकों के चेहरे पर प्रगटी प्रसन्नता को। ऐसे विराट् व्यक्तित्व के धनी होते हुए भी छोटा-बड़ा हरकोई आकर बिना हिचकिचाहट से रख देता है खुद की बात और आचार्यश्री के वात्सल्य परिपूरित परामर्श से होता है सन्तुष्ट अपने आप में।

जिसके सिर पर पूरी प्रतिष्ठा की जिम्मेदारी है वह नवयुवक है पिताश्री सोभागचन्दजी जैन व माता उषादेवी का होनहार पुत्र भाईश्री वारिश (मोनू), विवेक, विनय और संस्कारिता का सरोवर। भाईश्री वारिशने अति आग्रहपूर्वक मुझे आचार्यश्री के नगरप्रवेश पर और प्रतिष्ठा में आन्टीजी के साथ लेकर पधारने की आग्रह भरी विनती की। सनावदवासियोंने नूतन निर्माणाधीन श्रीक्षेत्र के साथ आचार्यश्री का नाम रखने की (जोड़ने की) विनती करने में मुझे भी साथ जोड़लिया। लेकिन निस्पृह संत ने विनती को स्नेहसभर अस्वीकार किया। न नाम, न मान, बस, सर्वजनहिताय सर्वजनसुखाय काम।

दीपावली की छुट्टियो के अंतर्गत श्रावक ज्ञान साधना शिक्षण शिविर के आयोजन मे संघस्थ सभी ने अपना योग दिया। भगवान श्री महावीर निर्वाण दिवस पर निर्वाण लाडू चढ़ाकर और दीप प्रज्वलित कर श्रावको ने आपस में अंतर मे प्रेमदीप जला दिये। उदयपुर चातुर्मास समापन के अवसर पर श्री सुमतिलालजी डागरिया परिवार ने आचार्यश्री के आशीर्वाद से संघ सान्निध्य में श्री सर्वतोभद्र विधान पंडितश्री हँसमुखजी धरियावद के विधानाचार्यत्व में अत्यंत धर्मप्रभावना पूर्वक सम्पन्न किया। उन्होने आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी द्वारा लिखित 'मरणकण्डिका' ग्रन्थ की प्रश्नोत्तरीटीका के प्रकाशन की प्रेरणा आचार्यश्री से प्राप्त कर अपने द्रव्य का सदुपयोग किया।

सर्वऋतुविलास में आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी संघस्थ

आर्यिकाश्री मनोज्ञमतीजीने आचार्यश्री के निर्यापकत्व, माताजी के मार्गदर्शन और संघ के सान्निध्य में दीर्घकालीन साधनापूर्वक समाधिमरण व्रत पूर्ण किया और संयमधन की रक्षा करते हुए शांत परिणामों से पूर्ण जागृति के साथ देहविसर्जन किया। आचार्यश्री अब हुम्मडभवन लौट आये। सनावद में आयोजित फरवरी २००३ की प्रतिष्ठा हेतु सनावद की ओर विहार का मानस बनाया। संघस्थ आर्यिकाश्री अनन्तमतीजी को पैर में फ्रेक्चर हो जाने से उन्हें, अन्य माताजी एवं २ मुनिराजश्री को मुनिश्री हितसागरजी के नेतृत्व में उदयपुर ही छोड़ा और चातुर्मास के पश्चात् १८ नवम्बर २००२ से १८ दिसम्बर २००२ तक उदयपुर के उपनगरों मे और निकटवर्ती ग्रामों में मंगल विहार कर धर्म-प्रभावना करते हुए आचार्यश्री जयसमंद पहुँचे। यहाँ आचार्यश्री का केशलोंच सम्पन्न हुआ।

२६ दिसम्बर को आचार्यश्री के सलुम्बर आगमन पर आचार्यश्री अभिनन्दनसागरजी महाराज नगर से बाहर प्रवेशद्वार तक अपने गुरुभाई आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की अगवानी हेतु पधारे। दोनों आचार्यों (गुरु भाइयों) के मिलन का वह अद्भुत दृश्य देखकर भक्तों ने जयकार से गगन गुंजायमान कर दिया। परस्पर की वात्सल्य पृच्छा को देखकर नगरजन हर्षाश्रु से द्रवीभूत हुए बिना नहीं रह सके। नगरप्रवेश पर जिनालयों के दर्शनकर 'आचार्यश्री धर्मसागर श्रमणभवन' में पहुँचे। वहाँ युगल आचार्यों के मंगल प्रवचन हुए। सायंकालीन प्रतिक्रमण का समय होने से दोनों संघों के संघस्थ साधु-साध्वियों ने प्रतिक्रमण आदि आवश्यक क्रियाएँ एक साथ सम्पन्न कीं। अगले दिन उभय आचार्यों एवं संघस्थ साधुओंने एक साथ बैठकर स्वाध्याय एवं चर्चा में भाग लिया। सम्पूर्ण दिवस धार्मिक क्रियाओं एवं धर्मोपदेश में व्यतीत हुआ। दोनों आचार्यों के मध्य भी कुछ चर्चाएँ पृथक् से हुईं। यहाँ दो दिवसीय प्रवास के अनन्तर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने ससंघ आगे विहार
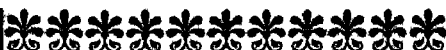
किया। संघ की विदाई के समय दोनों आचार्य एवं संघ नगर के बाहर चौराहे तक साथ रहे। ससंध दो आचार्यों के वात्सल्य-मिलन को देखकर नगरवासी रह गए अवाक्। आचार्यश्री यहाँ से ससंघ लोहारिया पहुँचे। यहाँ पूर्व विराजित आचार्यश्री रयणसागरजी, जो इसी परम्परा के हैं वे भी गाँव के बाहर आचार्य संघ की अगवानी हेतु पधारे। दोनों आचार्यसंघ वात्सल्यपूर्वक मिले। यहाँ भी दो दिवस के प्रवास के पश्चात् आचार्यश्री ससंघ आये चन्दूजी का गढ़ा ग्राम में। यहाँ विराजित मुनिश्री सुकुमालनन्दीजी ने आचार्य-वन्दना कर ग्राम- प्रवेश कराया। यह सब देखकर श्रावकों को लगा कि कितना वात्सल्यपूर्ण और विवेकयुक्त होता है त्यागियों का व्यवहार। यहाँ जिनालयों के दर्शनोपरांत धर्मोपदेश देकर आचार्यश्री विहारकर ३ जनवरी २००३ को पहुँचे बाँसवाड़ा शहर के उपनगर मोहनकॉलोनी। यहाँ पर आये हैं सनावद, बड़वाह के भक्तगण, अपने प्रिय आचार्यश्री को लिवा लेने ससंघ। जिसमें युवा और किशोर चल रहे हैं आचार्यश्री के साथ, महिलाएँ व्यस्त हैं आगे जाकर चौका लगाने में, बुजुर्ग वर्ग प्रवृत्त हैं विहार के समस्त आयोजन में। श्री वीरेन्द्रकुमारजी, श्री सुनीलकुमारजी, श्री विजयकुमारजी, श्री धरमचंदजी, श्री पवनकुमारजी, श्री हेमंतकुमारजी (काका), श्री विपुलकुमारजी, श्री निकेशकुमारजी, श्री मनोजकुमार, श्री विशालकुमार, श्री श्रीकान्तजी जटाले, श्रीमती उषादेवी, श्रीमती चमेलीबाई, श्रीमती प्रमिलाबाई, श्रीमती रतनबाई, श्रीमती सुलोचनाबहन आदि सभी ने अति उत्साह के साथ भक्ति से संघ की सेवा- वैयावृत्य करते- करते विहार में साथ दिया। छोटी सरवण से आचार्य संघ ने राजस्थान छोड़कर मध्यप्रदेश की सीमा में प्रवेश किया। सौलाना होकर ९ जनवरी को रतलाम नगर में जिनालयों के दर्शन किए। आपके दो दिवसीय प्रवास में मंगल प्रवचनों से समाज लाभान्वित हुआ।

दिनांक १८ जनवरी को आचार्यश्री ससंघ आये बड़नगर। सन्

१९६७ में यशवंतकुमार (आचार्यश्री) घर छोड़कर आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी के साथ यहाँ आये थे। उसके पश्चात् इतने सालों के बाद अब आचार्यपद में यहाँ आने से समाजने बड़े उत्साहपूर्वक स्वागत- अभिवन्दन किया। यहाँ के अतिशय युक्त शांतिनाथ भगवान एवं अन्य जिनालयों के दर्शनकर संघ आनन्द से भर गया। जिनधर्मप्रभावक आचार्यश्री के धर्मोपदेश से एवं समाज द्वारा शांतिविधान सम्पन्न कराने से महती प्रभावना हुई। यहाँ से देवालपुरा-गौतमपुरा होकर संघ बनेड़िया अतिशय क्षेत्र पर पहुँचा। सन् १९६७ में पहलीबार और आज दूसरीबार आये हैं आचार्यश्री इस अतिशय क्षेत्र के दर्शन हेतु। प्रतिष्ठा महोत्सव सन्निकट होने से तीव्र गति से चल रहा है विहार। यहाँ से गोम्मटगिरि इन्दौर के दर्शनकर रात्रिविश्राम किया। प्रात: धर्मोपदेश, आहार एवं सामायिक के पश्चात् गोम्मटगिरि ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री बाबूलालजी पाटोदी अपने अनन्य साथी श्री गुलाबचन्दजी बाकलीवाल के साथ आये और आचार्यश्री के साथ भगवान बाहुबली के समक्ष बने मानस्तम्भ की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं पहाड़ के नीचे आग्नेय कोण में स्थित तालाब में नवनिर्माण के सम्बन्ध में चर्चा की। यहाँ मुनिश्री चैत्यसागरजी एवं अन्य दो मुनिराजों ने आचार्यश्री की वन्दना की। आगामी भगवानश्री आदिनाथ के निर्वाण दिवस पर विशालतम निर्वाणलाडू चढ़ाने के आयोजन में आचार्यश्री से रुकने का आग्रह किया गया, किन्तु समयाभाव के कारण अधिक दिन तक यहाँ रुकना सम्भव नहीं था अत: २० जनवरीको गोम्मटगिरि से इन्दौर नगरकी ओर विहार करते हुए मार्ग में पड़नेवाले सभी प्रमुख जिनालयों के दर्शन करते हुए इतवारिया में काचके मंदिर के दर्शनकर, मल्हारगंज के शांतिनाथ जिनालय में आचार्यश्री पहुँचे ससंघ। दर्शन और रात्रिविश्राम के पश्चात् प्रात: यहाँ से आगे विहार हुआ। स्कीम नं. ७१ सुदामानगरवासियों ने संघ का मंगल प्रवेश अपनी कॉलोनी में कराया। सुदामानगर के जिनालय में दर्शन-धर्मोपदेश

करके स्कीम नं. ७१ के जिनमंदिर के दर्शन किये और फिर सभा में आचार्यश्री का मंगल प्रवचन हुआ। आचार्यश्री ने अपने गोम्मटगिरि से स्कीम नं. ७१ के विहार में पड़नेवाले उपनगरों के नामों का अर्थ-अभिप्राय धार्मिक परिप्रेक्ष्य में घटित करते हुए मंगल प्रवचन को आध्यात्मिक बना दिया। जिनके ज्ञानभंडार में अमूल्य ज्ञानराशि संचित है ऐसे गहनज्ञानधारी आचार्यश्री के लिए यह सहज साध्य है। आचार्यश्री के प्रवचनपूर्व संघस्थ आर्यिकाश्री वर्द्धितमतीजी ने एवं मुनिश्री पुण्यसागरजी, मुनिश्री अपूर्वसागरजी ने भी धर्मसभा को सम्बोधित किया। २१ जनवरी, २००१ को संघस्थ मुनिश्री चारित्रसागरजी एवं विदुषी आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी समाधिस्थ हुए थे। मुनिश्री चारित्रसागरजी की समाधि निकटस्थ सनावदनगर में रात्रि के प्रथम प्रहर मे और आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी की समाधि धरियावद (नन्दनवन) में रात्रि के पिछले प्रहर में हुई थी। आज २१ जनवरी दोनों का समाधि दिवस। आचार्यश्री एवं संघ के सान्निध्य में आयोजित दो दिवसीय कार्यक्रम में विशाल पांडाल में जिनालय के सम्मुखही २१ जनवरी के मध्याह्न में शांतिविधान एवं २२ जनवरी को श्रद्धांजलि सभा सम्पन्न हुई। प्रखर वक्ता श्री कमलकुमार, श्री बाबूलालजी पाटोदी, श्रीमती आरती-सनतकुमार, श्री जयन्तकुमार जटाले आदिके पश्चात् संघस्थ आर्यिकाश्री वर्द्धितमतीजी, श्री प्रशांतमतीजी, श्री शुभमतीजी और मुनिश्री देवेन्द्रसागरजी, श्री अर्पितसागरजी, श्री अपूर्वसागरजी, श्री पुण्यसागरजी के श्रद्धांजलि समन्वित मंगल प्रवचनों के अनन्तर आचार्यश्री ने अपने मंगल प्रवचन में संयम और समाधिमरण-सल्लेखना की महत्ता को समझाते हुए सभा को सम्बोधित किया। २२ जनवरी मध्यान्ह स्कीम नं. ७१ इन्दौर से आचार्यश्री ने मंगल विहार किया।

२६ जनवरी गणतंत्र दिवस के दिन आचार्यश्री ने बड़वाह नगर में मध्याह्न के बाद प्रवेश किया। यहाँ के डिग्री कॉलेज में आचार्यश्री

ने अपने विद्यार्थी जीवन में अध्ययन किया है। यहाँ नवनिर्मित स्वाध्याय भवन में आचार्यश्री और मुनिगण एवं निकटस्थ धर्मशाला में आर्यिका संघ ठहरे। २७-२८ जनवरी को प्रातः मंगल प्रवचन सराफ। बाजार में विशाल पांडाल में हुआ। बड़वाह नगर से एक बाल ब्रह्मचारी भैया, आचार्यश्री विद्यासागरजी के संघ में मुनिदीक्षा लेकर मुनिश्री मल्लिसागरजी नाम से जाने जाते हैं। यह संघस्थ ब्रह्मचारीश्री राजेन्द्र भैया का जन्मनगर है। उनके पिताश्री ताराचंदजी चौधरी समाज के १२ साल तक अध्यक्ष रहे। मंदिर के पास ही मकान होने से धार्मिक संस्कार बालपन से ही पड़े। किशोर अवस्था में चौके में सहाय करना व साधु संघ की वैयावृत्ति करने में आनंद मिलता। आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज की सुशिष्या आर्यिकाश्री सत्यमतीजी, आर्यिकाश्री पुण्यमती माताजी के सान्निध्य में रात्रिभोजन का त्याग व ब्रह्मचर्यव्रत लेनेकी भावना हुई। सत्यमती माताजी ने कहा "मेरा आशीर्वाद है तू अच्छे गुरु को अपना गुरु बनाकर संसार पार करने के लिए व्रत अंगीकार कर अपने जीवन को सफल बना ले।"

राजेन्द्र भैया (गज्जु भैया) को संसार में फँसने का प्रसंग आया लेकिन अंतरमन को यह ठीक नहीं लगा सो वे किशनगढ़ की ओर चल पड़े। वहाँ जन-उद्धारक, जिनधर्म प्रभावक आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के चरणों में शीश झुकाकर जीवनभर उनकी सेवा करने का और अन्यत्र कहीं भी नहीं जानेका संकल्प लिया सन् १९९८ में। तब से गुरु के प्रति पूर्णतया समर्पित भाव से सेवारत हैं ब्र. श्री गज्जुभैया (राजेन्द्र भैया)

२८ जनवरी मध्याह्न के बाद यहाँ से विहारकर आया संघ मोरटक्का। यहाँ का जिनालय आचार्यश्री वर्धमानसागरजी का वैराग्यतीर्थ है जिसके प्रांगण में अंतरमन की धरा पर वैराग्यका बीज बोया गया था। जिनालय में भगवान के दर्शन कर प्रांगण में आचार्यभक्ति करते हुए आचार्यश्री का आह्लाद, भीतर के भाव स्पष्ट झलक रहे हैं उनके मुख

मंडल पर, उसका द्रष्टा बनने का सौभाग्य मुझे और मेरी श्रीमतीजी को भी मिला। मोरटक्का में आचार्यश्री के आगमन पर श्री देवकुमारसिंह कासलीवाल, श्री प्रदीपकुमारसिंह कासलीवाल और श्री हेमन्तजीकाला आदि पधारे। २९ जनवरी को प्रात: प्रभाकर की पहली किरण निकलते ही आचार्यश्रीने मोरटक्का से विहार किया नवनिर्मित क्षेत्रश्री सिद्धाचल पोदनपुरम् की ओर।

श्री क्षेत्र सिद्धाचल - पोदनपुरम् इन्दौर खण्डवा मार्ग पर सनावद से ३ किलोमीटर उत्तर की ओर सुरम्य पहाड़ियों के गर्भ का नवोदित क्षेत्र।

सन् १९९१ मे सनावद, बड़वाह, मण्डलेश्वर और इन्दौर के पाँच नवयुवक शिवपथपंथी गुरुवर आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के दर्शनार्थ पहुँचे जयपुर। दर्शन कर उन्होंने सनावद से ३ किलोमीटर की दूरी पर स्थित एक टीलेनुमा पहाड़ी का फोटो आचार्यश्री को अवलोकन कराते हुए कहा,

"आचार्य भगवंत ! हम इस पहाड़ी पर प्रथम कामदेव भगवानश्री बाहुबली की मूर्ति स्थापित कर नये क्षेत्र का निर्माण करना चाहते हैं।"

आचार्यश्री ने नये तीर्थ-निर्माण में अरूचि दर्शाई। तब युवाओं ने बताया कि, "यदि आप भगवानश्री बाहुबली की स्थापना की अनुमति नहीं देंगे तो वहाँ कॉलोनी बनकर क्लब हाउस, स्वीमिंग पुल जैसे अन्य स्थान निर्मित होंगे।"

समदर्शी आचार्यश्रीने सोचा, युवाओं की भगवान स्थापित करने की ख्वाहिश प्रबल है, यदि इन्हें रोका तो न जाने वहाँ भोग - विलास के साधन रख देंगे जिससे युवा पीढ़ी का चिंतन दूषित होगा। गम्भीर चिन्तन, मनन, विचार के पश्चात् युवाओं की श्रद्धा एवं प्रचण्ड आकांक्षा जानकर शुभचिन्तक आचार्यश्रीने, शुभकार्य में अपना आशीर्वाद दिया। टीलेनुमा पहाड़ी का चित्र देखकर उनकी अंतरात्मा में ध्वनि

प्रस्फुटित हुई 'श्री क्षेत्र सिद्धाचलम् श्री पोदनपुरम्' ।

यह नाम सुनते ही युवाओं के हृदय भर गए संतुष्टि से । शुभ कार्य करने का दृढ़ संकल्प, कार्य के प्रति निष्ठा और पूर्ण समर्पणभाव, इसके साथ है इष्टोपदेशी आचार्यश्री का मंगल आशीर्वाद, बस, सोने पर सुहागा ।

प्रतिष्ठाचार्य पण्डित श्री हँसमुखजी से निवेदन करने पर करौली के लाल पत्थर में से निर्मित, सवा सत्रह फुट ऊँची १५ टन वजन की भगवान श्री बाहुबली की मूर्ति, श्रवणबेलगोला के भगवानश्री बाहुबली के सदृश निर्मित हुई । जयपुर में निर्मित विशाल प्रतिमाजी को ट्रोले पर रखकर प्रथम मुखावलोकन के लिए आचार्यश्री के पास टोडारायसिंह लाया गया । सुन्दर प्रतिमा को अनिमेष देखते रहे आचार्यश्री एवं संघस्थ त्यागीव्रती, सभी हुए प्रसन्नचित्त ।

मनोहारी मूरत ने मार्गगमन में ही अपने आपको श्रद्धालुओं के दिलोंमे प्रतिष्ठित कर लिया । प्रतिमाजी के सनावद आगमन पर पंडितश्री हँसमुखजी, अन्य अतिथिगण एवं पूरा निमाड़-मालवा प्रांत अगवानी हेतु सनावद में उमड़ आया । नगरयात्रा करते हुए विशाल ट्रोले मे विराजित प्रतिष्ठेय प्रतिमाजी पर नगरवासियों ने पुष्पवृष्टि की ।

प्रज्ञाश्रमण आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने पारसोला चातुर्मास के दौरान पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में पधारने की स्वीकृति दे दी है सो आचार्यश्री, मुनिश्री पुण्यसागरजी, मुनिश्री अपूर्वसागरजी, मुनिश्री अर्पितसागरजी, मुनिश्री देवेन्द्रसागरजी,मुनिश्री देवेशसागरजी, ऐलकश्री नमितसागरजी, आर्यिकाश्री शुभमती माताजी, श्री शीतलमती माताजी, श्री प्रशांतमती माताजी, श्री चैत्यमती माताजी, श्री वंदितमती माताजी, श्री वत्सलमती माताजी, श्री वर्द्धितमती माताजी एवं ब्रह्मचारी ब्रह्मचारिणी गण उदयपुर से विहारकर पधारे हैं प्रतिष्ठा में, ससंघ सान्निध्य प्रदान करने हेतु । निमाड़ व मालवा प्रांत की समाज निहार रही है आचार्यश्री

का आगमन पथ । कब आयें आचार्यश्री पोदनपुरम् में ?

पूर्वाकाश में उदित आजकी मंगलमय उषा आचार्यश्री के आगमन की छड़ी पुकार रही है अगवानी में । पेड़, पौधे, लताएँ नये रूप सजाकर प्रकट कर रहे हैं ख़ुशी उनके सत्कारमें । खिले-खिले सुमन सौरभ विकीर्ण कर, वातावरण को सुरभित कर जता रहे हैं अपनी अभिवन्दना । नई-नई कोंपलों से भरी डालियाँ झुक-झुककर कर रही हैं उनके चरणों में नमन । वासंती वायुने बह-बह कर उनके आने के पथको कर दिया स्वच्छ । निमाड़-मालवा की जनता तन-मन को सजाकर खडी है अपने परम तेजस्वी संत को सत्कारने ।

जैसे ही दूर से दिखे आचार्यश्री वैसे ही जय-जयकार की ध्वनि से भरगया निरभ्र आकाश । जन-जन के उर का आनन्द, हृदय का हर्ष प्रतिबिंबित होता है उनके जयकार में । केशरिया वस्त्र पहने, माथे पर मंगल कलश लिये सौभाग्यवती ग्यारह स्त्रियों ने आचार्यश्री की तीन प्रदक्षिणा देकर, अगवानी कर मंगल प्रवेश करवाया । आगे स्थित 'णमोकार धाम' में भगवानश्री आदिनाथजी की ७¹/४ फुट पद्मासन प्रतिमा के दर्शनकर आचार्यश्री पधारे श्री क्षेत्र सिद्धाचल - पोदनपुरम् में ।

क्षेत्र पर उनके पाद-पदुम पड़ते ही कविवर भूधरदासजी की ये पंक्तियाँ गूंजने लगी मेरे मनोमस्तिष्क में,

ये गुरु चरण जहाँ धरें,
जगमें तीरथ होय ।
सो रज मम मस्तक चढ़ो,
'भूधर' माँगे सोय ॥

छोटी पहाड़ी पर खड़े पूर्वाभिमुख भगवान बाहुबली एवं पूरे क्षेत्र का अवलोकन करते हुए अति उल्लाससे भर गए आचार्यश्री । क्षेत्र के कार्यकर्ताओं को, किये गए और अब होनेवाले कार्यों के बारे में

परामर्श दिया आचार्यश्री ने।

फिर अभिवन्दना सभा का आयोजन हुआ। मंगलाचरण और गुरु-वंदना की प्रस्तुति के बाद 'मुनि-त्यागी-वैयावृत्ति-समिति' के अध्यक्ष श्री प्रकाशचंद सराफ व महोत्सव समिति के स्वागताध्यक्ष श्री इंदरचंदजी चौधरी ने स्वागत भाषण दिया। आर्यिकाश्री वर्द्धितमतीजी, मुनिश्री पुण्यसागरजी महाराज ने पोदनपुरम् के उद्‌भव के बारे में बताया। पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने कहा कि "संकल्प, निष्ठा और समर्पण से सारे कार्य निर्विघ्न संपन्न होते हैं। पंचकल्याणक प्रतिष्ठा उपरांत श्री बाहुबली भगवान की यह मनोज्ञ प्रतिमा भगवान का रूप धारणकर सारे देश में धर्मप्रभावना का कार्य कर सभी को आत्मकल्याण की ओर प्रेरित करेगी।" सभा समाप्तिके बाद संगीतकार श्रीरवीन्द्र जैन के स्वरों में ये पंक्तियाँ गूंज रही हैं परिसरमें -

ऐसा आनेवाला कल हो,
हो नगर-नगर में बाहुबली,
सारी धरती धर्मस्थल हो
हम यही कामना करते हैं।

यह भावना सार्थक हो रही है सनावद की धरती पर।

संघस्थ सभी की आहारचर्या एवं सामायिक संपन्न होते ही करीब १-३० बजे आचार्यश्री की अगवानी हेतु पधारे निमाड़-मालवा व अन्य प्रान्तों के समाज जनो के साथ आचार्यश्री का विहार प्रारम्भ हुआ सनावदनगर की ओर। शोभायात्रा में दो हाथी, पाँच अश्व व इक्यावन ध्वजाधारी, साथ में है धरमपुरी के मधुर बैंड की स्वर लहरियाँ, जिसने वातावरण को बना दिया वर्धमानमय। जयकार ध्वनि एवं संगीत सुरों के साथ हुआ मंगल नगरप्रवेश। यहाँ आचार्यसंघ की अगवानी की हजारों समाजजन व नगरवासियों ने। सांसदश्री ताराचंद पटेल, विधायक श्री जगदीश मोराण्या, नगरपालिका अध्यक्ष श्री प्रवीणसिंह सोलंकी,

ब्लॉक कॉंग्रेस अध्यक्षश्री संतोष बाकलीवाल, पूर्व विधायक श्री विमलचंद काला, शिक्षा समिति अध्यक्षश्री आशीष चौधरी, सोशल ग्रुप फेडरेशन के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष श्री हंसकुमार जैन, वर्धमान विद्या सोशल ग्रुप अध्यक्षश्री विजय काला सहित अनेक नेताओं ने पाद-प्रक्षालन का सौभाग्य पाया। श्री बाबूलाल माणकचंद, श्री लोकेन्द्रकुमार जैन, श्री पवन गोधा, श्री चिंतामणीजी (खण्डवा), श्री धरमचंद पंचोलिया, श्री अक्षय जैन, श्री सुभाष जटाले, श्री वीरेन्द्र जैन (बेड़िया), श्री अजय पंचोलिया, श्री शैलेन्द्र जैन (एन.श्री.) श्री पवन जैन (कातोरा) आदि ने पाद प्रक्षालन कर धन्यता पाई। आचार्यश्री एवं संघ की स्वागत-भक्ति में मगन लोगों के हृदय के भाव व्यक्त हो रहे हैं इन पंक्तियों में -

धन-वैभव के जिन्हें भाये न आलय हैं,
ये तो चारित्र के सच्चे हिमालय हैं।
मन्दिरों की मूर्तियाँ तो मौन रहती हैं,
संघ तो चलते-फिरते जिनालय हैं।

नगर-प्रवेश के प्रारम्भ में आया सरस्वती शिशु मंदिर, जहाँ रास्ते के दोनों ओर कतारबद्ध खड़े हैं शिशु और किशोर, जिन्होंने स्काउट गाइड के रूप मे सेल्यूट देकर आचार्यश्री एवं संघ का अभिवादन किया। अपने गॉव के आचार्य मुनिराज के दर्शन करने की तीव्रतम इच्छा, दिगम्बर मुनिराज को देखने के कौतूहलसे भरे इन्तजार में खड़े हैं घंटो से। शिशु मंदिर के बच्चों और शिक्षकोंकी शिस्त, उनकी जिज्ञासा और संत-भक्ति की जितनी तारीफ करे उतनी कम है। पूरी सभा में ग़ज़ब ढानेवाली शांति रही।

शिशु मंदिर की प्रधान शिक्षिका ने स्वागत प्रवचन में कहा -

"हमारे लिए यह गौरव की बात है कि आचार्यश्री के चरणचिह्न अंकित हुए हमारे शिशु मंदिर में, हम धन्य हुए। मैं आचार्यश्री एवं पूरे

संघ का हार्दिक स्वागत और अभिवन्दना करती हूँ । वे हमारे भक्ति प्रसूनों की पुष्पांजलि स्वीकार करें ।"

शिशु मंदिर का प्रांगण भर गया है बच्चों व स्त्री-पुरुषों से । तिल रखने की भी जगह कहाँ ? जिनको बैठना नहीं मिला, वे खड़े हैं सभा के तीनों ओर ।

परम हितैषी आचार्यश्री ने अपने आशीर्वादात्मक मंगल प्रवचन में बताया,

"मंदिर में विद्यमान हैं परमात्मा, वे प्रेरणादायी हैं । अभी जिस मंदिर में उपस्थित हैं वह विद्या का मंदिर है । यहाँ माँ सरस्वती की अर्चना होती है । पुरुषार्थ के प्रारम्भ का विशिष्ट उद्देश्य से प्रवेश होता है । यह कार्यशाला है, यहाँ देश के भावी नागरिकों के जीवन-निर्माण का कार्य चलता है । न्याय, नीति व सदाचार के भाव, निर्माण की कड़ी होती है। शिक्षकगण को बच्चों में ज्ञानार्थ प्रवेश और सेवार्थ प्रस्थान जैसी राष्ट्रीय भावनाओं को कूट-कूट कर भरना चाहिए । ज्ञान के साथ-साथ उन्नत चारित्र को प्राप्त करने का सामर्थ्य सब को प्रगट हो,ऐसी मंगल कामना ।"

बच्चे देख रहे हैं आचार्यश्री को, सुन रहे हैं उनका वक्तव्य मंत्रमुग्ध होकर । बच्चों के प्रति उनके वात्सल्य की हमें जो अनुभूति हुई, इसे शब्दों में बाँधना मुश्किल है ।

यहाँ से आगे चलते, जगह-जगह पर सजे तोरणद्वार, बंदनवार लगे अभिनन्दन बेनर, घरों के ऊपर लहराती धर्मध्वजा, जुलूस में है सनावद की जैन जनता के साथ मुस्लिम बिरादर, सिख, हिन्दू, क्रिश्चियन सभी जातियों के लोग बिना भेद-भाव से चलते हैं चहेते संत के साथ। युवा-युवतियों का उल्लास चरम सीमा को लांघ गया । भजन मंडली के साथ नाचते-गाते, डांडिया रास करते झूम रहा है युवा वर्ग । वे अपनी श्रद्धा-भक्ति के सुमन, समर्पित कर रहे हैं अपने धर्म पारस आचार्यश्री

के पादारविंद में ।

घर-घर के आगे मोती, हल्दी, कंकु, रोली अक्षत के चौक पूरे हुए हैं । शुद्ध जल, शुद्ध दूध एवं आरती लिये खड़े हैं जन-जन । पाद-प्रक्षालन एवं आरती से सभी की वंदना स्वीकारते-स्वीकारते, सजे स्वागत द्वारों से आगे बढ़ रहे हैं आचार्यश्री । रास्ते के मकानों के झरोखों में खड़े नगरजन पुलकित हैं आचार्यश्री के दर्शन से । ब्राह्मणपुरी में पुष्पों व मोतियों की वृष्टि होती रही आचार्यश्री के संघ पर ।

जगह-जगह नगरवासियों ने जलपान के स्टाल लगाए, जिससे जुलूस में शामिल हजारों महिलाएँ, बच्चे व पुरुष तृप्त हुए जलपान से। एक व्यवसायी द्वारा बनवाया गया ८०० वर्गमीटर कपडे का पंचरंगा बैनर सभी के आकर्षण का केन्द्र बना । आचार्यश्री ने संघ सहित नगर के सभी जिनालयों के दर्शन किये । सुभाष चौक पर जैन सोशल ग्रुपने अपने अनूठे अंदाज में स्वागत किया । जुलूस पोरवाड़ दि. जैन धर्मशाला में धर्मसभा मे परिणत हुआ । यहाँ श्री अजय पंचोलिया की मंगलाचरण-प्रस्तुति के अनन्तर आचार्यश्री ने अपने आशीर्वचन में कहा -

"सबके हृदय कमल विकसित हैं, धर्मशाला में धर्म की शालाने प्रवेश किया । संघ मात्र मुनि-आर्यिका का समूह नहीं है । गुणों का संघ होता है । व्यक्ति पूजा प्रतिपादित नहीं है गुणों की पूजा होती है ।"

३५ साल पुरानी स्मृति में खोते हुए आपने कहा कि,

"सारे नगर का बहुत भौतिक विकास हुआ है, कहीं भी रिक्त स्थान नहीं है, अब हमें आध्यात्मिक विकास की ओर जाना होगा ।"

सायंकाल संगीत के साथ उतारी गई आचार्य संघ की आरती में उपस्थित रहना सौभाग्यशाली लगा । सुबह से शाम और रात्रि तक आचार्यश्री के आगमन पर पूरा सनावद स्वागत सरोवर में ऐसा डूबा कि,

स्वागत में जन-जन के परिजन यहाँ हैं,
सभी के हृदय की कली खिल रही है ।

सजी है दुल्हन सी आज नगरी हमारी,
ढोल तूरी बैंड की ध्वनि हो रही है ।
पलक पाँवड़े बिछ रहे हम सभी के
जोत आरति ह्रदय का तिमिर हर रही है ।
अभिवन्दना है वर्धमानसागरजी हमारी तुम्हीं को,
तुम्हारे चरण में जन-जनकी भक्ति बह रही है ।

३० जनवरी को वर्धमान चौक में आयोजित धर्मसभा में आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की फोटो के सामने दीप प्रज्वलित कर मंगलाचरण के पश्चात् आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज की भक्तिपूर्वक संगीतमय पूजन की गई । पूज्य आर्यिका श्री प्रशांतमती माताजी ने अपने वक्तव्य में कहा -

"वस्तु की प्राप्ति सुलभ है लेकिन उसका सही उपयोग करना दुर्लभ है । साधु-संगति क्षण मात्र की हो पर मन, वचन, काय की एकाग्रता से हो तो कल्याणकारी है ।"

परम पूज्य आचार्यश्री वर्धमानसागरजी महाराज ने अपने प्रवचन मे कहा,

"ज्ञान दर्शन चैतन्यमय आत्मा हम हैं । मनुष्य पर्याय को सार्थक करना है तो संसार से विरक्त होना पड़ेगा, उदासी तो बहुतबार आती है, उदासीनता आ जाय तो जीवन धन्य है । उदासीनता ही जीवन के लिये कार्यकारी है ।"

मध्याह्न ४-३० बजे निर्वाह परिवार एवं निमाड़ लोक परिषद् द्वारा महात्मा गांधी के ५५वें निर्वाण दिवस पर आयोजित हुई स्मरणांजलि सभा, जिसमें आचार्यश्री ससंघ सादर आमंत्रित किये गये । वहाँ आर्यिका श्री वर्द्धितमतीजी एवं मुनिश्री अपूर्वसागरजीने गांधीजी के कार्यों को बताते हुए अहिंसा से उद्भूत शक्ति के सबंध में बताया । आचार्यश्रीने अपने उद्बोधन में कहा,

"भगवान महावीर से महात्मा गांधी तक भारत का राष्ट्रीय चिंतन समान है। उसे हम आत्मसात् करें।" स्वधर्म, राष्ट्र और महात्मा गांधी विषय को विस्तार देते हुए आचार्यश्री ने बताया कि "स्वराज आ गया किन्तु वह सुराज्य नहीं बन सका। वीर राणा प्रताप व भामाशाह जैसे स्वदेश प्रेम और स्वाश्रय की भावना को सभी देशवासी विकसित करें। भगवान महावीर और महात्मा गांधी का जीवन-दर्शन, प्रकाश स्तंभ के रूप में हमारा पथ प्रदर्शित करते हैं।"

आचार्यश्री से ७ फरवरी को प्रारम्भ होनेवाली पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्बंधी मार्गदर्शन मिलता रहा। आचार्यश्री के प्रतिदिन के प्रवचन में उमड़ता मजमा। आहार-चर्या को विचरते साधु-साध्वी, कार्यकरों की दौड़धूप, कुल मिलाकर ऐसे माहौल में, सभी उतावले हैं बावरे हैं, अग्रसर हैं जिनधर्मामृत का पान करने, आहार देने एवं वैयावृत्ति करने में।

मध्याह्न की सामायिक के पश्चात् आचार्यश्री के पास बैठे हैं हम। कुछ समय के बाद, जिनके बेटे दिगम्बरी दीक्षा लेकर बन गए हैं मुनिश्री प्रयोगसागरजी (आचार्यश्री विद्यासागरजी संघस्थ), उनके पिताजी श्री सुधीरकुमारजी चौधरी (सनावदवाले) अपने साथ खरगौन के वयोवृद्धश्री कस्तूरचंदजी अमूलखचंदजी जैन को लेकर आये। श्री सुधीरकुमारजी ने उनको आचार्यश्री के सम्मुख बिठाया।

पाटे पर बिराजमान आचार्यश्री स्वयं खिसककर आगे आये, नतमस्तक श्री कस्तूरचंदजी के माथे पर अपना स्नेहसभर पवित्र हाथ फेरने लगे न जाने कब तक? जैसे एक माँ दुलारसे अपने बच्चे के माथे पर ममता उंडेलती है, जैसे एक पिता अपने पुत्र के सिर पर प्यार भरा हाथ फेरता है, उससे भी कई गुनाअधिक आचार्यश्री के हृदय का वात्सल्य बरस रहा उनके सिर पर करकमलों के माध्यम से।

श्री कस्तूरचंदजी के नेत्रों से आनन्द मिश्रित संतुष्टि के अश्रु

निकल कर, कर रहे हैं आचार्यश्री का पादप्रक्षालन। इस दृश्य को देख अभिभूत हुए हम। हमारे भीतर की भावविभोर अनुभूति से नीर की दो बूंदें टपक गई नयनों से। प्रज्ञाचक्षु श्री कस्तूरचंदजी के हाथों से भगवान जिनेन्द्रकी मूर्ति गिरकर खंडित हो गई थी। उन्होंने इस दोष का प्रायश्चित्त भी ले लिया था। लेकिन अब वे अपने हाथों से नई मूर्ति की प्रतिष्ठापना करना चाहते हैं सो आचार्यश्री के पास मार्गदर्शन हेतु पधारे हैं। आचार्यश्री ने इसके लिए आशीर्वाद दिया।

करुणामूर्ति आचार्यश्री के हृदय में लहराते वात्सल्यवारिधि की लहरें भिगोती हैं सबके तन-मन को। तभी तो एकबार जो आचार्यश्री के पास आया उसे उनसे दूर होना कभी नहीं भाया।

३१ जनवरी को भगवान ऋषभदेव निर्वाण महोत्सव के अंतर्गत प्रात: ७ बजे श्री आदिनाथ भगवान छोटा मंदिर (दाना बाजार) में आचार्य संघ के सान्निध्य में निर्वाणलाडू चढ़ाया गया। तदनन्तर आचार्यश्री ससंघ विहारकर, आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा व क्षुल्लक श्री मोतीसागरजी की परिकल्पना अनुसार निर्मित तीर्थ 'णमोकार धाम' आये। यहाँ भगवानश्री ऋषभदेव की सवा सात फीट उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा के अभिषेक उपरांत ७१,००० ग्राम का निर्वाण लाडू आचार्यश्री ससंघ के सान्निध्य में चढ़ाया गया, फिर आचार्यश्री का मंगल प्रवचन हुआ। तदनन्तर संघ लौट आया सनावद नगर।

यहाँ के पोरवाड़ दिगम्बर जैन मंदिर के मूल नायक भगवान को कमलासन पर बिराजमान करने का विचार भी आचार्यश्री की प्रेरणा से समाज ने किया। मंदिर के अन्य संशोधन-सुधार का कार्यक्रम भी प्रारम्भ हुआ। खंडेलवाल पंचायती मंदिर में भी पंडित श्री हँसमुखजी के मार्गदर्शन से एवं आचार्यश्री के आशीर्वाद से संशोधन-कार्य प्रारम्भ हुआ। प्रतिदिन आचार्यश्री के अध्यात्मप्रधान प्रवचनों को सुनने के लिए मुमुक्षुमंडल के कुछ लोग निरन्तर आते रहे। महासुदी ६, वि. सं.

२०५९, ५ फरवरीको वर्धमानचौक में जनसमूह से ठसाठस भरे विशाल पांडाल में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी ने ऐलकश्री नमितसागरजी के मस्तक पर मुनिदीक्षा के संस्कारकर उन्हें मुनिदीक्षा दी। नवीन पिच्छिका - शास्त्र - कमण्डलु अर्पित होते ही नव दीक्षित मुनिराजश्री नमितसागरजी एवं आचार्यश्री के जयघोष से गूंज उठा सनावद का आसमान । उसी दिन सायं आचार्यश्री ससंघ विहारकर पहुँचे भगवानश्री बाहुबली प्रतिष्ठापन महोत्सव स्थली श्री क्षेत्र सिद्धाचल-पोदनपुरम् ।

अति तेजी से विकसित इस क्षेत्र के कार्यकर्ता, इन्जीनियर आदि ने दिन-रात अथक मेहनत कर कार्य को पूर्णता प्रदान की । इन्जीनियर श्री संजयकुमार जैन घर-गृहस्थी भूलकर, तन-मन की सुधि खोकर जुटे हैं कार्य में, ऐसे निमग्न हैं कि सुबह का घर से आया टिफिन शाम को वैसे का वैसा वापस जाता है, न भूख है न प्यास । भगवान के माता-पिता बने श्री सोभागचंद जैन व श्रीमती उषादेवी जैन, सनावद के पूरे परिवार ने प्रतिष्ठा महोत्सव में डटकर भाग लिया । बडा बेटा सोनूभैया बहू श्रीमती महिमा जैन हैं इन्द्र-इन्द्राणी, पुत्री वर्षा व दामादश्री संजयकुमार जैन हैं सानतकुमार इन्द्र । छोटा बेटा, धनपति कुबेरश्री वारिश भैया जो क्षेत्र-निर्माण के निमित्त पाँच युवकों में से एक है, उनको कहीं बैठे नही देखा वे दौड़ते ही रहे ।

दिनांक ७ फरवरी, २००३ से १५ फरवरी, २००३ तक चली श्री १००८ भगवान ऋषभदेव जिन बिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, श्री १००८ भगवान बाहुबली प्रतिष्ठापना एवं महामस्तकाभिषेक महोत्सव के प्रतिष्ठाचार्य वास्तुविद् पंडित श्री हँसमुखजी जैन नन्दनवन एवं पंडित श्री सुकुमालजी उपाध्ये सौदत्ती कर्णाटक रहे । प्रतिष्ठा विधि सम्पन्न करने के लिए संस्कारशाला का निर्माण पृथक् रूप से मुख्य मंडप के नजदीक ही किया गया । विभिन्न २७ वेदियों पर प्रतिष्ठा के संस्कार हुए और मुख्य मंडपमें प्रतिष्ठा सम्बन्धी अन्य कार्यक्रम चलते रहे । जैसी

प्रतिष्ठा विधि नन्दनवन धरियावद में सम्पन्न हुई थी वैसी ही विधि यहाँ सम्पन्न की गई। भगवान श्री आदिनाथ प्रतिष्ठा के विधिनायक हैं। भगवान बाहुबली के तो तप-ज्ञान मोक्ष तीन ही कल्याणक हुए। इन सभी दिनों दोपहर में आचार्यसंघ के मंगल प्रवचन होते रहे। इस अवसर पर देश के शीर्षस्थ विद्वान् ब्र.डॉ. श्री प्रमिलाजी (संघस्थ गणिनी आर्यिकाश्री सुपार्श्वमती माताजी), प्राचार्यश्री नरेन्द्रप्रकाशजी जैन (फिरोजाबाद), पंडितश्री नीरजजी जैन (सतना), श्री निर्मलजी जैन (सतना), पंडितश्री सुकुमाल उपाध्ये (कर्णाटक) का सामीप्य रहा और उनके रात्रि-प्रवचनों से लाभान्वित हुए उपस्थित धर्मपिपासु श्रावक। इनके अलावा जिनधर्मरक्षक स्वस्ति श्री भट्टारक चारुकीर्ति स्वामीजी मूड़बद्री, श्री लक्ष्मीसेन भट्टारक स्वामीजी कोल्हापुर, श्री धवलकीर्ति भट्टारक स्वामीजी अर्हन्तगिरि, चेन्नई विशेष रूप से उपस्थित रहे, जिनका परिचय श्री नीरजजी जैन (सतना) ने अनूठे ढंग से करवाया। भट्टारक स्वामीजी के प्रवचनों का लाभ भी मिलता रहा।

एक दिन रात्रि में डॉ. प्रमिलाजी ने अपने प्रवचन में आचार्यश्री वर्धमानसागरजी की ओर भक्ति व विनय का ताना-बाना बुनते हुए कहा -

धागो को जोड़ा तो परिधान बन गया,
ईंटों को जोड़ा तो मकान बन गया,
यशवंतकुमार ने दर्शन-ज्ञान-चारित्र संजोया,
तो आचार्यश्री वर्धमानसागर बन गए।

श्री रवीन्द्रकुमारजी जैन (हस्तिनापुर), श्री निर्मलकुमारजी सेठी (लखनऊ), श्री हेमंतजी काला, श्री रूपचंदजी कटारिया (दिल्ली), श्री जमनालालजी हापावत (मुंबई), श्री डी. आर. शाह (इन्दौर), श्री पूनमचंद शाह (भावनगर), श्री प्रदीपभाई कोटड़िया (अहमदाबाद) आदि भी पधारे प्रतिष्ठा महोत्सव में।

प्रतिष्ठा महोत्सव के बीच जन्म कल्याणक समारोह में मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजयसिंह पधारे। आचार्यश्री के दर्शनकर आशीर्वाद प्राप्त किया तब आचार्यश्रीने मध्यप्रदेश में जैनों को अल्पसंख्यक घोषित करने के लिए कहते हुए उन्हें याद दिलाया कि,

"जैन लोग भारतीय संविधान में दिये गये अपने अधिकारों को ही मांग रहे हैं, नया कुछ नही। भारतीय संविधान में जैनों को हिन्दुओं से पृथक् दर्जा प्राप्त है। अन्य अल्पसंख्यकों की अपेक्षा जैनों की संख्या भी अल्प है।"

क्षेत्रीय सांसद और विधायक भी प्रतिष्ठा महोत्सव में आये। प्रतिष्ठा सम्पन्न होने के अनन्तर भगवानश्री बाहुबली का मस्तकाभिषेक भी सम्पन्न हुआ। सिद्धाचलम् के इस प्रतिष्ठा महोत्सव के भव्य समापन के पश्चात् आचार्यश्री ने पोदनपुरम् से ससंघ पुनः सनावदनगर की ओर विहार किया। वहाँ जिनालय की वेदियों में पुनः भगवान स्थापित किये गए।

चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज की समाज संगठन की भावना और निर्भयता, आचार्यश्री वीरसागरजी की निर्मलता, आचार्यश्री शिवसागरजी का अनुशासन, आचार्यश्री धर्मसागरजी की बालसहज निर्दोषता, सहजता और निस्पृहता, आचार्यश्री अजितसागरजी की अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगिता, संयतवाणी और चिन्तनशक्ति ये सभी किसी एक व्यक्तित्व में समायोजित होकर वृद्धिंगत हुई है, तो ऐसा व्यक्तित्व है वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी का। ऐसे आचार्यश्री ने समस्त संघके साथ विहार किया सिद्धभगवंतों की तपः कर्मक्षय भूमि श्री सिद्धवरकूट की ओर।

समय को विराम कहाँ ? यह विराम नहीं, अल्प विराम है, दो समयों के बीचका।

वात्सल्य वारिधि आचार्य १०८ श्री वर्धमान सागरजी महाराज के वर्षानुक्रम से वर्षायोग के पवित्र स्थान

धन्य वह ग्राम, नगर आवास ।
जहां पूज्य श्री ने, किये वर्षावास ॥

क्र.	सन्	स्थान	राज्य	विशेष
१.	१९६९	जयपुर	राजस्थान	मुनि अवस्थामें
२.	१९७०	टोंक	”	”
३.	१९७१	अजमेर	”	”
४.	१९७२	पहाड़ीधीरज	दिल्ली	”
५.	१९७३	नजफगढ़	हरियाणा	”
६.	१९७४	दिल्ली	दिल्ली	”
७.	१९७५	सरधना	उ.प्र.	”
८.	१९७६	मेरठ	उ.प्र	”
९.	१९७७	मदनगंज-किशनगढ़	राजस्थान	”
१०.	१९७८	आनन्दपुर कालू	राजस्थान	”
११.	१९७९	निवाई	राजस्थान	”
१२.	१९८०	पदमपुरा	राजस्थान	”
१३.	१९८१	भीलवाड़ा	राजस्थान	”
१४.	१९८२	लोहारिया	राजस्थान	”
१५.	१९८३	प्रतापगढ़	राजस्थान	”
१६.	१९८४	अजमेर	राजस्थान	”

१७.	१९८५	लूणवाँ (नागौर)	राजस्थान	मुनि अवस्था में
१८.	१९८६	सुजानगढ़	राजस्थान	”
१९.	१९८७	मदनगंज-किशनगढ़	राजस्थान	”
२०.	१९८८	भीण्डर	राजस्थान	”
२१.	१९८९	लोहारिया	राजस्थान	”
२२.	१९९०	पारसोला	राजस्थान	आचार्यपद में
२३.	१९९१	अणिन्दा पार्श्वनाथ	राजस्थान	”
२४.	१९९२	तारंगाजी सिद्धक्षेत्र	गुजरात	”
२५.	१९९३	श्रवणबेलगोला	कर्णाटक	”
२६.	१९९४	श्रवणबेलगोला	कर्णाटक	”
२७.	१९९५	कुम्भोज-बाहुबली	”	”
२८.	१९९६	गीगला	राजस्थान	”
२९.	१९९७	पारसोला	राजस्थान	”
३०.	१९९८	मदनगंज-किशनगढ़	राजस्थान	”
३१.	१९९९	जयपुर	राजस्थान	”
३२.	२०००	टोडारायसिंह	राजस्थान	”
३३.	२००१	धरियावद	राजस्थान	”
३४.	२००२	उदयपुर	राजस्थान	”
३५.	२००३	भीण्डर	राजस्थान	”
३६.	२००४	सलुम्बर	राजस्थान	”

आचार्य पदारोहण स्मृति दिवस

१.	१३ जुलाई १९९१	गींगला	राजस्थान
२.	१ जुलाई १९९२	तलोद	गुजरात
३.	२० जून १९९३	होसदुर्ग	कर्णाटक
४.	१० जुलाई १९९४	श्रवणबेलगोला	कर्णाटक
५.	२९ जून १९९५	सांगली	महाराष्ट्र
६.	१७ जुलाई १९९६	उदयपुर	राजस्थान
७.	७ जुलाई १९९७	सलुम्बर	राजस्थान
८.	२६ जून १९९८	भीलवाड़ा	राजस्थान
९.	१४ जुलाई १९९९	लूणवाँ (नागौर)	राजस्थान
१०.	३ जुलाई २०००	निवाई	राजस्थान
११.	२३ जुलाई २००१	धरियावद (नंदनवन)	राजस्थान
१२.	१२ जुलाई २००२	उदयपुर	राजस्थान
१३	१ जुलाइ २००३	भीण्डर	राजस्थान
१४	१९ जून २००४	सलुम्बर	राजस्थान

वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी द्वारा प्रदत्त दीक्षाएँ

सन् १९९०	पारसोला	१. मुनिश्री ओमसागरजी
		२. आर्यिकाश्री वैराग्यमतीजी
सन् १९९३	श्रवण बेलगोला	१. मुनिश्री चारित्रसागरजी
		२. क्षुल्लकश्री नम्रसागरजी
		३. क्षुल्लकश्री विनम्रसागरजी
सन् १९९७	भीण्डर	१. आर्यिकाश्री वंदितमतीजी
		२. आर्यिकाश्री वत्सलमतीजी
		३. आर्यिकाश्री वर्धितमतीजी
		४. आर्यिकाश्री विलोकमतीजी
सन् १९९८	बिजोलिया	१. मुनिश्री अपूर्वसागरजी
		२. मुनिश्री अर्पितसागरजी
सन् १९९९	जयपुर	१. आर्यिकाश्री अचलमतीजी
		२. ऐलकश्री नमितसागरजी
सन् २०००	जयपुर (नेमिसागर कॉलोनी)	१. मुनिश्री देवेन्द्रसागरजी
		२. मुनिश्री देवेशसागरजी
सन् २००१	धरियावद	१. क्षुल्लिकाश्री मूर्तिमतीजी
सन् २००३	सनावद	१. मुनिश्री नमितसागरजी

वात्सल्यवारिधि आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के सान्निध्य में हुई प्रतिष्ठाएँ

१९९१	गींगला	राजस्थान
१९९३	श्रवणबेलगोला	कर्णाटक
१९९५	धर्मस्थल	कर्णाटक
१९९६	दुधनी	महाराष्ट्र
१९९६	इचलकरंजी	महाराष्ट्र
१९९६	उदयपुर	राजस्थान
१९९७	अंदेश्वर पार्श्वनाथ	राजस्थान
१९९७	भीण्डर	राजस्थान
१९९७	इंटालीखेड़ा	राजस्थान
१९९८	बिजोलिया	राजस्थान
१९९८	खरका	राजस्थान
१९९९	श्रीमहावीरजी	राजस्थान
२०००	नेमिसागर कॉलोनी, जयपुर	राजस्थान
२००१	धरियावद	राजस्थान
२००१	नंदनवन (धरियावद)	राजस्थान
२००२	झाड़ोल	राजस्थान
२००२	गींगला (कीर्तिस्तंभ की)	राजस्थान
२००२	भीण्डर	राजस्थान

आचार्यश्री वर्धमानसागरजी के निर्यापकत्व में हुई सल्लेखनाएँ

१९९२	तारंगाजी	गुजरात	१. मुनिश्री ओमसागरजी
			२. आर्यिकाश्री भद्रमतीजी
१९९३	श्रवणबेलगोला	कर्णाटक	१. मुनिश्री अचलसागरजी
			२. मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी
१९९४	मूड़बद्री	कर्णाटक	१. ब्र. चोखेलालजी
१९९५	धर्मस्थल	कर्णाटक	१ ब्र. वाड़ीलालजी
१९९७	भीण्डर	राजस्थान	१. मुनिश्री शाश्वतसागरजी
			२. आर्यिका पवित्रमती माताजी
			३. आर्यिका चेतनमती माताजी
	पारसोला	राजस्थान	४. क्षुल्लकश्री नम्रसागरजी
१९९८	किशनगढ़	राजस्थान	१. आर्यिकाश्री समतामती माताजी
१९९९	जयपुर	राजस्थान	१. आर्यिकाश्री अचलमती माताजी
			२. आर्यिकाश्री सरस्वती माताजी
२००१	धरियावद	राजस्थान	१. आर्यिकाश्री विपुलमतीजी
			२. आर्यिकाश्री सुपारसमतीजी
२००२	नन्दनवन	राजस्थान	१. आर्यिकाश्री विशुद्धमतीजी
	पारसोला	राजस्थान	१. आर्यिकाश्री सौम्यमतीजी
	उदयपुर	राजस्थान	१. आर्यिकाश्री मनोज्ञमती माताजी

परिचय के गवाक्ष से संघ परिचय
ब्रह्मचारी गण

क्रमांक	नाम	गाँव	संघ में कितने सालसे
१.	श्री मोतीलालजी हाड़ा	जयपुर	५ साल
२.	श्री मीठालालजी जैन	उदयपुर	३ साल
३.	श्री गुप्तीश जैन (चक्रेश)	पीपलगोन	५ साल
४.	श्री सचिनभैया	जीरभार	४.६ साल
५.	श्री राजेन्द्र भैया (गजुभैया)	बड़वाह	४.६ साल
६.	श्री जिनेशभैया	किशनगढ़	२ साल

ब्रह्मचारिणी गण

१.	ब्र. भारतीबहन	कूण (राज.)	१३ साल
२.	ब्र. सरिताबहन	हिंम्मतनगर (गुज.)	९ साल
३.	ब्र. मधुबहन	निवाई (राज.)	३ साल
४.	ब्र. मनोरमाबहन	फागी (राज.)	४ साल
५.	ब्र. मंजुबहन	धरियावद (राज.)	१३ साल
६.	ब्र. मोहनबाई	उदयपुर (राज.)	८ साल
७.	ब्र. शोभाबहन	प्रतापगढ़ (राज.)	१३ साल
८.	ब्र. किरणबहन	खुरई (म.प्र.)	१८ साल
९.	ब्र. मृदुलाबहन	सनावद (म.प्र.)	५ साल
१०.	बा.ब्र. अर्चनाबहन	सनावद (म.प्र.)	५ साल

क्र.	वर्तमान नाम	पूर्व नाम	जन्मतिथि	माता व पिता का नाम	जन्मस्थान
१.	मुनि श्री सौम्य सागरजी	श्री सोहनलालजी छाबड़ा	ई.स. १९३४	श्रीमती धापूबाईजी श्री सुन्दरलालजी छाबड़ा	टोडारायसिह (राज.)
२	मुनि श्री अपूर्वसागरजी	श्री राजेन्द्र कुमार	२६ जून सन् १९६६	श्रीमती रतनबाईजी श्री फकीरचदजी	सनावद (म प्र.)
३	मुनि श्री अर्पितसागरजी	श्री विजयकुमार	२५ अप्रेल १९६६	श्रीमती सुशीलाबाईजी श्री कॅवरचदजी	सनावद (म प्र)
४	मुनि श्री देवेन्द्रसागरजी	श्री नवरतन मलजी	७ सितम्बर १९४३ भादवा सुदी-८ वि.स २०००	श्रीमती रत्नदेवी श्री रतनलालजी	नागौर (राज.)
५	मुनि श्री देवेशसागरजी	श्री गोपीचदजी	श्रावण सुदी पूर्णिमा वि.स १९९१	श्रीमती मुक्तिदेवी श्री मीठालालजी	चन्दलाई (राज.)
६	मुनि श्री नमित सागरजी	श्री कैलाशचंदजी सेठी	आषाढ कृष्णा- वि.स २०१६	श्रीमती कॅवरीबाईजी श्री घीसालालजी सेठी	कोठिया (राज)

से संघ परिचय

लौकिक शिक्षा	ब्रह्मचर्य व्रत	मुनि दीक्षा	दीक्षागुरु	चातुर्मास
कक्षा सातवीं	वि.सं. २०२६ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से	वैशाख कृष्णा-१३ वि स. २०४५ १४ अप्रेल १९८८	आचार्यश्री अजितसागरजी महाराज	२८
पोलिटेकनीक प्रथमवर्ष	वैशाख सुदी-३ २५ अप्रेल १९९३ आ.श्री वर्धमानसागरजी से	महा सुदी-१३ वि.स. २०५४ ९ फरवरी१९९८ बिजौलिया	आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज	७
बी कॉम	वैशाख सुदी-३ २५ अप्रेल १९९३ आ. श्री वर्धमान सागरजी से	महा सुदी-१३ वि.स २०५४ ९ फरवरी ई स. १९९८ बिजौलिया	आचार्य श्री वर्धमान सागरजी महाराज	७
बी कॉम	भादवा सुदी-११ सन् १९९५ (मुनिश्री जितेन्द्र सागरजी)	महा सुदी-५ वि.सं. २०५६ १० फरवरी ईस २०००	आचार्य श्री वर्धमान सागरजी महाराज	५
मेट्रिक	फरवरी १९८९ अमरकटक में आचार्य श्री विद्यासागरजी से	महासुदी-५ वि.सं. २०५६ १० फरवरी ई.स. २०००	आचार्य श्री वर्धमान सागरजी महाराज	५
कक्षा सातवीं	ई. स. १९६६ में आर्यिका श्री इन्दुमतीजी से	ऐलक दीक्षा कार्तिक शुक्ला २ वि.सं. २०५५ जयपुर. मुनि दीक्षा महासुदी-६ वि.स. २०५६ ५ फरवरी ई.स. २००३ सनावद	आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज	५

क्र.	वर्तमान नाम	पूर्व नाम	जन्मतिथि	माता व पिता का नाम	जन्मस्थान
१.	आर्यिका श्री शुभमतीजी	कु. विमलाजी जैन	वैशाख सुदी-३ ईस - १९४८	श्रीमती शांतिदेवी श्री गुलाबचंदजी मोदी	खुरई (म.प्र.)
२.	आर्यिका श्री सुवैभवमतीजी	कु. हंसा जैन	७ नवम्बर, ईस. १९५६	श्रीमती शान्ताबाईजी श्री पन्नालालजी	दाहोद (गुजरात)
३.	आर्यिका श्री प्रशातमतीजी	कु. पकजबहन शाह	आसोज कृष्णा-३ ३ अक्टूबर सन् १९५६	श्रीमती प्रमिलाबेन श्री पूनमचंदजी	भावनगर (गुजरात)
४.	आर्यिका श्री चैत्यमतीजी	कमलाबाई	ईस. १९५३	श्रीमती हमेरीबाईजी श्री कारुलालजी	केजड़ (राज.)
५.	आर्यिका श्री वंदितमतीजी	कस्तूरीबाई	वि.सं १९९०	श्रीमती पानुबाईजी श्रीरतनलालजी कठालिया	जाम्बुड़ा (राज.)
६	आर्यिका श्री वत्सलमतीजी	विमलाबाईजी	१ नवम्बर सन् १९५३	श्रीमती सज्जनबाईजी श्री मोतीलालजी पारडिया	सलूम्बर राजस्थान
७	आर्यिका श्री विलोकमतीजी	केशरबाईजी	३१ जनवरी सन् १९६१	श्रीमती मणिबाईजी श्री ओंकारलालजी	सलूम्बर राजस्थान
८	आर्यिका श्री वर्द्धितमतीजी	कु. भावनाबेन शाह	१ दिसम्बर सन् १९५९	श्रीमती प्रमिलाबेन श्री पूनमचंदजी	भावनगर (गुजरात)

आर्यिकाश्री वर्द्धितमतीजी की अचानक तीन दिन में २४ सितम्बर २००३ मध्यरात्रि २-२५ समय पर खूता चातुर्मास के दौरान समाधि हो गई।

से संघ परिचय

लौकिक शिक्षा	ब्रह्मचर्य व्रत	आर्यिका दीक्षा	दीक्षागुरु	चातुर्मास
कक्षा नवमी	ईस. १९६७ आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से	५ दिसम्बर, १९७१	आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज	३३
कक्षाबारहवीं	ईस. १९७६ मुनि श्री दयासागरजी से	१७ जून १९८२	मुनि श्री दयासागरजी महाराज	२३
एम.एससी. (आनर्स)	कार्तिक सुदी-२ ईस. १९८१ आचार्य श्री सुबलसागरजी महाराज से	२३ अप्रेल १९८६	मुनि श्री दयासागरजी महाराज	१९
कक्षा पाँचवीं	ईस. १९८६ मुनि श्री दयासागरजी महाराज से	अप्रेल १९८८	आचार्य श्री अजितसागरजी महाराज	१७
कक्षा छठी	आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से	महासुदी-९ वि.सं. २०५३ १५ फरवरी १९९७	आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज	६
कक्षा नवमी	आचार्य श्री वर्धमान सागरजी महाराज से	महा सुदी-९ वि सं. २०५३ १५ फरवरी १९९७	आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज	६
कक्षा पाँचवीं	ई.स. १९८३ मुनि श्री दयासागरजी महाराज से	महा सुदी-९ वि.स. २०५३, १५ फरवरी १९९७	आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज	६
बी.एससी.	१९८४ मुनि श्री विरागसागरजी	महाराज से महा सुदी-९ वि. सं. २०५३, १५ फरवरी १९९७	आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज	६

अक्षुण्ण आचार्य परम्परा का संक्षिप्त परिचय

क्र.	शुभ नाम	जन्म सम्बन्धी			क्षुल्लक दीक्षा		
		स्थान	नाम	सन्	गुरु	स्थान	सन्
१	चारित्र चक्रवर्ती आ. शान्तिसागरजी म	भोज येस्गुल (दक्षिण)	श्री सातगौड़ा पाटील	१८७२	मुनि श्री देवेन्द्रकीर्तिजी	उत्तूर ग्राम	१९१५
२	चारित्र चूड़ामणि आ. वीरसागरजी म	ईडर (दक्षिण मे)	श्री हीरालालजी गंगवाल	१८७६	आ शान्तिसागरजी	कुम्भोज बाहुबली	१९२४
३	चारित्र शिरोमणि आ. शिवसागरजी म.	अड़गाँव (दक्षिण मे)	श्री हीरालालजी रावका	१९०१	आ. वीरसागरजी	श्री सिद्धवरकूट	१९४३
४	चारित्ररत्न आ. धर्मसागरजी म.	गम्भीरा (राज)	श्री चिरंजीलाल जी छाबड़ा	१९१४	आ.कल्प चन्द्रसागरजी	बालूज	१९४४
५	चारित्र पुंगव आ. अजितसागरजी म	भौंराग्राम (म प्र.)	श्री राजमलजी	१९२५	-	-	-
६	आ. वर्धमानसागरजी म.	सनावद (म.प्र.)	श्री यशवन्त कुमारजी	१९५०	-	-	-
७	आ.कल्प श्रुतसागरजी म.	बीकानेर (राज.)	श्री फमूलालजी	१९०५	आ. वीरसागरजी	टोडारायसिंह	१९५४

क्र.	ऐलक दीक्षा			मुनि दीक्षा			आचार्य पद			समाधि	
	स्थान	नाम	सन्	गुरु	स्थान	सन्	स्थान	सन्	पट्टाधीश	स्थान	सन्
१	स्वय	भिलारजी सिद्धक्षेत्र	१९१७	मुनि श्री देवेन्द्रकीर्तिजी	यरनाल	१९२०	समडोली	१९२४	बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य	श्री कुन्थलगिरि	१९५५
२	-	-	-	आ शान्तिसागरजी	समडोली	१९२४	जयपुर	१९५५	आ. शान्तिसागरजी के	जयपुर	१९५७
३	-	-	-	आ. वीरसागरजी	नागौर	१९४९	जयपुर	१९५७	आ वीरसागरजी के	श्रीमहावीरजी	१९६८
४	-	-	-	आ. वीरसागरजी	फुलेरा	१९५१	श्रीमहावीरजी	१९६८	आ. शिवसागरजी के	सीकर	१९८७
५	-	-	-	आ. शिवसागरजी	सीकर	१९६१	उदयपुर	१९८७	आचार्य धर्मसागरजी के	साबला	१९९०
६	-	-	-	आ. धर्मसागरजी	श्रीमहावीरजी	१९६९	पारसोला	१९९०	आचार्य अजितसागरजी के	-	-
७	-	-	-	आ वीरसागरजी	खानियाजी जयपुर	१९५७	-	-	-	लूणवाँ	१९८८

नोट प्राय सभी ईस्वीसन्, वीर नि स., शक संवत् और वि. स के आधार से निकाले हैं, अत कहीं अन्तर पड़ सकता है।